View metadata, citation and similar papers at core.ac.uk

brought to you by CORE

provided by Etheses - A Saurashtra University Library Service

Saurashtra University

Re – Accredited Grade 'B' by NAAC
(CGPA 2.93)

Tirgar, Natvar K., 2008, *"हिन्दी एवं गुजराती दलित साहित्यकरों का तुलनात्मक विवेचन",* thesis PhD, Saurashtra University

http://etheses.saurashtrauniversity.edu/id/eprint/700

Copyright and moral rights for this thesis are retained by the author

A copy can be downloaded for personal non-commercial research or study, without prior permission or charge.

This thesis cannot be reproduced or quoted extensively from without first obtaining permission in writing from the Author.

The content must not be changed in any way or sold commercially in any format or medium without the formal permission of the Author

When referring to this work, full bibliographic details including the author, title, awarding institution and date of the thesis must be given.

Saurashtra University Theses Service
http://etheses.saurashtrauniversity.edu
repository@sauuni.ernet.in

© The Author

हिन्दी एवं गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन

हिन्दी- १. मोहनदास नैमिशराय, २. जयप्रकाश कर्दम, ३. एस.आर.हरनोट
गुजराती : ४. दलपत चौहाण, ५. जोसेफ मेकवान, ६. मोहन परमार,
७. हरीश मंगलम् और ८. दक्षाबहन के विशेष संदर्भ मे)

सौराष्ट्र विश्वविद्यालय की पी.एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत महाशोध प्रबंध

प्रस्तुकर्ता

नटवर तीरगर (आ.शिक्षक)

श्री काजरडी प्राथमिक शाला,

ता. उना, जि.जूनागढ

निर्देशक

डॉ. आर एच. वणकर स्नेह स्वरूप

श्रीमती आर.पी.बी. महिला आर्ट्स, कॉमर्स एण्ड होमसायन्स कालेज,

उपलेटा - ३६०४९०

अनुक्रमणिका

क्रम	अध्याय	पृष्ठक्रमांक
	प्रस्तावना	
अध्याय-१	दलित साहित्य की पृष्ठभूमि	५-५८
अध्याय-२	मोहनदास नैमिशराय व्यक्तित्व, कृतित्व एवं वीरांगना झलकारीबाई उपन्यास का विवेचन	५९-८३
अध्याय-३	जयप्रकाश कर्दम व्यक्तित्व, कृतित्व एवं छप्पर उपन्यास का विवेचन	८४-१११
अध्याय-४	एस.आर.हरनोट (व्यक्तित्व, कृतित्व) एवम् हिडिम्ब उपन्यास का विवेचन	११२-१३९
अध्याय-५	दलपत चौहाण व्यक्तित्व एवं कृतित्व (मलक और गीध उपन्यास का विवेचन)	१४०-२०४
अध्याय-६	जोसेफ मेकवान व्यक्तित्व, एवम् कृतित्व (आंगलियात, दरिया उपन्यास का विवेचन)	२०५-२९४
अध्याय-७	हरीश मंगलम् व्यक्तित्व एवं कृतित्व (तिराड, चौकी उपन्यास का विवेचन)	२९५-३५२
अध्याय-८	मोहन परमार व्यक्तित्व एव् कृतित्व (प्रियतमा, नेलियु उपन्यास का विवेचन)	३५३-४१२
अध्याय-९	दक्षाबहन व्यक्तित्व एवं कृतित्व (शोष उपन्यास का विवेचन)	४१३-४४४
अध्याय-१०	हिन्दी दलित उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास की तुलना	
अध्याय-११	साहित्यकारों से साक्षात्कार	४४५-४९८
	उपसंहार	
	संदर्भ सूचि	

१. भूमिका

आज के उपन्यास की परिधि जीवन के सभी अंगों और क्षेत्रों तक फैल गई है, क्योंकि साहित्य की विभिन्न विद्याओं की अपेक्षा जीवन का यथार्थ चित्रण उपन्यास में ही अधिक हो सकता है ।

सभी साहित्यिक विद्याओं में संभवतः उपन्यास ही एक ऐसी विद्या है, जिसमें समाज का समग्र रुप में चित्रण हो सकता है । उपन्यास जीवन के अधिक समग्रता में उसमें सभी संबंधो और रुपो में प्रस्तुत करता है । उपन्यास में जीवन का समग्र चित्र होने के कारण ही अधिकांश उपन्यासों में समाज के यथार्थ और जीवंत चित्र उभरे है, कहीं सीधे तो कहीं संबंधो और संदर्भो के माध्यम से ।

हिन्दी दलित साहित्य की तुलना में गुजराती दलित साहित्य में उपन्यास की वृद्धि ज्यादा हुई है, दलितों की जातिगत समस्या, वर्गभेद, छूत-अछूत की करुणता का उल्लेख इन उपन्यासों में ज्यादातर है । बेरोजगार, आंतरिक संघर्ष, निर्बलताएँ, अंधविश्वास की कटु आलोचना की ओर द्रष्टि है ।

दलित साहित्य की विभावना मुख्यतः अंधश्रद्धा, वर्णव्यवस्था, अमानवीयता, अन्याय-अत्याचारों को तिलांजली देना, मानव कल्याण के सामने आते परिबलो का विरोध, जाति और जातिभेद के सामने विरोध आदि सब विचारों का परिचय करवाता है ।

अतः मैं दलित साहित्य के अंतर्गत हिन्दी एवं गुजराती दलित उपन्यासकारों का तुलनात्मक विवेचन करना चाहता हूँ ।

२. प्रस्तुत विषय का प्रेरणा

पूर्वकल्पना, परिकल्पना अथवा विषय की प्रेरणा एक विचार है, जो स्वानुभव अथवा परानुभव से उत्पन्न होता है । उपन्यास साहित्य के प्रति मेरी रुचि प्रारंभ से ही रही है । राष्ट्रभाषा प्रेम एवं हिन्दी साहित्य के प्रति विशेष् रुचि होने के कारण मैंने हिन्दी विषय के साथ बी.ए. और एम.ए. किया । बाद में डी.बी.ए. (बी.एड.समकक्ष) किया । केन्द्रिय विद्यालय, नवोदय विद्यालय में हिन्दी शिक्षक के पद पर पार्ट टाईम एक साल नौकरी की । चार साल से अधिक बेरोजगारी का अनुभव गुजरात के

माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षक साक्षात्कार के लिये गया हूँ, लेकिन नौकरी हम से दूर भागती रही ।

आज गुजरात सरकार की प्राथमिक शाला में सात साल से नौकरी करता हूँ, चार साल पेहले दिपावली की छुट्टियो में मेरे प्राथमिक शिक्षक जो आज महिला कॉलेज उपलेटा में प्राध्यापक मार्गदर्शक है, उनके साथ बातचीत हुई, पीएच.डी. की कल्पना स्वप्न में भी नहीं की थी । लेकिन उन्होंने मुझे पीएच.डी. करने को कहा, मैंने ये स्वीकार किया- तब से पुस्तकों के साथ मेरी दोस्ती फिर से शुरु हो गई ।

विषय के बारे में सोच समजकर "गुजराती श्रेष्ठ दलित उपन्यासकार- एक विवेचन" पसंद किया । लेकिन सीनोप्सीस युनिवर्सिटी में रद हुई, उन विवेचकों ने तुलनात्मक संशोधन करने को कहा, और आज मुझे ये विषय पसंद आया "हिन्दी एवं गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन "

३. प्रस्तुत विषय के अध्ययन की आवश्यकता

राष्ट्र के उत्थान एवं विकास में सामाजिक उपन्यास की अत्यंत आवश्यकता होती है, वस्तुतः सामाजिक चेतना के अनुरुप ही राष्ट्र की ईमेज निर्मित होती है । जिस प्रकार मानव की समस्त शारीरिक संरचना रीढ पर अवस्थित है, उसी प्रकार राष्ट्र की भव्यतम् इमारत भी सामाजिक जागृति एवं चेतना की सृद्रढ नीव पर आधारित होती है ।

दलित साहित्य एक मुठ्ठी में बंद है, गुजराती दलित उपन्यास जो हिन्दी दलित उपन्यास से भी बढकर है- आज गुजरात में ही सीमित है, मैं उन उपन्यासों को भारतभर में प्रचार करना चाहता हूँ, हिन्दी-गुजराती दलित उपन्यासकारों की तुलना करना चाहता हूँ । दलित समाज की व्यथा, रितरिवाज, छूताछूत-शोषण, जातिगत वर्ग-भेद, आंतरिक संघर्ष का चित्रण करना चाहता हूँ ।

४. प्रस्तुत विषय का महत्त्व

प्रत्येक वस्तु का अपना कोई न कोई महत्त्व होता है, इस दृष्टि से किसी विषय का शोधपरक अध्ययन तो और भी महत्त्वपूर्ण हो

जाता है, वस्तुतः अध्ययन की प्रक्रिया ज्ञान से संबंध है, ज्ञान निश्चय ही मस्तिष्क को तर्क वितर्क, सही-गलत, अच्छा-बूरा आदि के संदर्भ में नये आयाम प्रदान करता है, जिससे क्रमशः पारिवारिक सामाजिक चेतना के रुप में होकर व्यापक रुप में राष्ट्र को महान बनाती है । हिन्दी एवम् गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत विषय परिवार और समाज की तत्कालीन संपूर्ण मानसिकता को रेखांकित करता है । उपन्यास के माध्यम से सामाजिक उत्थान का यथार्थ प्रामाणिक, रोचक, कलात्मक चित्रण प्रस्तुत किया जाना सहज ही संभाव्य है, अतः हिन्दी एवम् गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन में चित्रित समाज का चित्रण शोधपरक अध्ययन की प्रक्रिया से तत्कालिन परिवार एवं समाज का यथार्थ चित्र प्राप्त हो सकता है, साथ ही वर्तमानयुगीन परिवार एवं समाज का अध्ययनगत उपलब्धी के रुप में मानवीय जीवनपरक मूल्यो, आदर्शो, संबंधो, मान्यताओं के परिपाश्व में आशातीत उत्थान, प्रगति, परिवर्तन, परिस्कार भी अवश्य भावी है । दलित विषयवस्तु, दलित समस्या, संघर्ष, स्त्रीयों की स्थिति, सामाजिक, आर्थिक, मानसिक रुप से त्रस्त दलित समाज, सूक्ष्मभावों की वास्तविक अभिव्यक्ति कलात्मक रुप से निरुपित होती है । गुजराती साहित्य में ही नही भारतीय साहित्य में भी यह उपन्यासों की उपलब्धि आवश्यक है । इस विषय से गुजराती-हिन्दी दलित समाज का यथार्थ चित्रण भारत के सभी लोग अध्ययन करेंगे ।

५. प्रस्तुत विषय की सीमाव्याप्ति

प्रत्येक विषय के सीमागत आयाम विस्तृत होते है, लेकिन उसके शोधपरक अध्ययन के लिए कुछ सीमान्त निश्चित कर लेना शोधार्थी के लिए आवश्यक है, ताकि वह एक निश्चित परिक्षेत्र में व्याप्त तथ्यों के माध्यम से अपने प्रतिपाद्य तक पहुँच सके ।

प्रस्तुत विषय स्वतः ही हिन्दी एवम् गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन परिसीमाएँ निर्दिष्ट करता है । इसके साथ ही स्वतंत्रता बाद की सामाजिक चेतना, परिवर्तन, विघटन, जागरण आदि की सीमाएँ भी दिग्दर्शित करता है । मैंने सिर्फ हिन्दी के तीन और गुजराती के पाँच

उपन्यासकारों की कृतियों का विवेचन करना ही श्रेयकर माना है ।

६. पूर्ववर्ती शोधकार्य

इससे पूर्व दलित साहित्य पर जो शोधकार्य हुआ है, वह इस प्रकार है ।

१. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र-ओमप्रकाश वाल्मिकी ।

२. गुजराती दलित साहित्य- नैमुन

३. दलित साहित्य- प्राध्यापक सतलासणा कॉलेज

४. गुजराती दलित कहानी-दिलीप चावडा

५. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी-गुजराती उपन्यास-गीरीश रोहित

इन शोध प्रबंधो में समग्र दलित साहित्य पर शोधकार्य किया गया है, लेकिन मैंने अपने पूर्ववर्ती शोधप्रबंधो से भिन्न दृष्टिकोण अपनाकर "हिन्दी एवम् गुजराती दलित साहित्यकारों का तुलनात्मक विवेचन" में गहराई से अनुसंधान करने का मेरा यह विनम्र प्रयास है ।

७. प्रस्तुत शोध अध्ययन की विशेषताएँ

प्रस्तुत शोध प्रबंध एक प्रकार से नवीन एवं मौलिक है । इसमें हिन्दी एवम् गुजराती दलित उपन्यासकारों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है । अंधश्रद्धा, वर्ण व्यवस्था, अमानवीयता, अन्याय, अत्याचारों का विरोध का वर्णन किया गया है । दलित साहित्य समाज में व्याप्त दलित, पीडित, शोषित जन की भवनाओं का प्रतिबिम्ब है । दलित साहित्य, दलित जीवन और समाज के साथ अभिन्न संबंध का द्योतक है । गुजरात के समाज में, हिन्दी भाषी राज्यों में दलित लोगों की स्थिति में कोई सुधार आया है, समाज उनको किस दृष्टि से देखता है- आदि का विवेचन है ।

मैंने इस प्रबंध में मुख्यत: अंधश्रद्धा, जाति व्यवस्था, अमानवीयता, अन्याय, अत्याचारों को तिलांजलि देना, मानव कल्याण के सामने आते परिबलों का विरोध, जाति और जातिभेद के सामने विरोध, आंतरिक संघर्ष दलित मनुष्य की सामाजिक, आर्थिक, मानसिक स्थिति, स्त्री का दलित समाज में स्थान आदि सब विचारों का परिचय करने का प्रयास किया है।

आठ साहित्यकार की कृतियों का विवेचन करने का प्रयास किया है ।

हिन्दी दलित साहित्य उपन्यासकार

१. मोहनदास नैमिशराय - वीरांगना झलकारीबाई

२. जयप्रकाश कर्दम - छप्पर

३. एस.आर.हरनोट - हिडिम्ब

गुजराती दलित साहित्य उपन्यासकार

४. दलपत चौहान - मलक, गीध

५. जोसेफ मेकवान - आंगलियात, दरिया

६. मोहन परमार - प्रियतमा,नेलियु

७. हरीश मंगलम - दरार, चौकी

८. दक्षाबहन - शोष

प्रस्तुत शोध प्रबंध के अंतर्गत प्रस्तुत विषय का विभाजन, विश्लेषण, विवेचन एवं निष्कर्ष मेरे अपने होगे ।

अध्याय-१

दलित साहित्य की पृष्ठभूमि

'दलित साहित्य' शब्द में दलित शब्द पर ध्यान देना जरुरी है । क्योंकि यह शब्द विवादास्पद रहा है ।

"दलित शब्द का अर्थ केवल जातिगत निकालते है, और दलितोने, दलितो के बारे में लिखा हुआ साहित्य दलित साहित्य है ऐसा संकुचित अर्थ निकालना व्यर्थ है ।"

'दलित' शब्द 'दल' धातु 'कृ' 'त' प्रत्यात्य से मिलाकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है । टूटा हुआ, फाडा हुआ, टुकडे-टुकडे किया हुआ, फैला हुआ ।

भारतीय समाज व्यवस्था के संदर्भ में 'दलित' शब्द का अर्थ है ऐसा जन समुदाय जिसे प्राचीन काल में तथाकथित सभ्य व सवर्ण समाज ने दबाकर रखा है, जिसे धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक सुविधाओं से वंचित बनाये रखा । दलित शब्द को व्यापक अर्थ में समझने के लिए हमें यहाँ मराठी के प्रतिभासंपन्न दलित साहित्यकार श्री शरणकुमार लिम्बाले का मंतव्य अधिक ध्यान देने योग्य है -

'दलित' अर्थात् केवल हरिजन और नव बौद्ध ही नहीं बल्कि गाँव की सीमा के बाहर रहनेवाली सभी अछूत जातियाँ, आदिवासी, भूमिहीन, खेतमजदूर, श्रमिक, दु:खी, जनता, भटकी-बहिष्कृत, जाति इन सभी का दलित शब्द की व्याख्या में समावेश होता है । 'दलित' शब्द की व्याख्या केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से नहीं होगी । इसमें आर्थिक तौर पर पिछडे हुए लोगों का भी समावेश करना चाहिए ।

हिन्दी भाषा में दलित शब्द का अर्थ -

अंत्यज - अंतिम वर्ण में पैदा हुआ शुद्र ।

अस्पृश्य - जो छूने योग्य न हो ।

दलित- जिसका दलन हुआ हो, जो कुचला गया हो ।

गुजराती भाषा में

दलित- कचडायेलुं, दबायेलुं, पीड़ित

(कुचला हुआ, चूर्णित)

शुद्र- आर्य प्रणालि मां जेने वैदिक संस्कार नहोता, तथा जेने त्रण वर्णोनी सेवा करवानो रिवाज हतो. तेवो चोथो वर्ण (वाल्मिकी अने नारद जेवा शुद्र वर्ण मां जन्मेला अने उदात कर्म थी ऋषि कक्षा पामेला.)[5]

(ऐसा चतुर्थ वर्ण जिसको आर्य समाज व्यवस्था में वैदिक संस्कार नहीं दिये थे और जिसको केवल तीन वर्ण की सेवा का रिवाज था ।)

दलित शब्द का अर्थ जिसका दलन या दमन किया गया है अथवा जिसे सदियों से पैरों तले रौदा, मसला, कुचला गया है । साथ ही जो स्पर्श के योग्य न हो तथा शोषित, पीडित, उपेक्षित एवं वंचित है ।[1]

दलित शब्द के विभिन्न पर्याय से ध्वनित अर्थ दलित- जो कुचला, दला, मसला या रौंदा गया है वह

शुद्र -भारतीय समाज की धुरी के समान वर्ण व्यवस्था के मुताबिक अंतिम वर्ण (निम्न वर्ण) के "पदम्यां शुद्रो अजायत"

अछूत - ऐसा व्यक्ति जो छूने योग्य न हो ।

अस्पृश्य - जिस व्यक्ति का स्पर्श न किया जा सके ।

अंत्यज - निम्न जाति में जन्मा व्यक्ति

शोषित- जिस वर्ग का सदियों से सामाजिक, धार्मिक, नैतिक एवं शारीरिक रुप से शोषण होता रहा है ।

पीडित, वंचित, उपेक्षित, प्रताडित आदि का अर्थ भी शोषण, व्यथा, दुःख्र से सबंधित है । जाति, धर्म, अर्थ या नैतिक शारीरिक रुप से ये संबंध रख्रता है ।

भारतीय वर्ण व्यवस्था के मूल में उंच-नीच का भेद नहीं था । किन्तु बाद में कर्म के आधार पर वर्ण को स्थान दिया । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र का कर्म समान था । किन्तु बाद में जाति व्यवस्था का जन्म वहीं से हुआ ।

दलितों की स्थिति

ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक रुप में दलितों की स्थिति :

वैदिक काल में समाज व्यवस्था वर्णप्रथा पर आधारित थी जिसमें क्रमशः चार स्तर थे, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र यह मान्यता भी प्रचलित है कि यह चार वर्ण क्रमशः ब्रह्मा के मुख्र, भुजा, उरु और पैर से उत्पन्न हुए थे ।

किन्तु बाद में तीन वर्णो को उच्च माना गया, शुद्र को अछूत कहा गया । डॉ. कुसुम मेघवाल का कहना है कि-

"विद्वजनों के मत वैभिन्य पर प्रस्तुत विवेचन न करके तर्कसंगत निर्णय पर पहुँचे तो यही सत्य के अधिक निकट प्रतीत होता है कि आर्यो के आंतरिक व बाह्य संघर्ष में जो व्यक्ति साधनहीन होते चले गये वे चतुर्थवर्ण शुद्र में परिगणित होते चले गये [१]।

अछूतों के लिए हरिजन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम महात्मा गांधी ने किया 'किन्तु गांधीजी के साथ साथ उच्चवर्ग ने समर्थन नहीं दिया, उपरी तौर पर दया भवना से प्रेरित होकर दलितों के साथ अच्छा व्यवहार करने लगे, जिसका प्रभाव जरुर हुआ लेकिन शुद्रो का परिवर्तन जो होना चाहिए वह नहीं हुआ ।

मनुस्मृति के प्रभाव से समाज में जाति-पाँति का भेद दृढ होता गया, परिणाम स्वरुप दलितों की स्थिति पशु से बदतर होने लगी ।

वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य यह था कि अपनी जाति में जन्मा हुआ व्यक्ति जाति के अनुसार काम करे । लेकिन आज यह व्यवस्था अलग ही है । शुद्र चाहे कितना हि उच्च काम क्यों न करे किन्तु वह शुद्र है, और ब्राह्मण जूते का व्यापार करे तो भी वह ब्राह्मण है । विश्व में ऐसी व्यवस्था कहीं भी देख्रने को नहीं मिलती । ऐसी जड व्यवस्था भारत में विद्यमान है । निष्कर्षतः 'दलित' शब्द का सामाजिक संदर्भ में यह अर्थ है कि जिसे मानवीय अधिकारों, सामाजिक प्रतिष्ठा, समानता शिक्षा व धर्म आदि से वंचित रख्रा गया हो यहाँ तक कि समाजरुपी वृक्ष से उसे एक डाली की तरह तोडकर फैंक दिया गया है ।"

राजनैतिक रुप से भी शुद्र का स्थान निम्न स्तर का है । ब्राह्मणो ने शास्त्र का दिख्राकर सबको अंध बना दिया है, राजा भगवान

का अवतार है फिर भी ब्राह्मण का कहना ही मानते है, परिणाम स्वरुप राज्य में ब्राह्मणों का वर्चस्व रहता है ।

वर्तमान समय में राजनेता दलितों का उपयोग 'मतबैंक' के रुप में करते आये हैं । रोटी का टूकडा फैंककर अपने को दलितो का, उद्धारक मानते है । लोकतंत्र की व्यवस्था का दुरुपयोग करते है । बिहार, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, गुजरात जैसे कई राज्यों में दलितो के प्रति पशु से बदतर रुप में अत्याचार, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक रुप से शोषण करते है । राजनेता चूप रहते है, और चुनाव में वही आगे रहते है जिसने दलितों की बातों को अनदेखी की । दलितों के प्रति हमदर्दी नहीं, किन्तु सिर्फ मत की अपेक्षा से काम करनेवाले नेता आज अनेक है, दलितनेता भी है किन्तु इनेगिने व्यक्तियों का क्या स्थान ? समाज में जो स्थान दलितों का है, वही स्थान सरकार में दलित नेता का । अपना भविष्य तो सुधर गया अब अपनेवालो का चाहे जो भी होनेवाला हो वही होगा, जैसे मध में मक्खी । शिक्षा के कारण जमाना बदल गया है, किन्तु परिवर्तन होना चाहिए वह नहीं हुआ ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य का काम बुद्धि से जुडा हुआ है इसलिए ज्यादा अर्थ प्राप्त करते है, शुद्र का काम केवल शारीरिक होने के कारण कम आय प्राप्त करते है, यह तय करने का काम ब्राह्मणों का है । मनुस्मृति में उसके बारे में चर्चा की है । सूद के बारे में भी अलग अलग जाति का अलग अलग सूद ब्राह्मणो ने तय किया है ।

तात्पर्य यह है कि शुद्र के पास धन नहीं होना चाहिए । भारतीय हिन्दु धर्म में शुद्र का स्थान बिलकुल नहीं है । शास्त्र पठन, मंदिर प्रवेश, धार्मिक क्रिया करना मना है । मनुस्मृति में तो कहा है अछूत आदमी धार्मिक कथा सूने तो उसके कानो में पिघला हुआ शीशा डाल देना चाहिए । रामायण, महाभारत में भी राम द्वारा शम्बूक वध, द्रोणाचार्य द्वारा गुरु दक्षिणा में दाहिनें हाथ का अंगूठा मांग लेना ये बात आखिर में तो शुद्र का शोषण ही तो है ।

भारत जैसी वर्ण व्यवस्था किसी देश में नहीं है, ऐसा कोई

धर्म नहीं है, जिसमें मानव-मानव के बीच खाई उत्पन्न करने की बात हो । लेकिन हिन्दु धर्म ने भारत में प्रवर्तमान सभी धर्मो को सिखलाया है कि तुम भी ऐसी वर्णव्यवस्था बनाओ, ओर शूद्र के साथ सिख, मुसलमान, ईसाई भी (छूआछूत) अस्पृश्यता का भेद रखते है । मुसलमान, ईसाई तो बाहर से आये थे, छूआछूत का भेद जानते भी नहीं थे, लेकिन हमारे हिन्दु धर्म ने ये सब सिखाया ।

हिन्दु समाज व्यवस्था की धरोहर समान वर्ण व्यवस्था जनित जातिगत भेदभाव, अमानवीयता, अन्याय, अत्याचार एवं शोषण विश्वभर में कहीं देखने को नहीं मिलता । वह समूची भारतीय संस्कृति और मानव सभ्यता पर एक प्रश्न चिन्ह लगा देता है । इसलिए डॉ.अम्बेडकरने धर्म की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "मैं आप को फिर से यह स्पष्ट करा देना चाहता हूँ कि धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं है । जो धर्म तूम्हें मनुष्य के रुप में स्वीकार नहीं करना चाहता, जो धर्म तुम्हे पीने के लिए पानी नहीं देना चाहता, वह धर्म धर्म कहलाने के लायक नहीं होता । जो धर्म तुम्हारे ज्ञान और शिक्षा के अधिकार छीन लेता है, जो धर्म तुम्हारे भौतिक, उत्कर्ष में बाधा पहुँचाता है, वह धर्म कहलाने लायक नहीं है । जो धर्म अपने अनुयायियों को अपने ही धर्मावलम्बियों से मानवीयता का आचरण करना नहीं सिखाता, वह धर्म न होकर एक बिमारी है ।"

अंत में यह कह सकते है कि दलित शब्द का अर्थ है - जो अस्पृश्य या अछूत है, जिसको छूने मात्र से सवर्ण अपवित्र हो जाता है साथ ही उसका स्थान पशु से भी बदतर है, धर्म, ज्ञान, शिक्षा, राजनीति के क्षेत्र में उसका हिस्सा शून्य है । उसका काम तीन वर्ग की सेवा करना है वह भी मृत पशु को गाँव के बाहर ले जाना, मांस खाना, गंदकी साफ करना, संडास साफ करना, बंगार करना और बदले में कुछ लेना नहीं सिर्फ मूँह नीचा करके हाँ जी हाँ करना । दलित स्त्री को छू नहीं सकते किन्तु जातीय शोषण सवर्ण कर सकते है । बलात्कार कर सकते है और दलितों को एक शब्द भी बोलने का अधिकार नहीं है ये हमारा

हिन्दुधर्म है । ब्राह्मणो ने शास्त्र में सबको बांध दिया है । शूद्र को शास्त्र से बाहर क्योंकि ये अंदर जाये तो शास्त्र अपवित्र हो जायेगा ।

लेकिन परंपरागत रुढ संस्कारों से मुक्ति पाना कठिन है, पर पिछले कई दशकों से दलित जाति और दलितवर्ग अपने होने का एहसास तथा अस्मिता की पहचान करने लगा है । अब दया नहीं अधिकार माँगते हैं । आज दलित चेतना एवं जागृति अपने समाज की यथार्थ और प्रामाणिक अनुभूति के आधार पर स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व भावना का ध्वज फहराना चाहती है । भारतीय साहित्य में इसका प्रवेश क्रान्तिकारी है । दलित साहित्य के बारे में यहाँ अरुणा लोखन्डे का मंतव्य ध्यान देने योग्य है - "दलित शब्द दबाये गये, शोषित, पीडित, प्रताडित के अर्थो के साथ जब साहित्य से जुडता है, तब यह विरोध और नकार की ओर संकेत करता है । यह नकार और विरोध चाहे व्यवस्था का हो, सामाजिक विसंगतियों, धार्मिक रुढियों, आर्थिक विषमताओं का हो, या भाषा, प्रांत के अलगाँव का हो या साहित्यिक परंपराओं मानदंडो या सौंदर्यशास्त्र का हो दलित साहित्य नकार का साहित्य है जो संघर्ष से उपजा है । इसमें समता, स्वातंत्र्य और बंधुता का भाव है और वर्ण व्यवस्था से उपजे जातिवाद का विरोध है । जो भी है एक बात स्पष्ट है वह यह कि दलित साहित्य की जितनी भी परिभाषाएँ है उनका एक मात्र स्वर है सामाजिक परिवर्तन और अम्बेडकरवादी विचारधारा । यही उसकी एक मात्र प्रेरणा है । दलित साहित्य ने पाठकों को यथार्थवाद तथा वास्तववाद के समीप ला खडा किया है ।"

दलित साहित्यकार प्रगति के पंथ पर चल रहे है, आज तक जो हुआ है, जनता के समक्ष ये पेश करते है और मानव अधिकार की आकांक्षा करते है, विद्रोह करते है, रुढियाँ, गलत परम्परा को तोडना चाहते है । अपने अस्तित्व का बोध करवाकर अस्मितापूर्ण दृष्टि से मनुष्य जी सके, मानव मानव के बीच समानता, स्वतंत्रता बनी रहे ऐसा दृढ संकल्प करते है । हक माँगने से नहीं मिलता, तो छिनकर लेने का विश्वास भरते है ।

"जातिगत अन्तविरोधों, अमानुषिकता एवं विसंगतताएँ जो मानवीय

गरिमा का हनन करती है, उसका कट्टर विरोधी होगा । दलित साहित्यकार उसको अपना अस्त्र बनाकर समाज की तमाम वैषम्यपूर्ण रुढियों का छेदन करना चाहते है जो सदियों से एक पूरी मानवजाति के साथ पशु से भी बदतर व्यवहार करने के बावजूद भी पूजनीय रही है । जैसे जैसे समय बीतता जायेगा । उसकी प्रतिभा शक्ति एवं अनुभव प्रामाण्य तीव्र होने के साथ ही उसका यह अस्त्र उतना ही असरदार एवं पैना बनता जायेगा ।”[13]

ब्राह्मणवादी जातिवादी व्यवस्था के विरुद्ध सिद्धोने संघर्ष किया, जिसमें दलित, शोषित की संख्या ज्यादा थी । (८४ सिद्ध) ऐसी ही संघर्ष की परंपरा नाथयोगी और संतकवियों में देखने को मिलती है । उसकी पृष्ठभूमि के कारण आधुनिक युग में राजाराम मोहनराय, दयानंद जैसे सुधारकों ने दलित, नारी और शुद्रो के प्रति न्यायप्रिय दृष्टि अपनायी और सारा प्रयत्न परंपरा से प्रबुद्ध सवर्णनेता नागरिक और अन्य शिक्षितजनो ने दलितों को मंदिर प्रवेश छूत-छूत का हल, भेद की समाप्ति जैसे सामाजिक राजनैतिक आंदोलन में हिस्सा लिया था । ऐसे सम्मिलित प्रभाव के कारण आधुनिक शिक्षण के लिए निष्णात नेताओने संविधान में दलित, शोषित के पक्ष में नई न्यायमूलक व्यवस्था को खडी की जिसके परिणाम स्वरुप दलितों के उत्थान और उन्नति के शिक्षण और स्वत्व का विकल्प खुल गया है ।”[14]

दलित साहित्य के प्रेरणास्रोत

महात्मा ज्योतिबा फूले, डॉ. बाबा साहब आम्बेडकर । डॉ. आम्बेडकर महात्मा फूले को गुरु मानते है, जो भारत के प्रथम क्रान्तिकार है ।

भारतीय परंपरागत समाज व्यवस्था के विरुद्ध आंदोलन करने में महात्मा फूले का स्थान सर्वप्रथम है । उनका विचार था कि समाज की बहु संख्यक जनता का शोषण बंध करके संपूर्ण मानवजाति की एकता का विचार ही मानवीय अधिकारों का विचार है । “गुलामगीरी” और “सार्वजनिक सत्यधर्म” उनके द्वारा लिखे गये पुस्तक पढने से उनके समाज सुधारक रुप के दर्शन देखने में आता है ।[15]

यह जमीन पर के सभी देशों की सारी नदियाँ महासागर में

मिलती है, तब उनमें से एक ही देश की एक ही नदी पवित्र किस तरह और किस तरह हो सकती है ? यह जमीन पर सभी मनुष्य के बुद्धि कौशल्य एक जैसे होने पर भी कुछ लोग किस तरह जन्मजात पवित्र मानते है । यह श्रेष्ठ किस तरह हो सकते हैं ?

गॉड, अल्लाह, ईश्वर, ब्रह्म जैसे कोई भी रुढिगत शब्द को मना करते है । क्योंकि धर्म या धर्मग्रंथो को ईश्वरप्रणीत नहीं मानते । यह सर्व मनुष्यनिर्मित है और मनुष्य के भले के लिए है किन्तु होता है कि धर्म और धर्मग्रंथो को ईश्वरप्रणीत दिखाकर हजारो वर्षो से उच्चवर्ग निम्नवर्ग का शोषण करता आया है ।[6]

दलित सहित्य पर महात्मा फूले के प्रभाव को इसलिए देखना अनिवार्य है कि विधवा-विवाह, स्त्री शिक्षण, शराबबंदी, जातिभेद का विरोध द्वारा दलित साहित्यकारो को एक नई दिशा मिलती है । अंग्रेजी साहित्य के चिंतक और अध्येता गेल वॉम्वेट ने ‘fe mon Bahi Moveet In Weenia’ में महात्मा ज्योति बा फूले के कार्य और विचारधारा का सविस्तर विश्लेषण किया है । उनका प्रथम अध्याय दलित साहित्य का आंदोलन है ।[7] फूलेने २४ सितम्बर १७७३ में “सत्य सोधक समाज की स्थापना की थी । जाति व्यवस्था का दहन करने का प्रारंभ प्रत्यक्षरुप से महात्मा फूले ने किया था । प्रथम स्कूल १८४६ में शुरु करके भारत के २५ वर्ष के इतिहास में क्रांतिकारी घटना का प्रारंभ किया । ‘किसन फागु बनसोडे’ ने भी १९०७ में चोखामेला बालिका स्कूल की स्थापना की थी ।

अस्पृश्यता देवनिर्मित नहीं है, किन्तु मनुष्यनिर्मित है, कहनेवाले क्रान्तिकारी विचारक महात्मा फूले सही अर्थ में भारतीय क्रान्ति के जनक थे ।

ज्योतिबा ने एक किताब ‘किसान का कौडा’ लिखी थी, जिसमें उन्होंने किसानों की दर्दनाक स्थितियों चित्रण करते हुए लिखा है कि

“विद्या बिन मति गयी, मति बिना नीति गयी ।
नीति बिना गति गयी, गति बिना चित्त गया,
चित्त बिना शुद्र टूटे, इतने अनर्थ एक अविद्या ने किये ।”

ज्योतिबा के धार्मिक चिन्तन के मूल में मनुष्य है । वे ऐसे धर्म की कल्पना करते है, जो मनुष्य-मनुष्य के बीच सम्बन्ध बढानेवाला, हो, खाई बनानेवाला नहीं । इसलिए उन्होंने कई बार हिन्दु धर्म में घुसी पुरोहितशाही जो मनुष्य-मनुष्य के बीच अन्तर बढाती थी, उन पर पैना व्यंग्य किया । धर्म के नाम पर समाज में विषमता फैलाने के लिए उन्होंने ब्राह्मणों को जिम्मेदार ठहराया । जोतिबा की दृष्टि में सामाजिक विषमता का मुख्य कारण एक ही था, ब्राह्मणों का धर्म । वह केवल विषम समाज रचना का निर्माता ही नहीं था, वह उस विषमता को चिरंजीव रखने की कोशिश करनेवाली साजिश भी थी । उसके कारण शुद्राति शुद्रों को और स्त्रियों को जीना तक मुश्किल हो गया था । उसने लगभग सारे समाज पर एक ऐसी वैचारिक गुलामी लादी जिसने व्यक्ति की स्वतंत्रता और सोच कुंदकर दिये थे ।[1]

महात्मा फूले के बाद अजस्त्र प्रेरणास्त्रोत डॉ.अम्बेडकर है । भारतीय दलित समाज अनेक जातियों में विभाजित है, वे जातियाँ अपने आप को एक दूसरे से श्रेष्ठ मानती है, दलित संघर्ष में एक साथ रहनेवाली ये जातियाँ अंदर से एक नहीं है ।

निम्नजाति में से पढकर महान व्यक्ति बननेवाले अम्बेडकर ने अनेक यातनाएँ, शोषण का मुकाबला किया था । उन्होंने दलित पेन्थर्स संगठन का जन्म दिया और दलित साहित्य जैसा साहित्यिक आंदोलन शुरु किया ।

आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन किये बिना शोषणमुक्त समाज की कल्पना असंभव है और सामाजिक संरचना को बदलने के सिवा दलितो का शोषणमुक्त करके समानता की स्थापना करना भी असंभव ही है । ऐसे तथ्य को समझकर डॉ. अम्बेडकरने अपने संघर्ष का पारुप (Strategy) रुपरेखा तैयार की, क्योंकि वह जानते थे कि अपने देश में प्रचलित सामाजिक ऊँच-नीच और जातिगत संस्कार विरुद्ध संघर्ष किये बिना समाज को शोषणमुक्त नहीं कर सकते और यही कारण से उन्होंने सर्वप्रथम सामाजिक समस्या पर प्रहार करना प्रारंभ किया । ३१ जनवरी -१९२० से 'मूकनायक' पत्र का

प्रकाशन कोल्हपुर के महाराजा शाहुजी की सहायता से शुरु किया, जो दलित समाज को संपूर्ण समर्पित था । दलित साहित्य आंदोलन में नींव का पत्थर है ।

१९२९ में गांधीजी ने हरिजन उत्थान कार्य का आरंभ किया, डॉ. अम्बेडकर ने दलितों की "शैक्षिक- सांस्कृतिक बहिष्कृत हितकारिणी सभा" की स्थापना की । १९२७ में महाड तालाब के लिए ऐतिहासिक सत्याग्रह का नेतृत्व लिया ।

१९२८ में साईमन कमिशन के सामने दलितों के लिए मंत्रीपरिषद एवं विधानसभा में आरक्षण की माँग की ।

१९३० में नासिक के कालाराम मांदिर में प्रवेश के कारण सफल सत्याग्रह किया । १९३०-३१ में लंडन की गोलमेजी परिषद में दलितो के प्रतिनिधि के रुप में हिस्सा लिया, अपनी विद्धता एवं राजनैतिक कुशलता से दलितों के लिए अलग मताधिकार का अधिकार प्राप्त किया । १९३२ में पूना करार करके ऐतिहासिक घटना के नायक बने । इस प्रकार उनके जीवन की हरेक घटना, दुर्घटना, प्रसंग और कार्य दलित साहित्य के लिए अमूल्य धन संपत्ति है ।[1]

महात्मा फूले और डॉ. अम्बेडकर के विचारों के कारण शोषित-पीडित समाज को अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने का मौका मिला । गाँधीजी ने भी दलितों के प्रति हमदर्दी दिखाई किन्तु दलितों को संघर्ष का ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं दिया, जिसमें उनका आत्मसम्मान जाग उठे ।

महाराष्ट्र में जोतिबा के समाजोत्थान कार्य के साथ साथ डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर की विचारधारा के फलस्वरुप छूआछूत विरोधी आंदोलन ने और जोर पकडा । डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का संघर्ष शुद्रो तक ही सीमित नहीं था- "उनके ग्रंथो को पढते समय बार बार इस बात का अहसास होता है कि वे किसी प्रदेश विशेष के दलितों की बातें नहीं कर रहे थे, अपितु इस देश के सभी शुद्रो, अछूतो, श्रमिकों के लिए संघर्षरत था । उनका संघर्ष केवल इस तक ही सीमित नहीं था ।

वास्तव में वे एक शोषणरहित और जाति रहित विशुद्ध मानवीय मूल्यों से सम्पन्न राष्ट्र का स्वप्न देख रहे थे ।[1]

डॉ. अम्बेडकर का सबसे बडा विरोध मनुरचित वर्ण व्यवस्था और उससे उत्पन्न जातिभेद से था । जो सदियों से एक पूरी मनुष्य जाति को पशुतुल्य जीवन जीने के लिए मजबूर किये हुए थी । भारतीय समाज व्यवस्था के बारे में उन्होंने कहा है, कि हिन्दुस्तान देश केवल विषमता का आश्रयस्थान है । हिन्दु समाज उसकी एक मिनार है और एक-एक जाति उसकी एक-एक मंजिल है, लेकिन ध्यान रखने की बात यह है कि इस मिनार में सीढी नहीं लगी है । एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए उसमें मार्ग नहीं रखा गया है । जिस मंजिल में जो जन्में, उसी मंजिल में वह मरे । नीचे की मंजिल में जन्मा व्यक्ति चाहे कितना ही लायक क्यों न हो उसे उपरवाली मंजिल में प्रवेश नहीं और उपर की मंजिल में जन्मा व्यक्ति चाहे वह कितना भी नालायक क्यों न हो, उसे भी मंजिल से गिराने का साहस किसी में नहीं ।[2]

डॉ.अम्बेडकर मनुष्य-मनुष्य के प्रति प्रेमभावना, समता, स्वतंत्रता, और मानवीय बंधुत्वभाव चाहते थे ।इसलिए सदियों से अमानवीय अत्याचारों को भोग रहे मनुष्य को उसके अधिकारों की प्राप्ति करवाने हेतु संघर्षरत थे ।उनकी लडाई देश में समानता, स्वतंत्रता और मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए थी । उनका मानना था कि "वर्ण व्यवस्था के आधार पर हिन्दु समाज का पुनर्गठन श्रेयकर नहीं है, क्योंकि वह व्यवस्था सामान्य जनता को ज्ञान का अधिकार नकार कर उसकी अधोगति करती है और शस्त्र का अधिकार नकारकर उसे पौरुषहीन बनाती है ।[3]

इस वर्ण व्यवस्था से उपजी बडी विषमता यह है कि एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य छूने या स्पर्श करने मात्र से अस्पृश्य या अपवित्र हो जाता है जिसके परिणाम स्वरुप हिन्दु धर्म में केवल शुद्र कहलानेवाला हिन्दु मानव समुदाय, प्रेम, सहानुभूति और संवेदना के अभाव में धर्म परिवर्तन करने लगा । इस परिस्थिति पर बाबासाहब ने कहा कि जरा देखो तो, हिन्दुओं की सहानुभूति के अभाव में मद्रास में सहस्त्रों परिवार

ईसाई बने जा रहे हैं । ऐसा मत सोचो कि केवल पेट की ज्वाला के कारण हो रहा है । असल में हम से सहानुभूति न पाने के कारण ही ऐसा हो रहा है । हम रात-दिन उनको यही पुकारकर कहते रहते है-'हमें मत छुओ' 'हमें मत छुओ' । देश में हृदय की दयालुता या आद्र भाव कहीं है क्या ? केवल मत छुओ बाद के बन्धनों को तोड-फैंक तुरन्त जाउ और पुकारु - चले आओ सब कोई जो गरीब, दु:खी, दीन-हीन और दलित है ।[१४]

हिन्दु धर्म की जडें विषमता के जहर से सींची हुई है । वेद, उपनिषद, मनुस्मृति, शतपथ ब्राह्मण इसके मूलाधार ग्रंथ है, जो इस विषमता को दिन-व-दिन फैलाते है । हिन्दु धर्म की आचार संहिता, सिद्धात और आदर्श तथा उसके धर्मग्रंथ भले ही प्रतिष्ठित और मूल्यवान हो लेकिन व्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्वभाव तथा मानवता के लिए ध्घातक है । धर्म के बारे में डॉ. बाबासाहब की राय है कि प्रजा के धारण के लिए धर्म, बन्धुभाव, समता और स्वतंत्रता के सद्‌गुणों का संस्कार अहम् जिम्मेदारी होती है । हिन्दु धर्म इन सदगुणों के संस्कार पैदा नहीं करता । इसलिए नकारना पडता है । अस्पृश्यता के कारण ही करोडो व्यक्तियों के गुणों का विकास नहीं हो सका । ऐसा धर्म जो सदियों से एक पूरे वर्ग को मानवीय अधिकारों से वंचित करता है, वह धर्म कहलाने लायक नहीं रहता ।[१५]

जो धर्म मनुष्य-मनुष्य के बीच केवल जाति-वंश-कुल और वर्ण के कारण ही अन्तर बनाये, वह अधर्म है । बाबासाहेब उसे मानव सभ्यता की सबसे बडी करुणाजनक विडम्बना कहते है ऐसे धर्म को धर्म न कहकर लोगो को पागल करने की जडी-बूटी कहा है । कार्लमार्क्स कहते है- धर्म एक अफीम की गोली है ।[१६]

गांधीजी स्वतंत्रता को प्रथम कर्तव्य समझते थे । फिर भी अस्पृश्यता को मिटाने का प्रयत्न भी करते थे, क्योंकि अस्पृश्यता का (काले-गोरे) भेद उन्होंने देखा था, उनका शिकार भी हुए थे, जीवन के अंत तक अस्पृश्यता से लडते रहे ।

श्री जगजीवनराम ने दासप्रथा के बारे में लिखा है- हमारे यहाँ जिस दासप्रथा का विकास हुआ और सामूहिक दासप्रथा थी । जिस व्यक्ति का जन्म नीची जाति में होता था और स्वामी तथा दास के बीच व्यक्तिगत मानवीय संबंधो के विकास का कोई प्रश्न ही नहीं था । नीची जाति में जन्में लोगो से बडी क्रूरता का व्यवहार किया जाता था और हिन्दु धर्म के इतिहास में इससे अधिक लज्जाजनक और कोई अध्याय नहीं है ।

डॉ.आर.जी.सिंहने "भारतीय दलितो की समस्याएँ एवं उनका समाधान" में लिखा है- "जन्मगत आधार पर की गयी अस्पृश्यता परंपरात्मक अस्पृश्यता मानी जायेगी जब कि कर्म, पिछडापन और गन्दगी के आधार पर लादी गयी अस्पृश्यता आधुनिक अस्पृश्यता है ।" उन्होंने वर्ण-व्यवस्था जनित छू-अछूत भावना को हिन्दु धर्म की सबसे बडी क्रूर साजिश के रुप में देखा है । अस्पृश्यता निवारण के बारे में उनका विचार काफी प्रेरणादायक है, जिन्होंने असमानता का बीज बोया उन्हें समानता की स्थापना के लिए आगे आना चाहिए ।

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में संस्कृति ऐसी होनी चाहिए जो प्रत्येक वर्ग के मनुष्यको उत्थान एवं उत्कर्ष के लिए सुनिश्चित अवसर प्रदान करती हो, क्योंकि ऐसी संस्कृति ही चिरस्थायी बन सकती है । जो मनुष्य में मानवता, समानता, बंधुत्व और समान अधिकारों की भावना रखती है । अन्यथा वह कभी न कभी टूटेगी ही । जातिभेद भारत की उन्नति में बाधक है । वह संकीर्ण बनाता है बाधा पहुँचाता है और अलग करता है । विचारों की प्रगति होने पर वह नष्ट हो जायेगा ।

इस प्रकार संत, सूफी कवि समाज सुधारक, विचारक सभी वर्ण व्यवस्था के विरोधी है, सभीने जातिव्यवस्था को तोड़ने का प्रयत्न किया है, मानव को मानव के रुप में देखने का प्रयास जरुर किया लेकिन आज तक जाति व्यवस्था न तो टूटी है, न टूटेगी । क्योंकि ऊँचे लोग नीचे लोगों को ऐसे ही देखना चाहते है । ऐसा धर्म उन्हें पसंद है, जिसमें मानव-मानव के बीच भेद रेखा हो ।

बौद्धदर्शन

दलित साहित्य आंदोलन पर जब सोचते है तब यह बात निर्विवादरुप से उभर आती है, कि दलित साहित्य दार्शनिक धरातल पर रचित है और बौद्ध तत्वज्ञान दलित समाज की मूल्यवान संपत्ति है ।

गौतम बुद्ध ने आश्वस्त हुए बिना स्त्रियों को संघ में प्रवेश दिया फिर भी यह क्रांतिकारी कदम कह सकते है उनके विचारों के कारण मराठी दलित साहित्य में ज.वि. पवार की 'आई' (माँ) पानी पीने की छूट्टी कविता देखने में आती है । सावित्रीबाई शिक्षा का पाठ पढ़ाती है ।

"तवा पर शेकाती
रोटली नी गंध आवे छे
सलगती दीवानी वाटमां
भणतो एक बालक छे.
बालकनी आंखो मां आवनारी काल छे
अने रोटली शेकती मातानी आंखोमां
ममता छे, ममतानी छाया छे ।"

केशवमेश्राम, दया पवार की कविताएँ स्त्री का महत्त्व समझाती है । बौद्ध दर्शन का प्रभाव उनके पर स्पष्ट है ।

संघ की महत्ता के कारण दलित साहित्य को नया बल मिला । बौद्ध धर्म सही अर्थ में व्यावहारिक था । डॉ.रामधारीसिंह दिनकर के शब्दों में- "समाज में जो वर्ण ब्राह्मण से जितने दूर थे, वह बौद्ध धर्म से उतने ही नजदीक आये ।"

दलित साहित्य के प्रखर और अजस्त्र प्रेरणास्रोत डॉ. बी.आर. आंबेडकर और उनके धर्मान्तर के साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा और बौद्ध धर्म का प्रभाव दलित साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है । यह स्पष्ट होता है कि दलित साहित्यकार बौद्धदर्शन को भी अपनी प्रेरक शक्ति के रुप में स्वीकारते है ।

ब्लेक पेन्थर्स

ब्लेक पेन्थर्स की प्रेरणा से महाराष्ट्र में दलित पेन्थर्स का जन्म

हुआ । १८६३ में अब्राहम लिंकनने नीग्रो (गुलामों) का गुलामी से मुक्त करने का प्रयत्न किया, लेकिन दक्षिण अमेरिका में निग्रो को अपनी जिन्दगी और जिन्दगी से जूड़े प्रश्नों के रुप में उत्पन्न समस्या, दुःख, वेदना को व्यक्त करने के प्रयत्न में अश्वेत साहित्यकारों ने जो साहित्य का सर्जन किया उसे ब्लेक पेन्थर्स कहते है । वह आक्रमक है, विद्रोही है और क्रान्तिकारी है, अपनी अस्मिता की शोध करनेवाला है । निग्रो साहित्य में मुख्यतः निग्रोजीवन की कुंठाएँ और उनके संघर्ष का मार्मिक निरुपण है । उनके साहित्य द्वारा ही विश्व को अमेरिका में बसे अश्वेत और अर्धश्वेत संतानो की गुलामी की खातरी हुई । उनके ये योगदान के कारण विश्वसाहित्य कभी नहीं भूलेगा [४]

१८६३ में मिसेज स्टोव नाम की श्वेत स्त्री ने 'अंकल टेम्स के बिर्न' उपन्यास लिखा । उसका नायक अत्याचार से पीडित, निग्रो के रुप में है । यह चर्चित और विवादस्पद उपन्यास बन गया ।

प्रा.जनार्दन वाघमारे दलित साहित्य और निग्रो साहित्य की समानता (तुलना) करते हुए लिखते है-

दोनों साहित्यकार साहित्य के माध्यम से अपनी अस्मिता की शोध करते है ।

दोनों साहित्य में वर्णित अनुभव और अभिव्यक्ति की विषमता पर समाजव्यवस्था की उपज है ।

दोनों साहित्य जीवन वादी साहित्य है । दोनो साहित्यकार का दृष्टिकोण सामाजिक है । भाषा क्रान्ति की है, नवीन सांस्कृतिक मूल्यो को ढूँढते है [५]

१९६८ में मार्टिन ल्यूथर किंग की हत्या के बाद युवा निग्रो लेखको के संगठन ने ब्लेक पेन्थर्स को जन्म दिया ।

"Dalit Panther learn form the organizational feature facties and strategies of black panthers"[६] इस तरह हम देख सकते है कि ब्लेक पेन्थर्स की प्रेरणा, विचारधारा और चिंतन ही दलित पेन्थर के उदय की पूर्वशर्त है ।

दलित पेन्थर्स

दलित पेन्थर युवाशक्ति का नाम है- मान, अपमान, सफलता, निष्फलता की चिंता किये बिना जिस समाज में पैदा हुए है । उस समाज की मुक्ति के लिए संघर्ष करना अपना कर्तव्य समझते है ।

दलित अत्याचार का विरोध करनेवाले युवा साहित्यकारों ने दलित पेन्थर्स को जन्म दिया । दलित पेन्थर मराठी के युवा साहित्यकारों का संगठन है, जो डॉ.आम्बेडकर की विचारधारा पर विश्वास करनेवाला लडायक संगठन है ।

दलित पेन्थर का 'पेम्फलेट' का विषयवस्तु महत्त्वपूर्ण है । नागपुर में प्रसारित मराठी पेम्फलेट भी आवश्यक है । जहाँ हमारी बहन, माँ को नग्न करके जाहिर में धुमाते हो । (सिरस गाँव, बामणगाँव) यह हमारा राष्ट्र कैसे हो सके । जहाँ सामूहिक रुप से जिंदा जला देते हो (किलोवेनमणी बेलछी) यह राष्ट्र हमारा कैसे हो सके [३७]

दलित पेन्थर के संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधिश श्री वी.के. कृष्णाऐयार ने कहा था "Dalit Power is a fact, dalit panther is a portent, dalit deliverance a certainly"[३८]

दलित पेन्थर शोषण और अन्याय पर आधारित भारतीय संस्कृति, सभ्यता और समाज में दलितो के गौरव, सुख और समृद्धि के लिए संघर्ष करना चाहते है । दलित पेन्थर शोषण रहित दुनिया चाहते है ।

दलित कौन है ?

दलित शब्द का प्रयोग प्रथम बार डॉ. आम्बेडकर ने किया था, किन्तु वह 'पददलित' शब्द का प्रयोग करते है । 'पददलितों' को भीषण संघर्ष और त्याग की दिव्याग्नि में जले । बिना बडप्पन प्राप्त नहिं होगा । अपना भविष्य उज्जवल बनाने के लिए वर्तमान सुख और जरुरत का त्याग करना पडेगा । अस्पृश्यों का कार्य अत्यंत उदात्त है । दलित पेन्थर ने अपने पेम्फलेट में 'दलित' शब्द को परिभाषित करते हुए कहा है- दलित का अर्थ है, अनुसूचित जाति, बाउद्ध कामगार, भूमिहीन मजूर, गरीब किसान बिना घरवाले आदिवासी लोग और नारीसमाज । पेन्थर की

दृष्टि व्यापक है और स्पष्ट भी है । दलितो की ओर प्रकारान्तर से मनुष्य की पीडा को अभिव्यक्ति देने का कार्य दलित शब्द करता है ।

संक्षेप में दीनता, दासत्व, अपमान, जातिवर्ग, विश्वबंधुत्व तथा क्रान्तिबोध के सिवा भी जितने भाव-बोध का ज्ञान यह शब्द से हो सकता है वह दलित है । दूसरे शब्दो में दलित क्रांतिबोध का प्रतीक है । क्रांतिध्वज का निशान है, एवम् भारतीय संस्कृति और परम्परा के परिप्रेक्ष्य में विद्रोही मनुष्य का घंटारव है ।[३]

दलित साहित्य

सदियों से कूचले समाज पर जो अन्याय और अत्याचार करने में आ रहा है, उनका विरोध और दलित जीवन का चित्रण करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है ।

दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को प्रतिपादित करते हुए डॉ.ताराचन्द ख्रांडेकर कहते है- "दलित साहित्य आंबेडकरवादी प्राणतत्त्व के स्वीकार के बीना भारतीय साहित्य कभी सच्चे अर्थ में सार्वभौमिक नहीं बन सकता । दलित साहित्य शुद्ध और क्रान्तिकारी रुप है, जिसकी नीव आंबेडकरवाद पर आधारित है ।"[५]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है । साहित्यकार समाज में रहकर अपना अनुभव व्यक्त करता है और साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है । स्वतंत्रता से पूर्व और पश्चात कई संतो, समाज सुधारकों ने दलितोद्धार के लिए प्रयत्न किये है जिसका स्पष्ट प्रतिबिंब यह साहित्य में देखने मिलता है ।

डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में संत कवियो का लक्ष्य मात्र काव्य रचना करना नहीं था, उनकी रचनाओं में जन-जन का हित और उद्बोधन की भावना निहित है । उनकी भाषा ख्रिचडी है । और साहित्यिकता का अभाव है ।[६]

स्वातंत्र्य पूर्व के समय में दलित जीवन को चित्रित करके उनके प्रति अनुकंपा दिख्राने का संकेत मध्ययुगीन संतकाव्य में देख्रने में मिलता है । किन्तु भावना, कीर्तन के माध्यम से दलितों को समानता देने

का प्रयत्न करने में आया वह केवल आध्यात्मिक क्षेत्र तक ही सीमित था, जिसका स्पष्ट प्रतिबिंब उनके साहित्य में देखने में आता है ।[2]

मराठी दलित साहित्य के प्रथम साहित्यकार के रुप में 'चोखामेला' का उल्लेख करना अनिवार्य है । उनके बाद उनकी पत्नी सोयराबाई और उनके बाद पुत्र कर्ममेला का नाम आता है । मराठी सत कविओं के साथ साथ हिन्दी साहित्य में फक्कड और अलमस्त भक्त कवि कबीर और रविदासजी भी यह परंपरा में आते है ।

"जन्मजात मत पूछिये, का जात अरु पात
रविदास पूत सभा प्रभु के, कोऊ नहि जात कुजात
जात-पात के फेर महि ।"

संत रविदास की दृष्टि में मंदिर और मस्जिद में कोई भेद नहीं है । दोनों में भगवान की पूजा होती है । इसीलिए धृणा और लडाई करना अच्छी बात नहीं हे ।[3]

रविदास पूरे भारत में घूमे थे । और अपनी विचारधारा का प्रचार किया था । 'दी चामार्स' नाम के पुस्तक के लेखक मेजर बिम्स लिखते है "रविदास के अनुयायी गुडगांव, रोहतक, पंजाब, गुजरात, राजस्थान में देखने में आते है । हिन्दु समाज और उसके साथ जुडे रीति-रिवाज और परम्पराओं के विरुद्ध संत रविदास ने जो बीज बोए थे, उनका ३५० वर्ष बाद डॉ. आंबेडकर के रुप में प्रथमबार प्रखर व्यक्तित्व मिला । रविदास के साथ साथ कबीर का नाम भी लिया जाता है ।

मराठी दलित साहित्य

दलित साहित्य परंपरा में किसन फागू बनसोडे का साहित्य विपुल मात्रा में है । काव्य, नाटक एवम् साहित्य की कई विधाओं में उनका लेखन देखने में आता है । डॉ.आंबेडकर उनको गुरुतुल्य सम्मान देते थे । १९०१ में 'सन्मार्ग बोधक अस्पृश्य समाज' नामक संस्था की स्थापना करके बनसोडे ने अपने कार्य का शुभारंभ नागपुर से किया और बिखरे हुए समाज को एक करने का प्रयत्न किया ।

निराश्रित हिंद नागरिक, विटाल विध्वंसक, मजूर पत्रिका,

चोखामेला नामक पत्रो का प्रकाशन किया । अनेक पत्रिकाओं में भी लिखते थे । रात्रिशाल और छात्रालय भी उन्होंने शुरु किये थे । उनका संत चोखामेला नाटक लोकप्रिय रहा था ।

शाहिर अणाभाउ साठे और शाहिर अमर शेख मराठी के प्रतिष्ठित रचनाकार है । काव्य, कहानी, उपन्यास, पोवाडे, लावणी की सुंदर रचनाएँ उन्होंने दी है ।

आधुनिक कवियों में मधुगंध, बंधु माधव, हरिहर सोनु, यादवराव गीगुर्डे, दिनेश लखमापुरकर, भाईमोरे इत्यादि है । उनकी कविताओं में डॉ.आंबेडकर का मुक्तिसंग्राम खास करके महाड का सत्याग्रह, नासिक मंदिर प्रवेश का उल्लेख है । दलित कविता मनुष्य को समग्र रुप में देखने में मिलती है । यह कविता का नायक व्यक्ति नहीं किन्तु समाज है । मर्ढेकर, भावे के बाद केशव मेश्राम (उत्खनत) काव्यसंग्रह अध्यधिक चर्चित रहा है । सुखराम हिवराले (शब्दायण) वामन निबालकर (गाम कुसा बाहेरच्या कविता) शांतारां हिवराले (अर्श्युचा उन्हाबा) यशवंत मनोहर (उत्थान गुफा)

दया पवार (कोंडवाडा कारवास) ज.वि.पवार (नाकंबर) अर्जुन डांगले (छावणी हलते आहे) नामदेव ढसाल गोलपीठा प्रहलाद चेंदवणकर का (ओडिट) त्र्यंबक सबकालेनु (सुरंग) नीलकान्त चव्हाण (निखारा) भीमसेन देठे (हीरपल) रामदोतेडे (रापी जेव्हा लेखनी बनते) हीरा बनसोर्ड (पूर्णिमा) चोखा कांबले (पीपलपान) वामन कर्डक (वाटचाल) मोहल, रविचन्द्र हडसनकर (ठीणगी) आदि कविता संग्रह प्रकाश में आए । यह सभी कवियों का एक ही स्वर है- परिवर्तन समानता की स्थापना और विद्रोह ।

वसंत जाघव हरिखरात अरुण कांबले, मधुकर बाकोरडे, दामोदर मोरे, योगेन्द्र मेश्रान, बटान चहांदे, सुरेन्द्र जोबंन जे, आदि कवि भी अपनी पेहचान बनाने के प्रयत्न में है ।

अण्णाभाऊ साठे, ना.रा.शेडे, योगीराज बाघमारे, केशव मेश्राम, दया पवार, दत्ताभगत, सोनकांबले, अरुणकांबले, माधव कोंडविलक, अविनाश कोलश, अर्जुन डांगले, नामदेव ढसाल, राजा ढाले, नागनाथ कोतापल्ले, वामन कोवाय, सुखराम हिवरोल, योगेन्द्र मेश्राम, आदि कथा, कविता, नाटक पर

अपनी कलम चला रहे हैं ।

उपन्यास में ना.रा.शेठे (शृंगारा लेले प्रेत) काली रात्री, तांबडा दगड (लाल पत्थर), हरिभाऊ पगारे (युग प्रवर्तक) हि.गो. बनसोडे (मुक्ति संग्राम) वि.स.खांडेकर (दोह्यने), (दो दिल), कृष्ण कोण्लहकर (श्यामसुंदर, हठ्य (पारिभातकारणी फूले) (दुलारी) ना.सि. फडके (प्रतिज्ञा), चिंदरकर (महापुर) शांताबाई नासिककर (किर्ती), गीता साने (धूल्के आणि दहिघर, माडखोलकर (चंदनवाडी) शंकरराव खरात (हालभट्टी) मुक्त भी मुक्त, गांवच, टिनोपाल गुरुजा, मसाले दाट, गेस्टहाउस, जैसे उपन्यास ने दलित साहित्य को समृध्द किया है ।

मराठी दलित रचनाकारो का ध्यान आत्मकथा की ओर ज्यादा रहा है । अक्करमाशी (शरणकुमार लिम्बाले) अछूत (दया पवार) उठाईगीर (लक्ष्मण गायकवाड) पराये (लक्ष्मण माने) तराल अन्तराल (शंकरराव खरात) आठ वणीचे पक्षी (सोन काम्बले) इत्यादि पुरुष रचनाकार की आत्मकथाएँ है ।

स्त्री लेखिकाओं में मुक्ता सर्वगौड (बन्द किवाडात) कुमुद पावडे (अंतःस्फोट) शांताबाई दाणी(रात दिन हमें) सुनीता देशपांडे (है मनोहर फिर भी) कमल पाध्ये (बंध-अनुबंध) स्नेह प्रधान (स्नेहाकिंता) शांताबाई काम्बले (मेरे जनम की चितरकथा) जनाबाई गिरहे (मांगना और मंगनी) रमाबाई रानडे (मेरा विवाह) सावित्रीबाई फुले (यश अपना ही है) महत्त्वपूर्ण आत्मकथाएँ है ।

मराठी दलित साहित्य का प्रादुर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना है । जिसके प्रेरणास्रोत है। दलितो तथा स्त्रीयो में सामाजिक, शैक्षिक जागृति लानेवाले महात्मा जोतिबाफूले तथा छूआछूत विरोधी आंदोलन के प्रणेता बाबासाहब आम्बेडकर । दलित साहित्य का कार्य सदियों से नारकीय एवं पशु से भी बदतर, लाचार और बेबसी का जीवन व्यतीत करनेवाले हो, भीख के रुप में अपने अधिकारों की याचना करनेवाले हो, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से पिछडे जन-समुदाय में चेतना का संचार करना और उसको जगाना है । अपना अस्तित्व बोध और अपनी अस्मिता की निरंतर खोज ही दलित साहित्य का महत्त्वपूर्ण ध्येय रहा है ।

मराठी साहित्य में दलित साहित्य लेखन की शुरुआत १९६० के बाद मानी जाती है । मराठी दलित रचनाकारों का कहना है कि जब प्रारंभ में रचनाकर रहे थे तब उनके साहित्य को गटर साहित्य कहकर लौटा दिया जाता था । प्रकाशक छापने के लिए तैयार नहीं थे । फिर भी कई मुसीबतों के बाद अपना प्रकाशन स्थापित करके प्रकाश में आए ।

दलित साहित्य अपने साथ अपनी अलग विशेषताओं एवं अलग सौंदर्यशास्त्र लेकर आता है, साथ ही उसमें दलितों-पीडितों का शाश्वत दारिद्रय, परंपराजनित उनके प्रति अवहेलना, छूआछूत अत्याचार एवं घोर अपमान का दाहक दस्तावेज देनेवाला ज्वाला है । क्योंकि दलित जीवन के अधिकाश दु:ख जन्म से ही शुरु हो जाते है । इसका मुख्य कारण हे भारतीय समाज व्यवस्था, जिसमें कई दु:खमग्न दलितत्व के कारण साथ लग जाते है ।[२]

मराठी दलित कहानीकार श्री केशव मेश्राम का कथन है कि -“मेरा लेखन जीवन के कठोर यथार्थ से प्रतिफलित है ।”

दलित साहित्य में कल्पना, रंगरेलियाँ कम है । अपने जीवन में जो दु:ख, यातनाएँ, शोषण अनुभव किया है वह यथार्थरुप में प्रकट होता है ।

दलित साहित्य के सौंदर्यशास्त्र का रुप विधायन उसका सीमांकन व आकलन सामान्य सौंदर्य दृष्टि से सम्भव नहीं है । दलित-साहित्य परम्परागत कलात्मकता से इत्तर अनगढ व अटपट शब्दों में सामाजिक अन्याय के विरुद्ध आक्रोश, सामाजिक आवाहन, उत्पीडन व शोषण के विद्रोह का साहित्य का सौंदर्य वही निखरता है जहाँ सदियों का संताप दलितो ने सहा है, यथार्थ अभिव्यक्ति पाना है । दलित साहित्य के सौंदर्य में काल्पनिक, रोमांटिक, रंगीनियाँ नहीं अपितु घटनाओं का खुरदरापन अपने यथार्थरुप में प्रस्फुटित होता है ।[४]

दलित साहित्य का मुख्य बिंदु इन्सान है । इन्सान को जिन्दगी जीने में कौन सी कठिनाईयाँ सेहनी पडती है, क्या व्यथा है यह तो शोषित व्यक्ति ही जानता है और उनके बारे में लिखना ही साहित्य का धर्म है । डॉ.मुल्कराज आनंद के शब्दो में आज हमारे देश में कोई सार्थक

या उपयोगी लेखन हो रहा है तो वह दलित लेखन है ।[४]

दलित साहित्य किसे कहा जाय ? उसकी परिभाषा के बारे में कई मंतव्य है यह देखना हमारा कर्तव्य है । दलित लेखक द्वारा लिखा गया दलित साहित्य ही "दलित साहित्य है ।" ये बात तो सही है । लेकिन गैर-दलित लेखक यदि संवेदना को लेकर दलित साहित्य लिखता है तो उसे क्या कहेंगे ? उसके बारे में विवेचकों के मंतव्य प्रस्तुत है ।

ताराचन्द खाण्डेकर- "दलित मनुष्य के जीवन का दलित लेखकों द्वारा किये गये चित्रण और दलित जीवन की स्थितियों का कल्पना के आधार पर दलितेतरों द्वारा किये गये चित्रण को दलित साहित्य कहना दलित साहित्य की कल्पना पर अन्याय है ।[५]

डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे- दलितों द्वारा लिखे गये साहित्य को ही दलित साहित्य कहा जाय इस परिभाषा की अपेक्षा हमारा विश्वास इस परिभाषा में है कि जिस साहित्य में दलित जीवन की संवेदना को प्रखरता से पकडा जाता है वह दलित साहित्य है, फिर वह किसी भी वर्ण या जाति के व्यक्ति द्वारा क्यों न लिखा गया हो ।[६]

"दलित समाज जीवन की समस्याओं चित्रित करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है ।" मनमोहन मदारिया -

"गुजराती साहित्य के विवेचक दीपक महेता कहते है "दलित साहित्य यह कोई एक वर्ग या वर्ण का साहित्यनहीं है, विश्व में जहाँ जहाँ दलित, पीडित, शोषित, क्षुधार्त समाज हो उसके साथ चैतसिक और भावात्मक ऐक्य उत्पन्न कर सके वह दलित साहित्य ।[७]

अस्तित्व के टीकाए रखने के लिए झुझते, दबे हुए मनुष्य की हृदय की अनुभूति को शब्द द्वारा अनुभव करवाती कोई भी सर्जक की कृति को व्यापक अर्थ में दलित साहित्य के रुप में पहचानना चाहिए ।[८]

साहित्यकार चाहे किसी भी वर्ग का हो लेकिन दलित जीवन, दलित समस्या, दलित चेतना पर ध्यान देना चाहिए ।

दलित साहित्य की व्यापक परिभाषा के लिए हम यहाँ दलित साहित्यकार श्री माताप्रसादजी की परिभाषा को उद्धृत करना चाहेंगे । "दलित

साहित्य वह साहित्य है, जो वर्ग समाज में, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षिक, और राजनैतिक दृष्टि से दलित शोषित, उत्पीडित, अपमानित, उपेक्षित-तिरस्कृत, वंचित, निराश्रित, पराश्रित बाधित, अस्पृश्य और असहाय है, उन पर साहित्य की जो रचनाएँ होती है, वही दलित साहित्य की श्रेणी में आती है । इसमें जकडी स्त्रियाँ, बंधुआ मजदूर, दास धुमन्तु जातियाँ, अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जन जातियाँ आती है । दलित साहित्य वेदना, चीख्र और छटपटाहट का साहित्य है ।"

दलित साहित्यकार श्री ओमप्रकाश वाल्मीकि के शब्दों में "दलित शब्द दबाये गये, शोषित-पीडित के अर्थो के साथ जब साहित्य में जुडता है, तो विरोध और नकार की और संकेत करता है वह नकार या विरोध चाहे व्यवस्था का हो सामाजिक विसंगतियों या धार्मिक रुढि या आर्थिक विषमताओं का हो या भाषा, प्रान्त के अलगाव का हो या साहित्य परंपराओ, मानदंडो या सौंदर्यशास्त्र का हो, दलित साहित्य नकार का साहित्य है । जो संघर्षो से उपजा है । जिसमें समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व का भाव है और वर्ण व्यवस्था से उपजे जातिभेद का विरोध है ।"

दलित साहित्य युग की माँग है । समता, स्वतंत्रता और बंधुत्वभाव उसका केन्द्रबिंदु है । सामाजिक परिवर्तन के लिए दलित साहित्य आवश्यक है ।

वही सच्चा दलित साहित्य है, जो दलित चेतना को जागृत करते हुए दलितो में सम्मान व स्वाभिमान की भावना जगाये । उसे अपने अस्तित्व का बोध कराकर अस्मिता युक्त जीवन जीने को कृत संकल्प कराये । उसका मूल उद्देश्य दलित को एक मनुष्य के रुप में प्रस्थापित कराकर दलितोत्थान की प्रक्रिया को सही दिशा में ऊँगली निर्देश करे । दलित चेतना दया, या सहानुभूतिवश न जागृत कर उसे अधिकार एवं हक के रुप में उजागर कराये । क्योंकि दलित साहित्य लेखन न तो वाह वाह के लिए लिख्रा जा रहा है, और न हीं ख्रोख्रली प्रतिष्ठा के लिए । वह तो सामाजिक परिवर्तन रुपी महान अभियान के तहत आवश्यकता के रुप में लिख्रा जा रहा है ।'

गुजराती साहित्य में दलित

समाज साहित्य को संदर्भ देता है । साहित्य सामाजिक चेतना को जागृत करता है । समय परिवर्तन के साथ साथ समाज की बदलती भावनाएँ, बदलाते मानवीय मूल्यो के साथ साथ साहित्य के मापदंड भी बदलते है । इस प्रकाश हरयुग उसके समाज का निर्माण करता है । साहित्य का सर्जन भी करता है, साहित्य में इन्सान केन्द्र में है, इस तरह समाज और साहित्य में इन्सान से श्रेष्ठ कोई नहीं है । श्रेष्ठ सर्जक वही है, जो समाज की खूबियाँ, कमीयाँ का सही दस्तावेज प्रस्तुत करता है ।

प्राचीन परम्परा (दलित संदर्भ में)

भारत वर्ष की प्राचीन परम्परा में द्रविड और आर्यसंस्कृति-संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा से गुजराती भाषा का जन्म हुआ है ।

संस्कृत साहित्य में समानता, की प्रार्थनाएँ मिलती है । फिर भी ऋग्वेद के पुरुषसुक्त में सृष्टि के वैश्विक पुरुष का कल्पन मिलता है । पौरों में से शुद्र उत्पन्न हुए । फिर भी शुद्र योनी में से जन्मा इन्सान सदगुण के कारण प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ।

किन्तु मनुस्मृति और गौतमधर्म सुक्तो में शुद्रो के बारे में उदाहरण दिये है ।

शुद्र धनसंग्रह नहीं कर सकते, शुद्रों को ज्ञान देना नहीं, धर्म का उपदेश देना नहीं ।

"शुद्र वेद सूने तो कान में गर्म शीशा (पारा) डालना, वेद उच्चारण करे तो जिभ काट देना, वेदज्ञ बने तो शरीर के टूकडे कर देना । समाज की क्रूरता के कारण चाँडाल को गाँव से बाहर रहना पडता था । गाँव में आने से पहले लकडा ठोककर आवाज से अपने आने की खबर लोगों को करनी पडती थी, यह स्थिति का वर्णन चीनी यात्री फाहियान (इ.स.४०५ से ४११)[6] किया है । फाहियान भारत आया था यह समय था गुप्तयुग का ।"

ब्राह्मण काल के अंत में लिखे वैदिक साहित्य में शुद्र को असामान्य महत्त्व की धार्मिक क्रिया में से दूर रखने का प्रयत्न (शतपथ -

१४-१-१-३१) पेहलीबार देखाने में मिलता है ।[७] इस तरह इ.स.२०० तक छूआछूत का अस्तित्व नहीं था । किन्तु इ.स. ६०० में अस्पृश्यता का जन्म हो चुका था ।[८]

'बाणभट्ट की कादम्बरी' में चांडाल मूहल्ले का वर्णन मिलता है। इस प्रकार भारतीय परम्परा में दलित समाज की स्थिति का वर्णन मिलता है ।

प्राचीन गुजराती साहित्य (दलित संदर्भ में)

नरसिंह पूर्व के साहित्य को प्राचीन गुजराती साहित्य कह सकते हैं । संस्कृत-प्राकृत और अपभ्रंश का गुजराती साहित्य में प्रभाव है ।

हेमचंद्राचार्य सोलंकी युग में हो गये, सोलंकी युग की गणना स्वर्ण युग में होती है किन्तु दलितो के लिए कलियुग ही था । गाँव के बाहर रहना, बेगार करना । यह वर्णन 'भवानी भवाई' नाटक में मिलता है । 'जशमा ओडण' और 'माघा मायरा' के बलिदान की कथा उसके उदाहरण है ।[९]

मध्यकालीन गुजराती साहित्य (दलित संदर्भ में)

मध्यकालीन गुजराती साहित्य में नरसिंह, मीरांबाई, रतनबाई, रवि, भाण, दासीजीवण जैसे संत प्राप्त होते है ।

नरसिंह महेता, दलित मूहल्ले में भजन गाने जाते थे । गंगासती के भजन भी लोकप्रिय है ।

"जाति-पाँति न होय हरिना देशमां"

नरसिंह महेता एक क्रान्तिकारी भक्त कवि के रुप में हमारे सामने आते है ।

"उज्जवल भारतीय संत परंपरा में हरिजनो को अपनाने का वीरतापूर्ण आध्यात्मिक कर्म करने से नरसिंह महेता अपूर्व स्थान पाते है । साथ ही दूर्लभ आध्यात्मिक संतो के दल में स्थान प्राप्त करते है । गुजरात की भूमि पर गांधीजी से पहले एक परम वैष्णव ने उच्च नागर ज्ञाति के उपहास का विचार किये बगैर युग-युग से उपेक्षित हो रहे हरिजनों के पक्ष में रहकर उन्हें अपनाने का साहस किया- वह हमारे समाज जीवन का

पवित्र क्षण था ।" त्रिकम साहब, खीम साहब, मोरार साहबने भी समाज सुधार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है ।

कवियो ने जात-पाँत, छूआछूत, सामाजिक कुरिवाज, रुढियों की कडी आलोचना की है ।

अखा के शब्द गुजराती में (कबीर) जैसे है । ऊँचनीच-भेदभाव, पर जबरदस्त प्रहार किया है । अखा ने मूर्तिपूजा का विरोध किया है । मानव धर्म को महत्त्व दिया है, जो ज्ञानमार्गी कवियों की दृष्टि का केन्द्रकिन्दु है ।

इस प्रकार मध्यकालीन साहित्य में भक्तिकाल के कारण भक्त कवियो ने उपेक्षित, शोषित लोगों का पक्ष लिया है । राजा, महाराजा, देवी-देवताओं को अपनाकर समाज में छूआछूत को मिटाने का प्रयत्न जरुर किया है । मगर उनका प्रभाव कम हुआ है ऐसा दिखाई देता है ।

आधुनिक साहित्य में दलित

आधुनिक काल साहित्य के लिए परिवर्तनशील रहा है । सामान्य व्यक्ति को स्थान मिला । गुजरात की पारसी जाति ने अंग्रेज शासन के कारण जो परिवर्तन हुआ उसका वर्णन साहित्य में दिया । समाज सुधार, धर्म-जागृति, यंत्र युग (आधुनिक क्रांति) का यश साहित्य में भी दिखाई दिया । दयानद, गांधीजी, राजराममोहनराय, विवेकानंद, फूले और डॉ. आम्बेडकर के कारण गाँवों में परिवर्तन हुआ । साहित्यने धरती पर पैर रखा । राजा महाराजा, देवी-देवताओ को छोड़कर सामान्य व्यक्ति के दुःख, दर्द, सामाजिक रुढियों का यथार्थ वर्णन साहित्य में दिखाई देने लगा ।

गुजराती का प्रथम उपन्यास 'करणघेलो' (१८६८) प्रकट हुआ, १८६२ में पारसी लेखक (सोराबश) ने फ्रेंच लघु उपन्यास का अनुवाद गुजराती में किया । इसमें दलितो के बारे में प्रथम बार साहित्य के द्वार खूले । मेघाणी ने दलित गान लिखा ।

विवेकानंदजी की आद्रवाणी का बुलंद पोकार सुनाई दिया ईश्वर को ढूँढने और कहाँ जाओगे ? क्या सब दीन-दुःखी और दुर्बल लोग ईश्वर रुप नहीं है ? तो उनकी पूजा प्रथम क्यों न की जाय ? जो धर्म

दलित विधवाओं के आँसू पोंछ ना सके या अनाथ के मूह में रोटी का टूकडा रख न सके ऐसे धर्म या इश्वर मे मै मानता नहीं ...[६१]

गांधीजी और आंबेडकरने भी दलित, शोषित व्यक्ति का पक्ष लिया । गाँव, ग्रामीणप्रजा और दु:खी, आत्मजन की ओर ध्यान दिया । डॉ.आंबेडकर ने दलित साहित्यकारों को कहा-आम आदमी की महत्ता से प्रेरणा लेकर लेखकों को लेखन करना चाहिए । वे कहते है अपनी साहित्य की रचनाओं में उदात्त जीवन-मूल्यों और सांस्कृतिक मूल्यों को परिष्कृत कीजिए । ये नहीं भूलना चाहिए की हमारे देश में उपेक्षित, दलितो और दु:खीयों का भी बडा एक विश्व है । उनके दु:ख और व्यथाओं को समजिए और उनके जीवन को उन्नत बनाने के लिए तुम्हारी सर्जनात्मक शक्ति का उपयोग कीजिए उसमें ही सच्ची मानवता है ।[६२]

हिन्दी साहित्य में भी १९१४ में हिराडोम ने भोजपुरी भाषा में अछूत की शिकायत कविता लिखी । १९३५ में डॉ.मूल्कराज आनंद ने "The Untouchable" उपन्यास अंग्रेजी में लिखा ।

१९३७-३८ में गुजराती साहित्य परिषद के १३ वे अधिवेशन में कनैयालाल मुन्शी कहते है- गरीब और दलितों के अनुभव के वर्णन साहित्य में उतरने लगे है ।

आधुनिक युग में दलपतराम, नर्मद, दुर्गाराम दवे, नवलराम, नीलकंठ का नाम उल्लेखनीय है ।'ज्ञाति निबंध' दलपतरामने समाज सुधार के लिए लिखा था । नर्मद ने सामाजिक रुढियों को तोड़ने का प्रयत्न किया है । समाज सुधार के लिए 'डांडियो' सामायिक निकाला, जिसका उद्देश्य सामाजिक प्रश्नो, कुरीतियों का पर्दाफाश करनेका था । दुर्गारामने मानवधर्म सभा की स्थापना करके समाज के ऊँच-नीच भेद को मीटाने का प्रयास किया ।

रमणभाई निलकंठ ने स्त्री शिक्षा के लिए स्कूल खोला । उन्होंने जातिभेद को मिटाने के लिए सराहनीय कार्य किया है ।

आधुनिक गुजराती साहित्य में गांधीयुग का समय सन् १९२० से लेकर १९४७ तक माना जाता है । कारण कि इस समय के दौरान

महात्मा गांधीने गुलाम भारत को ब्रिटिश शासन के दमन और कुचक्रो से निकालने के लिए समग्र देश में चल रहे स्वाधीनता प्राप्ति आंदोलन का नेतृत्व किया । इसके साथ उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त अंधश्रद्धा, धार्मिक पाखंड, रुढिवाद, जातिगत-भेदभाव कर्मकांड वगैरह की कडी आलोचना की । यहाँ तक कि उन्होंने अस्पृश्यता को हिन्दु धर्म का कलंक घोषित किया । उस अर्से में बिहार में आये भूकंप को भी गांधीजी ने अस्पृश्यता का परिणाम घोषित किया था । इसके साथ उन्होंने लोगों को यह चेतावनी भी दी कि ईश्वर ने हमें इस कुकर्म का फल दिया है । इस दृष्टि से देखा जाय तो उनका यह कार्य सराहनीय है । फिर भी अस्पृश्यता और आये भूकंप में कारण कार्य कहाँ तक सम्बन्ध रखते है वह भी सोचनीय है । गांधीजी की समग्र दृष्टि ही जीवन लक्षी थी । इसलिए उनके साहित्य में केवल खामखयाली की जगह यथार्थ का संचार हुआ । उस समय केवल जीवन उच्चतर मूल्य का शुक्रपाठ ही नहीं बल्कि उसका सक्रिय अनुभव स्पर्श भी होने लगा था । सूर्य, चन्द्र और तारों की दिव्यता या विराट के झूले की जगह पीडित, शोषित, दलित जनता की, वसुंधरा के व्यथितों की, आँसू और यातनाओं की प्रस्वेद और गर्म-गर्म शोणितों की कविताएँ आकार लेने लगी । कदाचित पहलीबार गुजराती साहित्यने यथार्थ की धरा पर पैर रखा । गांधीयुग में कविता, कहानी, उपन्यास लिखे गये । समाज के अंतिम व्यक्तियो का स्थान साहित्य में लाने का श्रेय गांधीयुग को देना पडता है ।

गांधीजी ने हरिजन (अंग्रेजी) हरिजन बन्धु (गुजराती) हरिजन सेवक (हिन्दी) सामायिक निकाला था, काका साहब कालेलकर, महादेव देसाई, नरहरी परीख, स्वामी आनंद वगैरेह ने भी गांधी कार्य को आगे बढाया । रमणलाल व.देसाई कृत उपन्यास 'ग्रामलक्ष्मी' में राष्ट्रीय उत्थान, सत्याग्रह, दलित-उत्पीडन का व्यापक चित्रण है । धूमकेतु की कहानियों में भी उपेक्षित लोगों को स्थान मिला है । रमेश त्रिवेदी ने इस विषय में लिखा है कि ग्राम्य जीवन और समाज जीवन के निम्नस्तर के बल्कि उपेक्षित मनुष्यों को उनकी कहानियों में स्थान मिला है । वह गांधी विचारधारा या समाजवाद

की विचारधारा के प्रभाव के तहत नहीं, बल्कि एक कला सर्जक की आंतरिक आवश्यकता एवं पीडित-शोषित लोगो के प्रति सहानुभूतिपरक रुख से प्राप्त हुआ है ।[6]

गुजराती दलित साहित्य का प्रारंभ कविता से होता है । गुजरात में कबीर, रोहिदास, नरसिंह के शब्द घर घर में प्रचलित है । गांधीयुग में भी दलितो के प्रति संवेदना व्यक्त होती है । मेघाणी की काव्य पंक्तियाँ "जागो जगना क्षुधार्त ! जागो दुर्बल अशक्त इन्साफी तख्त पर कराल काल जागे " झवेरचंद मेघाणी आधुनिक गुजराती साहित्य के गांधीयुग के आधार स्तंभ माने जाते है । उनकी रचनाओं में देशप्रेम, दलित प्रेम, आंचलिकता, ग्राम्यजीवन वर्णीत है । युग वन्दना में दलित काव्य मिल जाते है । करशनदास माणेक मनसुखलाल, सुंदरम, उमाशंकर के काव्यों में दलित प्रेम दिखाई देता है । सुंदरम ने 'कडवी वाणी' और गरीबों के गीत की रचना की थी । उन्होंने कोयाभगन के रुप में समाज की इसी कटु सच्चाई को प्रकट किया है- सुंदरम ने कोयाभगत की कडवी वाणी में शूली पर चढते सत्यवादियों की, माकोर बुढिया की और पराधीनों की दुःखकथा कहकर पीड़ितो के प्रति वात्सल्य प्रकट किया था, इतना ही नहीं समाज में व्याप्त राजकीय, आर्थिक, वैषम्य के पर्दाफाश की भी तत्परता दिखाई थी ।[7]

उमाशंकर जोषीने लिखा है-

"भूख्या जनोनी जठराग्नि जागशे

खंडेरनी भस्मकणी न लाधशे" "गांगा त्रापना भारा" एकांकी संग्रह में 'ढेडना ढेड भंगी' दलितो में भी अंदरुनी छूआछूत का पर्दाफाश देखने को मिलता है । बूनकर -हरिजन आदि जातियाँ परस्पर छूआछूत रखती है ।

रा.वि.पाठक ने 'खेमा माजी का दर' कहानियाँ और 'स्वैर विहारी' निबंध संग्रह में छूआछूत पर कटाक्ष किया है ।

हरि नो 'वादा य' 'गाडीण पाडोशी' आदि कविताएँ और 'पेकार्ड नो प्रवास' 'झा वेलानु मृत्यु' जैसी कहानियाँ सुन्दरम ने अस्पृश्यता को ध्यान में रखकर लिखी है ।

झवेरचन्द मेघाणी ने 'सोरठ तारा वहेता पाणी' 'मां थालानी नारी' उपन्यास 'युग वन्दना' कविता संग्रह में कुछ कविताएँ दलित-शोषित पीडित लोगों की व्यथा को वाणी मिली है ।

मध्यकालीन गुजराती साहित्य में धर्म और अध्यात्म के जरिये समाजोत्थान का उल्लेखनीय कार्य किया गया है । सदियों से धर्म, शिक्षा, राजनीति, संस्कृति आदि से वंचित एक मनुष्य समुदाय पहलीबार खुलकर देखा परखा गया । दया एवं सहानुभूति पूर्ण इस दृष्टिकोण ने दलित चेतना के बीज बोने का यशस्वी कार्य किया । आगे चलकर उक्त दलित उत्थान को सुधारयुग तथा पंडित युग में व्यापक आधार मिला और उसमें व्यापक सुधार परिष्कार होने लगा । इसमें इस चेतना में नई जान आ गई । गांधीयुगीन रचनाकारों ने गांधीदर्शन, प्रेम, सत्य, अहिंसा, दलितप्रेम, अंत्यजोद्धार, ग्रामोद्धार, इत्यादि का अपने साहित्यमें बडा ही कलात्मक संयोजन किया है । यह कहा जा सकता है कि दलित पीडित, जीवन गांधीयुगीन रचनाकारों में दर्शक, पन्नालाल पटेल, ईश्वर पेटलीकर, सुरेश जोशी, जयंत खत्री, इत्यादि ने भी दलित समाज की विडम्बनाओं का खुलकर चित्रण किया है ।[6]

गुजराती कहानी साहित्य में दलित जीवन, देखने में आता है । धूमकेतु "जन्मभूमि नो त्याग" में एक मोची के जीवन का दर्द दिखाया है । एक अफसर की जोहुकमी सामान्य परिवार को कहाँ तक नुकशान करता है उसका चित्रण है । रा.वि. पाठक की 'खेमी' कहानी में भी दंपति के दुःख, दर्द को चित्रित किया है । सुंदरम की 'माझा वोलानुं मातृत्व' पेटलीकर की 'मानाता' 'लाकी वरणं' (निम्न जाति) जैसी कहानियाँ तो दिलीप राणपुरा की 'हजार रुपयानुं ईनाम' सुमंतरावल की 'ओगणीसो सुडतालीस कहानियाँ' में दलित जीवन, उनके दुःख,दर्द को चित्रित किया है । फुटपाथ, चमार गली, मजूर चाल (जयंत खत्री) आदि रचनाओं में दलित समाज की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने की कोशिश की गई है । लेकिन उस साहित्य में दया की भावना दिखाई देती है, दलित समाज की संपूर्ण वेदना तक पहुँचने की सीमा तक वो नहीं जा सकते थे ।

विजयशास्त्री (बीजा गांधीनी पहेली वार्ता) बंसीकुमार बारोट की पुनर्जन्म, भगवत सुथार (गंगा), चतुर पटेल (रंछो) राम प्रजापति, (खिस्सु), विष्णु पंड्या (छावणी) धीरज ब्रह्मभट्ट (तमे पबाने जोयो ?) कहानियाँ भी उल्लेखनीय है ।

उपन्यास

गुजराती उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास का स्वरुप, विकास का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया है ।

उपन्यास आधुनिक काल की सबसे अधिक लोकप्रिय, जीवंत और प्राणवती साहित्य विद्या है । इसका आरंभ भी पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से हुआ है । इसमें मानव जीवन का काल्पनिक चित्र उपस्थित किया जाता है ।

समग्र रुप से देखे तो मानव की सभी अपेक्षाएँ पूर्ण करने की ताकत उपन्यास में है । जितने सर्जक उतनी ही सर्जन रीतियाँ और उतने ही उपन्यास, उनका रुप अलग अलग है । कई विवेचकों ने(समीक्षको)ने उपन्यास की व्याख्या की है - पलाबार्क - A Novel is a Portrait

फ्रेन्च विवेचक अबेल केवेली - It is a Fiction in Prose of certain extent

क्रेफर्ड - It is a Pocket theatre.

उपन्यास की विशेषताओं एवं गुणों की दृष्टि से विभिन्न विद्वानों ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए उसे मानव चरित्र का दर्पण बताया है। डॉ.श्यामसुंदर दास उपन्यास को मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा बताते है । प्रेमचन्द उसे मानव चरित्र का चित्र कहकर लिखते है- "मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है ।"

'हिन्दुस्तान मध्येनुं एक झुपडुं' यह अनूदित उपन्यास १८६२ में प्रकाशित हुआ । नंदशंकरमहेता कृत 'करणघेलो' (१८६६) पहला गुजराती मौलिक उपन्यास है । करणघेलो उपन्यास में वाघेला वंश के अंतिम राजा की करुणकथा को चित्रित किया है । कई समय तक उपन्यास अर्थात् ऐतिहासिक उपन्यास ऐसा ख्याल पाठक और लेखक को हो गया था ।

इसीलिए महीपतराम ने सामाजिक उपन्यास का मार्ग रख दिया ।

महीपतराम ने १८६६ में ''सासु वहुनी लडाई'' (सास-बहु की लडाई) सामाजिक उपन्यास प्रसिद्ध किया किन्तु अपने जमाने का चित्र देखने के लिए अभी लोग तैयार नहीं थे । उसके बाद (वनराज चावडा) (१८८१) (सघरा जेसंग) जैसे ऐतिहासिक उपन्यास लिखे । किन्तु (करणघेलो) जितना प्रभाव यह उपन्यास नहीं दे सके ।

आनंद शंकर वैष्णव ''राणकदेवी'' और हरगोविंददास कृत ''अंधार नगरी का गंधर्वसेन'' प्रगट किया । नारायण हेमचंद्रने बंगाली में से गुजराती में अनूदित उपन्यास ''आनंद मठ, विषवृक्ष, गुरु गोविंदसिह, जयसिंह, दूर्गेश नंदिनी, मृणालिनी, रुपनगरनी राजकुंवरी'' दिये है ।

सरस्वतीचंद्र १८८७ गोवर्धनराम त्रिपाठी कृत सामाजिक उपन्यास है । यह उपन्यास का गुजराती साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है । १९०१ तक सरस्वतीचंद्र के और तीन भाग भी प्रकाशित हुए । सामाजिक उपन्यास में काफी लोकप्रिय हुआ । श्री विजयरायवैद्य ने यह चार भाग को व्यक्तिलोक, कुटुंबलोक, राजलोक, साधुलोक कहा है ।

गोवर्धनराम के बाद श्री भोगीन्द्रराव दीवेटीया ने इ.स.१९०७ से १९१७ तक पंद्रह जितने अनूदित उपन्यास दिये जिसमें ली-मिझरेला पर से लिखा- ''अजामिल तथा टोल्सटोय कुटमुर'' तथा आना केरिना पर से लिखा ''मारी हिनी'' तथा ''तारलानी'' नोंधपात्र है ।

रमणभाई नीलकंठ कृत ''भद्रंभद्र'' गुजराती उपन्यास साहित्य में अलग ही उभरता है । यह प्रथम हास्यरस उपन्यास है ।

उसके बाद कनैयालाल मुनशी का नाम प्रसिद्ध है । ''पाटणनी प्रभुता'', ''रनी वसुलात'' और ''पाटण की प्रभुता'' के अनुसंधान में ''गुजरातनो नाथ'' एवं ''राजाधिराज'' उपन्यास देकर ऐतिहासिक उपन्यास की धारा बदल दी । प्रसंग, बाढ जैसा कथाप्रवाह चोटदार संवाद एवं तेजस्वी पात्रसृष्टि के कारण यह उपन्यासों ने गुजरात में आकर्षण जमाया । काक-मंजरी, मिनल-मुंजाल, सिद्धराज-त्रिभुवनपाल, कीर्तिदेव जैसे पात्र अमर हो गये । मुनशीने क्षणभर तो गोवर्धन को भी भूला दिया । श्री कृष्णलाल झवेरी कहते है-

उपन्यास के नियमों को पकडे रहने के कारण प्रभावी पात्रालेखन से कनैयालालने गोवर्धनराम को यह स्थान से हटाकर स्वयंने यह पद प्राप्त किया है । पृथ्वी वल्लभ ऐतिहासिक उपन्यास, भगवान कौटिल्य, पौराणिक उपन्यास एवं स्नेहसंभ्रम स्वप्नदृष्टा जैसे सामाजिक उपन्यास दिये । तपस्वीनी, जय सोमनाथ जैसे उपन्यास देकर गुजराती साहित्य को समृद्ध किया है ।

मुनशी के बाद रमणलाल व. देसाई का नाम भी महत्त्वपूर्ण है । गांधीयुग का प्रवाह, विकट प्रश्नों को उपन्यास में स्थान दिया है । उन्होंने जयंत तथा दिव्यचक्षु, बंसरी, ग्रामलक्ष्मी, कोकिला, पूर्णिमा, हृदयविभूति जैसे सामाजिक उपन्यास दिये । क्षितिज, भारेलो अग्नि, कालाभोज जैसे ऐतिहासिक उपन्यास लिखे । उनके उपन्यास के बारे में विजयराज वैद्य कहते है -दृष्टा गोवर्धनराम ओर कलाकार मुनशी से भी युगमूर्ति कहानीकार रमणलाल अलग ही प्रकार के उपन्यास कथाकार है ।

चूनीलाल वर्धमान शाह ने कर्मयोगी राजेश्वर ऐतिहासिक उपन्यास लिखा, राजहत्या, अवन्तीनाथ, रुपमती भी लिखे है । जिगर अने अमी, विषचक्र, नीलकंठ का बाण (तीर) रसपूर्ण उपन्यास है ।

गुणवंतराय आचार्यने गोरख आया, कोरी किताब में नारी समस्या रखी है । इन्कीलाब, देश-दिवान और विराट जागे त्यारे लोगजागृति का विषय है । उन्होंने पुत्र-जन्म, भस्मांगना, दरिद्रनारायण, भगवो नेजो और दरियालाल जैसे उपन्यास दिये है । रत्न जैसा सामाजिक उपन्यास भी प्रसिद्ध है । सागरखेडु के लोगो के जीवन को उपन्यास में स्थान दिया है ।

श्री झवेरचंदमेघाणी ने सौराष्ट्र, गुजरात इतिहास एवं सामाजिक जीवन में से कथावस्तु लेकर उपन्यास लिखे है । आंचलिक भाषा और सौराष्ट्र की वीरता, शौर्य के कारण यह उपन्यास प्रसिद्ध है । तुलसीक्यारो, (तुलसीक्यारा) वेविशाल, प्रभु पधार्या, वसुंधरानां वहालां दवला, (धरती के प्रिय, अप्रिय) सामाजिक उपन्यास लिखे है । सोरठ तारां वहेता पाणी (सोरठ तेरे बहते पानी) में सोरठ का इतिहास है ।

धूमकेतु ने राजमुगट (राजमुकुट) पराजय, अजिता (अजेय) उपन्यास लिखे है । चौंलादेवी ऐतिहासिक उपन्यास दिया है । राजसन्यासीनी, कर्णावती,

वाचिनीदेवी, जयसिंह, सिद्धराज, अवंति, जयभिख्खु भी लिखे है ।

जयभिख्खुने संसारसेतु, लोखंडी खाकनां फूल (लोहे की भष्म के फूल), नरकेसरीया नरकेश्वरी, प्रेमावतार, जैसी जैनधर्म की कथाएँ दी है ।

मेघाणी ने सोरठ प्रदेश का जीवंत दर्शन करवाया है तो पन्नालाल पटेल, ईश्वरपेटलीकर एवं पीताम्बर पटेल ने गुजरात के ग्रामप्रदेश का जीवंत चित्रण किया है । पन्नालाल पटेल ने साबरकांठा ईडर प्रदेश का चित्र प्रस्तुत किया, पेटलीकरने चरोतर तथा पीताम्बर पटेलने महेसाना जिल्ले का जीवन रीत रिवाज (रश्मो-रिवाज) मान्यताओं को प्रस्तुत किया है ।

पन्नालाल पटेल ने मानवीनी भवाई, (ईन्सान की भवाई) मलेला जीव, भांग्याना भेरु, वलामणां जैसे उपन्यास ग्रामप्रदेश के इन्सानों के जीवन की छवि प्रस्तुत की है । उपन्यास के पात्र गुजरात में अमर हो गये है । पन्नालाल पटेल को ज्ञानपीठ एवोर्ड भी मिला है ।

ईश्वर पेटलीकरने 'जनमटीप, मारी हैया सगडी (मेरे हृदय की जलन) पाताल कूवा (पाताल कूआँ) पंखी नो मेलो, ऋणानुबंध' उपन्यास लिखे है । चरोतर का चित्र प्रस्तुत किया है और सुधार पर बल दिया है ।

पीताम्बर पटेल ने 'खेतर ने खोले, रसियो जीव, कांटो केवडियानो, उगतु प्रभात, घरनो मोभ' उपन्यास लिखे है ।

मनुभाई पंचोली (दर्शक) इतिहास एवं प्राचीन संस्कृति के अभ्यासी है । दीप-निर्वाण, वैभव अने वारसा, प्रेम और पूजा, झेर तो पीधा छे जाणी जाणी-१,२ उपन्यास लिखे है यह उपन्यास काफी लोकप्रिय भी है ।

यशोधर महेता कृत 'सरी जाती रेती, महारात्रि, धुम्मस छायो पांथ' उल्लेखनीय है ।

पुष्कर चंदरवाकर कृत 'मानवीनो मेलो (इन्सान का मेला) लीलुडां लेजो, बावडाना बले, भवनी कमाणी' उपन्यास रसप्रद है ।

जयंती दलाल कृत पादरनां तीरथ और टोल्स्टोय कृत 'War and Peace' का अनुवाद 'युद्ध और शांति' उल्लेखनीय है ।

चन्द्रकान्त बक्षी कृत आकार, रोमा, पडघा डूबी गया, रघुवीर चौधरी कृत 'ईच्छावर, एकलव्य, अमृता, पूर्वराग, आवरण, गेरसमज, मोहम्मद

मांकड कृत 'का यार' प्रा.सुरेश जोषी कृत 'छिन्नपात्र', रावजी पटेल कृत 'झांझा', राधेश्याम शर्मा कृत 'फेरो' उल्लेखनीय है ।

चुनीलाल मडिया ने शहरी जीवन एवं ग्रामजीवन में से कथा लेकर उपन्यास लिखे है । उनमें 'व्याजनो वारस (सूद का वारिस) इंधण ओछां पडयां (लकडीयाँ कम हुई) वेला वेलानी छांयडी, लीलुडी धरती' जैसे उपन्यास लोकप्रिय है ।

उमाशंकर जोषी ने 'पारकां जण्या सोपाने पारकां जण्यां' और रा.ना. पाठक (मानवता के फूल)' उपन्यास लिखो है ।

दलित उपन्यास के बारे में आगे चर्चा की है ।

गुजराती दलित साहित्य का उद्भव और विकास

समय समय पर परिवर्तन होता है, उसका समाज पर प्रभाव होता है । सामाजिक परिवर्तन करनेवाले महापुरुषों को लगा कि समाज सही दिशा में गति नहीं करता, बल्कि सामाजिक रुढियाँ वटवृक्ष बन गई है । उन्होंने जडताओं को नकारा, कुरीतियों पर तार्किक प्रहार किया ।

धार्मिक आंदोलनो ने समाज को सही दिशा दी, दलित, शोषित व्यक्ति, समाज को आगे बढाने का कार्य किया । अंग्रेजो की नीति भी इस दृष्टि में सुधार की ओर थी । कबीर, नानक, रविदास जैसे सन्त एवं स्वामी विवेकानंद, दयानंद सरस्वती, राजाराम मोहनराय, गांधीजी का योगदान भी काफी प्रेरणादायक है ।

गुजराती साहित्य के इतिहास पर एक नजर डालने से पता चलेगा कि दलितों के बारे में मध्यकाल से ही लिखना शुरु हो गया था । मध्यकालीन गुजराती साहित्य में नरसिंह महेता एक क्रान्तिकारी भक्तिकवि है जिसने हरिजनों को अपनाया । अखाने भी समाज की रुढियाँ, परम्पराओं पर प्रहार किया ।

आधुनिक काल में 'हिन्दुस्तान मध्येनुं झुंपडुं' अनूदित उपन्यास में अस्पृश्यता के बारे में काफी चर्चा की है ।

सुधारयुग के प्रमुख रचनाकारों में दलपतराम, नर्मद के साथ दुर्गाराम दवे, तुलजाराम, करशनदास, नवलराम, नीलकण्ठ का नाम उल्लेखनीय

है । दलपतराम ने सुधार भावना से प्रेरित होकर एक निबंध लिखा था- 'ज्ञाति निबंध' उसमें उन्होंने जाति, निम्नजाति, उसके भेद-प्रभेद तथा उच्चस्तरीय अहंकार वगैरह का विस्तार के साथ विश्लेषण किया है । नर्मदने गुजराती समाज की अधोगति, रुढिवादिता, कूप मंडूकता, इत्यादि की साहित्य में आलोचना की थी । उन्होंने समाज में व्याप्त जातिभेद, जडता, अंधश्रद्धा वगैरह का खुलकर विरोध किया है और समाज सुधार के लिए 'डांडियो' नामक सामयिक निकाला, जिसका मूल विषय था व्यंग-कटाक्ष द्वारा सामाजिक विड़म्बनाओं को दूर करना । नर्मद युग के अन्य गद्य रचनाकारो में हे दुर्गाराम मंछाराम दवे, नीलकंठ मणिलाल, आनंद शंकर वगैरह का सामाजिक सुधार में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । दुर्गाराम ने १८४४ में मानव धर्म सभा की स्थापना की जिसने ऊँच-नीच के भेदभाव को मिटाने में सराहनीय प्रयास किया है । उन्होंने समाज एवं धर्म दोनों केबीच व्याप्त विषमता, पाखंड तथा मिथ्याभिमान की तीखी आलोचना की । करशनदास मुलजीने कहा है कि "रुढि, धरमने राजतणा सो छैये ज नीचा दास ।" (रुढ, धर्म और राज के सभी है ही निम्नदास) आगे चलकर मणिलाल ने समाज-सुधार, जातिभेद, स्त्रीभेद, स्त्री शिक्षा, अंधविश्वास के खन्डन द्वारा अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता को उजागर किया है । रमणभाई नीलकंठ ऐसे रचनाकार एवं समाज सुधारक थे जिन्होंने जातिगत-भेदभाव से मुक्त होकर स्त्री शिक्षा के लिए अलग-स्कूल खोला । उनका मानना था कि ईश्वर के बनाये सभी मनुष्य समान है, इसलिए जातिभेद तथा अपृश्यता गलत है । उनके विचार में अस्पृश्यता तथा स्त्री की पराधीनता समाज के दो महान कलंक है । उन्होंने जातिभेद के खिलाफ अत्यंत तीव्र आवेग से लिखा है । ऐसा करने का मुख्य कारण समाज में व्याप्त वर्ण-विद्वेष है । उनके मंतव्य से दूसरा बड़ा सामाजिक दूषण स्त्री की पराधीनता और हीन दशा है ।[1]

आनंद शंकर ध्रुव और सुधारयुग, पंडितयुगीन रचनाकारों ने समाज की रुढियों को तोडने का प्रयास किया है ।

गांधीयुग का समय सन् १९२० से १९४७ तक माना जाता है । स्वाधीनता प्राप्ति आंदोलन के नेतृत्व के साथ साथ समाज सुधार के लिए

गांधीजी ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । उन्होंने अस्पृश्यता को हिन्दु धर्म का कलंक कहा है । गांधीजी की समग्र सृष्टि ही जीवनलक्षी थी । इसलिए उनके साहित्य में केवल ख्यामख्याली की जगह यथार्थ का संचार हुआ । उस समय केवल जीवन उच्चतर मूल्यों का शुकपाठ ही नहीं, बल्कि उसका सक्रिय अनुभव स्पर्श भी होने लगा था । सूर्य, चन्द्र और तारों की दिव्यता या विराट के झूले की जगह पीडित, शोषित, दलित जनता की वसुंधरा के व्यथितों की आंसू और यातनाओं की प्रस्वेद और गर्म-गर्म शोणितों की कविताएँ आकार लेने लगी । कदाचित पहलीबार गुजराती साहित्य ने यथार्थ की धरा पर पैर रख्खा ।

गांधीयुग में र.व.देसाई, धूमकेतु, सुन्दरम्, उमाशंकर जोशी, झवेरचंद मेघाणी, दर्शक, पन्नालाल पटेल, ईश्वर पेटलीकर, सुरेश जोशी, जयंत खत्री इत्यादि ने दलित समाज के प्रश्नो को साहित्य में चित्रित किया है ।

मराठी साहित्य में दलित साहित्य लेखन १९६० के बाद माना जाता है । उसका प्रभाव भारतीय भाषाओं जैसे कन्नड, मलयालम, तेलगू, तमिल, गुजराती, हिन्दी, पंजाबी, बंगाली वगैरह में भी सक्रिय रुप से दलित साहित्य लेखन की शुरुआत हुई । इन सारी भाषाओं में दलित लेखन तो होता ही था किन्तु दयावश या सहानुभूति परक दृष्टि थी जब कि आज का दलित साहित्यकार दया की याचना नहीं, मनुष्य के रुप में अधिकार चाहता है । अतः वह रचनात्मकता के जरिये अपनी अस्मिता की निरंतर तलाश कर रहा है ।

आज दलित-शोषित-पीडित-उपेक्षित मनुष्य साहित्य के केन्द्र में है । उपन्यास, कविता, कहानी, आत्मकथा, रेखाचित्र, नाटक, समीक्षा जैसी विद्याओं में दलित-साहित्य परिष्कृत हो रहा है ।

गुजरात में १९८१ और १९८५ के समय में हुए आरक्षण-विरोधी आंदोलन में दलित, दरिद्र, दुबले, आदिवासी प्रजा के उपर वर्णवादी लोगों ने हिंसात्मक हमले किए । अपना अस्तित्व खतरे में पडने लगा और वह अपनी पहचान बनाने के लिए दलित समुदाय कृतसंकल्प हो गया । गरीबी, लाचारी और अत्याचारों ने झकझोर दिया । आज यही संवेदनाओ को

साहित्य के शब्द के रुप में हमारे सामने प्रस्तुत किया है ।

डॉ. आंबेडकर, गांधीजी, हिन्दी प्रगतिशील साहित्य, मराठी साहित्य के कारण गुजराती दलित साहित्य में परिवर्तन आया ।

हरएक प्रजा का अपना साहित्य होना जरुरी है । दलित केवल जाति नहीं है, बल्कि एक अस्पृश्य समाज है । अपनी एक बोली है जीवनशैली है । अनुभव, और वेदना है । भारत में हर जाति एक समाज है इसीलिए हमारे समाज में एक जाति के लोगों को दूसरी जाति के दु:खों का पता नहीं होता । (लक्ष्मण-माने -मराठी साहित्यकार) यह करुण और बदकिस्मत फिर भी वास्तविक समस्या के सामने विद्रोह और वेदनापूर्ण अभिव्यक्ति के लिए दलित प्रजा अपने शब्द की शोध में थी, जो बाबा साहब के साहित्य में से, जीवन में से प्राप्त हुआ । इस तरह डॉ. आम्बेडकर की प्रेरणा से ही साहित्य प्रकट हुआ, वह दलित साहित्य के रुप में पहचाना गया ।

१९८१ और १९८५ के आरक्षण आंदोलन के समय दलित जाति के लिए अस्तित्व का प्रश्न जाग उठा । गाँवो में और शहरों में भयग्रस्त दलित, उच्चवर्ग के सामूहिक योजनाबद्ध अत्याचार के शिकार बने । अपने ही देश में काले अंग्रेज पैदा हुए, डॉ. आम्बेडकर का स्वप्न चूरचूर होने लगा, बंधारण सभाने जो शर्ते दी थी वह खत्म होती दिखाई देती थी । प्रबुद्ध पुरुष और सुज्ञ सर्जक नि:सहाय थे, चुप थे । समाचारपत्र प्रजा को सच्ची माहिती से (हकीकतसे) दूर रखते थे, विकृत हकीकते प्रकट होने लगी थी । दलित प्रजा भूख और दु:ख का भोग बन रही थी । तब "शिक्षित बने, संगठित बने, संघर्ष कीजिए ।" बाबासाहब ने दलितों को दिया जीवनमंत्र अंतिम घरो में, जन-जन के हृदय में गूंजन करने लगा । दलित सर्जको ने "आक्रोश, आर्तनाद, गरुड, पेन्थर, तमन्ना, काला सूरज, दीनाबांधु" जैसी कई दलित पत्रिकाएँ दलितो की पथदर्शिका बनी रही । 'दलित पेन्थर' का कविता ऋतपत्र 'आक्रोश' १४ अप्रैल १९७८ आंबेडकर जयंति अंक 'दलित अस्मिता झुंबेश' प्रकट हुआ था । तंत्री रमेशचन्द्र परमार और संपादक थे नीरव पटेल, दलपत चौहाण, प्रवीण गढवी, योगेश दवे संपादक

नोध है- मूक आक्रंद आज बोलता है- और सर्जन होता है गुजराती साहित्य की प्रथम कविताएँ आक्रोश किन्तु १९८१ में ६३ सर्जकों की १३९ कविताओं का संग्रह गणपत परमार और मनीषी जानीने साहित्य में शुभारंभ किया । उसमें दलित समाज की वेदना और चेतना के बानी मिली है । इस प्रकार प्रथम बार दलितो के बारे में । दलितो के लिए दलितो के कारण लिखना शुरु हुआ और दलितो के द्वार तक पहूँचा । यह समाज के लिए बडी उपलब्धि है । साहित्य के लिए बडी सिद्धि है ।[9]

इस प्रकार गुजराती दलित साहित्य का प्रथम प्रादुर्भाव कविता में हुआ । गुजराती भाषा में दलितों की संवेदना की उत्कट अभिव्यक्ति दलित कविता से हुई है ।

दलपत चौहान अपनी अस्पृश्य कविता में कहते है ।

"अभी तक खोजता रहा मेरे किस अंग-उपांग पर लिखी है अस्पृश्यता की ऋचा ?

मुझे अस्पृश्य नामकरण देनेवाले, इसलिए पूँछता हूँ, तुमसे, कहाँ है वह नाम जो उस समय तुमने दिया था ? जिसने मुझे मर्मान्तक पीडा दी है ।"[10]

चन्दु महेरिया कहते है-

"मुझे कवि नहीं होना,

मुझे तो विद्रोही होना है विद्रोही ।"[11]

पेंथर, आक्रोश, कालासूरज, नयामार्ग, सुअवसर, दलित मित्र, दिशा, मुक्तिनायक, मंथन, चांदनी, वाचा, समाजमित्र, हयाती, स्वाभिमान आदि पत्रिकाओ ने दलित वेदना को खुलकर समाज के समाने रखा है इनमें से हयाती के कई विशेषांक आज गुजराती दलित साहित्य के विकास के साथ नयी राह प्रदान कर रहे है । महात्मा ज्योतिबा फूले तथा बाबा साहब आम्बेडकर की विचारधारा और आधुनिक मराठी दलित रचनाओं के अनुवादो ने गुजरात के दलितो की सोयी अस्मिता को जागृत कर दिया है । मराठी की तरह गुजराती में भी दलित साहित्य की पृथक मांग होने लगी है । श्री हरीश मंगलम का तो कहना है कि- "जब गुजराती साहित्य

के इतिहास में पंडित युगीन साहित्य, गांधीयुगीन साहित्य, जैन साहित्य, चारणी साहित्य नाम प्रचलित है तो दलित साहित्य नामाभिधान से इतना उपेक्षाभाव या धृणा क्यों ? दलित साहित्य के उद्भव और विकास से गुजराती साहित्य में एक नया मोड आया है । नया युगशुरु हो चुका है, दलित साहित्य युग का एक नया प्रकरण गुजराती साहित्य के इतिहास में जुडा है ।" दलित कविता के कई संग्रह प्रकाशित हुए है-

विस्फोट (सं.बालकृष्ण आनंद) अस्मिता (चंदु महेरिया) प्रकप बुगियो वागे (सं.हरीश मंगलम्) जाति निर्मूलन (राजू सोलंकी) एकलव्यनो अंगूठो (नीलेश काथड) मथामण, व्यथा पचीसी (साहिल परमार) चिनगारी (के.बी. पंडया) तो पछी (प्रवीण गढवी) मशाल (राजू सोलंकी) वसंत पुराणी संपादित माणस, दुंदुभी (दलपत चौहान, हरीश मंगलम्, प्रवीण गढवी, यह संग्रह में ५९ कवियों की ८५ जितनी रचनाएँ दलित चेतना को वाणीप्रदान करती है । तो पछी क्या छे सूरज ? (दलपत चौहान) बेयोनेट, पीला तडका थी (पीले धूप से) पडछायो (परछाई) (प्रवीण गढवी) अमे अंधारे उगेला पडछाया (यशवंत वाघेला) अनौरस सूर्य, अनाश्रित सूर्य, क्षितिज सूर्य (किसन सोसा) आंगलाना आंसु (जीवन ठाकोर) भूंसाता माणसने घूंटुं छुं (बिपिन गोहिल) अग्निकण (नीलेश काथड) सूर्योन्मुख मसीहा, झंखना में सूर्या (ए.के.डोडिया) ओवरब्रिज, अनुबंध (भी.न.वणकर) चिनगारी (के.बी.पंडया) बूंगियो वागे (शंकर पेइन्टर) अत्याचार होने दो (बबलदास चावडा) विषादिता (गणेश सिंधव) स्वतंत्र केकारव (शंकर बू.पटेल) गोरंभो (मनीष परमार) मेघ धनुष्य (विनोदचंद्र बोरीचा) कंपन (ललित पटेल) रक्तकण (बिहारीलाल परमार) गूंजन (कानजी परमार) माणस पण करडे छे (इन्सान भी काटता है- डॉ.महेशचंद्र पंडया) सत रे बोलो नहीं तो मत बोलो (कान्तिलाल मकवाणा) मिजाज ओवारणां (चंद्राबेन श्रीमाली), ज्वालामुखी (शामत परमार) याद करो मसीहाने, संकल्प (सामंत सोलंकी) सरोज (रमेश देवमणी) आँख (के.के.वैष्णव) ऐकरुप (हरजीवन दाफडा) बहिष्कार (पथिक परमार) काव्यसंग्रह उल्लेखनीय है ।

नीरव पटेल, मधुकान्त कल्पित, रमण वाघेला, शिवजी रुखडा, बालकृष्ण आनंद, भीखु वेगडा, पुरुषोत्तम जादव जैसे सशक्त कवि है ।

किन्तु दलित कविता के स्वतंत्र संग्रह प्रकट नहीं किये, उसके सिवा नीरव पटेल का अंग्रेजी में काव्यसंग्रह प्रकट हुआ है । उस तरह मधुकान्त कल्पित, पथिक परमार, रमण वाघेला, दान वाघेला, वारिज, लुहार, शिवजी रुखडा, मनीष परमार, भी.न.वणकर जैसे कवियों ने ललितकाव्य संग्रह भी दिये है ।

आज दलित कविता आगे बढ रही है, कल समस्त विश्व की मानवता उसमे दिखाई देगी [1]

दलित कहानी

गुजराती दलित कहानी अलग अलग दिशाओं में फैल रही है । कम समय में हमें कितने सारे दलित कहानीकार मिले है । ये सभी कहानीकार अपनी अपनी तरह से दलित कहानी को समृद्ध करनेमें प्रवृत है । लेखक उच्चवर्ग में जन्मे है फिर भी दलित कहानियाँ लिखते है उसके बारेमें चर्चा करेंगे -

दिलीप राणपुरा (हजार रुपियानुं इनाम, धरमनो अवतार) विजय शास्त्री की (बीजा गांधी नी पहेली वारता) बंसीकुमार बारोट की (नोमनो गोकलियो) विष्णु पंडया (छावणी) धीरज ब्रह्मभट्ट (तमे पबाने जोयो) भगवत सुथार (गंगा), रतनशी मकवाणा (व्यथा) विजय पुरोहित (प्रेम दरवाजो) हरिसिंह दोडिया (पथ्थरनां आसुं) हसमुख सुथार (सतप्त धरती) सुमंत रावल (ओगणीसो सुतालीस) चतुर पटेल (रंछो) रजनीकुमार पंडया (हेडवास) राम प्रजापति (खिस्सु) इन्दुबहन महेता (जिंदगी) प्रवीण गढवी (मरद कसुंबल रंग चेड, अंतरव्यथा मत्स्यगंधा, एकलव्य, गोंहाण, सपाटु पेरवानुं मन, जीवण ठाकोर, (परमो दिशा-८८) आदि कहानियाँ भिन्न भिन्न कारणो से अच्छी कहानियाँ है ।

जो जन्म से दलित है और जिनको दलितो की पीडा-प्रक्रिया का परिचय है, ऐसे कहानीकार गुजराती कहानी के लिए एक नई आशा बनकर आये है । श्री जोसेफ मेकवान के 'साधनानी आराधना' और 'आवाणां' दो कहानी संग्रह महत्त्वपूर्ण है । श्री मेकवान को कहानी में सफलता कम मिली है । श्री हरीश कुमार मकवाणा (सपनानो उजागरो) श्री शीरीष परमार (थीजी गयेली रात)श्री राधवजी माधड (झालर) नरसिंह परमार (वैतालिका) कहानी संग्रह प्रकाशित हुए है ।

गुजराती साहित्य को दलित कहानी की सही पहचान गुजराती दलित वार्ता (संपादक-श्री मोहन परमार और हरीश मंगलम्) से हुई है । सभी आलोचकों ने प्रशंसा की है । नकलंक (मोहन परमार) बदलो (दलपत चौहान) विलोपन (भी.न.वणकर) दायण (हरीश मंगलम्) जैसी कहानियाँ उल्लेखनीय है ।

उसके सिवा पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियाँ भी उल्लेखनीय है । दलपत चौहान (चांल्लो) गंगा मा, घर, बा वालु आलजो) भी.न.वणकर (पग, हरिओम शरण, साईक्लोन) हरीश मंगलम् (उंटाटियो) रावणहथ्थो, झोण) यशवंत वाघेला (कोडनुं पाणी, अमस्तु कुमोत) मधुकान्त कल्पित-(लाखु, कुलकथा, हुताशन, मनजी) हरिपार (दीनाने डको, द्रोही) केशव कटारिया (विषचक्र, दशरथ परमार (गीद्धानुभूति) ईश्वर चौहान (चक्षुदान) कान्तिलाल मकवाणा (गलबानु सपनु) बाबुभाई परमार (आक्रोशनो अग्नि) आदि दलित कहानियाँ रसप्रद है । दलपत चौहान का नाम कहानियों में भी उल्लेखनीय है ।

दलित गुजरातीवार्ता-१९९५ संपादक -अजित ठाकोर और राजेन्द्र जाडेजा ।

प्रतिनिधि- दलित वार्ता-संपादक-हरीश मंगलम् वणबोटी वार्ताओ-संपादक-दलपत चौहाण

आंतरव्यथा- श्री प्रवीण गढवी, सांकल, नरक- श्री धरमाभाई (श्री माळी) संबंध - श्री राधवजी माधड, राती रायणनी रताश- बी. केशरशिवम्, चणीबोर- चकुनो वर- चंद्राबहन श्रीमाली, तोरण- रमणभाई वणकर, तलप-हरीश मंगलम्, पारखु- दशरथ परमार, विलोपन- भी.न.वणकर, मुंझारो- दलपत चौहान, अदृश्य दिवालो- मावजी महेश्वरी, लिसोटो-अमृत मकवाणा भींस- मौलिक तीरीजा जैसे उल्लेखनीय कहानीसंग्रह ने दलित साहित्य को समृद्ध किया है ।

गुजराती दलित साहित्य में जो कोई साहित्य स्वरुप में सत्वशील कार्य हुआ होता वह कहानी में । १९८० के बाद ठीक ठीक स्वरुप में दलित कहानियाँ प्रकाशित हुई है । १९८७ में गुजराती दलित वार्ता पुस्तक के संपादन के बाद तो गुजराती दलित वार्ता विपुल (ज्याद) प्रमात्रा में लेखन हुआ है, और उसकी चर्चा भी काफी हुई है । कलास्वरुप मूलभूत

है । गुजराती दलित वार्ता में कलामय शक्यताओं का स्वीकार हुआ है। दलित वार्ता में की हुई छोटी-छोटी, कलात्मकता अंत में तो दलित समस्याओं को ही पीठबल देने में सहायक है । लेखक अद्‌भूत कलामय शक्यताएँ कहानी में दर्शाये फिर भी दलित समस्या का छेद उड जाये तो दलित कहानी कह नहीं सकते । यहाँ दलित कहानी गुजराती कहानी से अलग है यह कहने का आशय (उद्देश्य) नहीं है । किन्तु दलित कहानी ने उसकी अपनी पहचान खडी की है ।[४]

दलित उपन्यास

गुजराती साहित्य में उपन्यास लोकप्रिया है । फिर भी गुजराती दलित साहित्य में कहानी जैसा विकास उपन्यास में नहीं हुआ ।

दलित विषयवस्तु और दलित संवेदना, दलित पात्र को अभिव्यक्ति प्रदान करनेवाले उपन्यास गैर-दलित लेखकों ने भी लिखे है । नंदशंकरमेहता (करणघेलो) तथा हिन्दुस्तान मध्ये का एक झोंपडा १८६२ अनूदित उपन्यास सोराबशा मुनसफ पारसी लेखक ने दिया है । यह प्रथम दलित उपन्यास है । उसके बाद सोपान (प्रायश्चित) गुणवंतराय आचार्य (कराल काल जागे) (दिव्यचक्षु, ग्रामलक्ष्मी) रमणलाल व.देसाई, (आंसू भीनो उजास) दिलीप राणपुरा, (गांठ छूट्यानी वेला) वर्षा अडालजा, स्नेहरश्मि (अंतरपट) ईश्वरपेटलीकर (कल्पवृक्ष) रामचन्द्र पटेल (वराल) पिनाकिन दवे (प्रलंब पंथ) रघुवीर चौधरी (ईच्छावर) जयंत गाडीत (बदलाती क्षितिज) चिनु मोदी (कालो अंग्रेज) किशोरसिंह सोलंकी (मशारी) जयभिख्खु (संसार सेतु) मणिलाल पटेल (अंधारु) आदि उपन्यास उल्लेखनीय है ।

दलित लेखकों के दलित उपन्यास

आंगलियात (जोसेफ मेकवान) गुजराती का सर्वप्रथम दलित उपन्यास माना जाता है । पहलीबार दलित नायक, दलित जाति एवं उसकी जीवनशैली को केन्द्र में रखकर चित्रण करने वाला यह पहला उपन्यास है । उसके बाद जोसेफ मेकवानने (मारी परणेतर, लक्ष्मणनी अग्नि परीक्षा, बीज त्रीज ना तेज, दरिया) श्री दलपत चौहान (मलक, गीध, भलभांखलु) मोहन परमार (प्रियतमा, लियुडीया पशानी वाडी) हरीश मंगलम् (तिराड

और चौकी) दक्षा दामोदरा (शोष) बी. केशर शिवम् का (शूल और मूल अने फूल) उपन्यास उल्लेखनीय है । जिसकी चर्चा विस्तार से अध्याय मे करेंगे ।चिंटी ने ठहाका मार्यु दिनु भद्रेसरिया लिखित उपन्यास है ।

गैर दलित साहित्यकारों के उपन्यासों के बारे में एक झलक देखे तो

हिन्दुस्तान मध्येनुं झोपडुं अनूदित उपन्यास है उपन्यास में जातिभेद, विधवा विवाह, पर प्रकाश डाला गया है ।

सन् १९५० तक गुजराती उपन्यासों में सामाजिक चेतना व्यापक रूप में उभरकर सामने आयी । खास तौर पर समाज-सुधार, रुढ़ियों, कुरिवाजों का खण्डन, सामाजिक-आर्थिक विषमता वगैरह विषयों का व्यापक रूप में चित्रण किया जाने लगा । सामाजिक उपन्यासकारों में भोगीन्द्रराव दिवेटिया, वसनजी टक्कुर, कनैयालाल मुन्शी, र.व.देसाई, चुनीलाल शाह, गुणवंतराय आचार्य, धूमकेतु, झवेरचंद मेघाणी, उमाशंकर जोशी, चं.ची. मेहता, दर्शक, पन्नालाल पटेल, ईश्वर पेटलीकर, चुनीलाल मडिया आदि उपन्यासकारों का उल्लेखनीय योगदान रहा है । उन्होंने तत्कालीन समाज की विभिन्न परिस्थितियों का व्यापक चित्रण किया है । कुरिवाजों, रुढ़ियों, गरीबी-अमीरी ऊँचा-नीच,धार्मिक पाखंड, प्रसन्न दाम्पत्य जीवन की कामना, नारी जीवन की परिस्थितियों, ग्रामोद्धार आदि उपन्यासों में देखने को मिलते हैं ।[1]

गांधी युग के उपन्यासकार दलित चेतना को साथ लेकर चले हैं । अछूत समस्या का खंडन, आम आदमी और उनकी समस्याओं पर इस युग के उपन्यासकारों ने अत्यधिक जोर दिया है ।

गैरदलित लेखक स्वस्थ और तटस्थ रहकर वास्तविक परिस्थिति का निर्माण करते है । फिर भी दलितों के अंदरुनी दावपेच, सामाजिक व्यवहार, दलितो के दु:ख दर्द को स्पष्ट रुप में व्यक्त नहीं कर पाते क्योंकि जुता काटे वह सिर्फ वो ही जानता है जिसने जूता पहना हो ओर पीडा महसूस की हो, इसलिए ऐसे साहित्यकार हमारे लिए समाज के लिए उपयोगी है, प्रेरणादायक है, आशा रखते है और भी उपन्यास हमें मिले ।

दलित उपन्यासकार बी. केशरशिवम ने दो उपन्यास लिखे है ।

(१) शूल

लेखकने यहाँ यथार्थवादी दृष्टिकोण से पढे-लिखे नौकरी पेशा दलित व्यक्ति को सवर्ण समाज में किस प्रकार उपेक्षा का शिकार होना पडता है तथा किस-किस प्रकार के संघर्ष करने पड़ते है इसका यथार्थ बयान किया है । इस उपन्यास के गोविन्दभाई मकवाणा या रमेशभाई जैसे लोग प्रतिष्ठित पद पर नियुक्त हुए परन्तु दलित जाति के होने के कारण इन क्रिमिलेयरो के शिक्षक, तहसीलदार, जज, आयकर अधिकारी, विधानसभा के सदस्य या मंत्री बनने के बाद भी सवर्ण अनेक प्रकार से उन्हें शूल चुभाते रहते हैं, और उन्हें शारीरिक-मानसिक पीडा उठानी पड़ती है । उस भोगे हुए यथार्थ का चित्रण इस उपन्यास में यथार्थवादी दृष्टिकोण से किया गया है 'उपन्यास का नायक न्यायाधीश दलित समाज का है । शहर में वह सवर्णो के बीच मकान लेता है । इसके बाद जाति के कारण जो-जो यातनाएँ उसे झेलनी पड़ती है उसका वास्तविक बयान है शूल उपन्यास लेखक की चिन्ता भी सकारण ही है- "क्या अभी भी वही धूल जैसी जिंदगी जी रहे है । क्रिमिलेयर में जिसकी गीनती हो रही है उन्हें वे शूल अब त्रिशूल बनकर चुभ रहे है ? क्या यह शूल-कांटे, कंटक या छोड गमले-कूडे में कैक्टस बनकर बंगले की शोभा की तरह साहित्य की शोभा मात्र नहीं बन जायेगा न ?"

१९८५ के आरक्षण आंदोलन के समय की यह कथा है । दलित व्यक्ति की शहर में क्या हालत हुई थी उसका वर्णन है । बुद्धिशाली सवर्ण संगठन किस प्रकाश हमला करते थे, युवान लड़कियों की इज्जत लूंटते थे और पुलिस उनका कुछ नहीं कर सकती थी । सचमुच शूल उपन्यास शहर में रहते दलितो की विडम्बना की कथा है ।

(२) मूल और धूल

बी.केशरशिवम् का दलित चेतना केन्द्रित एक और उपन्यास है, जिसमें उन्होंने मजदूरी पर जी रहे दलित समाज की व्यथा का यथार्थ निरुपण किया है । समाज में फैल रहे पाखंडी ब्राह्मणवाद और धर्म के विकृत स्वरुप को भी लेखक ने खोलकर रख दिया है । अपने हक और

अधिकार के लिए संघर्षरत दलितों को कितनी यातनाएँ झेलनी पडती है वही घटनाएँ इस उपन्यास का जीवंत दस्तावेज बनकर हमारे सामने आती है ।

उपन्यास के माध्यम से लेखक ने दलितों में "शिक्षित बनो, संगठीत बनो, संघर्ष करो" वाली आम्बेडकरीय विचारधारा का बीज रोप दिया है । साथ में यह भी बताया है कि दलितों को अपना रक्षक खुद ही बनना पडेगा यानी अप्पो दीप भव । लेखक का प्रयास है कि "इस उपन्यास में प्लैग की भयंकरता का बयान है । जब अस्पृश्यता रुपी प्लेग अभी तो दलितो को ही पीडा दे रहा है.. डॉ. आम्बेडकर द्वारा फूँके गये जागृति रुपी तूफान से वर्णाश्रम के मूल (जडें) हचमच गये है । धूल जैसी जिन्दगी जी रहे दलितों की धूलभरी आंधी एक दिन इस सडी गली वर्णाश्रम की जडो को हचमचा कर धरती पर फेंक देंगी ।"

डाया पशानी वाडी (मोहन परमार)

यह उपन्यास में मित्र के असभ्य व्यवहार से त्रस्त डाया पशा गाँव में से अस्पृश्यता को दूर करता है । सुधारावादी उपन्यास है । देवुबा और मकवाणा साहब की प्रणयकथा है ।

भरत महेता- "एक तरफ अच्छे पात्र दूसरी और बुरे पात्र की चेईन है । देवुबा और मकवाणा साहब की प्रणयकथा हवाई बनी रहती है । कहानीकार मोहन परमार यह उपन्यास में वास्तव को बिलकुल (मात्र) सपाटी पर ही रखते है उसका आश्यर्य होता है । लेखन सिद्धहस्त लेखक का होने से, लोकप्रियता के तत्त्व सामने होने से, वीर धीरोदात्त नायक डायापशा की उपस्थिति से यह उपन्यास में सामान्य पाठक को रस होगा ।"

चींटीने ठहाका मारा- 'कीडीये खोंखारो खार्धो (दीनु भद्रेसरीया)

युवान दलित साहित्यकार श्री दीनु भद्रेसरीया ने आरक्षण आंदोलन और गोधराकांड के बाद जो कोमी तूफान हुये, उस समय दलितों की स्थिति, सवर्णो की गूंडागीरी का यथार्थ निरुपण किया है ।

चीटी अब चींटी नहीं रही । आजादी के पचपन साल बाद भी गाँवों में अस्पृश्यता है, पढे-लिखे दलित अब गाँव की पंचायत में

हिस्सा लेते है, इसीलिए गाँव में सुधार होता है, तो सवर्ण लोग उसका विरोध करते है, संघर्ष होता है ये हमारा आज का गोकुल गाँव है ।

स्वाध्याय, संत, की पोल भी यहाँ खुलकर रख दी है ।

नाथालाल फोजदार का यह वाक्य चोटदार है "यह टेकरी का अंधेरा कब हटेगा ? (दूर होग?)"

लेखक दलित अस्मिता को जागृत करना चाहते है, दलितों को जागृत करते है । सरकार, पुलिस सब सवर्णो की है, शोषित, पीडित का कोन ?

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर का जीवन चरित्र डॉ. पी.जी.ज्योतिकार ने लिखा है ।

(अपूर्णसत्य) बी.केशरशिवम् ने लिखाकर अपने व्यथामय जीवन को व्यक्त किया है ।

आलोचना

आलोचना क्षेत्र में हरीश मंगलम् (विदित, पणछ, एकवचन) मोहन परमार (अणसार) भी.न. वणकर (प्रत्यापन, अनुसंधान, नवोन्मेष, पर्याय, दलित साहित्य) दलपत चौहाण (पदचिन्ह) मोहन परमार, हरीश मंगलम्) गुजराती दलित साहित्य स्वाध्याय अने समीक्षा, संविति, (सम्यक)यशवंत वाधेला, धवल महेता, रघुवीर चौधरी, नरेन्द्र दवे, जयंत गाडित, राधेश्याम शर्मा, प्रवीण दरजी, सतीष व्यास, अजित ठाकोर, मणिलाल ह. पटेल, भरत महेता, बाबू दावलपुरा ने भी दलित साहित्य को देखा है, परखा है फिर भी मुक्तिबोध मिलना बाकी है । जोसेफ मेकवान, पथिक परमार, नीरव पटेल, अरविंद वेगडा, मधुकान्त कल्पित, महावीर सिंह चौहान का नाम भी आलोचना के साथ जुडा हुआ है ।

रेखाचित्र

रेखाचित्र में जोसेफ मेकवान ने ज्यादा काम किया है, दलित, शोषित, दु:खी, फिर भी हंसते, रोते व्यक्ति का यथार्थ निरुपण उन्होंने किया है । (व्यथानां वीतक, वहालनां वलखां, मारी भिल्लु, जनमजला) रेखाचित्र मिले है ।

चंदु महेरिया 'माडी मने सांभले रे' ग्रंथ में 'मा' विषयक रेखाचित्र है । (रणद्वीप) दलित सर्जक परिचय संग्रह (भी.न.वणकर) ने दिया है ।

दलित साहित्य में निबंध, माहिती लेख, घटनाप्रसंग, लोक साहित्य और संशोधनात्मक साहित्य, नाटक, दलित वृत्तपत्रो, अनुवाद भी प्राप्त है किन्तु उसकी चर्चा दूसरे ग्रंथो में हो चुकी है जैसे कि दलित साहित्य (भी.न.वणकर) पृ.४५ से ५२)

पेंथर, आक्रोश, कालासूरज, नया मार्ग, सुवअसर, दलित मित्र, दिशा, मुक्ति नायक, मंथन, चांदनी, वाचा, समाजमित्र, हयाती, स्वाभिमान, आदि पत्रिकाओं ने दलित वेदना को खुलकर समाज के सामने रखा है इनमें से हयाती के कई विशेषांक आज गुजराती दलित साहित्य को विकास के साथ नयी राह प्रदान कर रहे है । महात्मा ज्योतिबा फूले तथा बाबासाहब अम्बेडकर की विचारधारा और आधुनिक मराठी दलित रचनाओं के अनुवादो ने गुजरात के दलितों की सोई अस्मिता को जागृत कर दिया है । मराठी की तराह गुजराती में भी दलित साहित्य की पृथक मांग होने लगी है । श्री हरीश मंगलम् का तो कहना है कि जब गुजराती साहित्य के इतिहास के पंडित युगीन साहित्य गांधीयुगीन साहित्य, जैन साहित्य, चारणी साहित्य, नाम प्रचलित है, तो दलित साहित्य नामाभिमान से इतना उपेक्षाभाव या धृणा क्यों ? दलित साहित्य के उद्‌भव और विकास से गुजराती साहित्यमें एक नया मोड आया है । नया युग शुरु हो चुका है, 'दलित साहित्य युग' का एक नया प्रकरण गुजराती साहित्य के इतिहास में जुड़ा है [1]

हिन्दी दलित उपन्यास का विकास

उपन्यास साहित्य में दलित जीवन को प्रेमचंद-युग में स्थान मिला । कविताओं में कहानियों में अवश्य स्थान मिला था । प्रेमचंदने स्वयं साहित्य के उद्देश्य के बारे में लिखा है कि जो दलित है, पीडित है, वंचित है- चाहे वह व्यक्ति हो या समूह उसकी हिमायत और वकालत करना उसका फर्ज है ।

दलित परिवेश, दलित विषयवस्तु, उसमें भी मुख्यतः दलित समस्या, दलित पात्र और दलित संवेदना एवम् दलित चेतना का प्रादुर्भाव

ही दलित उपन्यास की पेहचान है ।

गैरदलित लेखकों के दलित जीवन केन्द्रित प्रमुख उपन्यासों में बंधुआ की बेटी (पांडेय बेचेन शर्मा उग्र) रंगभूमि, गबन, कर्मभूमि, गोदान (प्रेमचंद) दिव्या (यशपाल) बलचनमा, वरुण के बेटे (नागार्जुन) कब तक पुकारु (रांगेय राघव) धरती धन न अपना (जगदीशचन्द्र) नाच्यो बहुत गोपाल (अमृतलाल नागर) परिशिष्ट (गिरिराजकिशोर) झीनी झीनी बीनी चदरिया (अब्दुल बिस्मिल्लाह) धार (संजीव) गगन घटा घहरानी (मनमोहक पाठक) नरक कुंड में बास (जगदीशचन्द्र) प्रसिद्ध है ।

हिन्दी दलित लेखकों के दलित उपन्यास

जहाँ तक हिन्दी भाषा की बात है उसमें दलित लेखक रचित दलित चेतना केन्द्रित उपन्यास मुश्किल से पाँच, छः उपलब्ध होते हैं । जिनमें छप्पर (जयप्रकाश कर्दम) मिट्टी की सौगंध (प्रेम कपाडिया) जस तस भई सबेर (सत्यप्रकाश) मुक्तिपर्व, वीरांगना झलकारीबाई (मोहनदास नैमिशराय) हिडिम्ब (एस.आर.हरनोट) ही उपन्यास उपलब्ध हो सके हैं ।

दलित साहित्य के प्रति अस्वीकृति के सुर कम हुए है । दलित साहित्य विविध स्वरुप में प्रकट हो रहा है, विकास हो रहा है । सामाजिक प्रतिबद्धता और साहित्यिक रुपबद्धता के साथ दलित साहित्य ने अपनी अलग-अलग पेहचान प्राप्त की है । साहित्य विश्व में दलित साहित्य के नवोन्मेषरुप नूतन (नया) अध्याय प्रस्थापित हुआ है जिसमें दलित, पीड़ित, शोषित प्रजा के अस्तित्व का ओर अस्मिता का स्वीकार है । मानव गरिमा का आविष्कार है । दलित साहित्य द्वारा दलित, शोषित उपेक्षित विश्व के प्रतिसाहित्य की नई दिशाएँ खुल रही है । परिणाम स्वरुप साहित्य की क्षितिजे बढेगी और साहित्य सविशेष समृद्ध होगा [1]

संदर्भ सूचि

१. संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश- वामन शिवराम आप्टे पृ.सं.४५१

२. हंस-संपादक -राजेन्द्र यादव-जनवरी- १९९७ पृ.५३

३. उच्चतर हिन्दीकोश- डॉ.हरदेव बाहरी- पृ.सं.१४

४. वही, पृ.सं.४६

५. वही पृ.सं.१८८

६. बृहद गुजराती कोश -के.का.शास्त्री, पृ.२१४४

७. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास पृ.सं.३

८. हिन्दी उपन्यासो में दलित वर्ग- डॉ. कुसुम मेघवाल- पृ.-सं.७

९. वही, पृ.२९

१०. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास- पृ.सं.६

११. डॉ.बाबासाहब अम्बेकर धनजंय कीर-पृ.सं.२८३/८४

१२. समकालीन भारतीय साहित्य सं.गिरधरराठी- जनवरी, फरवरी-१९९७, पृ.सं.१०

१३. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास- डॉ.गीरीश रोहित पृ.सं.१०

१४. द.सा.आंदोलन-पृ.५

१५. वही- पृ.सं.१७

१६. वही, पृ.सं.१९

१७. वही, पृ.सं.१९

१८. भारतीय समाज क्रान्ति के जनक महात्मा ज्योतिबाफूले- डॉ.मु.ब.शहा- पृ.२६

१९. वही, पृ.सं.५४/५५

२०. दलित साहित्य आंदोलन पृ.२६

२१. डॉ.बाबासाहेब आम्बेडकर -सूर्यनारायण रणसुभे- पृ.सं.७३

२२. उद्धधृत संचेतना-संपा.महीपसिंह अंक-६७ पृ.-सं.४२

२३. डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर -सूर्यनारायण रणसुभे-पृ.सं.७३

२४. वही, पृ.सं.६१

२५. वही, पृ.सं.८१

२६. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास, पृ.१६

२७. भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या- श्री जगजीवनराम पृ.सं.२६

२८. भारतीय दलितों की समस्याएँ एवं उनका समाधान डॉ. आर.जी.सिंह- पृ.१२५-२६

२९. जाति, संस्कृति और समाजवाद, स्वामी विवेकानंद, पृ.६६

३०. नीली पहाट- रा.ग.जाधव-पृ.१९

३१. डॉ. चन्द्रकुमार वरठे- अनाम बस्तीयों केदेश में

३२. संस्कृति के चार अध्याय- पृ.१६५

३३. दलित साहित्य आंदोलन ,पृ.३४

३४. वही, पृ.सं.३६

३५. अस्मिता दर्शन, जन.फर.मार्च.-७४

३६. स ा ु ध ा ी र ब ा ा ल ा न ा (The Dalit Panters movement in Maharastra Problems and aspectus ()an Unpublished disseratation submitted to Center of Pollitical studies Jnu. New Delhi Aug.1976)

३७. द.सा.आं.-पृ.सं.४२

३८. Declaration of Dalit Imancitation struggle, dalit Panther of iNdia (1st National convention, Delhi March- 15, 16-1980)

३९. द.सा.आं.-पृ.५५

४०. डॉ.ताराचंद खांडेकर /संचेतना/संपा.महिपसिंहपृ.सं.८४

४१. हिन्दी साहित्य का इतिहास- पृ.१४०

४२. द.सा.आंदोलन- पृ.स.६७

४३. वही, पृ.सं.७१

४४. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास पृ.सं.३१

४५. संचेतना- अंक -६७-पृ.सं.-६१

४६. युद्धरत आम आदमी- संपा.रमणीका गुप्ता-अंक- ३४/३५ वर्ष-१९९६, पृ.सं.५७,५८

४७. वही, पृ.सं.६५

४८. संचेतना- दलित सा.विशेषांक-पृ.७९

४९. दलित कहानियाँ- संपा.सूर्यनारायण रणसुभे, कमलाकर गंगावणे-पृ.सं.१८
५०. विस्फोट- पृ.सं.१० दीपक महेता
५१. विदित- पृ.सं.४ हरीश मंगलम्
५२. युद्धरत आम आदमी अंक-३४,३५,वर्ष-९६ पृ.सं.४६,४७
५३. द.सा.और सामाजिक न्याय- डॉ.पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, पृ.८४
५४. द.चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास पृ.सं.३०
५५. ॠग्वेद- १०-९०-१२
५६. हिन्दुधर्म- डॉ.राधाकृष्णन अनु.चन्द्राशंकर शुक्ल, पृ.सं.१३२
५७. सुवर्णयुग- कनैयालाल मुनशी- पृ.सं.७८
५८. डॉ.अम्बेडकर संपूर्ण अक्षरदेह गं.-१४, पृ.१९८
५९. वडोदरा राज्य का इतिहास पृ.सं.२३, देशी शिक्षा खातु आवृत्ति, १२-१९३६
६०. गु.सा. का इतिहास- परिषद पृ.सं.१०८
६१. दलित साहित्य पृ.सं.१५५ (भी.न.वणकर)
६२. वही, पृ.सं.१५६
६३. अर्वाचीन गु.सा.का ईतिहास रमेश त्रिवेदी पृ.सं.१५०
६४. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास, पृ.४६
६५. अर्वाचीन गुजराती सा.कि विकास रेखा- धीरुभाई ठाकर, पृ.१५४
६६. द.चे.केन्द्रित हि.गु. उपन्यास पृ.४८
६७. गु.सा.का इतिहास परिषद ग्रंथ-३ पृ.सं.४३३
६८. अर्वाचीन गु.सा.का इतिहास रमेश त्रिवेदी- पृ.१६१
६९. दलित साहित्य- (भी.न.वणकर) पृ.सं.२१
७०. दलित कविता संचय-सं.गणपत परमार, पृ.२२
७१. वही, पृ.१४४
७२. विदित -हरीश मंगलम्, पृ.सं.५८/५९
७३. दलित साहित्य- भी.न.वणकर, पृ.सं.३४
७४. गुजराती दलित साहित्य- स्वाध्याय और समीक्षा मोहन परमार, हरीश मंगलम् (वीसमी सदी का गुजराती दलित साहित्य लेख मोहन परमार पृ.सं.९)

७५. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास, पृ.सं.९६

७६. युद्धरत आम आदमी विशेषांक ५३, पृ.सं.२५१

७७. शूल -बी.केशरशिवम् -पृ.७

७८. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास, पृ.सं.२१३

७९. शब्दसृष्टि- नवेम्बर- २००३, अंक-११, पृ.सं.१९२

८०. विदित- हरीश मंगलम्- पृ.सं.५८,५९

८१. दलित साहित्य (पृ.५६) भी.न.वणकर

अध्याय-२
मोहनदास नैमिशराय व्यक्तित्व, कृतित्व एवं वीरांगना झलकारीबाई उपन्यास का विवेचन

मोहनदास नैमिशराय

जनम-५ सितम्बर, १९४९, मेरठ शहर (उ.प्र.)

प्रकाशित कृतियाँ-

कविता संग्रह-सफदर एक बयान

कहानी संग्रह-आवाज़े

नाटक- अदालतनामा

आत्मकथा १. अपने अपने पिंजरे भाग-१-२

उपन्यास-१.क्या मुझे खरीदोंगे ? २.मुक्तिपर्व, ३. वीरांगना झलकारीबाई

अन्य-१. आत्मदाह, संस्कृति : उद्‌भव और विकास

२. विरोधियों के चक्रव्यूह में डॉ.अम्बेडकर

३. अम्बेडकर डायरेक्टरी, ४. स्वतंत्रता संग्राम के दलित क्रांतिकारी

५. बाबाने कहा था, ६. हमारे प्रेरणास्त्रोत डॉ.बी.आर.अम्बेडकर

७. बाबासाहब और उनके संस्मरण ८. समता की ओर

९. उजाले की और बढते कदम (मानसिक वधिता पर शोध पुस्तक)

१०. कास्ट एन्ड रेस

अनुवाद - १. हिदुत्व का दर्शन (अंग्रेजी से)

२. डॉ.अम्बेडकर और कश्मीर समस्या (मराठी से)

भारतीय दलित आंदोलन के इतिहास पर शोधकार्य जारी फिल्म, दूरदर्शन एवं रेडियो के लिए स्क्रिप्ट आदि का लेखन ।

पुरस्कार- १. डॉ.अम्बेडकर स्मृति पुरस्कार १९९३ अनुसुचित जाति विकास परिषद दिल्ली । २. पत्रकारिता एवार्ड १९९३ पीपुल्स विक्टरी ।

३. डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार १९९८ भा.द.साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

४. वाणिज्य हिन्दी ग्रंथ पुरस्कार (आम आदमी की आय एक वाणिज्यिक सर्वेक्षण) १९९४-९५, वाणिज्य मंत्रालय (भारत सरकार)

वीरांगना झलकारीबाई

"वीरांगना झलकारीबाई" एक ऐतिहासिक उपन्यास है । १८५७ के आसपास भी दलितों में नारीचेतना जाग्रत थी । सचमुच मोहनदास नैमिशराय ने इतिहास में छिपी एक महत्त्वपूर्ण नारी का चरित्र यहाँ प्रकट किया है ।

जिस समय में दलितों की परछाई से भी लोग दूर रहते थे, उनको गाँव से बाहर रखते थे । ऐसे समय में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी झाँसी के बचाव के लिए अंग्रेजो के साथ युद्ध किया था । उस युद्ध में महिला सैनिको का भी बल था, और एक दलित नारी को कमान्डर बनाया था । जो इतिहास के लिए यादगार प्रसंग है । झलकारीबाई आज की नारी के लिए संदेश है । सवर्णो को रानी का यह कदम अच्छा नहीं लगा था, किन्तु जब युद्ध में झलकारीने जो पराक्रम दिखाया उससे ज्ञात हुआ कि वीरता तो मन से होती है, जाति से नहीं । सुखी घर की स्त्रीयाँ घर मैं बैठी थी, तब झलकारी युद्ध में, अंग्रेजो की सेना के लिए शिरदर्द बनी थी ऐसा चरित्र इतिहास में अमर रहेगा ।

उपन्यास में झलकारीबाई का चरित्र उभरकर आता है, जो झांसी के पास भोजला गाँव के दलित परिवार की लडकी थी । उसकी शादी झांसी में हुई थी । १८३० से १८६० के आसपास की कथा है । दलित-सवर्ण की खाई बहुत गेहरी थी । ब्रिटिश साम्राज्य का बुलडोजर गाँव गाँव आगे बढता जा रहा था । राजाओं में वीरता थी, किन्तु आपस में ही टकराते थे । गाँव में मंदिर था, किन्तु स्कुल न था । राजा को भगवान समजते थे, आम प्रजा की दरबार में पहुँच न थी ।

राजनैतिक परिवर्तन का युग था । रजवाडों और रियासतों में राजा, नवाब, जागीरदार अंग्रेजी हुकूमत के गौरवगान में मशगूल थे । वे गुलाम बने थे, पर अपने से बडा किसी को नहीं समझते थे । गंगाधर रावने अंग्रेजों की मदद से विद्रोहीओं को दबा दिया था । किन्तु ये भी राजपाट पाने के लिए कभी भी खून बहा सकते थे । जनता पर करों का बोज बढने लगा था, आर्थिक व्यवस्था सोचनीय हो गई थी ।

जंगल में बाघने झलकारी पर हमला किया तो कुल्हाडी से उसको गिरा देती है । बाघ वहीं पे मर जाता है । गाँव परगाँव झलकारी की बातें होती है, इर्ष्या भी होती है छोटी जात की लडकी किसी बाघ को मार दे । वीरता और बहादुरी के सारे गुण तो सवर्ण समाज के क्षत्रियों के लिए सुरक्षित कर रखे थे और दलितों, पिछडों के खाते में अवगुणों के साथ अयोग्यताओं की भरमार थी, यही मान्यताएँ दृढ हो गई थी ।

गाँव में पन्डितने जन्मपत्री देखकर कहा था- यह पूर्वजन्म का फल है । सवर्ण-पिछडी जाति और दलित ये तीन जातिक्रम था । पिछडी जाति सवर्णो के रक्षा कवच थे । और दोनों की सेवा करना दलितों का धर्म था । लोगों की पहचान जाति से होती थी ।

गाँव में हर साल बाहरी लोग जैसे गुसाई, पादरी, बौद्ध भिक्खू आते थे । गुसाई माँगते नहीं थे, देनेवाले स्वयं उनके पास जाकर देते थे । उनके कई मठ, मन्दिर तथा अखाडे थे । सारा गाँव आर्शीवाद लेने जाता था, मुफ्त में खाना खाते थे, और अनपढ लोगों जो झूठे-सपनों में भ्रमित रखते थे । जनता से लेकर राजा तक सभी उनसे घबराते थे, क्योंकि घात-प्रतिघात की राजनीति में वे पारंगत थे ।

बाद में पादरी आए । वह स्कूल और अस्पताल के बारे में पूछते थे । वे किताबें और दवाए देते थे । हर जाति के आदमी से मिलते थे, वे माँगते नहीं थे, केवल देते थे । वे क्रोध से परे थे, केवल हँसते थे । जातिप्रथा की विसंगतियों पर उनकी अंगूली थी । दलितों, स्त्रीयों की स्थिति में सुधार चाहते थे ।

बौद्ध भिक्खू समाज में परिवर्तन चाहते थे । वह भी पुछते थे तुम्हारे गाँव में पाठशाला है ? तो सबने मना कर दिया । किन्तु झलकारी कहती है- हाँ, ब्राह्मण अपने घर में पढाते है, दलितों को नहीं । भिक्खु रुढियाँ, परम्पराओं जातियों के विरोधी थी ।

झलकारी की शादी पूरन के साथ होती है, दोनों कपडा बूनने का काम करते है । झांसी में अंग्रेज का पडाव था, मेजर एलिस और

कैप्टन गार्डन इस्ट इन्डिया कम्पनी के एजन्ट थे । दरबार के कई भेदिए उन्हें जानकारी देते थे, और उनसे ईनाम पाते थे । इस प्रकार ये एजन्टोने कई राजाओं को परास्त किया था ।

राजा गंगाधरराव नाट्यशाला में ज्यादा ध्यान देते थे, प्रजा का कम ध्यान रखते थे । सैनिको में अनुशासन नहीं था । प्रजा में राजा के प्रति स्वामी भक्ति नहीं थी । रंगीले राजा के एश्वर्य से उत्पन्न राज्य में महंगाई के दबाव और अतिरिक्त करों के बोझ से थकी-हारी जनता की पीठ पर फिरंगी चाबुक की मार भी पडती थी ।

मछरिया भंगी और नारायण शास्त्री का प्रेम बढता था, पत्नी केरुप में स्वीकार करने पर ब्राह्मण होने के कारण शास्त्री का दंड राजा भी नहीं कर सका । झाँसी में अन्तर्जातीय विवाह की यह प्रथम घटना थी । अंत में देशनिकाल का दंड उसे होता है ।

झाँसी में जनेउ प्रसंग खडा हुआ था । शुद्रोंने भी जनेउ पहनी, इसलिए सवर्णोने आंदोलन किया । राजा भी रुढिवादियों के साथ था, इसीलिए ऐसे शुद्रों को पकडकर दंड किया, मारा-पीटा, सार्वजनिक स्थलों पर उन्हें बेइज्जत किया गया ।

रानी लक्ष्मीबाई दूसरी रानीयों से अलग थी, मुक्त विचरण करनेवाली थी । हर स्त्री से वह मिलती थी, रानी होकर वह प्रजा के सुख-दु:ख में हिस्सेदारी करती थी । हल्दी कुमकुम के अवसर पर सारे नगर की स्त्रीयाँ रानी को मिलने जाती थी, झलकारी भी जाती है, उसकी सुरत रानी से मिलती-जुलती थी । यह मुलाकात ऐतिहासिक बनी रहती है, उसे कुस्ती, घुडसवारी सीखना कहती है ।

गाँव में दलित चेतना दिखाई देती थी, दो लडके सैनिक बने थे, वे सरपंच की आँख में आँख मिलाकर बात करते है । चमारों ने मृतभैंस को उठाने का मना कर दिया था ।

उन्नीसवीं सदी में दो क्रांति चल रही थी, सामाजिक अन्याय के खिलाफ और अंग्रेजी साम्राज्य के विरोध में । राजा गंगाधरराव की मृत्यु होने पर झांसी का राज्य अंग्रेजी राज्य में मिला दिया, रानी की उम्र

अठारह साल की थी । अंग्रेजों ने कहा हम दामोदर-राव को दत्तक मानने के लिए बाध्य नहीं है, रानी को मासिकवृत्ति दी जाएगी । ये सूनकर रानी ने कहा- मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी । किन्तु झाँसी में अंग्रेजी शासन शुरु हो गया, रानीने युद्ध की तैयारी शुरु कर दी । नगर में कोई हडकम्प नहीं मचा था, बस नपुंसक बनकर अंग्रेजो को कोसते थे और मंदिरों में घंट बजाते थे ।

रानीने सभी जाति के लोगों को सैनिक बनाने का संकल्प किया, किन्तु सवर्णोने दलितों का विरोध किया । रानीने कहा- युद्ध क्षेत्र में लडना मन से है, जाति से नहीं । इसलिए कायदे, कानून, रीति-रिवाज, परम्पराएँ समय देखकर बदलना पडता है । अंग्रेजो में सभी जाति के सैनिक है, हम एक होंगे तभी अंग्रेजो को परास्त कर सकेगे । महिलाओं का भी एक दल बनाकर सारी मान्यताएँ उलटफेर कर दी । झलकारी को कमान्डर बना दिया । जंगल में निशानेबाजी सीखने वक्त एक बछिया के पैर में गोली लगती है तो गाय हत्या का आरोप लगाकर झलकारी को समाज तू तू करना है । दलित और सवर्ण जाति का पंच जाति बहिष्कार का दंड देता है ।

झलकारी रानी को यह घटना कहती है । रानी ब्राह्मण को बूलाकार सत्य शोधती है । ब्राह्मण को झूठ बोलने के लिए इतना प्रपंच रचने पर दंड देने का फैसला करती है । किन्तु भारत में ब्राह्मण तो दंड से परे था, सवर्णो के विरोध के कारण ये फैंसला रानी को वापस लेना पडता है । फिर भी गाय को मारने के अपराध में झलकारी और पूरन तो प्रायश्चित करना पडा, गंगास्नान और भोज देना पडा जिससे झलकारी के गहने बेचने पडे । दोनों आपस में यह मानसिक, आर्थिक त्रास भुगतते है, रोते है, अपनी जाति के लोगों ने भी सहारा न दिया ।

झलकारी और पूरन सेना की भर्ती करके प्रशिक्षण देते थे । झांसी की रक्षा के लिए पिछडे समाज के लोग, दलित सैनिक बने थे, तो कुछ लोग षडयंत्र में भी शामिल थे । अंग्रेजो की युद्ध की तैयारी के कारण फसल नष्ट हो रही थी, किसानो के पास सड़क तैयार कराते थे ।

मजदूर, किसान अंग्रेजों के बोझ से दबे जा रहे थे । नवाब, सामन्त, महाजन अंग्रेजो से बिचौले की भूमिका निभा रहे थे वे दलितो पर जुल्म करते थे, रहन-सहन में अंग्रेजों की नकल करते थे ।

१० मई, १८५७ की क्रान्ति की शुरुआत मेरठ छावनी में हुई । मेरठ और दिल्ली के सिपाहियों के सहयोग से कानपुर और झांसी स्वतंत्र हो गए । ६ जून १८५७ के दिन खजाने और शस्त्रागार पर भी अधिकार कर लिया, अंग्रेज केप्टन मेजर को मार डाला गया, इसलिए वे ज्यादा निर्दयी हुए । बाद में अंग्रेजी सेना और झांसी के सैनिकों का भिषण युद्ध हुआ । सभी फाटक पर युद्ध जारी था, रानी को बाहर भेज देने की बात पक्की थी ।

झांसी के सभी फाटक पर अंग्रेज-झांसी के सैनिक आमने सामने थे । झलकारी-पूरन ने भी उत्तरी फाटक में अंग्रेजो को पीछे हटा दिया । झलकारी ने स्त्री सैनिको को जोशीली वाणी से तैयार किया । बन्दुकें और ईट, पत्थरों की बौछर शुरु थी । सीढी लेकर जो गोरा सैनिक उपर आता झलकारी उसे काट देती थी । किन्तु बाद में पूरन शहीद हो जाता है, चरणस्पर्श करके झलकारी अंग्रेज सेना पर घायल सिंहनी की तरह टूट पडती है । आजतक महिलाएँ जौहर करती थी, किन्तु झलकारी के शब्दों से यह महिलाएँ लडते-लडते वीरगति को प्राप्त होती थी ।

रात में रानी चारसौं सैनिकों के साथ निकल जाती हे कालपी की ओर तब सारा झांसी जल रहा था । झांसी को पुनः आजाद कराने केलिए बाहर जाने का मन बनाया था, युद्ध रुका नहीं था, चारों तरफ आग, लाशें जल रही थी, उन लाशों ने अपनी जातियों की पहचान खो दी थी और भुला दिया था धर्म थी । अंग्रेजो का रानी की ओर से ध्यान हटाने के लिए झलकारी ने युक्ति बनाई । वह कैम्प में ही घोडे पर गई, जनरल को बताया कि मैं झांसी की रानी हूँ । ह्युरोज, स्टुअर्ट झलकारी और रानी की तुलना कर रहे थे । झांसी के दुल्हाजु ने खलनायक की भूमिका यहाँ भी निभाई और कहा कि ये झलकारी कोरिन है । उसने बहुत से अंग्रेज सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया है, झलकारी ने उसे

खरीखोटी सुनाई, ह्युरोज ने क्रोध में कहा - मैं तुमको गोली मार दूंगा - झलकारी ने कहा- मैं मौत से नहीं डरती । मेरे हथियार मेरी इज्जत पर हाथ डालेगा उन पर चलेगा । स्टुअर्ट भी कहता है कि एक प्रतिशत लडकियाँ भी दीवानी (देशप्रेम में) हो जायेगी तो हमें यह देश छोडकर भागना पडेगा । वह मौत से नहीं डरती थी, उसकी वीरता देखकर जनरल ने उसे छोड दिया था । वापस आई तो झांसी के लोग खुश थे, किन्तु झलकारी को खुशी नहीं थी । झांसी की रक्षा के लिए महिलाओं की सेना की कमान्डर बनी, कपडे बूनना छोड उसने झांसी की देशभक्त जनता को हथियार चलाना सिखाया । झांसी को अंग्रेजी सेना से आजाद कराना उसका उद्देश्य था ।

झलकारी जो दलित नारी है वह उपन्यास की नायिका है, पुरन (उसका पति) मछरीया, चन्ना, रमची आदि दलितपात्र है । रानी लक्ष्मीबाई, नारायण शास्त्री, दुल्हाजू, अंग्रेज जनरल जैसे सवर्ण पात्र है। वैसे तो और भी कई पात्र है जैसे झलकारी के माता-पिता, सास, दलित मूहल्ले के लोग, सवर्ण समाज के लोग, झांसी के सैनिक, पंच आदि ।

उपन्यास में आर्थिक रुप से सुखी लोग रानी, जमींदार, व्यापारी, सवर्ण समाज है, तो दलित दु:खी है, कपडा बूनने का काम, मजदूरी, बेगार करते है ।

सारा उपन्यास झलकारी के आसपास घूमता है । १८५७ की क्रान्ति में रानी लक्ष्मीबाई का महत्त्वपूर्ण योगदान था, झांसी को आजाद कराने के लिए उनके सैनिक मरते दम तक लडे थे, उनमें महिला सैनिक भी थे, जिसमें नारीचेतना भरपूर है ये महिला सैनिकों की कमान्डर झलकारी थी । लेखक ने लिखा है- न धर्मरक्षा और न जातिरक्षा, झलकारी ने चूडियाँ पहनना छोड देश-रक्षा के लिए बन्दूक हाथ में ले ली थी । उसे न महल चाहिए थे न किमती जेवर और न रेश्मी कपडे और न दुशाले । वह न तो रानी थी और न पटरानी । वह किसी सामन्त की बेटी भी नहीं थी तथा किसी जागीरदार की पत्नी भी नहीं । वह तो गाँव भोजला के एक साधरण कोरी परिवार में पैदा हुई थी और पूरन को ब्याही गई

थी । पिता भी आम परिवार से थे और पति भी, लेकिन देश और समाज के प्रति प्रेम और बलिदान ने उन्होंने इतिहास में खास जगह बनाई थी ।

झलकारीने जंगल में बाघ को मार दिया तब से अपनी पहचान बनाई थी, दलित नारी में वीरता होती है यह दिखा दिया था । बौद्ध भिक्खूओं को वह कहती है-हमारे गाँव में स्कूल है, पर दलितों को नहीं पढाते । ऐसा कोई बोल नहीं पाया था ।

दस साल की उम्र में पूरन के साथ शादी होती है, हर कार्य में उसे मदद करती है । वह अभिमानी न थी, स्वयं खुश थी, दूसरों को खुश देखना चाहती थी ।

झलकारी और रानी के बीच अनन्य प्रेम था । जिस इतिहास ने १८५७ की स्वतंत्रता संग्राम की परिस्थितियों का निर्माण किया था, उसकी निर्मात्री अकेली रानी लक्ष्मीबाई ही नहीं थी झलकारी भी थी । सूत कातते हुए उसने क्रान्ति की लडियों की बुनावट कर डाली थी । ऐसी बुनावट, जिसमें अंग्रेज भी उलझ कर रहे थे । तभी तो क्रान्तिकारियों को पूरी तरह से वे बेदखल नहीं कर पाए थे ।

बचपन से ही वीर और साहसी स्वभाव की थी, उसके मन में आरम्भ से ही सैनिक बनने की लगन थी । सैनिकों को वर्दी में देख तथा युद्ध का डंका बजते हुए सूनकर उसकी भुजाएँ भी रणक्षेत्र में जाने को फडकने लगती थी । झलकारीबाई में वीरता है किन्तु समाज से हार जाती है, बछिया प्रसंग में गलती नहीं की थी फिर भी समाज के आगे घूटनें टिका देती है ।

रानी कहती है कि हमें युद्ध क्षेत्र में अब उतरना पडेगा तब झलकारी कहती है-"जा तुमाय पसीनागिरे वा हमाय लहू बहा दें ।" उसके साथ दूसरी सखीयाँ भी बोल उठती है-"हम सब तैयार है । तब रानी भी कहती है शाबाश ! झलकारी तूमने तो रग-रग में खून दौडा दिया ।" झलकारी का प्रभाव सारी महिलाओं में था, ये स्वीकार्य है ।

मई, १८५७ की क्रान्ति में झांसी राज्य स्वतंत्र हो गया था, किन्तु बाद में अंग्रेजों ने डटकर मुकाबला किया, झांसी की हार निश्चित थी, झलकारी को रानी की चिंता थी, उसे झांसी से बाहर भेजना चाहती थी। युद्ध की ऐसी स्थिति में भी झलकारीबाई विचलित नहीं हुई, वह संतुलन रखती है । सच कहा जाए तो उनमें धीरता और वीरता का अनोखा संगम था ।

वह पुरन के साथ रहकर दुश्मनों को घिराने में, सैनिकों के उत्साह बढाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है । पूरन और उनके साथी गोलियों की झडी बरसाते थे, तब झलकारी तलवार से सीढियाँ से उपर आते अंग्रेज सेना के सैनिकों को काट देती थी । महिला सैनिकों को वह कहती है, ‘अब गोरा भीतरैं आउन चाता हमारी दीवाल सै भीतरै जैये । हमारी इज्जत मट्टी में मिलजै । आज बताउनै कि बुन्देलन की जनी परान दै के झाँसी के रच्छा कर है । हुपक हांतन ले लो, सूद मिल लौ, अपनी लठियाँ निकाल लौ । कंडन जैसे दुश्मन की मुंडी फोर दौ, खरिहान सौ बिछा दो एक गोरा लौट के न जा पाउ न उपरै आन पाउनैं’ झलकारी की जोशीली वाणी ने स्त्रियों के रक्त को खौला दिया । उसके एक एक शब्द तीर की तरह उनके हृदय में चुभ गए थे । उन्नाव फाटक पर पूरन और झलकारी के सैनिको ने अंग्रेजो को भगा दिया था ।

अपना पति शहीद होता है तो कहती है ‘झांसी के लाने मोय से पैले तुमने परान दे दयैं’ पति को चरण स्पर्श करके अंग्रेज सेना पर घायल सिहनी की भाँति टूट पडती है । उसे अपने पति के युद्ध में मारे जाने का दुःख नहीं था, अपितु झांसी की सुरक्षा की चिन्ता थी । आज तक की स्त्रीयाँ जौहर करती थी । नदी, नालों, कुओं और आग में कूदकर जान देती थी, इस परम्पराको झलकारी ने उलट दिया था ।

रानी झांसी से निकल जाती है तब अंग्रेजो का ध्यान हटाने के लिए स्वयं जनरल के केम्प में जाकर स्वयं की पहेचान रानी के रुप में देती है ।झांसी का खलनायक दुल्हाजु कहता है ये रानी नहीं है झलकारी है । तब वह कहती है रानी का नमक खाकर भी गद्दारी की । ह्युरोज को

भी ललकारती है "मार दजैय गोली, माखौ मौत से डर नई लगै।"

इस प्रकार दुश्मन की छावनी में भी अपनी निडरता का परिचय देती है । अपनी इज्जत पर हाथ डालनेवाले पर हथियार चलाना वह जानती है, मौत से नहीं डरती, मौत को गले लगाती है । ह्युरोज उसकी वीरता से बहुत प्रसन्न हुआ था और उसे छोड दी थी, लेकिन झलकारी को खुशी न थी । उसे दु:ख था तो केवल यही कि जिस झांसी की रक्षा करने के लिए वह महिलाओं की सेना की कमान्डर बनी, कपडे बूनना छोडकर उसने झांसी की देशभक्त जनता को हथियार चलाना सिखाया ।

इस प्रकार झलकारी दलित नारीयों में वीरता का शंख फूंकती है । १८५७ के आसपास भी नारीचेतना जाग्रत थी, रानी लक्ष्मीबाई के साथ साथ झलकारी का नाम भी इतिहास में क्यों नहीं आता, ये एक बडा प्रश्न है, उसे सिंहासन की आशा नहीं थी वह तो नि:स्वार्थ भाव से लडती है ।

दूसरा महत्त्वपूर्ण पात्र रानी लक्ष्मीबाई का है । इतिहास में वीरनायिका की भूमिका उसकी है, स्त्री होकर पुरुष से भी बढकर लडाई लडी थी अपनी झांसी के कारण । अंग्रेजों के मन में भी वह जिन्दा थीस तब तक चुभती रही थी । यदि सभी राजा और प्रजा ने इतनी हिम्मत दिखाई होती तो भारत का ईतिहास कुछ ओर होता । गंगाधररावने भी अंग्रेजो की मदद से सिंहासन पाया था, और उन्होंने सिंहासन ले लिया था । गंगाधरराव के साथ लक्ष्मीबाई की शादी छोटी सी उम्र में हुई थी । वह उदार और स्पष्ट थी, महल में छटपटाना उसने सीखा नहीं था, मुक्त विचरण किया था । सारी बस्ती की खबर वह लेती थी ।

नारी चेतना उसके चरित्र में स्पष्ट दिखाई देती है, वह भी आज से १५० साल पहले । महल में हल्दी कुमकुम जैसे अवसरों पर सारी स्त्रीयाँ को बुलाती थी, अकेलापन उसे नहीं भाता था, आमोद प्रमोद में वह लिप्त होना नहीं चाहती थी । रुप और लावण्य में भरपुर थी तो अच्छे स्वभाव के कारण उसकी छवि दूर दूर तक फैल चुकी थी । घोडे की सवारी करना, हथियार चलाना, तेज दौडकर पहाड पर चढना, भाला

फैंकना, दीवार फाँदना उसकी दैनिक क्रिया थी । पूजागृह में दलित नारीयों को जाने की मनाई थी, यह रानीने भी स्वीकार किया था, जो उसकी मजबूरी थी या फिर वर्ण व्यवस्था की जकडन ।

१८ साल की उम्र में वह विधवा होती है तो आघात झेलती है, सेहती है और सैनिक प्रशिक्षण लेती है, अन्य स्त्रीयों को भी वह सिखाती है । झांसी के राजा को पुत्र नहीं था और दामोदरराव की गोद को डलहौजी ने स्वीकार नहीं किया । इस प्रकार झांसी को अंग्रेजी राज्य में मिला दिया, यह घोषणा सुनकर रानी परदे के पीछे से कहती है - "मैं अपनी झांसी नहीं दूँगी ।" इसी दुःखद घडी से रानी युद्ध की तैयारी शुरु कर देती है, रानी असहाय हुई थी, किन्तु निडर थी, अंग्रेज और अपने ही दुश्मनों के कारण फूंककर पैर रखती थी ।

दलित सैनिकों की भर्ति के कारण कुछ सवर्ण लोग रानी से नाराज होते है, तो रानी कहती है कि "क्षत्रिय धर्म मन से है या जाति से ? नियम-कायदें बनते हैं समय देखकर, अब यही युग धर्म है । अंग्रेजी सेना में सभी जाति के सैनिक है, वहाँ छूआछूत नहीं है, यह अंग्रेजो को कैसे सबक सिखाओगे ? एक दूसरे को छोटा मानकर ! फिरंगी आएँगे तो वे जाति पूछकर तुम्हें ठोकर नहीं मारेंगे ।"

मई, १८५७ में झांसी के सैनिकों ने अंग्रेजो को खदेड दिया था, जिसमें रानी की भूमिका महत्त्वपूर्ण थी । किन्तु जून १८५७ मे अंग्रेजो ने झांसी को पाठ सिखा दिया, युद्ध का अंत नहीं था, एक एक योद्धा मर रहा था, रानी को झांसी छोडकर बाहर निकलने की नौबत आती है, तब तक सैनिकों को हौंसला देती है और रात में कुछ सैनिको के साथ झांसी से निकल जाती है, क्योंकि फिर से अंग्रेजो के सामने युद्ध कर सके, झांसी को आजाद करा सके । इस प्रकार उपन्यास में रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र महत्त्वपूर्ण है, इतिहास में भी रानी का पात्र अमर है, वैसे साहित्य में भी अमर रहेगा ।

पूरन का पात्र भी महत्त्वपूर्ण है । झलकारी का पति है, झलकारी को सैनिक बनाने में उसका साथ है, स्वयं भी सैनिक बनता है,

१८५० के आसपास महिला सेना में अपनी पत्नी को भेजकर नारीचेतना को वह आगे बढाता है, किन्तु समाज से डरता है, झलकारी को गाय मारने के आरोप पर पंच में वह पिंजरे में बंद शेर की तरह बैठता है। झलकारी की गलती को स्वीकार करके उसे सहारा देता है । सेना की भर्ती और प्रशिक्षण भी देता है । १८५७ की क्रांति में महत्त्व की भूमिका अदा करता है और शहीद होता है । इतिहास में यह अमर पात्र का शायद ही कहीं नाम होगा, किन्तु उपन्यास में यह अमर पात्र है ।

नारायणशास्त्री और मछरिया भंगी का पात्र भी अमर रहेगा जिसने १८५० के आसपास (ब्राह्मण-भंगी) आन्तरजातीय शादी की थी । जो समाज के लिए महत्त्वपूर्ण घडी थी, किन्तु समाज ने यह स्वीकार नहीं किया था, राजाने भी नहीं, और दोनों को झांसी से देशनिकाल किया था । जाते वक्त मछरिया ने कहा था, क्या राजाने न्याय किया ? समाज के प्रेमियों को नई राह दिखाई थी उन दोनों ने ।

वीरांगना झलकारीबाई उपन्यास में छोटे छोटे संवाद कम है । गंभीरता ज्यादा है इसीलिए बडे बडे संवाद है । यहाँ तो प्रदेश बचाने की बात है, सामाजिक रुढियों की बोलबाला है, इसीलिए लोगो में हास्यकम है, श्रृंगारिकता कम है, मानसिकता, आर्थिक, सामाजिक रुप से त्रस्त है । संवाद में भी उनकी छवि वैसी ही प्रस्तुत है ।

इलकारी, बाबा और मूलचन्द के बीच संवाद-झांसी के भविष्य के बारे में-

झलकारी- याई सेना कां जा रई है ?

बाबा- झांसी (थोडा ठहरकर जवाब दिया था)

मुलचन्द - काय ?

बाबा- झांसी राज्य को पलटने ।

सबकुछ उलट-पलट जाएगा । कुछ भी स्थिर नहीं रहेगा । आसमान में धुआँ भर जाएगा । जमीन लाल हो जाएगी [१]

- गांववाले और पादरी के बीच संवाद

टुमारे गाँव में स्कूल हय ।

गाँववालोंने इनकार में केवल गर्दन हिलाई थी ।

टुमारे गाँव में अस्पटाल हय ।

गाँव के लोगों की इनकार में फिर गर्दन हिली थी ।

भिक्खू और गाँववाले, एवम् झलकारी के बीच संवाद

भिक्खू- तुम्हारे गाँव में पाठशाला है ?

गाँववालों ने इनकार किया था पर

झलकारी- पाठशाला तो है ।

भिक्खू- तुम्हारी बात हमारी समझ से बाहर की है थोडा स्पष्ट कहें बालिका।

झलकारी- बामन अपने घर पर पढाव हतो ।

भिक्खू- तुम्हें नहीं पढाता वह ?

झलकारी- नई

भिक्खू- क्यों ?

झलकारी- वे कउत पढ वौ तुमाओ काम नई ।

रानी का महल देखकर झलकारी को जादू जैसा लगता है, एश्वर्य देखकर कहती है- (रहस्यवाद का संवाद)

झलकारी- जै गरीब अमीर कबई से हैय ?

पुरन- जब से या दुनिया बनी ।

झलकारी- मेरी समझ में तो कछु ना आवै ।

पूरन-तै समझ नहीं आई तो अच्छा ही हुआ । ईस बात को तो बडे-बडे साधु-महात्मा तक नहीं समझ सके ।

- मगन गन्धी- श्यामचौधरी और रानी के बीच संवाद

मगन गन्धा - रानी साहिब, हिन्दु धर्म की भीकुछ परम्पराएँ है । जिन्हे लोग हजारों सालों से मनाते चले आए है । सुना है आपने छोटी जातियों के लोगों को भी सेना में भर्ती होने का आदेश दिया है...

श्याम चौधरी- और महिलाओं को भी...

मगन गन्धी : पर रानी साहिबा, युद्ध क्षेत्र में लडना तो क्षत्रियों का कर्म है ।

रानी- हमें कोई बताए क्षत्रिय धर्म मन से है या जाति से ?

श्याम चौधरी- रानीसाहिबा हमारे पुरखों ने भी तो कुछ सोच समझकर नियम कायदें बनाये होंगे ।

रानी- नियम-कायदे बनाते है, समय देखकर । जब वही युग धर्म था, अब यही युग धर्म है [1]

इस प्रकार उपन्यास के संवाद चोटदार है, अर्थपूर्ण करते है, कथा को आगे बढाने में प्रवृत्त है ।

देशकाल वातावरण की दृष्टि से यह उपन्यास अंग्रेजो के समय में देश की स्थिति, राजाओं की हालत, प्रजा की चिंता, सामान्य लोगों की स्थिति का वर्णन करता है । रुढियों का वर्णन देखनीय है । दलित एवम् महिलाओं ने १८५७ की क्रान्ति में जो भूमिका निभाई यह भी दर्शनीय है ।

छल और प्रपंच से जीते गए प्रदेशों, रियासतों तथा रजवाडो में ब्रिटिश साम्राज्य का बुलडोजर गाँव गाँव और नगर-नगर आगे ही बढता जा रहा था । रियासतदारों और जागीरदारों की तलवारें अभी जंग नहीं खाई थी । खूब चमकती-दमकती थीं पर आपस में ही टकराती थी । गाँव मे स्कूल नहीं था, मंदिर था । राजा की तुलना उन दिनों भगवान से की जाती थी । राजा न्याय करे या अन्याय, जनता-जनार्दन की उस पर आस्था थी । गाँव टूटते जा रहे थे, दलितों में कोरी (बूनकर) कपडे बूनने का काम करते थे, उनकी पत्नी भी उस काम में मदद करती, घरकाम करती और मजदूरी भी करती थी । बेगार भी करते थे ।

आठ-दश की उम्र में लडका-लडकी की शादी कर देते थे, पसंदगी का कोई प्रश्न ही नहीं होता था । आरंभ में विवाह सामाजिक उत्सव बनकर आता, पर बाद में वही दुर्घटनाओं का मूक आमंत्रण भी होकर रह जाता था । कुछ स्त्रीयाँ विरह में जलती तो कुछ चिता में जलकर अपने जन्म को सुधार लेती थी । राजा, नवाब, जागीरदार अंग्रेजो को गौरवगान करते थे, वे गुलाम बने थे, पर अपने से बडा किसी को नहीं समजते थे । गाँव में सभी आम आदमी रहते थे । फिर आम आदमी तो खास लोगों की छाया स्पर्श करने की कल्पना भी नहीं कर

सकता था । उस पर मेहनतकश व्यक्ति और वह भी दलित जिसकी मेहनत की तो तत्कालीन समाज को आवश्यकता थी, पर स्वयं से उसे दूर रखने का प्रयास किया जाता था ॰ जनता पर करों का बोझ बढने लगा था । जंगल गाँववाले के जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग था । झलकारी जैसी वीरांगना बाघ को भी खत्म कर सकती थी, चारों ओर इसकी बात होती थी, किन्तु कुछ को खुशी तो कुछ को ईर्ष्या भी होती थी । छोटी जात की लडकी किसी बाघ को मार दे ! वीरन और बहादुरी के सारे गुण तो स्वर्ण समाज के क्षत्रियों के लिए सुरक्षित कर रखे थे । और दलितो, पिछडों के खाते में अवगुणों के साथ अयोग्यताओं की भरमार थी ॰

लोगों की पहचान जाति, कुल, गोत्र से ही होती थी । गाँव में हर साल बाहरी लोग आते थे । जैसे गुसाई, पादरी और भिक्खू । गुसाई अनपढ लोगों को भाग्य-दुर्भाग्य और झूठे-सच्चे सपनों में भ्रमित रखते थे । प्रजा, राजा, उनसे घबराते थे । पादरी कुछ नहीं लेते थे, तुम्हारे गाँव में स्कूल, अस्पताल है ? यह पूछते थे दवाइयों के पैकेट देकर चले जाते थे । वे स्वयं मूर्ख न थे और दूसरों को मूर्ख नहीं बनाते थे । उनकी अंगुली भारतीय समाज में गहरे तक रची-बसी जाति प्रथा की विसंगतियों पर थी । दलितो, महिलाओं की स्थिति को वे सुधारना चाहते थे ।

बौद्ध भिक्खू समाज में परिवर्तन करना चाहते थे, वे भी स्कूल के बारे में पूछते थे, अप्पदीप भव कहते थे । वे भी कुछ नहीं लेते थे । रुढियाँ, परम्पराओ, जातियों के विरोधी थे ।

एक जाति के लोगों के बीच महत्त्वपूर्ण संपर्क सूत्र थे, जन्म, मरण, विवाह और व्यवसाय । गाँव में सोमवार के दिन हाट लगती थी । ब्राह्मण भी भंगी महिला से प्रेम करते थे । समाज के कारण उन्हें सेहना पडता था । राजा ऐसे प्रेमीओं को देशनिकाल करते थे । राजा भी ब्राह्मण का दंड नहीं कर सकता था, ब्राह्मण कोई भी गलती करें, वह दंड से मुक्त था । सारा समाज जातियों, कुलो, वर्गो में बांटा हुआ था । जिससे विषमता और असमानता, पैदा होती जा रही

थी, आदमी-आदमी के बीच भेदभाव की दीवारें खडी करने की यह साजिश थी ।

आमप्रजा केवल अभाव और गरीबी में जिन्दगी बिताते थे । फिर भी वे राज्य की धडकन थे । दलितों की जिन्दगी अभावों में गुजरती थी, पाँव में चप्पल नहीं, कपडे में जगह जगह थेगली लगाकर पहनते थे । सूखी रोटियाँ खाते थे । मुख्य मार्ग पर चलने की मनाई थी, इसीलिए मुँह अंधेरे में निकलना पडता था । दिन में खेतो में से चलकर दूसरे गाँव जाना पडता था । उनकी परछाई से भी सवर्ण लोग दूर रहते थे । गाँव से बाहर रहना पडता था । शहर और गाँव में बहुत अन्तर था । वेश-भूषा, चाल-ढाल, बात करने की शैली सभी कुछ अलग थी ।

जमींदार और पुरोहितवर्ग अशिक्षा, गरीबी और कुसंस्कारों से लाभ उठाकर जनसाधारण का शोषण करते थे । लोगों को गुमराह करते थे । समाज में सामाजिक और राजकीय क्रांति हो रही थी, सामाजिक रुढियों और अंग्रेजो को खदेडना उनका उद्देश्य था । बुन्देला, ठाकुर, क्षत्रिय सैनिक थे, किन्तु दलित सैनिक बने ये स्वीकारने के लिए कोई तैयार नहीं थे । महिलाएँ आज तक जौहर करती थी, भोगविलास की वस्तु थी, किन्तु रानी लक्ष्मीबाई ने महिलाओं की सैन्य में भर्ती करके इतिहास में नया कदम रखा था । दलित समाज के लोग साहसी थे और बहादुर भी, लेकिन उनकी अपनी पहचान बने ऐसा सवर्ण समाज नहीं चाहता था । देशद्रोही लोगों के कारण अंग्रेजो को पुरे भारत का अधिकार मिला था, झांसी में भी दुल्हाजु जैसे देशद्रोही अनेक थे ।

इस प्रकार उपन्यास में १८३० से १८५७ के इतिहास का वातावरण देखने को मिलता है । अंग्रेजों का दावपेच, भारत की दुर्दशा, देशद्रोही लोग, वफादार लोग, सैनिक, महिला सैनिको की शक्ति का वर्णन दर्शनीय है । उपन्यास की भाषा हिन्दी है, साथ ही झांसी के आसपास के गाँवों की आंचलिक भाषा भी है । जो उपन्यास को चार चाँद लगा देती है । उपन्यास में मुहावरें, कहावतें, अंग्रेजी, उर्दू शब्द, अलंकार, रस, बिम्ब, प्रतीक प्रचुर मात्रा में है ।

मुहावरें

- आग धधक रही थी	- मिट्टी में मिल गया था ।
- चिनगारी उछटती थी	- जमीन लाल हो जाएगी ।
- सोलह अना बुन्देलखंडी	- जमीन काँपने लगी थी ।
- अंधेरा छा जाना	- दंग रह गया ।
- कलेजा मूँह को आ गया	- आग में झोंकने का काम
- इज्जत मिट्टी में मील जाये	- हडकम्प मच गया ।
- छक्के छुडा दे	- कोहराम मचा था ।

कहावतें

- रोज कुआँ खोदना और रोज प्यास बुझाना

- जैसा देश वैसा भैष	- यथा राजा यथा प्रजा
- दिन दूनी रात चौगुनी	- पंच परमेश्वर है

- राई को पर्वत बना दे और पर्वत को राई

- जिसकी लाठी उसकी भेंस	- दूध का दूध पानी का पानी

अंग्रेजी शब्द

- गवर्नर, जनरल, पोलिटिकल एजेंट, कम्पनी, क्राइस्ट, स्टारफोर्ट, कैप्टन, कमान्डर

उर्दू शब्द

- औरत, फितरत, जज्बा, खिलाफ

संगीतात्मक शब्द

- गो...गो... धाँय... चहचहाट

अलंकार - अतिशयोक्ति अलंकार १. गुलाब जल से भरे गिलास को नवाबसाहबने होठों से लगाया तो वह तभी हटा जब पानीकी एक-एक बूंद खत्म न हो गई ।

२. वह सो जाए तो झांसी भी सो जाए, वह जागे तो झांसी भी जाग जाए ।

उपमा अलंकार

१. दोनों हारे हुए सैनिकों की तरह मौन थे ।

२. उनके कद धूप की छाया के समान थे ।

३. अंगार जैसी भभक थी ।

४. जैसे काँच का बडा ताज पानी पर तैर रहा हो ।

५. समाज के अधिकांश लोग कोल्हू के बैल की तरह उन्हीं प्रथाओं, परम्पराओं के आसपास घुमते थे ।

६. माथे पर ओस जैसी बूंदे झलक आई थी ।

७. पूरन घायल शेर की तरह था ।

८. होंठ जैसे सिल गए हो ।

९. बेजान शरीर में जैसी जान आई ।

१०. चाँद सा मुखडा छुपाय हती ।

११. शब्द तीर की तरह उनके हृदय में चूभ गये ।

रस

उपन्यास वीररस से भरपूर है । झलकारी वीरांगना है, इसीलिए उसकी वीरता बाघ के साथ दिखाई देती है । युद्ध में भी वीररस दिखाई देता है ।

करुणरस

रानी विधवा होती है तब सारा झांसी रोता है । युद्ध में सैनिक मर जाते है, अंग्रेजो ने चारों तरफ आग लगाई बच्चे, बूढे रोते हैं, करुण रस में पूरा झांसी दिखता है ।

हास्य रस

रानी झलकारी को कहती है- तुम्हारा पति मलखब और कुश्ती सीखते है तुम भी सीखो, घोडे की सवारी भी सीखो । तब झलकारी घूँघट में हँसती है, साथ में रानी और दूसरी स्त्रीयाँ भी हँसती है क्योंकि ये पुरुषों का काम है ऐसा समजती है [1]

२. रामचरन को झलकारी पूछती है कि तुम्हारा बच्चा है ?

रामचरन कहता है- हमाय भी एक बच्चा हुआ ।

तभी मजाक सूझा झलकारी को, तुमाय या तुमाय घरवारी को । तीनो ठट्ठा मारकर हँसे थे ।[१४]

बिम्ब-दृश्य बिम्ब

(१) झाँसी उन दिनों उत्तरी भारत का समृद्धशाली शहर था । शहर बहुत बडा नहीं, पर छोटा भी न था । झांसी में जल भी था, और जंगल भी । नदी दूर थी । नदी के नाम पर दक्षिण में धुबिया नाला था, जो झांसी तथा ओरछा राज्य की सीमा रेखा माना जाता था ।[१५]

(२) सन्ध्या हो रही थी । आकाश में लाली थी । दिनभर की लू लोगों ने झेली थी । वे थोडी ठंडक की प्रतीक्षा में थी । अंधेरा घिरने लगा था । जमीन की भभक जैसे कम हो रही थी । पर लोगों के बीच लगी आग कम होने का नाम नहीं ले रही थी ।[१६]

उपन्यास में नारीचेतना

वीरांगना झलकारीबाई उपन्यास में नारीचेतना उभरकर आई है। वह भी १८३० से १८५७ के आसपास जब आदमी भी अंग्रेजों के सामने डरता था उस समय रानी लक्ष्मीबाई और झलकारीबाई ने अपनी पहेचान अपने हथियारों से दिखाई दी थी । ये नारीचेतना हमारे लिए गौरव की बात है । छोटी सी उम्र में झलकारी बाघ को मार देती है । यह घटना भी कम नहीं है । आदमी की ताकत भी उसके आगे कम है । लेकिन एसी बात को सवर्ण दबा देते है, क्योंकि वीरता और बहादुरी के सारे गुण तो सवर्ण समाज के क्षत्रियों के लिए सुरक्षित कर रखे थे ।जन्मपत्री देखकर इस घटना को पूर्वजन्म से जोडते हैं ।

मछरिया के शब्दों में भी नारीचेतना है- राजा पराई लुगाईमनों को चूमत है, चाटत है, वाके पावन को हाथ लगात है, वामै कोनो धरम भरस्ट नई होत है । सूनकर शास्त्री शान्ति से बोले थे, वेराजा है कुछ भी करे जैसे जलभुन गई थी, शास्त्री की बात पर वह वे राजा है, कुछ भी करें और हम परजा । सबई नियम का परजाई के लाने हैं । राजा अपने लाने कुछ नई सोचत । अरे बीस दासियों को हरम में रख सबई

के साथ रंगरेलिया, फिर भी आग ना बुझाई । शास्त्री धीरे से बोले थे- छोटी कोई सुन लेगा । जबकि मछरिया के स्वर में अंगार जैसी भभक थी, तो का करेगा, हमई देस निकाला दे दैगो, हम भुगवै को तैयार है तुमाय लाने ।[३५]

इस प्रकार गू-मूत उठानेवाली किसी औरतने पहलीबार राजा की आँखों में आँख डालकर बात की थी । दरबार और सिहासन जैसे हिल गए हो । सभी के अस्तित्व को एकबारगी झटका दे दिया था मछरियाने ।जो नारीचेतना के लिए महत्त्वपूर्ण है ।

रानी लक्ष्मीबाई के चरित्र में नारीचेतना स्पष्ट दिखाई देती है । आज तक की रानीयों ने महल में छटपटाई थी, किन्तु लक्ष्मीबाईने मुक्त विचरण किया था । घोडे की सवारी, बंदुक चलाना, तलवार चलाना, दिवार फाँदना ये काम था रानी का । सभी के सुख-दुःख पूछती है, मिलती है । महिला सैनिको की भर्ती करके १८५७ की क्रांति में अंग्रेजो से लोहा लेती है जो नारीचेतना है ।

झलकारी रानी के केहने पर सैनिक प्रशिक्षण लेती है, और अंग्रेजो के सामने डटकर मुकाबला करती है, जो आदमी से भी बढकर है। पूरन के साथ रहकर अंग्रेजो की वह कत्ल करती है, वह असाधारण है । जनरल के कैम्प में जाकर अपनी पेहचान रानी के रुप में देती है, उसकी वीरता देखकर जनरल भी उसे छोड देता है । इस प्रकार रानी को भगाने में मददरुप करती है । अपने पति की मृत्यु होने पर वह अंग्रेजो के उपर घायल सिंहनी की भांति टुट पडती है, जो असाधारण है नारीपात्रों में वह सदा चमकती रहेगी । सभी जाति की महिलाएँ झांसी की रक्षा के लिए सैनिक बनी थी, उनके भीतर भी बलिदान देने की भावना थी और मर-मिटने का जज्बा भी था । यहाँ तक कि नगर की वेश्याओ ने भी वेश्यागिरी छोड सिपाहीगिरी अपना ली थी । कितनी ऐसी महिलाएँ थी जो दुल्हन बनकर झांसी में आई थी, उन मेहंदी लगे हाथों ने भी बन्दूकें संभाल ली थी । झांसी की आन-बान सब से पहलेथी ।[३८]

रहस्यवाद

महल देखकर झलकारीबाई सपनों में खो जाती है, अमीर, गरीब की कल्पना करती है, पूरन से कहती है- जै गरीब अमीर कबई से हैय ? पूरन का सपाट जवाब था, जब से या दुनिया बनी । झलकारी सोच में डूब गई थी । वह फिर बोली थी- मेरी समझ में तो कछु ना ावै । पूरन कहता है- तै समझ नई आई तो अच्छा ही हुआ । इस बात को तो बडे बडे साधु महात्मा तक नहीं समझ सके ॉ

झलकारी और उसकी सास के संवाद में भी रहस्यवाद है- देख झलकारी, या जीवन में दु:ख दरद चलते ही रहवै, कौनो घर ऐसई बचा है जा मैं दु:ख दरद नई रओ ।

कौन सा घर ऐसा है, जिसमें दु:ख तकलीफ न हो, यह जीवन ही दु:खों से भरा है । सभी के हिस्से में सुख ही सुख हो तो दु:खों को कौन जाने ।

आंतरिक संघर्ष

झलकारी की गोली बछिया को लगती है, बछिया मरी नहीं किन्तु जिन्दा थी, फिर भी लोग आरोप लगाकर प्रायश्चित करवाते हैं ।तब दलित लोग भी झलकारी जो सहारा नहीं देते । उनके साथ बोलने तक का व्यवहार बंद करते है, जाति सेबाहर करते हे । उसमें आंतरिक संघर्ष दिखाई देता है ।

मछरिया और शास्त्री प्रेम करते है, शादी कर लेते है, तो सवर्ण लोग मछरिया को खरी-खोटी सूनाते है, उसके घर पर पत्थर फेंकते है, साथ में दलित लोग भी मछरिया के घर का व्यवहार बंद कर देते हैं। इस प्रकार मछरिया को साथ न देकर हेरान करने में अपना कर्तव्य अदा करते हैं ।

शीर्षक

वीरांगना झलकारीबाई उपन्यास का शिर्षक यथायोग्य है । ऐतिहासिक उपन्यास है । नारीप्रधान उपन्यास है । पूरे उपन्यास में झलकारीबाई छाई हुई है । शुरुआत में किलौ बनाती है, विवाह की बातें आती है ।

बाघ को मारकर अपनी वीरता का परीचय करवाती है । झांसी में जाकर रानी के साथ मित्रता बढाती है । कमान्डर बनती है । बछिया को गोली लगती है तो समाज उसके परिवार से प्रायश्चित करवाते है । समाज के लोग उसकी हाँसी उडाते हे कि वह सैनिक बनी है ।

किन्तु वह स्वयं सेनाप्रशिक्षण लेती है, दूसरों को प्रशिक्षण देती है भर्ती करती है, रानी को साथ देती है । क्रान्ति में बढचढकर मरते दम तक झांसी की रक्षा करती है कई अंग्रेज सैनिको को खत्म करती है । महिला सेना को जाँबाज बनाती है । प्रोत्साहन देती है जनरल के कैम्प में जाकर रानी के रुप में अपनी पेहचान देकर रानी को कालपी पहुँचाने में मदद करती है । जनरल भी उसकी वीरता को देखकर उसे छोड देता है, ये झलकारी सचमुच उपन्यास का प्राण है । इस प्रकार शिर्षक उपयुक्त हैं ।

१. **आजादी के लिए बलिदान देने में दलित भी पीछे नहीं थे** : र ा े यथार्थ को स्वीकार कराने का उद्देश्य है । पूरन और झलकारी तो कमान्डर बनकर झांसी के लिए कुर्बानी देते हे । चन्ना, रमची जैसे कई आदमी औरतों ने भी झांसी के लिए देश के लिए बलिदान दिया था, इतिहास में ऐसे कई नर-नारी है जिसका नाम भी इतिहासकारोंने नहीं लिखा, लेखक का यह प्रयत्न है कि लोग ये जाने और अपना कर्तव्य निभाए ।

२. **दलित महिला शक्ति का परिचय** :इस उपन्यास में मिलता है, जो बाघ को खत्म कर सकती है । अंग्रेजो से लोहा ले सकती है, तो अंग्रेजो के सामने भी जाकर अपनी वीरता का प्रदर्शन करती है । जो उस समय के लिए महत्त्वपूर्ण है । नारीचेतना का परिचय यहाँ मिलता है ।

३. **१८५७ के आसपास की सामाजिकता, रुढियों को प्रकट करना** : समाज तीन वर्गो में विभाजित था । सवर्ण, पिछडी जाति, दलित । पिछडी जाति सवर्ण समाज के रक्षा कवच थे, ये बिचौलिये की भूमिका में थे। दलितों को दबाते थे, छूआछूत रखते थे, तो सवर्णो को सेहलाते, संवारते थे । सवर्ण समाज अपने आप में मस्त थे, दूसरों को दबाते थे, सुखी थे समाज पर वर्चस्व था, राजा भी उनके आधार पर निर्णय करता था।

दलित दबा हुआ कुचला हुआ था, उपर के दोनों वर्ग की सेवा करना उनका धर्म था । किन्तु ये दोनों वर्ग उनसे छूआछूत रखता था । परछाई से भी दूर रहते थे, सफाई, गंदकी दूर करवाते थे । मृत पशु खिंचवाते थे । उनको गाँव से बाहर रखते थे । केवल सूनने का अधिकार था । सवर्णो का बोलने का, निर्णय करने का, समाज पर वर्चस्व रखने का विशेषाधिकार था । समाज को दलितों की सेवा की जरुरत थी । किन्तु उनको दूर रखते थे । मुख्य मार्ग पर उनको चलने का अधिकार नहीं था । बेगार करवाते थे ।

चादरी और बौद्ध भिक्खू समाज की रुढियाँ को तोडना चाहते थे, किन्तु आंशिक सफलता मिलती थी, सवर्ण समाज यदि दलितों को अधिकार दे तो उनको अपनी औकात कम दिखाई देती थी ।

४. **[illegible]** :दलितों में से दो लडके सैनिक बने थे, ये दो लडको ने सरपंच से आँखों में आँखे डालकर बाते की थी, चमारों ने सरपंच की मृत भैंस को उठाने का मना कर दिया तो गाँव में गंदकी, बू आने लगी थी तो दूसरे गाँव के लोग रात में भैंस ले गये थे । दलितों को अपनी किंमत समझाई थी, सवर्णो को भी । बेगार से त्रस्त दो लडके शहर चले गये । इस प्रकार दलितो में चेतना उभर रही थी । पुरन, झलकारी सैनिक कमान्डर बनकर दलितों में चेतना दिखाते हैं ।

५ **[illegible]** छूआछूत के कारण दो जाति के बीच संघर्ष रहता है, सवर्ण-दलितों को गुलाम रखते है, बेगार करवाते है उनको पशु से बदलतर हालत में रखते है । बछिया को झलकारी की गोली लगती है किन्तु मरी नहीं थी, सवर्ण लोग झलकारी का दंड करते है, प्रायश्चित करवाते है, जाति से बाहर करते है जिसमें सवर्ण-दलित संघर्ष है । भंगी मछरिया-शास्त्री (पंडित) दोनों शादी कर लेते है, तो सवर्ण लोग मछरिया के घर पर इंट-पत्थर फैंकते है । दलितों की कोई ताकत नहीं है जो सवर्णो के सामने एक शब्द भी बोल सके ।

६. **अंग्रेजों की नीति और राजा, प्रजा की स्थिति** : धीरे धीरे अंग्रेज अपने उद्देश्य की ओर आगे बढ रहे थे, राजाओं को आश्रय में लेकर

प्रजा को लूंटते थे, एक एक राज्य को साथ में लेकर दूसरे राज्यों पर युद्ध करते थे । साम, दाम, दंड, भेद की नीति से साम्राज्य बढा रहे थे । राजा एशआराम करते थे । झांसी पर भी कब्जा करते है । कर बढाकर लोगों को लूंटते है, मजदूरी, बेगार करवाते है । प्रजा आर्थिक, मानसिक रुप से टूट जाती अंग्रेजो में दया की भावना नहीं थी । फरियाद किसको करे ! कोई सूननेवाला नहीं था ।

७. **[illegible]** : देशद्रोही लोगों की भारत में फौज थी, जिसका भरपूर लाभ अंग्रेजो ने उठाया । राज्य की खबरें अंग्रेजो को देकर ईनाम पाते थे, और स्वयं को बडे समजते थे । इस प्रकार सारा भारत अंग्रेजों को दे दिया ।

'वीरांगना झलकारीबाई' उपन्यास में दलित चेतना, नारीचेतना भरपुर है, जो हमारे लिए पथदर्शक है ।

संदर्भ

१. वीरांगना झलकारीबाई.. पृ.५ प्रथम आवृत्ति-२००५

२. वही, पृ.४४

३. वही, पृ.८१

४. वही, पृ.९४

५. वही, पृ.५७

६. वही, पृ.१९

७. वही, पृ.२६

८. वही, पृ.२७

९. वही, पृ.५०

१०. वही, पृ.६१

११. वही, पृ.२०

१२. वही, पृ.२३

१३. वही, पृ.४८

१४. वही, पृ.५४

१५. वही, पृ.३२

१६. वही, पृ.४०

१७. वही, पृ.३९

१८. वही, पृ.८२

१९. वही, पृ.५०

अध्याय-३

जयप्रकाश कर्दम व्यक्तित्व, कृतित्व एवं छप्पर उपन्यास का विवेचन

नाम : जयप्रकाश कर्दम

जन्म : ५ जुलाई, १९५८

जन्मस्थल : ग्राम-इन्दरगढी, गाजियाबाद (उ.प्र.) ।

शिक्षा : एम.ए. (दर्शनशास्त्र, हिन्दी, इतिहास, पीएच.डी.)

रचनाएँ :

उपन्यास - करुणा, छप्पर, स्मशान का रहस्य (बाल उपन्यास)

कविता संग्रह- गूंगा नहीं था मैं,

विचार प्रबंध : वर्तमान दलित आंदोलन और आम्बेडकरवादी आंदोलन दशा और दिशा

जीवनी : बौद्ध धर्म के आधार स्तंभ

अनुवाद : चमार (मूल पुस्तक -द चमार-जी.डलब्लू ब्रिग्स)

संपादन : जाति : एक विमर्श

दलित साहित्य-१९९०, २०००,२००१, २००२, २००३

धर्मातरण और दलित, उदारीकरण और दलित

शोधप्रबंध -रागदरबारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन

हिन्दी दलित साहित्य में सामाजिक सांस्कृतिक चेतना

अन्य- इक्कीसवीं सदी में दलित आंदोलन-समाज एवं साहित्य चिंतन

ब्राह्मणवाद और दलित हिन्दी दलित साहित्य में सामाजिक सांस्कृतिक चेतना तथा दलित साहित्य का दर्शन (प्रकाशनाधीन)

पुरस्कार : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी द्वारा प्रथम पुरस्कार, भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा डॉ.अम्बेडकर नेशनल एवोर्ड, राष्ट्रीय अस्मितादर्शी साहित्य अकादमी द्वारा कबीर सम्मान, भारत सरकार द्वारा फैलोशिप व भारतीय बौद्ध महासभा, उ.प्र. द्वारा फैलोशिप सहित कई अन्य सम्मान/ पुरस्कारो से सम्मानित ।

छप्पर :

छप्पर हिंदी दलित साहित्य का प्रथम उपन्यास है । महत्वपूर्ण उपन्यास है ।

गंगा के तट पर बसे पशिचमी उत्तरप्रदेश के एक छोटे से गाँव मातापुर की कथा है । गाँव में सवर्ण ब्राह्मण-पुरोहित, ठाकुर जमींदार तथा लाल शाहुकार जैसे उपर की ओर तथा अवर्ण कहे जानेवाले दलित लोग गंगा के बहाव की ओर निचान में बसते है ।

सुक्खा रमिया का पुत्र चन्दन उपन्यास का नायक है । सुक्खा के पास दो बीघा जमीन और एक भैंस है । दूसरों के खेतों में मजदूरी करते करते पैतालीस-पचास का सूक्खा बूढा और रमिया भी बूढिया दिखाई देती है । चन्दन को वह शहर में पढाई के लिए भेजता है तो सारे सवर्ण काणे पन्डित, ठाकुरसाहब सूक्खा को काम पर बूलाने का प्रतिबंद करते हे । सूक्खा का जीवन नर्क बना देते है । रमिया भी कबूतरी सी थी जो काट सी हो जाती है । अपना बेटा जल्दी से नौकरी प्राप्त करेगा कर्जा समाप्त होगा, दु:ख का अंत होगा ऐसा आशावाद रखते है ।

चन्दन शहर में पढने जाता है, तो शहर और गाँव की तुलना मन में थी कि शहर में सब लोग सुखी होगे, स्वच्छता होगी, आर्थिक तंगी, रोटी कपडे की समस्या न होगी । शेठ-शाहुकारों के सूद की निर्मम मार, ँऊच-नीच, छूआछूत न होगी । थोडे ही दिनो में यह कल्पना चूर चूर हो जाती हे । शहर में कई लोग भूखे मरते हैं, कपडे नहीं है, फूटपाथ पर रहना पडता है । मजदूरों का शोषण होता है, सेहने की परम्परा है । आदमी-औरत और बच्चे भी काम करते है । शराब, जुए के व्यसन के शिकार हे । आपस में मार-पीट, गाली-गलौच भी करते है । दूनिया अपनी गति से चलती है और झोंपड-पट्टीवाले लोग अपनी नियति क आदेश मानकर बैठते है । हरिया जैसे अकेले व्यक्ति के घर पर चंदन रहता है ।

बरसात न आने के कारण लोग परेशान हो जाते है, उत्तर भारत में अकाल तो पूर्व, दक्षिण भारत में अतिवृष्टि के कारण देश त्रस्त

होता है । कई लोग इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ करते है । सन्तनगर में भी यज्ञ करने के लिए चन्दा इकट्ठा करते हैं । चन्दन इसका विरोध करता है और सभी लोगों को समझाता हे कि यज्ञ करने से वर्षा नहीं होगी । वर्षा तो होगी मानसून के आने से । परम्परित ईश्वरवाद का खंडन करके नये समाज की कल्पना करता है । तुम ईश्वर को मानते है तो ये ईश्वर ने ही यह दशा तुम्हारी की है । आपको कोई इन्सान मानने के लिए तैयार नहीं है, मजदूरी करके भी आपकी स्थिति दयनीय हे, और कुछ लोग बैठे बैठे अच्छी तरह से जीते है । आपका शोषण करते है । यज्ञ के लिए चन्दा इकट्ठा करने के बजाय अच्छा काम करें, बच्चों का भविष्य सुधारें, स्कूल खोले, किचड साफ करे, महिलाओं के लिए सिलाई-बुनाई का प्रशिक्षण दिया जाए ऐसे कार्य में मैं साथ दूँगा । आत्मा, परमात्मा में खोए बिना इस जन्म को सुधारीए । सभी दलित चन्दन की बातों का स्वीकार करते है ।

पाँचवें अध्याय में सूक्खा को लगान की चिंता है, लगान नहीं देने पर जमीन खिसक जाएगी । मानसिक रुप से त्रस्त हो जाता है । कहाँ से पैसे लाऊँ । लाल दुर्गादास ने गहने थे तब तक पैसे दिये । घर मी गिरवी है, उसका समय पूरा होनेवाला है । अब कहाँ रहेंगे ? अपना जीवन तो दु:ख में बीता अब चन्दन का क्या होगा ? पढाई पूरी नहीं होगी ! मेरा बेटा भी शाहूकारों के पैरो नीचे ही जिएगा । सीने में खंजर उतर जाए या गोली लग जाए तो थोडी देर पीडा होती है, लेकिन जीवनभर की घुटन तथा हर कदम पर अभाव और उत्पीडन की तडप और बेबसी से सुक्खा और रमिया मानसिक रुप से चूर चूर हो जाते हैं ।

सुक्खा विवश हो जाता है, भैंस मर गई, लगान न चुकाने पर जमीन की बेदखली, घर गिरवी था, और महेनत पर भी प्रतिबंद । चन्दन शहर की दलित बस्ती में स्कूल शुरु करता है तो सभी प्रश्न करते है कि समाज में हमारा कोई स्थान नहीं है तो नौकरी कहाँ से मिलेगी ? हमारे पास पैसे नहीं है तो बच्चे किस तरह पढेंगे ? चन्दनने समजाया कि शिक्षा से नौकरी नहीं मिलेगी तो भी समाज में तो सुधार होगा,

समाज में समानता तो आयेगी । समाज, धर्म द्वारा प्रेरित और संचालित है, हमारी सामाजिक स्थिति धार्मिक आदेशो का परिणाम है । धर्मग्रंथ ही हमारे शोषण और अत्याचार की जडे है, उनको उखाड फेंकने के लिए शिक्षा जरुरी है । अनपढ का सब शोषण कर सकता है, अन्याय का मुकाबला करने के लिए शिक्षा, संगठन जरुरी है ।

एक दिन स्कूल में युवती पाँच साल का लडका लेकर आती है, उसके पिता नहीं थे, चन्दनने पूछताछ की तो मालूम हुआ कि यह युवती पर बलातकार हुआ था, मूँह दिखाने लायक न होने के कारण घर से निकलकर यहाँ वहाँ काम करती थी, बच्चा पैदा हुआ और पाँच साल का भी हुआ बर्तन माँझने का काम करके जीवन बिताती है । आक्रोश करने पर बलात्कारीयों ने पिता की भी पिटाई की थी । पुलिसने फरियाद नहीं लिखी और उन्होंने भी कमला के पिता की पिटाई करके अपनी फर्ज निभाई थी । एक तरफ स्त्री को माँ, देवी कहते है यही वही स्त्री पर बलात्कार करके फेंक देते हैं । बलत्कारीयों का विद्रोह करने के लिए ही कमला बच्चे को पढाना चाहती है । चन्दन भी कमला को साथ देता है।

संतनगर में चन्दन का महत्त्व बढ जाता है । उसका कार्य बढ रहा था, शिक्षित करना, संगठित करना, और जागृति पैदा करने का उद्देश्य था । फिस जमा न करने के कारण कॉलेज छोड़ने की नौबत आती है, तो हरिया (एक अनपढ, शराबी व्यक्ति) शराब छोडकर दो सौ रुपये देकर यज्ञ में चन्दन को साथ देता है ।

खेत में बेदखल हो जाता है, सुक्खा, लालाने मकान ले लिया, ठाकुर जमींदारो ने अपने खेतों में काम देने पर प्रतिबंद लगा दिया अत: मजबूर होकर गाँव छोड़ना पडा । पास के कस्बे से बाहर झोंपडी बनाकर मजदूरी करके जीवन बिताता है । ठाकुर और काणे पंडित को मन में था, कि सुक्खा अब तो ठिकाने पर आ जायेगा । किन्तु सुक्खाने गाँव छोड दिया, पर चन्दन को वापस नहीं बुलाया और निश्चय किया कि मैंने जो दु:ख भोगा है, अपने जीते-जी चन्दन को इस नरक में नहीं पडने दूँगा ।

ठाकुर हरनामसिंह का इलाके-भर में दबदबा था । उनके बिना इलाके में पत्ता भी नहीं हिलता था । कायदा उनका ही चलता था, सरकारी नौकर तो सलाम करने आते थे । एक पुत्री रजनी जो युवान थी, उसकी चिंता थी, वह विचारों से अलग थी, मानवीय स्वतंत्रता और समता की पक्षधर थी । ठाकुर साहब कहते थे कि चमार पढेंगे तो हमारा काम कौन करेगा ? हमारा वर्चस्व कायम रखने के लिए दूसरों को दबायें रखना जरुरी है । किन्तु रजनी कहती है वे स्वतंत्र है, उनको पढना चाहिए, स्वावलम्बन से जीना चाहिए । वे भी मनुष्य है उनकी भी कुछ अस्मिता होगी । चन्दन का अस्तित्व रखने के लिए अपने पिता से भी टक्कर लेती है ।

हरिया ने भी कमला जैसी ही कहानी सूनाई बलात्कार की ! हरियाने बलात्कार करनेवाले शेठ को खत्म करके कुए में फैंक दिया, जेल भी हुई और सबूत नहीं मिलने के कारण जल्दी ही छूट गया । उधर कमलाने समाज के डर से क्या किया उसका पता नहीं था । चंदन के द्वारा कमला का मिलन पिता से होता है । उधर चन्दन का कार्यक्षेत्र बढ रहा था । शहर से निकलकर यह आंदोलन दूर-देहातों तक फैल गया था। समाज में चेतना फैल चुकी थी ।

ठाकुर साहब की हवेली की बैठक में ठाकुर साहब, जिला कलक्टर, पुलिस अधिक्षक, शेठ दुर्गादास और काणे पंडित थे । दुर्गादास समानवादियों से डर रहे थे कि तिजोरी लूँट लेंगे ? ठाकुर साहब डर रहे थे कि मेरे खेतो में आग लगा देंगे तो ? पुलिस अधिक्षक ने कहा कि डरने की कोई चिंता नहीं है, सब शांत हो जायेगा । काणे पंडितने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है ? ब्राह्मण और भंगी समान ! यह कोई उनकी बनाई व्यवस्था है कि लिया और खत्म कर दिया । सनातन व्यवस्था है, यह तो रहेगी ही । धर्मशास्त्रो से कोई बडा नहीं है । रजनी ने उसका विरोध किया । आदमी ने यह व्यवस्था बनाई है, और आदमी के लिए ही है । दोषपूर्ण व्यवस्था को बदलना चाहिए । एक व्यक्ति को सबकुछ मिले और दूसरा अभाव और उत्पीडन में डुबा रहे, यह व्यवस्था

नहीं है । ब्राह्मण और भंगी का शरीर एक जैसा है, तो फिर अन्याय क्यों ? कलेक्टर ने कहा- हम प्रशासनिक रुप से प्रयत्न करते है, युवाओं को ये समाज परिवर्तन का काम करना चाहिए । रजनी के विरोध से सारी बैठक खत्म हो जाती है ।

चन्दन के आंदोलन का प्रभाव समाज पर होता हे । पंडित, शाहुकार का काम बंद होता है, मजदूरों ने पूरे पैसों की मांग की तो जमीनदारों की हालत बिगड जाती है । सहकारी समिति से कम सूद से मिलने के कारण शेठ की जरुरत नहीं रही । रजनी के कारण ठाकुर साहब ने माफी माँग ली और सारी जमीन गरीबों को बाँट दी । गाँव में दलित-सवर्ण-पैसेदार-गरीबों के बीच अच्छा व्यवहार बन जाता है ।

रजनी का व्यवहार देखकर कमला, चन्दन और रजनी के बीच से हट जाती है और कहती है- रजनी सचमूच तुम से प्यार करती है, तुम्हें उसकी ओर भी ध्यान देना चाहिए । वह तुम्हारे जीवन के सफर की सहयात्री है । सूक्खा को अपनी जमीन, घर वापस मिलता है, मातापुर में सब मिल-जुलकर रहते हैं ।

एक दिन जनसभा को संबोधित करके मंच से चन्दन उतर रहा था, तब समाज विरोधी व्यक्तिने लाठी से प्रहार किया, कमलाने चंदन को धक्का दिया और लाठी उसके सिर पर आई कमला ढेर हो गई । समाज में यह घटना की भारी निंदा हुई शोकसभा में उसकी शहादत की सबने प्रशंसा की । समाज में समता और स्वतंत्रता का माहौल हो जाता है । रजनी चन्दन को मातापुर ले जाना चाहती है, तो कमला के बेटे को भी साथ लेकर बच्चे रुप में दोनों उसके माता-पिता बने रहते हैं ।

छप्पर उपन्यास में पात्रालेखन उत्कृष्ट है । सुक्खा रमिया और उनका पुत्र चन्दन दलित है, चन्दन नायक है । शहर में हरिया-कमला दलितपात्र है, मुहल्ले के अन्य पात्र भी है । ठाकुर हरनामसिंह, काणे पंडित, शेठ दुर्गादास और ठाकुर की पुत्री रजनी (नायिका) सवर्ण पात्र है ।

सुक्खा उपन्यास का महत्त्वपूर्ण पात्र है । ये पात्र सचमुच महान है, वह टूट जाता है, मगर झूकता नहीं । जिन्दगी अभावों में गुजरती है, मगर अंत में सुख मिलता है । रहने के लिए सिर्फ झोंपडी है । अनपढ है, दो बीघा जमीन, भैस है और दूसरों के खेतो में मजदूरी करके जीवन बिताता है । गाँव में से सवर्णो का लडका भीपढने शहर नहीं गया था, वैसे समय में अपने बेटे को शहर में पढने के लिए भेजकर ठाकुर-ब्राह्मण के क्रोध का शिकार बनता है । सूक्खा को मजदूरी पे नहीं बुलाते, लगान न चूकाने के कारण जमीन की बेदखली होती है । भैंस मर जाती है । घर शाहुकार ले लेता है । ऐसी मुसीबतों के कारण घर छोड़कर दूसरे कस्बे के बाहर झोंपडी बनाकर रहता है । मगर बेटे को पढने से वापस नहीं बुलाता । एकदिन जरुर चन्दन नौकरी पाकर आयेगा, दुःख के दिन समाप्त होगे ऐसा सोचकर जिन्दगी हंसकर काटता है । जीवनभर आर्थिक रुप से अभाव के कारण ही वह कहता है- "हमने कौन से पाप किए है, रमिया जो हमको ये दिन देखने पड रहे हैं ।"

ब्राह्मण ठाकुर से बहुत ही डरता है, अधर्म, अनर्थ शब्द से भी सारे दलितों की तरह डरता है । आपका गुलाम हर समय आपकी ताबेदारी में हाजिर है, पर बेटा नहीं माना, जिद कर बैठा, आगे पढने के लिए शहर चला गया है ।

फिर भी सुक्खासमजदार है, स्वाभिमान उसके दिल में भी है । मैं मर जाँऊगा, भूखा प्राण तज दूंगा । सबकुछ बर्दास्त कर लूँगा, मैं पर चन्दन को इस नर्क में नहीं पडने दूंगा कभी, जिस नर्क में मुझे रहना पडा है ।

रोटी की समस्या सुक्खा के लिए जीवन संग्राम की समस्या है । अभाव से भी ज्यादा रोटी न मिलने के कारण वह जीवन से हार जाता है । तीन दिन हो गए घर में चूल्हा जले, बाकी सारें कष्टो को तो झेल लें हम, लेकिन पेट की आग से कैसे पार पाएँ ।

समानता आंदोलन और चन्दन का कार्य सुनकर प्रभावित होता है, और कहता है, समाज का हित हमारे हित से पहले है । सुक्खा

अपने पर जुल्म करनेवाले, ठाकुर साहब को कुए में गिरते वक्त ही बचा लेता है और सबके साथ समानता, प्यार, मुहब्बत और भाईचारे के साथ रहने को कहता है । सुक्खा निर्धन जरुर है, पर संतोषी है, सचमुच सुक्खा का चरित्र महान है ।

रमिया भारतीय दलित नारी का प्रतिनिधित्व करती है । सुक्खा के प्रति वफादार है, सुख-दु:ख में साथ रहती है । अभावों से त्रस्त है मगर संतोषी है । सुक्खा कहता है- जब दुल्हन बनकर आयी थी, रमिया तो कबूतरी-सी लगती थी, आज वही रमिया कैसे मुरझा-सी गई है ।

अपने पति की बिमार हालत देखकर कहती है- सारे दु:ख हमारी ही किस्मत में क्यूं लिखे है । फिर भी हिम्मत और हौसले में किसी से कम नहीं है । सुक्खा के लिए बडे से बडा त्याग करने के लिए हर समय तैयार रहती है ।

सुक्खा को मानसिक रुप से त्रस्त देखकर उसे सांत्वना देती है, मुश्केलियों में साथ देती है, मुकाबला करती है । अपना बेटा चन्दन पढ-लिखकर नौकरी प्राप्त करेगा, हमारा घर सुखी होगा ये कल्पना तो करती है, किन्तु चन्दन समाज उत्थान का कार्य करता है तो वह भी सुक्खा के साथ कहती है-समाज को चन्दन की जरुरत है, हम भी तो समाज में ही रहते है । समानता आंदोलन का प्रभाव मातापुर में सूनकर वह खुश हो जाती है । चन्दन का पात्र उपन्यास को चार चाँद लगा देता है । उपन्यास का नायक है, दलितपुत्र होने के कारण स्कूल में समस्याओं का सामना करना पडता है । सुक्खा और रमिया मजदूरी करके चन्दन को शहर पढने भेजते है, तो सारे सवर्णो के क्रोध का शिकार होना पडता है, वही चन्दन सारे इलाके में से छूआछूत का नाश करता है। दलित कॉलोनी मे स्कूल-खोलकर बच्चों को पढाने की जिम्मेदारी अदा करता हे । महिला शिक्षा, सिलाई-बुनाई प्रशिक्षण, व्यसन-मुक्ति, समानता आंदोलन से इलाके में जडमूल से परिवर्तन करता है । ब्राह्मणवाद का मूकाबला करता है, गाँव गाँव में उनका प्रतिनिधि यह कार्य करता है और अहिंसा से, शांति से समाज में परिवर्तन करता है । सन्त नगर में शराब बंदी,

व्यसन मुक्ति से लोगों के जीवन में सुधार होता है । मजदूर का पूरे पैसों से मजदूरी मिलती है, शोषण का अंत होता है । छूआछूत, जामींदारो का आतंक, शेठ-साहुकारों के सूद की निर्मम मार का अंत होता है ।

चन्दन शहर और गाँव की कल्पना-यथार्थ देखकर मन ही मन दुःखी होता है । शहर की गरीबी, व्यसन, गाली-गलौच देखकर चिंतित होता है । बारिस नहीं आती, तो यज्ञ करते है, तब चन्दन विरोध करता है, कि वर्षा होगी मानसून के आने से । इस प्रकार परम्परित इश्वरवाद का खंडन करता है । सबको समजाता है कि दुनिया में आत्मा, परमात्मा, ईश्वर, ब्रह्म, भगवान या इस तरह की किसी सत्ता का कोई अस्तित्व नहीं है, ये काल्पनिक है । मनुष्य सबसे बडी सत्ता है । जब भी कोई मुश्केली आती है तो धार्मिक पाखंड करते है, यज्ञ करते है, भारत की ये त्रासदी है कि लोग मुश्केली से निपटने का उपाय खोजने के बजाय भगवान पर छोड देते है । ब्राह्मणों को यह विधि से आय प्राप्त होती है, इसलिए ये तो कार्य करते है । यज्ञ करने के खर्च को अच्छे कार्य में लगाओं तो समाज उपर उठेगा ।

अपने सहपाठीयों का सर्कल बनाकर अपनी शिक्षा का उपयोग समाज उत्थान में करवाने की प्रेरणा देता है । सारे मित्र ये कार्य को उठा लेते है । चन्दन शोषित, पीडित समाज के बच्चों को शिक्षा देता है, जुल्म और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए फौज तैयार करता है । धर्मग्रंथ को शोषण और अत्याचार की जड मानता है । शिक्षा को ज्यादा महत्त्व देकर कहता है- शिक्षा ही उत्थान और विकास का आधार है ।

हरिया भी चन्दन के बारे में कहता है- 'धन्य है तुम्हारे माता-पिता जिन्होंने तुम्हारे जैसे बेटे को जन्म दिया । अपने नाम को सार्थक कर दिया है तुमने । तुम सचमुच चन्दन हो, अपने कुल-खानदान के भी ओर समाज के भी । तुमने अपनी खुश्बु से इस समाज को महका दिया है ।'

चन्दन को कार्य को देखकर रजनी बहुत ही खुश है, वह कहती है- 'आज सामाजिक क्रांति का प्रतिक बन गया है चन्दन । समाज

से अन्याय और असमानता को मिटाकर सवर्ण-अवर्ण छूत-अछूत, अमीर-गरीब और मालिक-मजदूर सबको एक समान धरातल पर लाने तथा समाज में खुशहाली और भाईचारा बढाने के लिए कार्य कर रहा है चन्दन ।"

कमला का पात्र दलित, शोषित नारी का प्रतीक है । दलित कन्या होने के कारण सवर्ण बलात्कार करते है, क्योंकि दलित कुछ कर नहीं सकते । पुलिस तो सवर्णो का कुछ बिगाड नहीं सकती । जब चाहे तब दलित नारी का शोषण कर सकते हैं । मूँह दिखाने लायक नहीं रही अतः कमला कहीं दुर चली जाती है । कोठीयों में बर्तन सफाई का काम करके जीवन बिताती है । उनको एक बेटा होता है, उसका नाम स्कूल में दाखिला करने पर पिता का नाम नहीं देती, तब से चन्दन और कमला का संबंध बढता हे । कमला शोषकों का प्रतिकार करती है । पुत्र के बारे में कहती है- बडा होकर यह मेरे साथ हुए जुल्म और अत्याचार का बदला ले यही मेरी कामना है 1 शोषण और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने का मजबूत हौंसला उनके मनमें है ।

रजनी के बारे में यह कहती है- "तुम्हारे जीवन के सफर की सहयात्री है रजनी ! जहाँ तक मेरा सवाल है, सफर का एक पडाव भर हूँ मैं तो ?" रजनी और चन्दन के बीच में से स्वयं निकाल जाती है, और उनका रास्ता साफ कर देती है ।

चन्दन पर लाठी का प्रहार होता है तो चन्दन को धक्का देकर स्वयं लाठी झेल लेती है और शहीद हो जाता है । इस प्रकार कमला का पात्र सचमुच प्रशंसनीय है । उसकी रजनी के प्रति कुरबानी चन्दन के प्रति कुरबानी दलित साहित्य में अमर रहेगी ।

रजनी का पात्र समाज को सहीं दिशा प्रदान करता है । सवर्ण समाज छूआछूत दुर करने के लिए आगे आएँगे तो सचमूच छूआछूत नष्ट हो जायेगी । बचपन से चन्दन के साथ पढती है, उसके प्रति आत्मीयता रखती है । उसके पिता चन्दन की पढाई का विरोध करते है तो कहती है- संविधान के अनुसार देश के प्रत्येक नागरिक को सम्मान और स्वाभिमानपूर्वक जीने का हक है । व्यवसाय चूनने और जीवन की

दिशा निर्धारित करने की स्वतंत्रता है । यदि चन्दन पढ-लिखकर कुछ काबिल बनना चाहता है तो यह उसीका संवैधानिक हक है, इस पर किसी को एतराज क्यों होना चाहिए । अपने स्वार्थ की खातिर दूसरों को बलि बनाना तो उचित नहीं है ।[1]

रजनी किसी भी मनुष्य को एक मनुष्य की तरह देखती है, शोषण की विरोधी है । वे भी तो मनुष्य है, एक मनुष्य दूसरे. का शोषण करे यह कहाँ का औचित्य है ? रजनी मानवीय स्वतंत्रता और समता की पक्षधर है, और दीन-दलितों के प्रति उसके मनमें दया और करुणा है । रजनी व्यवस्था में यदि दोष हो तो उसे बदलने के पक्ष में है । अपने हित की खातिर दूसरे के हितों की बलि चढाना उचित नहीं मानती । एक व्यक्ति को सबकुछ मिलें और दूसरा अभाव और उत्पीडन में डूबा रहे इसे व्यवस्था मानने को तैयार नहीं है । ब्राह्मण और भंगी दोनों एक है, शरीर रचना खून एक है, फिर दोनों समान क्यों नहीं ? समाज की परम्पराओं का विरोध करके अपने पिता को भी कहती है कि आपने परम्पराओं का पालन किया है, इसलिए दोषी है आप बराबर के और आपके दोष का दन्ड न केवल आपको भोगना पडेगा, बल्कि हम भी अछूते नहीं रह पाऐंगे उससे ।[1]

रजनी मातापुर के आसपास अपना कार्यक्षेत्र बनाती है, और गाँव के दीन-दुःखियों की सेवा, अशिक्षितों को शिक्षित करती है । तथा दलितों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की भावना जागृत करती है । इस प्रकार सवर्ण लडकी रजनी सचमुच प्रेरणामूर्ति है, उसका त्याग प्रशंसनीय है। हर सवर्ण भारतीय ऐसा कर्म करे तो समानता अवश्य आयेगी ।

ठाकुर हरनामसिंह उपन्यास के खलनायक है । मातापुर के आसपास उन्हीं का राज चलता है । बडे जमींदार है, रुढिवादी है । चन्दन शहर में पढने जाता है, तो सवर्णो की पंचायत अपने घर बुलाकर निर्णय करते है कि सुक्खा को कोई मजदूरी पे नहीं बुलायेगा ।

ठाकुर साहब को कोई सौ एकड जमीन थी, ट्रेक्टर, ट्युबैल, गाय, बैल, नौकर-चाकर थे । इलाके में असली शासन तो उनका था,

सरकारी कारकून तो नाम भरके थे । उनकी इच्छा के विरुद्ध पत्ता तक नहीं हिल सकता था । वे यही सोचते थे कि दलित पढेंगे तो हमारे यहाँ मजदूरी कौन करेगा ? अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए दूसरों को दबाए रखना जरुरी है । इतिहास और परम्परा से समाज में हमारा वर्चस्व रहा है । हमारा वर्चस्व कायम रहे, हमारी अस्मिता इसी में है । अस्मिता के बिना मनुष्य जिन्दा नहीं रह सकता ।

किन्तु समानता आंदोलन का प्रभाव मातापुर में भी आता है, तो उनकी स्थिति विकट और दुविधाजनक हो जाती है । न तो अपनी विशाल मिल्कियत को छोड़कर कहीं जा सकते थे वह और न अपनी कल की हैसियत और वजूद को भूलकर वर्तमान के साथ समझौता करके आम आदमी की तरह रह सकते थे । नौकरों के चले जाने पर सब काम करना पडता था । कल तक कभी जूती की धूल से ज्यादा नहीं समझा था, उनसे बचकर स्वयं सिकुडते हुए चलते है ।

अंत में गाँव की पंचायत बुलाकर थोडी जमीन रखकर अपनी सारी जमीन गाँव के गरीबों को बाँट देते है । स्वयं भी काम करते है । हवेली छोड़कर छोटे से मकान में रहते है । समाज में रहते है, सुख-दुःख में हिस्सा लेते हैं । इस प्रकार सचमुच समानता करके सबको दिखा देते है । आज ऐसे पात्र की समाज में जरुरत है, भविष्य में अवश्य ऐसे पात्र आयेगें और समाज में समानता आएगी ।

काणे पण्डित जो भारतीयसंस्कृति के पक्षधर है, ब्राह्मण है, इसलिए उनके केहने के मुताबिक ठाकुर भी काम करते है । दलितों को पैर की जूती मानते है । मंत्र,तंत्र, पंडित का काम कर लेते हैं। अनपढ लोगों को धर्म के बहाने डराकर अपना काम अपना अस्तित्व बरकरार रखते है ।

इस प्रकार छप्पर उपन्यास में वैविध्यपूर्ण पात्रसृष्टि है । छप्पर उपन्यास की संवादकला देखने लायक है । उपन्यास में संवाद का महत्त्व कम है, फिर भी छोटे-छोटे वाक्य, शब्द से अर्थ प्राप्त होता है, कथा आगे बढती है, इससे उपन्यास की गति तीव्र होती है ।

सुक्खा रमिया के बीच संवाद“सारे दुःख हमारी ही किसमत में क्यूं लिखे है (मन में)मैं कहती हूँ कब तक चलेगा ऐसे । कब तक यूं परेशान रहोगे तूम ! (इस बार जसे तैसे साँसों को संयत करके बोला सुक्खा, तुझे मेरी चिंता लगी है, मुझे रात-दिन चन्दन की चिंता लगी रहती है । बस्स, किसी तरह उसकी पढाई-लिखाई पूरी हो जाए-”[३]

(प्रभु) इश्वर के बारे में चन्दन और मूहल्लेवालों के बीच संवाद काफी चोटदायक, प्रेरणादायक है । (पृ.१८,१९)

काणा पंडित और सुक्खा के बीच चन्दन के बारे में संवाद

“काणा पंडित-सुना है सुक्खा, तेरा बेटा पढने के लिए शहर गया है ?

सुक्खा - हाँ पंडित जी, गया तो है आपके आशीर्वाद से ।

काणा पंडित- आशीर्वाद कहता है इसे । अनर्थ कर दिया तूने., महाअनर्थ

सुक्ख- क्या कह रहे हो पंडितजी ।

काणा पंडित -तू कितना ही बडा हो जा सुक्खा, लेकिन धर्मशास्त्रों से बडा नहीं हो सकता तू । अपमान करता है, धर्मशास्त्रों का वेद-वेदांगो का और पूछता है, क्या हुआ, नास्तिक....”[४]

जमींदार, पैसेदार व्यक्ति और पुलिस के बीच कैसे संबंध होते है ? और सामान्य व्यक्तियों के बारे में क्या सोचते है ? देखिए...

दुर्गादास - सुना है.... समानवादियों का बहुत जोर हो रहा है आजकल ?

पुलिस अधिक्षक - हाँ, कुछ सिरफिरे लोग अराजकता फैलाना चाहते है समानता के नाम पर । वे ही जगह-जगह आंदोलन कर रहे है ।

ठाकुर साहब - क्या आप समजते है कि ये लोग अपने मकसद में कामयाब हो पाऐंगे ?

पुलिस अधिक्षक- थोडा सा जोश है बस, शासन से क्या टक्कर लेंगे वो । धरपकड शुरु कर दी है हमने । थोडे दिन में सबके होश ठिकाने आ जाएंगे”[५]।

इस प्रकार ‘छप्पर’ उपन्यास की संवादकला पात्रों के अनुरुप है ।

‘छप्पर’ उपन्यास में उत्तरप्रदेश का पशिचमी भाग खडा होता है, भारत के गाँवों की तरह यह गाँव में भी सवर्ण और दलित लोग

रहते है । सवर्ण देव की औलाद है, ऐसा स्वयं को मानते है । सारी जायदाद सवणो के पास है, दलितो के पास केवल अभावों का गट्टर है ।

दूसरे गाँवों की तरह सवर्ण लोग उपर की ओर तथा अवर्ण कहेजानेवाले दलित लोग गंगा के बहाव की ओर निचान में बसे है । गाँवो में गरीब ज्यादा होते है, आर्थिक तंगी होती है, रोटी, कपडे की समस्या होती है । गंदकी ज्यादा होती है । ठाकुर-जमींदारो की हिंसा, आतंक का मनमाना राज होता है । शेठ-साहूकारों के सूद की निर्मम मार, उंच-नीच, और छूआछूत का जहर, चौरी, डकैती का त्रास भी होता है ।

शहरो में भी कई लोग गरीब होते है । अभाव में जीते है । आदमी को पेट की क्षुधा से लडना पडता है । झोंपडी नहीं होती उसे फूटपाथ पर रात गुजारनी पडती है । दूसरी साडी के अभाव में बहुत सी औरतें नहा-धो नहीं पाती महिनों तक फूटपाथ पर ही खुले आकाश में बच्चे पैदा करने पडते है । और ये लोग यह विवशता, त्रासदी को नियति का आदेश मानते है ।

जमींदार कम रुपये देकर मजदूरी करवाते है, मजदूर गालियाँ सुनते है मगर बोल नहीं पाते, क्योंकि कल ये भी नहीं बुलायेंगे । देश क्या करवट ले रहा है, ये जानने में उनकी रुचि नहीं है, वह मेहनत करते है, रात में जो मिला रुखा-सूखा खा-पीकर सो जाते है, दूसरे दिन वही समस्या । शराब पीते है, जुगार खेलते है, गालियाँ बोलना-झगडना उन लोगों के लिए सामान्य है ।

कहीं कहीं ज्यादा बारीस से नदीयों में बाढ और लाखों लोगों को नुकशान होता है, तो कहीं कहीं अकाल भी होता है । बारिस न आने के कारण यज्ञ के लिए पैसे (चन्दा) इकट्ठा करते है, चन्दन जैसा कोई व्यक्ति मना करता है, तो बहस होती है । आस्तिक, नास्तिक कहते है । किन्तु भारत के हर गाँव की तरह यहाँ भी समाज को दिव्य शक्तियों से भयभीत रखकर धर्मविशेष को जीवित रखते हैं । यज्ञ आदि अनुष्ठानों के पीछे यही कारण है और भारतीय समाज की यह एक त्रासदी है कि किसी भी आपदा के समय उससे निपटने के उपाय खोजने की बजाय

देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है ।

बारिस आने से सब खुश हो जाते है, किन्तु लगातार बारिस आने के कारण रोज रोज कमाकर खाने वाले को परेशानी होती है । छोटे किसानों को लगान की चिंता होती है, उपन्यास में सुक्खा चिन्ताग्रस्त है । लगान के पैसे नहीं है, दुर्गादास (शेठ) के पास से लेना चाहते है, मगर वो तो गहने हो तब देता है । गरीब के बच्चे पढते है मगर आर्थिक चिन्ता में दिन काटते है, पैसों के अभाव में पढाई छोडनी पडती है । पशुओ में रोग आता है तो पशु मर जाते है । जिन पशु पर जीवन का आधार होता है वही मर जाने पर जिन्दगी बोझरुप लगती है।

मजदूरों के पास पैर में जूते नहीं होते, एक या दो जोडी कपडे होते है । उनमें भी थेकली लगा के चलाते है । जेवर, घर, जमीन आदि शेठ के यहाँ गिरवी रखते है । बाद में शेठ का ही अधिकार हो जाता है, और आत्महत्या करने का सोचते है । गाँव में से दलित का लडका यदि शहर पढने जाता है तो सारे गाँव में भूचाल आ जाता है, उसके माता-पिता को मजदूरी पे नहीं बुलाते । मानसिक रुप से भी हैरान करते है । शहर में भी कॉलेज में सवर्ण लडके दलित लड़के को साथ नहीं देते । दलितों में व्यसन ज्यादा होता है । शराब, बीडी, सिगरेट, पान-तम्बाखूँ पीते-खाते है । फिल्म देखते है, जुगार खेलते है । लडका-लडकी की छोटी उम्र में शादी कर देते है और जल्दी ही बच्चे पैदा करते है ।

जमींदार के यहाँ या फैक्टरी भट्टे पर मजदूर काम करते है तो वही शेठ कँवारी लडकियाँ पर बलात्कार करते है, उनके पिता या दूसरे मजदूर भी उसके बारे में बोल नहीं पाते, यदि विरोध करे तो मजदूरी से निकाल देते है । पुलिस में फरियाद करते है तो पुलिस को पैसे देकर मामला शांत कर देते है और मजदूर की पिटाई करते है । ऐसी कई कन्याएँ आत्महत्या कर लेती है, यदि जिन्दा रहती है तो समाज के टोने से हार जाती है, बलात्कार से उत्पन्न बच्चा को पढा नहीं पाती, क्योंकि पिता का नाम नहीं है ।

कई दलितों को गाँव से त्रस्त होकर गाँव छोडने की नौबत भी आती है । गाँवो में जमींदार राजा जैसा होता है । उनके यहाँ मजदूर मजदूरी करते है, उनके साथ वह गुलाम जैसा व्यवहार करता है । सारे सरकारी अफसर भी जमीनदार की इच्छा के अनुसार काम करते हैं ।

शिक्षित दलित अपने अधिकारों के प्रति जाग्रत हो रहे है । अन्याय और शोषण की जंजीरों से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगे है। समाज के भीतर एक आंदोलन खडा होता है ।

सवर्ण अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए दूसरों को दबाएँ रखते है । स्कूल के अध्यापक सवर्णो की ओर ज्यादा ध्यान देते है, मजदूर के बच्चे पर कम ध्यान देते हैं ।

चन्दन जैसा व्यक्ति जरुर समाजसेवा करता है, व्यसन कम करवाता है, मजदूरों के बच्चों को पढाता है, किन्तु ऐसे व्यक्ति के विरोध करनेवाले भी होते है, क्योंकि बुद्धिवाले व्यक्तियों को ये बुरा लगता है... अशिक्षितों के आगे ही अपनी बुद्धि चलती है । उनका ही शोषण कर सकते है ।

पुलिस अधिक्षक, कलक्टर जैसे व्यक्ति भी जमींदार के गुलाम हो ऐसे कार्य करते है । मजदूरों की धरपकड करते है और जमींदार को संवारते है । ब्राह्मण अपना वर्चस्व समाज पर रखना चाहते है । हर व्यवस्था को सनातन व्यवस्था कहकर शोषण की प्रक्रिया को चालु रखते है । समता आंदोलन से पंडितों का काम बंद हो जाता है, दूसरे काम के लिए गाँव छोडना पडता है । मजदूर पूरे पैसों से मजदूरी करते है । शेठ-साहुकार से पैसे लेने बंद करते है और सहकारी समिति ये जरुरत पूरी करती है । मजदुर को मजदूरी न मिलने पर शहर की ओर चले जाते है, तो उधर जमींदारो को भी उनका महत्त्व समज में आता है ।

समानता आंदोलन के प्रभाव से जहाँ पर कुछ वर्ष पहले तक ठाकुर जमींदार तथा बनिया-ब्राह्मणों के सामने चारपाई पर बैठने की हिम्मत नहीं होती थी कभी चमारों की, आज वे उम्र के लिहाज से सिरहाने या

पायंत में उनके साथ चारपाई पर बैठते है । जहाँ पर छूआछूत को धार्मिक आदेश की तरह माना जाता था, कभी आज वहाँ सभी जातियों के लोग बिना किसी भेदभाव के एकदूसरे के साथ खा-पी रहे थे । जिस मातापुर में अवर्ण-जाति का दुल्हा घोडी पर अथवा बैंड-बाजे के साथ नहीं निकला, आज चमार से लेकर भंगी तक सब जातियों की बारातें धूम-धडाके के साथ निकल रही थी । कुछ वर्ष पहले तक दलित-मजदूर लोग ठाकुर-जमींदारो के सामने थर-थर काँपते थे और सदैव डरे-सहमें से रहते थे, जिस मातापुर में आज वे लोग निर्भय और बेखटके सीना तानकर चल रहे थे ।

समाज को सही रास्ते पर ले-आनेवाले नेता को ही खत्म करने की परम्परा हमारी दुनिया में है वही परम्परा उपन्यास में भी दिखाई देती है, किन्तु कमला की शहीदी के कारण चन्दन (नेता) बच जाता है । अनाथ बच्चे को अपना बनाकर समाज में सही दिशा प्रदान करते है।

इस प्रकार छप्पर उपन्यास में हमारे समाज में व्याप्त कुरुढियों का बखूबी से निरुपण किया है । यथार्थ वर्णन जरुर है किन्तु, कुछ विचार आदर्श भी है जो आज भी कल्पना से परे लगते है । हरनामसिंह (ठाकुर साहब) के चरित्र में अंत में जो परिवर्तन दिखाई देता है वह आदर्श यथार्थ के बीच आसमान-जमीन का अंतर है । फिर भी लेखक की दृष्टि सही रास्ते पे है ।

भाषाशैली की दृष्टि से छप्पर उपन्यास समृद्ध है । भाषा उत्तरप्रदेश की हिन्दी है । उपन्यास में मुहावरें, कहावतें, अंग्रेजी शब्द, प्रतीक, अलंकार, रस, महत्त्वपूर्ण वाक्य भी है ।

मुहावरें -

- कलेजा मुँह को आने लगा - सूई चुभ जाने जैसी पीडा
- मन आहत हो उठा - हक्का बक्का रह गया ।
- पत्ता तक नहीं हिल सकता - पैरों के नीचे से जमीन खिसकना ।
- आँखें शून्य में टिका देना - नाक कट गई
- स्वर तीखा होना - आग-बबूला होना

- टाँगे काँपने लगी - चेहरा तमतमा गया

- क्रोध की आग प्रचंड हो उठी - दिल पर पत्थर रखना

कहावतें

- काला आखर भैंस बराबर है ।

- अकेला चना भाड नही फोड सकता

- कुछ पाने के लिए कुछ खोना पडता है ।

अंग्रेजी शब्द

- फूटपाथ, कॉलोनी, हैंड-टु-माउथ, फीस, टैक्स, स्टेथिस्कोप, डॉक्टर, कलक्टर, कन्विस, स्कूल, मीटिंग

उर्दू शब्द

- हिफाजत, फर्ज, लगान, खून, गुलामी, फौज, खिलाफ, कुर्बानी, कफन

प्रतीक -

१. दूसरे गाँवों की तरह सवर्ण लोग उपर की ओर तथा अवर्ण कहेजानेवाले दलित लोग गंगा केबहाव की ओर निचान में बसे है ।

२. छप्पर शीर्षक प्रतिकात्मक है ।

३. चन्दन का पात्र भी प्रतिक है ।

महत्त्वपूर्ण वाक्य

१. दुनिया अपनी गति से चल रही है और ये लोग अपनी गति से किसी तरह अपनी जीवनयात्रा पूरी कर रहे है ।

२. कुल जमा बीवियां ही इनके मनोरंजन की एकमात्र साधन है ।

३. जीवन की मुख्य धारा से अलग-अलग से पडे इन लोगों के जीवन में न रस है, न प्राण ।

४. भारतीय समाज की यह एक त्रासदी है कि किसी भी आपदा के समय उससे निपटने के उपाय खोजने की बजाय देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है ।

५. जब सब कुछ ही जा रहा है हाथ से तब इन दो रोटियाँ से ही क्या होगा ।

६. दलित और दरिद्र लोगों में कुछ ज्यादा ही होता है अनर्थ और अधर्म जैसे शब्दों का आतंक ।

७. बिना पति के उसकी और उसके बच्चों की कोई पहचान नहीं, कोई अस्तित्व नहीं ।

८. दुसरों की भावनाओं का सम्मान करने के लिए कभी कभी उसकी इच्छाओं के अनुरुप आचरण भी करना पडता है ।

९. अपने स्वार्थ की खातिर दूसरों के बलि बनाना तो उचित नहीं है ।

१०. धीरे-धीरे शेष रात दोनों के बीच से गुजरने लगी ।

११. पेट की क्षुधा से लडना पडता है ।

१२. दिनभर का थका-मंदा सूर्य भी विश्राम के लिए लौट चला था ।

१३. मेरे अंधेरे घर में दीया जलाकर चले जाना चाहते हो तुम ।

१४. अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए दूसरों को दबाए रखना जरुरी है ।

१५. जिनके पास पैसा और ताकत नहीं है, उनकी कोई पूछ नहीं है ।

१६. किसी की गलत बात को सूनकर चूप रहना कुछ भी न कहना तो उस बात का समर्थन करना हुआ ।

१७. हम गरीबों तो अभावों में पैदा होते है, जिन्दगी भर अभावों में जीते है, और अभावों में ही मर जाते है ।

१८. टूटकर जूडना ही तो जीवन है ।

१९. हिंसा का जवाब अहिंसा से दिया जाना चाहिए ।

२०. जीवन जीने के लिए होता है, नष्ट करने के लिए नहीं ।

२१. दुनिया में ऐसा कोई आदमी नहीं मिलेगा, जिससे कभी कोई गलती न हुई हो ।

२२. सम्मान ही सम्मान को जन्म देता है ।

२३. केवल शिक्षा ही श्रेष्ठता का आधार नहीं है ।

अलंकार

उपमा अलंकार

-जब दुल्हन बनकर आयी थी रमिया तो कैसी सुन्दर लगती थी कबूतरी सी ।

- जैसे कोई माँ अपने बालक को दु बकाती-बचाती है ।
- जैसे किसी जहरीले सर्पने डंस लिया सुक्खा को ।
- जैसे बिजली के नंगे तार पर अचानक हाथ पड गया हो ।
- जैसे साँप लेट गया उसके कलेजे पर ।
- सूनी जिन्दगी में जैसे बहार आ गयी ।

अतिशयोक्ति अलंकार

- मन हुआ कि चूम ले रमिया को । अपने अन्तर का सारा प्यार उडेल दे उसके उपर और बना दे उसे रानी ।

बिम्ब

- ध्वनि बिम्ब- बाहर तेज हवा चल रही थी, साँय साँय करती हुई ।
- दृश्य बिम्ब- १. बाहर धुप्प अंधेरा था । दिन का स्वच्छ निर्मल आकाश इस समय मेघमालाओं से आच्छादित था । चन्द्रमा भी बादलों की ओट में कहीं छिप गया था ।

२. कभी काफी चहल-पहल रहती थी चमारों के मौहल्ले में । लेकिन जब से सुक्खा और उसके साथ साथ अन्य लोगों ने गाँव छोडा है, तब से इस मौहल्ले की रोनक थी खत्म सी हो गई थी । मैल-मिट्टी में सने नंगे-अधनंगे बच्चे दिनभर धमा-चौकडी मचाए फिरते थे, गलियो में, लेकिन अब पूरा मौहल्ला एक अजीब से सन्नाटे में डूबा रहता था ।

ध्वन्यात्मक शब्द :

साँय...साँय.. गुडड...गुडड, ढब-ढब-ढब

रस

कमला ने जब बलात्कारीयों की बात कहीं तब चंदन क्रोधित होता है ।

१ क्षणभर को आवेश में आ गया चन्दन । चेहरा लाल हो गया उसका मुट्ठियां भिच गयीं, गर्दन सख्त हो गयी और दांत किटकिटाने लगे उसके ”

२. चन्दन को पढने के लिए शहर भेजते है तो ठाकुर साहब और पंडित सुक्खा को मजदूरी पर बुलाने घास लेने का भी प्रतिबंद करता है रमिया कहती है ठाकुर साहब के साथ तुम समझौता क्यों नहीं करते तब

सुक्खा- 'रमिया के मुँह से फिर ठाकुर साहब का नाम सून क्रोध से झल्ला गया सुक्खा । आवेश से शिराएँ फडकने लगी उसकी, चूप रह रमिया! मत ले ऐसे जाहिलों का नाम मेरे सामने, जो मेरे बेटे का जीवन बर्बाद करने पर तुले है ।'

संयोग श्रृंगार

धीरे धीरे शेष रात दोनों के बीच से गुजरने लगी

करुण रस

१. चन्दनने जब कमला को पति के बारे में पूछा तो उसने सारी कहानी बलात्कार की सूनाई, वह सूनाते सूनाते रोती थी, साडी का पल्लू मूँह में दबाकर जोर जोर से रोने लगी ।

२. कमला की मृत्यु हुई, चन्दन, हरिया करुण रस में डूब जाते है ।

इस प्रकार वीर, करुणा, श्रृंगार रस छप्पर उपन्यास में है ।

छप्पर उपन्यास के कई उद्देश्य है, जो समाज के लिए बहुत ही उपयोगी है ।

१. समाज में समानता

भारत की संस्कृति विश्व में प्रसिद्ध है, किन्तु कई सदीयों से समाज में छूआछूत व्याप्त है, जो समाज का कलंक है । इन्सान पशु को सेहलाता है, किन्तु दलित इन्सान को छूना नहीं चाहता, जो समाज की गंदकी दूर करता है । छप्पर में बहुत सरलता से समजाया है कि मजदूर को पूरे पैसो से मजदूरी मिले, जमीनदारों द्वारा शोषण कम हो, सब भाईचारे के साथ रहें, सेठ-शाहुकारों का अंत हो, ब्राह्मणवाद नष्ट हो समाज व्यवस्था में परिवर्तन हो जाये तो समाज में समानता आयेगी । न कोई छोटा न कोई बडा हर ईन्सान समान हो जाये तो पृथ्वी ही स्वर्ग बनेगी ये छप्पर का महानतम उद्देश्य है ।

२. व्यसनबंदी

उपन्यास में सारे पात्र व्यसन के शिकार है, समाज में भी ५०.७० प्रतिशत लोग व्यसन के शिकार है जो यथार्थ है । किन्तु चन्दन करता है कि शराब, बीडी, जुगार, बंद करे, पिक्चर देखते है वह बंद करे

तो पैसों की बचत होगी, शरीर स्वस्थ रहेगा और उन पैसों से बच्चों को पढाओ, गृहस्थी संभालो, झघडे कम होंगे, समाज में व्यसन के कारण कई लोग गरीब बनते जा रहे है, खाना कम खाते है, किन्तु व्यसन में कोई कटौती नहीं करते, उसी कारण अपना स्वास्थ्य बिगाडते है, बच्चों का भी मानसिक, शारीरिक, स्वास्थ्य बिगाडते है ।

३. बालविवाह और कमसंतान

हमारे समाज की यह त्रासदी है कि छोटी उम्र में लडका-लडकी की शादी कर देते है । उपन्यास में यह समस्या को अच्छी तरह से पेश किया है- रजनी के माध्यम से जो छोटी उम्र में शादी करना नहीं चाहती अपने पिता को भी कहती है कि मैं शादी करुंगी, किन्तु अभी नहीं । लेकिन पिताजी ! क्या उम्र होने पर विवाह कर देने मात्र से ही जिम्मेदारी पूरी हो जाती हे माता-पिता की अपनी संतानो के प्रति ? उनके बच्चे सम्मान और स्वाभिमान से जीए, क्या यह सुनिश्चित करना जिम्मेदारी नहीं है उनकी ? रजनी ने प्रश्न किया ।[1]

हमारे दरिद्र और अशिक्षित समाज की यह भी एक विडम्बना है कि बच्चों की छोटी उम्र में ही शादी करके डाल दिया जाता है बन्धन में न कुछ खाने का अवसर मिलता है न खेलने का, जल्दी शादी होने का मतलब होता है जल्दी ही बच्चे पैदा होना । ओर जब तक लडकी तनिक शयानी अथवा कुछ सोचने-समझने लायक होती है तब तक वह माँ बन चुकी होती है ।[2]

४. सरकारी अफसर रबर स्टेम्प

सरकारी अफसर राजनेताओं या पैसेदार, जमींदार, गुंडातत्त्वो के मनसूफी के आधार पर कार्य करते है । वह डरते है क्योंकि सरकारी नौकरी डिग्री के आधार पर मिलती है, और डिग्री प्राप्त करने में आधी जिन्दगी और पैसे खर्च करते है तब मिलती है, अपने परिवार की चिन्ता होती है, इसीलिए गुंडातत्वो, राजनेताओं, जमींदारो से बेचारे डरते है किन्तु आम आदमी के सामने अपनी सारी ताकत, नियमों का वे उपयोग करते है । उपन्यास में ठाकुर साहब के बारे में लिखा है- "कोई भी सरकारी

अफसर हो या कारकुन, ठाकुर साहब की सहमति के बिना इलाके के किसी भी मामले में न तो हस्तक्षेप करता था, और न किसी को ऐसा करने की सलाह देता था । यूँ कहिए कि सरकारी कारकून तो नाम भर के थे अन्य था इलाके में असली शासन तो ठाकुर साहब का ही था ।”[११] लेखक यहाँ सुधार की आवश्यकता पर बल देते है ।

५. पुलिस का व्यवहार

सरकारी अफसरों के मुताबिक पुलिस का व्यवहार भी आम जनता के लिए सख्त ही है । पैसे लेकर गरीब की पिटाई करते है । उपन्यास में देखें तो कमला पर बलात्कार होता है तो उनके पिता पुलिसथाने में फरियाद लिखवाने जाते है, तो पिटाई करके भगा देते है, क्योंकि बलात्कारियों ने पुलिस को पैसे दिये थे । आंदोलनकारीयों के साथ भी यही व्यवहार करते है, उनको अंदर कर देते है, पिटाई करते है और पैसेदार, जमींदार को संवारते है ये है हमारे भारत की पुलिस ।

६. स्त्री शिक्षा, रोजगार के लिए नये साधन

चन्दन के विचार उपन्यास में बिखरे हुए है, जो आम जनता के लिए, दलितों के लिए, मजदूरों के लिए बहुत उपयोगी है । स्त्री शिक्षा पर वह जोर देता है । शिक्षा के अलावा गृहउद्योग पर भी बल देता है । ऐसी महिलाओं को सिलाई-बुनाई का प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था की जाए ।

७. शिक्षा, संगठन, आंदोलन

छप्पर में डॉ.आंबेडकर के त्रिसूत्र को ध्यान में रखा है । चन्दन उनके मित्र पढे-लिखे है, वे भी दूसरों को पढाना चाहते है । तुम्हारे बच्चे दिनभर रेत-मिट्टी में खेलते फिरते है । उनका भविष्य बनाने की ओर ध्यान दिया जाए, उनके लिए स्कूल खोले जाए ।

चन्दन समाज को आये बढाना चाहता है शिक्षा से । चन्दन आगे कहता हे हर तरह के अन्याय, शोषण और उत्पीडन के शिकार होते है, उन लोगों को शिक्षित करुंगा मैं । इन सोए लोगों को जगाँऊगा और उनमें जागृति पैदा करुंगा, ताकि अपने शोषण की जंजीरों को तोड-फेंकने

के लिए वे उठ खडे हो ।"

हमें समाज से टक्कर लेनी है, सत्ता से लडाई लडनी है, जुल्म और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करना है । एक-दो आदमी के बस का नहीं है यह काम । अकेला चना भाड नहीं फोड सकता । इस सबके लिए फौज चाहिए, वह फौज तैयार करुंगा मैं । धीरे धीरे चन्दन का स्कूल दलित-शोषित लोगों की सामाजिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया और जल्दी ही इन गतिविधियों ने एक आंदोलन का रुप ले लिया । आंदोलन की कई शाखाएँ बनाई गई । सामाजिक समता, आर्थिक आत्मनिर्भरता, महिला-शिक्षा, तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान ।

इस प्रकार चन्दन के द्वारा छप्पर उपन्यास में शिक्षा, संगठन और आंदोलन पर बल दिया है, जिसके द्वारा समाज में समानता अवश्य आयेगी ।

८. सवर्ण पात्र (रजनी) द्वारा दलित समाज को आगे बढाने का प्रयत्न एक अच्छा प्रयत्न

सवर्ण लोग छूआछूत दूर करने के लिए आगे बढेंगे उनके साथ भाई-भाई का संबंध रखेंगे तो सचमूच छूआछूत दुर होगी, समानता आयेगी । उपन्यास में रजनी का पात्र ये भूमिका अदा करता है । अपने पिता के साथ संघर्ष करती है और शोषित प्रजा को साथ देती है । समानता आंदोलन में सहयोग देती है शादी भी चन्दन जैसे दलितनेता के साथ करती है, जो आज बहुत प्रेरणादायक है ।

९. स्त्री द्वारा समाज सुधार, नारीचेतना

समाज सुधार केलिए पुरुष एवं स्त्री का हिस्सा जरुरी है । स्त्री शक्ति का परिचय उपन्यास में कमला द्वारा मिल जाता है । स्वयं पर बलात्कार हुआ, उनसे उत्पन्न बच्चे के साथ आत्महत्या करना चाहती है, किन्तु सोचा- "बडा होकर यह मेरे साथ हुए जुल्म और अत्याचार का बदला ले यही मेरी कामना है ।"

चन्दन के समानता आंदोलन में कमला सहयोग देती है रजनी भी आंदोलन में सहयोग देकर मातापुर के आसपास के गाँवो में समानता

करती है । उसका योगदान भी समाज के लिए अनन्य है । पुरुषों को ये दो युवती बहुत कुछ सीख देती है ।

छप्पर उपन्यास में पात्रों की मानसिकता पर ज्यादा बल दिया है । आजकल इन्सान सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक रुप से त्रस्त है, इसलिए ये पात्र मानसिक रुप से भी त्रस्त रहते है । दलितों की यह विडम्बना है की अभावो में पैदा होते है, अभावो में जीते है और अभावों में ही मरते है । अभावों के सिवा सामाजिक रुप से भी त्रस्त है, हर समय सवर्णो का डर रहता है । कब संघर्ष होगा, कब पिटाई होगी, कब गाँव छोडना पडेगा ? हर समय यही चिंता कब अपनी बहु-बेटियों की इज्जत लूटेंगे ?... ये सिवा अपनी सामाजिक रुढियाँ भी इतनी ही जिम्मदार है, मानसिक रुप से त्रस्त करने के लिए ।

सुक्खा की मानसिकता देखिए : "वह किसी गहरे सोच में डूबा हुआ था । बाहर तेज हवा चल रही थी, साँय.. साँय करती हुई, उसका तारतम्य सुक्खा के मस्तिष्क से जुडा हुआ था । उसके मस्तिष्क में भी विचारों का एक अंधड सा बह रहा था । वह सोच में डूब गया, जब दुल्हन बनकर आयी थी, रमिया तो कैसी सुन्दर लगती थी-कबूतरी-सी । आज वही रमिया कैसे मुरझा-सी गई है । कैसी काठ सी हो गई है कल की वह कबूतरी ।" रमिया की मानसिक स्थिति भी वैसी ही है-

- सारे दुःख हमारी ही किस्मत में क्यूं लिखे है ।
- ऐ जी, मैं कहती हूँ चन्दन के बापू अब तो काफी पढ-लिख गया है, चन्दन । क्यू नहीं तुम उसे लिखवा भेजते कि वह कहीं कोई हिल्ला-रुजगार ढूँढ ले । दो पैसे कमाएगा तो तुम्हारी दवा-दारु भी हो सकेगी और सिर से कर्ज भी उतरेगा ।

"लगान की समस्या, घर गिरवी रखा है, उसकी भी मियाद पूरी होने को है.. कहाँ सिर छिपाएँगे ? कैसे गुजर होगी अब ? हायरी बेबसी..."

सीने में खंजर उतर जाए या गोली लग जाए तो थोडी देर पीडा होती है । थोडी देर तडपता-फडफडाता है आदमी और फिर शान्त हो

जाता है । लेकिन जीवनभर की घुटन तथा हरकदम पर अभाव और उत्पीडन की तडप और बेबसी तो अंतहीन है ।

चन्दन के स्कूल में कमला बच्चे का नाम लिखवाने आती है तो बच्चे के पिता का नाम चन्दन पूछता है, तब कमला के आँख में आँसू आ जाते है, और चली जाती है । लेकिन कमला को लेकर उसके (चन्दन के) मन मस्तिष्क में उथल-पुथल मची रही । आखिर वह इस तरह बच्चे को लेकर वापस क्यों लौट गई ? कई तरह से यह प्रश्न उसके मन में उठा, लेकिन वह कोई उत्तर नहीं पा सका ।

हरिया को अपना अतीत याद आता है... बेटी पर बलात्कार, शेठ का अत्याचार, पुलिस की भूमिका, बेटी कहाँ होगी ?

चन्दन को चिंता हरिया के घर कमला आ जाने से अब यहाँ रहे.गा तो समाज क्या कहेगा ? मुझे स्वयं से ज्यादा आपकी इज्जत की चिन्ता है ।

युवा और वृद्धों की मानसिकता

जहाँ वृद्ध लोग शान्ति और संयम से काम लेने के पक्षधर थे, वहीं युवा खून उग्र और उतावला तथा हिंसा पर उतरने तक को तत्पर था ।

चन्दन के मन में समाज की चिंता है... लेकिन हमारा समाज सोया हुआ है ।

समानता आंदोलन और पैसेदार की नींदहराम.. ब्राह्मण का काम बंद हो गया, जमीनदारों के यहाँ कम करने नहीं आता, शेठ, शाहुकारों के पैसे कोई लेना नहीं चाहता ये सभी चिंतित हो जातेहै, दूसरी जगह रोजगार केलिए निकल पडते हैं ।

सूक्खा को चिंता है- रोटी

'धर में थोडा बहुत आटा था, लेकिन वह भी कब तक चलता, दो-चार दिन में वह भी खत्म हो गया और फाके की स्थिति खडी हो गयी ।'

इस प्रकार छप्पर उपन्यास में सारे पात्र मानसिक रुप से त्रस्त है । चिंताओं में डूबे हुए है । दलित पात्र तो चिंताओं में ही जीते है कभी धूप तो कभी छाँव में से गुजरते है ।

छप्पर उपन्यास शीर्षक यथायोग्य है । सुक्खा छप्पर के लिए संघर्षरत है । सिर छुपाने के लिए उसे, रहने के लिए छप्पर चाहिए । उसने बंगले की कामना नहीं की, किन्तु एक झोंपडी मात्र चाहिए । वह झोंपडी भी सवर्ण छिन लेते है । रोटी की समस्या से वह त्रस्त है । चन्दन को पढाने के लिए छप्पर गिरवी रखता है । किन्तु वह छप्पर दुर्गादास शाहुकार ले लेता है । गाँव में उसे कोई मजदूरी पे नहीं बुलाते अत: गाँव छोडकर जाना पडता है ।

कस्बे में झोंपडी बनाकर रहता है । तो काम नहीं मिलता । फिर रोटी की समस्या, दो-तीन दिन तक भूखा रहना पडता है, हारकर वहाँ से शहर की ओर जाना चाहता है । तब रजनी आकर कहती है अब कहाँ चले ? क्या मुश्केलियाँ है ? तब सुक्खा कहता है, दो-तीन दिन हुए चूल्हा नहीं जला ! रजनी बताती है कि समानता आंदोलन से आपका छप्पर आपको मिलेगा, जमीन भी मिलेगी और खुशी से अपने गाँव में छप्पर में रहीए । इस प्रकार छप्पर की चिंता सारे उपन्यास में है । शीर्षक भी यथायोग्य है ।

संदर्भ

१. छप्पर पृ.२९ दूसरी आवृत्ति...२००७

२. वही, पृ.३३

३. वही, पृ.३५

४. वही, पृ.९६

५. वही, पृ.६

६. वही, पृ.७८

७. वही, पृ.९७

८. वही, पृ.५०

९. वही, पृ.११६

१०. वही, पृ.६४

११. वही, पृ.९१

१२. वही, पृ.६६

१३. वही, पृ.८

१४. वही, पृ.३२

१५. वही, पृ.८१

१६. वही, पृ.१०३

१७. वही, पृ.८९

१८. वही, पृ.४५

१९. वही, पृ.६२

२०. वही, पृ.४०

अध्याय-४

एस.आर.हरनोट (व्यक्तित्व, कृतित्व) एवम् हिडिम्ब उपन्यास का विवेचन

नाम : एस.आर. हरनोट

जन्म-२२-१-१९५५ को हिमाचल प्रदेश के जिला पिछडी पंचायत व गाँव चनावग में ।

शिक्षाअ बी.ए.(ऑनर्ज) एम.ए. (हिन्दी), पत्रकारिता, लोकसम्पर्क एवं प्रचार-प्रसार में उपाधि पत्र ।

प्रकशित कृतियाँ - पंजा, आकाशबेल, पीठ पर पहाड, दारोश तथा अन्य कहानियाँ (कहानी संग्रह) हिडिम्ब (उपन्यास) हिमाचल के मंदिर और उनसे जुडी लोककथाएँ, यात्रा किन्नौर, स्पिति, लाहुल और मणिमहेश, हिमाचल एक परिचय, हिमाचल एट ए ग्लास (संयुक्त कार्य) ।

अन्य : प्रदेश तथा देश से प्रकाशित होनेवाले हिन्दी के समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में इतिहास, संस्कृति, लोकजीवन और विविध विषयों पर नियमित लेखन ।

पुरस्कार - वर्ष-२००३ का अंतर्राष्ट्रीय इन्दु शर्मा कथा सम्मान, हिन्दी साहित्य संमेलन प्रयाग द्वारा साहित्य सम्मान, क्रिएटिव न्यूज फाउण्डेशन, दिल्ली द्वारा वरिष्ठ साहित्यकार सम्मान, ऑल इडिया आर्टिस्ट एसोसिएशन द्वारा अखिल भारतीय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवोर्ड, हिमाचल केसरी एवोर्ड, हिमाचल प्रदेश राजकीय अध्यापक संघ, हमीरपुर द्वारा श्रेष्ठ साहित्यकार सम्मान, हिमाचल गौरव सम्मान, भाषा और संस्कृति विभाग हि.प्र.द्वारा कहानी और निबंध लेखन के लिए सम्मानित ।

सम्प्रति : हिमाचल प्रदेश पर्यटन विभाग निगम रिट्ज एनैक्सी, सिमला-१७१००१ में अधिकारी ।

हिडिम्ब :

'हिडिम्ब' उपन्यास मुझे बहुत अच्छा लगा । आज के आधुनिक युग में जमीन, जंगल, नदी, पहाड़, गरीब, किसान, मजदूर की ओर कोई देखना भी नहीं चाहता, उसको सब दया की दृष्टि से देखते हैं, उसे नष्ट करने में यश लेते हैं उनकी जगह पर आधुनिक कम्पनियाँ, मशीनें ले आते है विदेश से और ये नेता अपने को महान नेता कहते है । सारा देश इस तरह गिरवी हो जायेगा तब जागेगा भारत ! सबके सब हिडिम्ब के मंत्री की तरह नेता हो गये है जो गरीबों की जमीन लेने के लिए उसके परिवार को नष्ट करते है । गरीब किसानों के नाम से बेंक में से गाये लेता है और अपने को नेता, संत, महात्मा कहलाता है । उसके चमचे, अधिकारी ये काम में मदद करते है । पता नहीं ये आज का भारत कहाँ जायेगा ? किस तरह की प्रगति करेगा ? सभी नेताएँ अपना घर भरने पर तुले है ? देश का, लोगों का क्या होगा ! ये चिंता उनकी नहीं है !

किन्तु लेखक ने 'कला जीवन के लिए' यहाँ अंत में सार्थक किया है, वही शावणु ने जमीन एक अस्पताल को दी दान में । जिसमें एकहजार बिस्तरें होगे, गरीब, मजदूरों का मुक्त में ईलाज होगा, नशे में चूर युवाओं का उपचार होगा । लेखक का तीर सही निशाने पर है सचमुच दलित उपन्यास का यह कदम उसके यश में एक कलगी है । 'काहिका' उत्सव भी कलंक है जिसे लेखक ने दर्शाने का प्रयत्न किया है । दूसरे उत्सव में शावणु भाग जाता है जो लेखक की द्रष्टि सही है । प्रस्तावना में लिखा है 'ईस उत्तर आधुनिक समय में जब जल, जंगल, पर्वत, जमीन की चिंताएँ हाशिये पर चली जा रही है, एस.आर.हरनोट का उपन्यास हिडिम्ब इन चिंताओ को विमर्श के केन्द्र में लाने की एक विनम्र कोशिश है । हरनोट एक विनम्र कथाकार है, लेकिन समय की क्रूरता को वे पूरी सख्ती के साथ पकडने की कोशिश करते है । यह उपन्यास इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि यह हिमाचल के एक दुर्गम अंचल की भौगोलिक विशिष्टताओं, रीति-रिवाजो और जीवन से परिचित कराता है । हिन्दी के बहुत से पाठकों

के लिए तो यह एक बिल्कुल अपरिचित लोक में प्रवेश करने जैसा है, जहाँ देवता है, गूर है, उनके कारकुन है और काहिका जैसी परंपराएँ है । साथ जहाँ मंत्री, सेक्रेटरी, प्रधान, ठेकेदार है और उनकी सत्ता है । जहाँ नदी जैसा बहता निर्मल जीवन है और पहाड जैसे ऊँचे चरित्र है और इन सब पर लगी समय की कुद्रष्टि है । यह एक छोटे से अंचल की कथा है लेकिन इसके सरोकार वैश्विक है । यहाँ पर्यावरण की फिक्र भी है और सांस्कृतिक प्रदूषण की भी । सामाजिक क्षरण का मुद्दा है तो राजनीतिक भ्रष्टाचार का भी । और सबसे बडी बात यह है कि पहाड से भी उंचा साहस है जो तमाम दुखों-यंत्रणाओं और विडंबनाओं को मूंह चिढाता नजर आता है । शोषण और अन्याय के खिलाफ यहाँ व्यक्ति का आक्रोश है और प्रकृति का भी । बल्कि कई बार तो व्यक्ति और प्रकृति के आक्रोश एकाकार होते नजर आते हैं । एक दुर्गम पहाडी अंचल की कथा को वैश्विक सरोकारों के साथ प्रस्तुत करनेवाला यह शायद इस तरह का पहला उपन्यास है ।[1]

उपन्यास में एक नड परिवार जो दलित है । हिमाचल प्रदेश की घाटी में रहता है । शावणु नायक है जिसकी उम्र ५० साल, पत्नीका नाम सुरमा, लडकी का नाम सूमा जो युवान है, लडके का नाम काशी जो स्कूल में पढ़ता है ।

ये परिवार सुखी है, गाय-बैल, बकरी-भेड पालते है, नदी के किनारे पर बीस बीघा जमीन है जिसमें खेती करते है । अपने में मस्त है ।

मंत्री की नजर ये जमीन पर पडती है उसे वह लेना चाहता है । उसमें होटल ओर फार्म हाउस बनाना चाहता है । ऐसे ही एक जगह हरीजन की जमीन झूठे कागजात बनाकर अपने नाम कर दी थी, ये हरिजन के मूँह पर तेजाब डाल दिया तो वह मर गया । ये जमीन में गोधाम बनाया और हरीजनो के नाम पर गायें ली सबसीडी मिली और बाकी कर्ज दलितों के नाम पर । गाये रखकर धार्मिक नेता बन गया । बूरे काम गोधाम के कारण दब जाते थे ।

मंत्री का काम करने के लिए ठेकेदार, कलक्टर, तहसीलदार, पटवारी, प्रधान सब तैयार रहते थे, क्योंकि प्रमोशन मिलता था । मंत्री शावणु को बुलवाता है, पर उसने जमीन बेचने से इनकार कर दिया । मंत्री अब कया करेगा ? वह भयभीत होकर देवी माँ को याद करता है । देवी माँ हर मुसीबत पर सहाय करती है ऐसा विश्वास है ।

एक दिन मंत्री के आदमी ठेकेदार, सेक्रेटरी, प्रधान शराब पीकर शावणु के घर आकर नुकशान करते हे, जमीन बेच दे जितने पैसे चाहिए वह ले लेना । ठेकेदार शावणु को खरीखोटी सुनाता है तब सुरमा दराट लेकर ठेकेदार को धक्का लगाकर गालियाँ देती है- वे तीनों क्रोधित स्वरुप देखकर भाग जाते है ।

काहिका उत्सव में नड जाति की जरुरत होती थी । ये उत्सव पाँच-दस बीस वर्ष बाद होता था, उसदिन सब उसे देवता मानते थे, किन्तु बाद में अछूत, कुत्ते से बदतर हालत, मंदिर से दूर, इन्सान से दूर और छू ले तो अपराधी दंड का भागीदार ।

शावणु जब बारह साल का था तब काहिका उत्सव में उसके पिता-माता मुख्य पात्र के रुप में थे । उनका बहुत भव्य स्वगत किया था । विशाल मंदिर के आँगन में उत्सव हुआ था । आज वह देवता बन गया था । यज्ञ में माता-पिता बैठकर आहुति देते थे । यज्ञ के बाद नड देवता... अप्सराओं को गाना गाकर देखने के लिए बुलाता था । जौ के दाने लेकर नड सबके उपर फैंकता था, जैसे ही लोगो पर दाने पडते वे खुशी से झुम उठते । देवता और नड की जय जय करते । ब्राह्मण, पुजारियों, दूसरी जाति के लोगों को विश्वास हो जाता कि उनके सभी गुनाह, कुकर्म और पाप धूल गए है । नड सबको गालियाँ देता, अश्लील हरकतों करता नडन (शावणु की माँ भी ऐसा ही करती थी) दोनों ने लोगों के गुप्तांगो पर हाथ मारे, वक्षस्थल नोंच दिए किन्तु किसीने बुरा नहीं माना । सभी इस कृत्य को अपना सौभाग्य मानते थे । फिर देवता के गूर ने पहला तीर हवा में मारा दूसरा नड के सिर में मारा, तीसरा छाती में मार दिया, वह बेहोश हो गया, अर्थी पर डालकर कारकुन उसे

कन्धे पर उठाकर मन्दिर के चक्कर काटने लगे । सभी नाचते थे नडन की हरकतें अभी चालु थी । अर्थी को मंडप में छोड दिया, पुजारी मंत्रो के जाप करता था, सभी अपनी अपनी शक्ति से मृत नड को जीवित करना चाहते थे । किन्तु वह जीवित न हो सका तो सबने अनहोनी का संकेत माना । शावणु और उसकी माँ की चीख्रों से वातावरण करुण हो जाता है ।

नड की मृत्यु के बदले में धन, जमीन देते है यह जमीन में शावणु रहता है । लोग ये जमीन को पवित्र मानते है । मंत्री को जमीन बेचने से इनकार करना, मंत्री के लोगों की बतमीजी और सुरमा द्धारा प्रतिकार किसी बडी मुसीबत का आमंत्रण था ये चर्चा घर में होती रहती थी । डर लगता था । नदी में बाढ आई थी तो गाँव के गाँव नष्ट हो गये, पशु, इन्सान अन्य चीजे बहकर आती थी । एक लडकी की लाश भी आई थी । जिसकी साँसे चल रही थी । किन्तु ठेकेदार और प्रधानने अस्पताल में नहीं भिजवाई और हवस इस लाश पर निकाली थी। वैसी घटना टूरीस्टों के साथ हुई थी, रात में उनका सामान लूंट लिया, पिटाई की और महिला टूरीस्ट पर बलात्कार किया था घाटी बदनाम हो गई थी । कौडी के मूल्य में कई लोगों ने जमीन बेच दी थी, नये जमींदार भाँग, अफीम की खेती करते थे, नेताओं को भी उसमें से देते थे, लोग मजदूरी करते, व्यसन के शिकार हो रहे थे होटल खूल गये थे । स्कूल के मास्टर भी नेताओं से डरकर या अन्य संबंध के कारण स्कूल के बच्चों को भांग मलने के लिए ले जाते है, किसी को न कहने का वचन देते है, डराते है, फेल करने की धमकी देते है, कांसी के पास भी ये काम करवाते हे । शावणु ने जब मास्टर के साथ जघडा किया तो वे माफी मांगने लगे, किन्तु ठेकेदार को ये फरीयाद कर दी, ठेकेदार शावणु का दुश्मन तो था, अब ज्यादा दुश्मनी बढी । हर साल संक्रांति के उत्सव में, स्कूल में प्रसाद बाँटते थे, ठेकेदार और मास्टर ने कांसी के प्रसाद में अफीम और भांग के बीज मिला दिये थे, कांसी को जबरदस्ती खिलाया, वह मर गया । उसे झाडी में फैंक दिया था । काशी के मृत्यु के कारण

शावणु, सुरमा और सुमा की हालत पागल जैसी हो जाती है । सुरमा तो अनोखी हरकतें करती, शावणु, सूमा परिस्थिति से काबू पा लेते है । एक दिन ठेकेदार को सडक पर देखती है, तो उसके पीछे भागती है, उसका लिंग काट देती है । किन्तु एक दिन सुरमा चली जाती है, उसको बहुत ढूँढने पर भी नहीं मिली, शावणु को मालूम हो गया कि मंत्रीओं के आंदमीयोंने उसे मार दिया होगा । शावणु को एक के बाद एक आघात मिलता था । उसे अब सुमा की चिंता थी, मंत्री के लोगों का विश्वास नहीं था ।

सुमा को नदी में से ऐरी ओस्ट्रेलियन लडका बचाता है तब से सुमा के परिवार से संबंध बढता है । सुमा की जाति के लोग इस प्रदेश में नहीं थे, इसलिए शादी होने की संभावना नहीं थी । दूसरी जातिवाले तो शादी के लिए तैयार नहीं थे, उसकी जाति को छूते भी नहीं थे, किन्तु कुकर्म करने के लिए तैयार रहते थे । शावणु की सबसे बडी चिंता सूमा थी, उसका यौवन बढता जा रहा था । एरी ने तीन साल के कोन्ट्रेक्चुअल मैरिज के लिए प्रस्ताव रखा और दो लाख रुपये देने को कहा । रात में मंत्री के लोग आये थे ऐसा लगा, वह सूमा की इज्जत को बचाना चाहता था । एरी के पास जाकर शादी का प्रस्ताव स्वीकार करता है और पैसे देता है तो वह छूता भी नहीं और कहता है कि उसके नाम पर कर देना । एरी-सुमा अपना संसार शुरु करते है, शावणु की देखभाल की सूमा करती है ।

एकदिन काहिका उत्सव के लिए शावणु को बुलाने आते है, शावणु सोचता है ये जमीन पिता के मर जाने पर काहिका उत्सव देवता कमिटीने दी थी, हमारी जाति दुसरों के पापो को नष्ट करने के लिए पैदा होती है ।

किन्तु आज शावणु का सम्मान नहीं किया, पशुओं के बाँधने के गलावें में रहने के लिए जगह दी । आधी रात तक नींद नहीं आई, कूत्ते की तरह अंधेरे में पडा रहा, फिर सामान वापस देकर वह निकल जाता है । एरी की अकस्मात में टांग टूट जाती है तो ऑस्ट्रलिया सूमा

के साथ जाता है, सूमा की सेवा देखकर एरी और उनके माता-पिता उनको पत्नी के रुप में स्वीकार कर लेते है । शावणु ये जानकर खुश होता है ।

किन्तु शावणु मंदिर से रात में भागकर आया था, तब मंत्री के लोगों ने मंदिर की सोने की मूर्तियाँ चुराकर अपने कब्जे में कर दी थी, और शावणु पर आरोप लगा दिया । पुलिसवाले शावणु को ले जाते है । पुलिस थाने में रात गुजारता है तो सपनेमें मंत्री आता है, वह कहता है मैं नदी, पहाड, जंगल, ईन्सान, देवता सभी का राजा हूँ । राक्षस, भैंस के रुप में प्रकट होता है, महिषासुर, बाणासुर, चन्डिका, महाकाली, वैष्णोदेवी, कालेश्वरी रुप में जीवित होता गया हूँ । शावणु से कहता है तू हिडिम्बा को याद करता है वह तो हमारी राजाओं की देवी है तू तो अछूत है तेरे पास नहीं आयेगी । कांसी, सुरमा, जमीन जा रही है किन्तु वह नही आयेगी । में आज नेता के रुप में जनसेवा कर रहा हूँ । मुझे देवता की जरुरत नहीं है । तपस्या की वरदान की जरुरत नहीं है । में मरुंगा तो कोई दूसरा पैदा हो जाएगा ....हर युग में...। सुबह में शोभा लुहार जमानत पर छूडवाता है । थानेदार, पुलिसवालों में परिवर्तन होता है । हम नेताओं के नौकर है, गरीबों के उपर अपना जोर निकालते है । मंदिर की मूर्तियों लेकर मंत्री के तीन आदमी गाडी लेकर आते है और कहते है ये सामान थाने में रख दो और ये बूढा छूटना नहीं चाहिए उसे एसी सजा दो कि दोबारा उस जमीन पर उनके कदम न पडे । जल्दी से उस जमीन को मंत्री के नाम कर दिया जाए । फोजदार ने गाडी, मूर्तियाँ कब्जे में ले ली और तीनों को अन्दर डाल दिया । तीसरे दिन फोजदार की बदली दूर इलाके में हो जाती है । शावणु पटवारी के पास जमीन का नक्शा, पर्चा लेने जाता है, और मंत्री को जमीन बेचने की बात करता है । पटवारी खुश होता है कि कितने साल हो गए मंत्री के आदमीयों ने हैरान कर दिया शावणु को फिर भी नहीं दी और आज मेरे से ये कार्य होगा तो मुझे प्रमोशन जल्दी से मंत्री देगा । जमीन के पास कई बीधों का एक चरांद था पटवारी ने उसे भी शावणु के नाम ही लगा दिया और कागज पकडा दिए ।

शावणु ने वह जमीन अस्पताल बनाने के लिए (दान) भेंट में दे दी । जिसमें एक हजार बिस्तरों की सुविधा, किसान, मजदूरों के लिए मुफ्त में इलाज, नशे की लत वाले युवाओं के इलाज होगा । लोगो ने तालियों से बधाई दी, किन्तु मंत्री हक्का -बक्का रह गया । खदरधारी-राक्षस- हिडिम्ब असहाय दिखने लगा । उसी रात बारीस ज्यादा हुई, वह रात कयामत लेकर आई थी । नदी में बाढ तो कई जगह बादल फट गये थे । बडे-बडे अफ्सर, उद्योगपतियों और राजनेताओं के आलीशान बंगले, होटल नदी में बह गए थे । मंत्री का भी कुछ नहींबचा था । उपन्यास में शावणु (नायक) सुरमा (नायिका) सूमा, कांसी जैसे दलितपात्र है । सवर्ण पात्रो में मंत्री, ठेकेदार, प्रधान, पटवारी, मास्टर, थानेदार, पुलिस, एरी (आस्ट्रेलियन लडका) है । सारे पात्र यथार्थ के पूजक है अपनी भूमिका निभाने में सफल है ।

शावणु नड जाति का है । अपनी जमीन बचाने के लिए मंत्री से टक्कर लेता है, यहाँ तक की अपना बेटा कांसी और पत्नी सुरमा को गँवा देता है, किन्तु टस से मस नहीं होता । वीरनायक है जिसने टूटना मंजूर किया, मगर झूकना नहीं सीखा । थोडी सी परेशानी, धमकी से लोग टूट जाते है, किन्तु शावणु सचमुच पौलाद है । आज के लोगों को ये पात्र पढ लेना चाहिए । शावणु का चित्र आजादी के क्रांतिकारी नेता की याद दिलाता है । जो विदेशी लोगो से ये टक्कर लेते थे, किन्तु आज तो अपने ही नेता विदेशी से ज्यादा नालायक हो गये है, देश को बेच देना चाहते है, अपना घर भरते है, किन्तु शावणु जैसे एक प्रतिशत लोग होंगे तो मेरा भारत महान होगा । शावणु का चरित्र अांगलियाातीं के टीहा की तुलना करता है । अपने पिता को काहिका उत्सव के मुख्य पात्र में देखकर खुश होता है । कल तक अछूत रखनेवाले नड को आज देवता माननेवाले लोगों को वह विस्मय से देखता है । स्वागत से खुश होता है । किन्तु मंदिर के देवता पिता को माथे पे, छाती में तीर मारते है, तो मर जाता है, जीवित करने के प्रयास करते है किन्तु जीवित नहीं होते तो पिता से बथ भर लेता है, काहिका उत्सव

और ईश्वर की हयाती पर प्रश्न होता है ।

पिता की मृत्यु के बदले में जमीन मिलती है उसकी देखभाल करके अपना जीवन बिताता है । जमीन मंत्री लेना चाहता है तो वह टक्कर लेता है । ठेकेदार, प्रधान घर आकर तूफान मचाते है तो डरता है, किन्तु सुरमा की ताकत से वह भाग जाते है । तब सुरमा की प्रशंसा करता है । अपने बच्चों की पत्नी की वह अच्छी तरह से देखभाल शिक्षा का महत्त्व समजता है । बच्चे को पढाता है किन्तु स्कूल के मास्टर अपने बेटे को भाँग मलने ले जाते है तो खरी खोटी सूनाता है । मंत्री के लोग भांग के धन्धे में भी थे ये कांसी को ही खत्म कर देते है तो पागल हो जाता है किन्तु अपने आप पर काबू पा लेता है, सूरमा तो सचमूच पागल हो जाती है तो सूमा और सुरमा की देखभाल करता है । सुरमा ठेकेदार का लिंग काट लेती है, तब मंत्री अपनी क्या हालत करेगा? सोचकर वीरनायक की भाँति सजग रहता है । किन्तु वह भी घर से चली जाती है तो सूमा की चिंता होती है, मंत्री के लोग सूमा के पीछे अब होंगे ?

शावणु को मालूम है की स्वयं अछूत है.. अपनी जाति का लडका सूमा के लिए मिलना दुर्लभ है तो ओर चिंता से व्याकूल हो जाता है । किन्तु एरी ऑस्ट्रेलियन लडका सुमा से तीन साल के कोन्ट्रेक्ट मेरेज के लिए प्रस्ताव रखता है तो वह स्वीकार करता है और शादी कर देता है । पैसे नहीं लेता । तीन साल बाद सुमा को पत्नी के रुप में वह स्वीकार कर लेता है तो ओर भी खुश हो जाता है । एक युवान लडकी के पिता की जिम्मेदारी निभाने में शावणु सचमूच सफल है ।

चालीस साल बाद काहीका उत्सव का आमंत्रण पाकर जाता है, क्योंकि अपनी जाति ही इस उत्सव के लिए पैदा होती है ऐसा मनता है । मंदिर में जब स्वागत नहीं होता, रहने की अच्छी जगह नहीं देते तो अपने आत्मसम्मान को ठेल लगती है और रात में ही घर लौट चलता है । मंत्री के लोग मंदिर के गहने, मूर्ति चूराने का आरोप लगाकर उसे जेल में ढकेल देते है किन्तु शोभा लुहार छूडवाता है । दोनों को देखकर थानेदार

का हृदयपरिवर्तन होता है । मंत्री के लोगों को जेल में रखता है जिसने मूर्तिया चुराई थी, और शावणु को रिहा कर देता है । शावणु का चरित्र सत्यपथ पर चलनेवाले राही जैसा है । जमीन के कारण मंत्री ने ये हालत कर दी ये सोचकर दिमाग शून्य हो जाता है । किन्तु ये जमीन, एक अस्पताल को दे देता है । जिसमें गरीबों की मुफ्त में सारवार होगी । इस प्रकार शावणु का चरित्र कभी रोता है, कभी हँसता है, कभी टक्कर लेता है, तो कभी शून्य हो जाता है, किन्तु सचमुच एक महान पात्र है जिसने जिंदगीभर दु:ख भोगा है, लोगों को सुखी देखनेवाला शावणु अंत में जमीन अस्पताल को देकर स्वर्गीय सुख इस जीवन में प्राप्त करता है ।

पूरा जीवन मानसिक रुप से त्रस्त रहता है । जमीन के कारण, मंत्री उसके परिवार को नष्ट करने के लिए एक एक बलि लेता है । उधर सामाजिक रुप से भी त्रस्त है, छूआछूत, कोई उसके साथ बोलता भी नहीं है, केवल अपना परिवार घर में ही रोते है, घर में ही हँसते है दुनिया से कुछ लेना-देना नहीं एकाकी जीवन ! हाँ मंत्री के लोग जरुर उसके शांत जीवन में हड्डीयाँ डालते है, उसको हैरान करते हे, परिवार के सदस्यों की हत्या करता है । एक मात्र सहारा शोभा लुहार है जिसने दोस्ती निभाई वह भी बूढा हो गया था, फिर भी सहरा जरुर देता है, उसके सामने जरुर रोता है । क्योंकि शकुंतला की तरह शावणु दैवीपात्र नहीं है जो पशु,पंखी, पेड, पौधो के सामने रोये । बेचारा शावणु तो इन्सान है उसने सहारा ढूंढा किन्तु दलित को कौन सहारा देता है ? लोगों को केल काहिका उत्सव के लिए उसकी जरुरत है सिर्फ बलि चढाने के लिए !

शावणु सचमुच वीर है, मंत्री के सामने भी वह जमीन बेचने से इन्कार करता है, तो मंत्री उसके जीवन को नर्क बना देता है पुत्र, पत्नी की हत्या कर देते है तो सबके सामने मंत्री को मारने का वचन देता है । पूरा जीवन संघर्ष करता है जमीन बचाने के लिए । वह जमीन, पेड, पौधे, जंगल, पर्वत, पशु की चिंता करता है, विदेशी कम्पनी

जंगल, पर्वत, नदी को नष्ट करते है तो उसके हृदय में हडकम्प मच जाता है और नेताओं को कोषता है । पर्यावरण की रक्षा उसके लिए जीवन रक्षा है । स्त्रीयों को माता मानता है । पर्यटन में आते विदेशी लोगों को सहारा देता है, उनकी स्त्रीयों की रक्षा के लिए अपना जीवन झोखिम में डालता है । कम दाम में जमीन बेचनेवाले किसानों को चेतावनी देता है कि जमीन के बिना जीवन नष्ट है । भाँग, अफीम की खेती और उसका व्यसन करनेवाले लोगों से उन्हें सख्त नफरत है ।

इस प्रकार शावणु का पात्र यथार्थ का पूजक है । सफल पति, पिता, पर्यावरणवादी है जिसकी आज समाज में जरुरत है । सुरमा शावणु की पत्नी है, जिसमें नारीचेतना भरपुर है । अपने पति के सुख,दु:ख में सहारा देती है । गाय, जमीन की देखभाल करती है । अपनी जमीन मंत्री लेना चाहता है तो संघर्ष करती है । जब ठेकेदार और प्रधान घर आकर तूफान मचाते है तो प्रतिकार करती है और सिंहनी की भाँति उसे भगाती है उसका रौद्र स्वरुप देखकर ठेकेदार, और प्रधान डर जाते है । शावणु भी सुरमा की प्रशंसा करता है कि तूझ में इतनी ताकत कहाँ से आ गई । सुरमा ऐसी दलित नारी है, जो अपनी रक्षा स्वयं करना जानती है और परिवार को भी बचाती है । शिक्षा का महत्त्व जानती है और बच्चे को पढाती है । मेले में जरुर आनंद उठानी है, हर समय अपनी औकात में रहती है । अपने पुत्र कांसी की हत्या मंत्री के लोग करते है तो पागल हो जाती है । ठेकेदार की लिंग काट देती है और इधर-उधर भागती फिरती है । ऐसी ही अवस्था में कहीं घूम हो जाती है । सुरमा एक दलित नारी है जिसने पति की परछाई बनकर जीवन बिताया । उसने कभी बंगले, मोटर, हवाई उडान, पिक्चर की कामना नहीं की । वह तो सादाई में रहती है । किसी को दु:खी करना नहीं जानती किन्तु उसके जीवन में कोई हस्तक्षेप करे तो प्रतिकार करना जानती है । सुरमा में जरुर नारीचेतना दिखाई देती है ।

उपन्यास में सूमा का चरित्र भी इतना ही महत्त्वपूर्ण है । दलित युवान लडकी को सेहने की आदत होती है ये सूमा के चरित्र में

भी देख सकते है । ठेकेदार, प्रधान भी उसे झाँकते हैं । गाँववाले उनसे छूआछूत रखते हैं, किन्तु वासनापूर्ण करने में छूआछूत, धर्म साईड में रख देते है । ये सूमा को मालूम है । सूमा पाँचवी कक्षा तक पढी है । अपने भाई, माता-पिता की देखभाल करती है । परिवार को हर स्थिति में सहारा देती है । स्वयं दलित कन्या है, इस प्रदेश में शादी करने के लिए लडका मिलना दुर्लभ है ये जानती है, समजती है पर दु:साहस कभी नहीं करती । आज की लडकियों को सूमा से सीख लेनी चाहिए । किसी भी परिस्थिति में अपने चरित्र की रक्षा करती है । अपने भाई की हत्या होने पर माता-पिता की देखभाल रखती है । माता घूम हो जाती है तब भी पिता का सहारा बनी रहती है । एक कदम भी गलत नहीं रखनेवाली सूमा एक दलित कन्या है, जिसके आगे आज की कन्याएँ फिकी सी लवती है । एरी आोस्ट्रेलियन लडके के संपर्क से प्यार बढता है, मगर पिता की ईच्छा से शादी करती है । कोन्ट्रेक मेरेज को अपने प्यार से पूर्ण मेरेज बना देती है । जमीन, जंगल, पर्वत, नदी, पशु से प्यार, दोस्ती करती है और उसे बचाना चाहती है । छोडी लडकी विपु और सूमा के बीच अनन्य संबंध है जो यहाँ के पर्यावरण को बचाने की बात करती रहती है, आक्रोश व्यक्त करती है और आवारा तत्त्वों के सामने लाल आँख करती है ।

कांसी एक छोटा लडका है जिसके माध्यम से लेखक ने कई प्रश्नों का पर्दाफाश किया है । स्कूल के अध्यापक भाँग मलने का कार्य करवाता है तो अध्यापक का सबके सामने विरोध करता है । ठेकेदार को भी खरी खोटी सूनाता है परिणाम स्वरुप उसकी हत्या कर देते है । कांसी द्वारा स्कूल अध्यापक, नेता के दृष्कृत्य पर प्रकाश डाला है ।

शोभालुहार शावणु का मित्र है । शावणु से छूआछूत जरुर रखता है फिर भी दोनों के दिल एक है । बूढापे के कारण कमजोर है । अपने युवान लडके-लडकियाँ की हालत देखकर मन ही मन बेचैन है । व्यसन के शिकार युवा स्त्री पुरुषों का दुश्मन है । पानी के मूल्य में जमीन बेचनेवाले किसानों का विरोध करता है । शावणु को जेल से छूडवाता

है और सच्चे रुप में दोस्त बनकर रहता है । दोनों की दोस्ती सच्चाई देखकर थानेदार का भी हृदय परिवर्तन होता है । एरी ऑस्ट्रेलियन इंजीनियर है, जो नदी के पास कंपनी में नौकरी करता है । सूमा को नदी में से बचाता है । सूमा जैसी अछूत दलित कन्या के साथ कोन्ट्रेक्ट मेरेज करता है, और सूमा का प्रेम देखकर पत्नी के रुप में स्वीकार करता है । हमारे सवर्णो को यह सिख देता है कि दलित जाति की कन्या से शादी करना गलत बात नहीं है, किन्तु दलितों का स्वीकार करके उसके अस्तित्व की पेहचान करानी चाहिए ।

मंत्री का पात्र उपन्यास में खलनायक की भूमिका अदा करता है । आज के नेता का प्रतिनिधत्व करता है । मंत्री बनकर अपना घर भरने में अव्वल नंबर पे है । दलित लोगों के नाम गायें बैंक में से लेकर अपना फार्म हाउस बनाता है, सबसीडी जमा होती है किन्तु बाकी पैसे दलितो के नाम पर कर्ज के रुप में बैंक में रहता है । पार्टी बदलता है और गायों की पीठ पर पार्टी का चिन्ह खुदवाता है । दुष्कर्म गायो के कारण दब जाते है ।

कई जमीन गरीबों की लेकर फार्महाउस होटल बनवाता है । खेतों में भांग, अफीम की खेती करके रुपया दुगुना करता है । शावणु की जमीन लेने के लिए साम, दाम, दंड, भेद की नीति अपनाता है । ठेकेदार, पटवारी, प्रधान, पुलिस, अधिकारी सबको एक हाथ में रखता है, प्रमोशन के बहाने अपना काम करवाता है, गुंडागीरी से लोगों को अधिकारीओं को डराता है, धमकाता है ।

शावणु जमीन नहीं देता तो गुंडातत्वो (ठेकेदार, प्रधान) द्वारा उनके बेटे, पत्नी की हत्या करवाता है । मंदिर के गहने, मूर्ति चूराने का आरोप लगाकर शावणु को जेल में ढकेल देता है । शावणु को रीहा करनेवाले थानेदार की दूर ट्रान्सफर कर देता है । इस प्रकार शावणु को हैरान करने में अपनी सारी शक्ति का उपयोग करता है ।

शावणु को वह सपने में आकर कहता है- हिडिम्बा नहीं आयेगी, वह तो राजाओं की देवी है... तू तो अछूत है तेरे पास नही आयेगी ।

कांसी, सुरमा गये पर वह नहीं आई । मैं नेता के रुप में राक्षस हूँ, जनसेवा कर रहा हूँ । मुझे कोई देवी-देवता के वरदान, तपस्या की जरुर नहीं है । मैं चलता-फिरता कागजों की पीठ पर हूँ, पर मार पाताल तक गहरी होती है । इसी वेश में जन-जन की सेवा करता हूँ...कभी नेता के रुप में तो कभी इस महात्मा बनकर । बिल्कुल उसी तरह जैसे इस घाटी में कर रहा हूँ । प्रकृति को मैंने कैद कर लिया है.. जो सुन्दर घाटियाँ हउ, उपजाउ जमीने हैं, नदीया, झरने हैं, हिमशिखर और हिमनद है.. झीले है.. तुम्हारे जैसे गरीब लोग है... अबलाएँ है.. मैं ..सभी का राजा हूँ... स्वामी हूँ । मेरा अस्तित्व हर जगह है.. कण...कण में मेरा वर्चस्व है... मैं समुद्र से लेकर नदियों और नालों तक में बह रहा हूँ.. जंगलों में फुल्ललकडी की तरह फैलता चला जा रहा हूँ । हवा में उड रहा हूँ । हर कुर्सी पर मैं विराजमान हूँ... हर दिल में मै राज करता हूँ....। मैं मरुगा तो कोई दूसरा पैदा हो जाएगा.... फिर तीसरा... मैं तो हर युग में रहूँगा... हर युग में...1

किन्तु जब शावणु अपनी जमीन अस्पताल के लिए दान में देता है, तो मंत्री अपनी आँखो से देख नहीं पाया था, चला जाना चाहता था किन्तु लोग और मीडिया के कारण नहीं गया । शराब, मांस का शौखीन मंत्री दुष्कर्म मे पीछे नहीं था, अपनी उंगली से सारे प्रदेश को नचाता है, गरीबों को पैर की जूती मानता है, गुंडा तत्त्वो को सँवारता है और अपने पद को बरकरार रखता है । प्रधान और ठेकेदार का पात्र भी खलनायक है जो मंत्री के चमचे है । मंत्री की झूठन खाते है और एशआराम करते हैं । मंत्री के शब्दों पर किसी की इज्जत लूँटना, खून करना उन दोनों के लिए सामान्य बात है । शावणु के घर तूफान मचाते है, कांसी को खत्म कर देते है । ठेकेदार को जरुर सूरमा द्वारा शिक्षा मिलती है, उसका लिंग काट देती है, बाद में किन्नर बनकर घूमता फिरता है । मास्टर का पात्र उपन्यास में कलंकरुप है । मंत्री का चमचा बनकर प्रिन्सिपाल बनना चाहता है । स्कूल के बच्चों के पास भाँग मलने का काम करवाता है । कांसी की हत्या कर देता है । थानेदार के पात्र में

सचमूच यथार्थ, आदर्श का समन्वय है । मंत्री के केहने पर बूरे को अच्छा और अच्छे को बूरा करार देता है । पूंछडी हिलानेवाले श्वान से कम नहीं है । किन्तु शावणु को देखकर उसका हृदयपरिवर्तन होता है । शावणु को जेल से रिहा कर देता है और मंत्री के चमचे (लोगों) को जेल में अंदर कर देता है । मंत्री उसकी ट्रान्सफर दुर प्रदेश में कर देता है तब मनीराम (पुलिस को) वह कहता है बई मनीराम ! देखा तैने-उन दो बूढों को...। हम साले पुलिसवाले कुत्ते से भी बदतर होते है । हमारे भीतर पता नहीं चौबीसों घण्टें क्यों एक शैतान घुसा रहता है । यह वर्दी है न मनीराम हमारे को अन्धा बना देती है । हम साले.. कुत्ते.... गधे.. मादर.. इसके नशे में.... । पर तू बता मनीराम, हम कर भी क्या सकते है.... हमारे उपर जो ये साले खद्दरधारी बैठे है न सारे खटमल है खटमल । हमारी ही खून चूसेंगे और हमारे ही बिस्तर में दुबक जाएंगे... लाख ढूंढो... नहीं मिलते साले.. । इनकी न सुनो तो बदली... ट्रान्सफर । तू बता मनीराम मैं जैसा इस बर्दी में दिखता हूँ भीतर से भी वैसा ही हूँ..? नहीं मनीराम नहीं.. मैं वैसा नही हूं... मैं...मनीराम... तेरी तरह हूँ...। सच मनीराम... जब उस बूढे को मैंने कल शाम गालियाँ दी तो मन से नहीं दी... पर क्या करना मनीराम ? गुस्सा किसी पर तो निकलता है कहीं । तैंने नदी में बाढ आते देखी होगी- बादल फटते देखे होंगे । दंगे-फसाद होते देखे होंगे । महंगाई देखी होगी । सब की मार बेचारे गरीबों पर ही पडती है । इन सालों का कुछ नहीं बिगडता । ये वहाँ भी आनन्द लेते हैं । मजे लेते हैं । हमारी तरह.. हम अपनी थानेदारी भी मनीराम इन्हीं लोगों की पीठ पर झाडते हैं । नहीं मनीराम नहीं । तैने ठीक किया उसको दो चार बिस्कुट तो खिला दिए ।

सचमुच थानेदार में भरपूर इन्सानियत दिखाई देती है । आज भी वैसे थानेदार है । जो गलत काम करना नहीं चाहते, दृष्टों को दंड देना चाहते है, मगर उनके हाथ नेता बाँध देते है परिणाम स्वरुप कई अच्छे लोगों को शिक्षा मिलती है, पापी छूट जाते हैं । मनीराम (पुलिस) का पात्र आज के जमाने में दुर्लभ है, किन्तु हजारों में एक हो सकता

है । उन्हें मालूम है कि मंत्री के लोगो ने मूर्ति चुराकर शावणु पर आरोप लगाया है, पर बेचारा पुलिस क्या कर सकता है- दो मीठे शब्द, चाय, बिस्कूट देकर अपने दैवीतत्व को बाहर लाता है । अंदर से टूट जाता है किन्तु नेता के लंबे हाथों के आगे उसका कुछ नहीं चलता.. धन्य है ऐसे पात्र को जिसने पुलिस की वर्दी का सलाम करने के लिए लोगों को मजबूर किया है ।

संवाद की दृष्टि से हिडिम्ब उपनयास सक्षम है । उपन्यास में वर्णन ज्यादा है, फिर भी संवाद के माध्यम से पात्रों का परिचय, मानसिकता, उद्देश्य और कथा का विकास होता है । कुछ उदाहरण..

- ठेकेदार, प्रधान- शावणु के घर तूफान मचाते है तब सूरमा उन दोनों को सिंहनी की भाँति भगाती है, नारीचेतना दिखाई देती है यह संवाद-

हरामजादे आ तो तू क्या कर लेता ? बोल-बोल क्या कर लेता तू ? जमीन म्हारी है । तेरे और तेरे मंतरी के बाप की नी है ये जमीन । हमने इसको खून-पसीने से बाया-कमाया है । मेरा मरद तुम्हारे को कुछ नी बोला तो तुम समझ गए कि तुम्हारी टांग उपर हो गई । तुम्हारे मुँह में जो आए बकते जाओ 1

ठेकेदार शावणु को सिगरेट पिने देता है, दो चार क्रश मारने के बाद प्रधान को सिगरेट देता है तो ठेकेदार कहता है... (गुस्से में) तेरे को शर्म नहीं आती बे रे नड की औलाद !- अपनी जात भी भूल गया ! जानता नहीं म्हारे प्रधान साब सुच्चे पंडत है । और मंत्री जी के खासामखासा । सा..अ..ल्ला.. 1

- सुमा और शावणु के बीच संवाद (पहाड, पेड की चिंता है कि ये कम्पनीयों के कारण पहाड, पेड खत्म तो नहीं हो जायेंगे न !)

- वह भी तो वहाँ ही है.. पार, जहाँ सरंगे चलती है ।

- कोण पिता... ?

- वही न.. जिसने तेरे को बचाया था... ।

- फिर ?

- जब यहाँ आएगा.. तो तू पूछिओ उसको कि सामणे के सारे पहाड खत्म हो जाएँगे.. पेड भी नी रहेंगे..?

(यहाँ पर्यावरण की चिंता सामान्य आदमी को है ।)

- काहिका उत्सव में शावणु की बलि देने की थी, फिर भी उसे कोई सम्मान नहीं दिया, तब वहाँ से निकलते वक्त कहता है- आपणे लोगो को बोलणा कि मैं चला गया । घर से फालतू नी हू मैं । गरीब हू, इसका मतलब ये नी होता कि मैं कूत्ते की तरह अंधेरे में पडा रहू। मेरे को तुम्हारी जरुरत नी है । तुम्हारे को है मेरी । बोल देणा देवता को कारकुनों को कि मैं यहाँ अपणी ऐसी तैसी किराणे नी आया.. हा बोल देणा ।[1]

- मंत्री अपने को सर्वस्व मानता है, शावणु को सपने में कहता है- हाँ, शावणू हा मैं मंत्री ! नेताओं का नेता मेरी टोपी में । समा गए है । मेरा एकछत्र राज... हर जगह... चल रहा है । मैं जो चाहूँ कर सकता हूँ । सब कुछ मेरे वश में है । नदी, झरने, पहाड, जंगल, हिमशिखर, पशु, पक्षी, लोग बाग, जानवर तुम्हारे ये देवता जो मन्दिरों में कैद है । यानी सम्पूर्ण प्रकृति मैं इन सभी का राजा बन गया हूँ ।[1]

ईश्वरवाद का खंडन- मंत्री और शावणु के संवाद में "आज तू भी तो उसी का नाम जपता है.. तेरा कांसी गया तो वह न आई... तेरी बीबी गई फिर भी वह न आई.. तेरी जमीन जा रही हे फिर भी वह नहीं आएगी... । आएगी भी नहीं शावणु.. नहीं आएगी.. क्योकि वह च्छाई की देवी है न स्वच्छता उसे पसंद है । राजा-महाराज के महलों में रहती है वह । तू तो एक गया- गुजरा नड है । अछूत.. हा...हा...हा..."

थानेदार का संवाद

इन तीनों को अन्दर डाल दो । साले बडे आए मंत्री के चमचे । चोरी खुद करें और भुगते कोई गरीब ।[1] थानेदार को सलाम करनी पडे ये संवाद आज बहुत जरुरी है.. क्योंकि बेचारे थानेदार आज नेताओं की कठपुतली है ।

इस प्रकार उपन्यास में संवाद चोटदार है । मंत्री, ठेकेदार के संवाद में सामंतशाही की बदबू नजर आती है, जोहुकमी प्रकट होती है । शावणु, सूरमा के संवाद में आत्मसम्मान है । टक्कर लेने की शक्ति है ।

हिडिम्ब में हिमाचलप्रदेश की कथा है । हिमाचल प्रदेश की घाटियाँ विशेष की भाषा है । जो उपन्यास में बहुत सिद्ध हुई है । संगीतात्मक शब्द, अंग्रेजी शब्द, मुहावरें, कहावतें, रस, अलंकार, गीत प्रचूर मात्रा में है ।

संगीतात्मक शब्द - सरसराहट में...में टनटनाहट, खडखडाहट, चहचहाट, थरथराहट, गुडगुडाहट, खरखराहट, फडफडाने,

अंग्रेजी शब्द - स्कूल, ड्राईवर, स्टार्ट, गाईड, हिश्टरी, थैंक गोड, । ही इज ग्रेट कन्ट्रेक्युअल मैरिज, रिहर्सल, इन्फारमैशन.

मुहावरें

- मुग्ध होना ।
- मन अस्तव्यस्त हो गया
- लाल-पीला हो गया
- जले पर नमक छिडकना
- मन में आग भभक रही थी
- डूबते को तिनके का सहारा
- हतप्रभ रह गया ।
- ढाढस बंधाना
- विस्मित रह गया
- सांप की मांद में हाथ डालना
- आँखों के आगे अंधेरा छा जाना
- तिल का ताड बनाना

कहावतें

- सीधी अंगुली से घी निकालना था ।
- चमार के बोलणे से भैंस थोडे ही न ढलती है ।
- रात-दिन कोल्हू के बैल की तरह काम में लगा रहता (उपमा अलंकार)
- अकेला चना क्या भाड फोडता- जो करे सो भरे
- कहीं कुछ दाल में काला है । न रहता बांस, न बजती बंसरी ।
- बूढापे के साथ अठाहर व्याधी
- बंद मुट्ठी तो लाख की होती है ।
- चोरी और उपर से सीना जोरी ।

रस

वीरः ठेकेदार और प्रधान शावणु के घर आकर तूफान मचाते है, तब सुरमाने ठेकेदार को धक्का दिया और कहती है- जमीन म्हारी है । तेरे और तेरे मंतरी के बाप की नी हैये जमीन । गुस्से में बिफरती वह आज भी बके जा रही थी । उसके बाल खुल गए थे । मुँह लाल हो गया था । आँखों से पानी बहने लगा था । माथे से लेकर गर्दन तक पसीने से भीग गई थी । (पृ.३५)

यहाँ वीररस है । आगे भी कहती है- निकल जाओ, फटाफटा नहीं तो जितणे में तुम्हारे टुकडे-टुकडे कर देणे ।

हास्यः शावणु गीत गाता है तो सूमा कहती है तूमने तो रोणा, धोणा शुरु कर दिया, तब शावणु वहाँ से चला जाता है, तो सूमा उसके पीछे भागने का अभिनय करती है सभी हँसते है ।(पृ.८१)

करुणः शावणु के पिता काहिका में मर जाते है तो शावणु की माँ और शावणु उसको लिपटकर रोते है, सारा वातावरण करुण हो जाता है (पृ.४८)

- नाटक मे ब्राह्मण परिवार सहित आत्महत्या कर लेता है तब वातावरण करुण हो जाता है । शावणु और देखनेवाले सभी रोते है ।

- थानेदार के पाँव पकडकर शावणु विलाप करता है, चोरी मैंने नहीं की, मंदिर का दरवाजा भी मैंने नहीं देखा, तब थानेदार सारे पुलिस गमगीन हो जाते हैं ।

अलंकार -

१. उपमा उंचाईवाली जगह से जब नदी घाटियो में समतल जगह पर पहुँचती तो लगता कोई नागिन मस्ती में सरकती चली जा रही है ।

२. उसके (सुमा के) हाथ माँ की तरह सधे हुए थे ।

३. बात दिल में सूई की तरह चुभती रही

४. जैसे कोई मेमना कसाईयों के चंगुल में फँस गया हो ।

५. शावणु सूमा को इस तरह देखने लगा जैसे सामने कोई पखली खडी हो ।

६. मंत्री के लोगों से भिडना सांप से खेलने जैसा था ।

७. उनके चेहरे पर लहलहाती धान की बालियों जैसी रौनक थी ।

८. दोनों गाल बगीचों के पके हुए सेबों की तरह लगते थे ।

९. दांत सितारों की तरह चमकने लगे ।

१०. कच्ची आँखों में इन पहाड जैसे दु:खों को न देखती

अतिशयोक्ति

- तू बोले तो तेरी माँ और मुन्नी को भी पीठ पर बठा दूँ ।

:गीत के कारण उपन्यास फिल्म जैसा लगता है ।

१. सोलह सुरगणियों मेरी साउगणियों मेरी परियों राणियो... आओ... काहिका देखण... आओ... (पृ.४२)

२. दराणिए लिपेया ओबरा, जेठाणिए जो गई घसराठ
तेसा चपणी रा हुआ चकनाचूर, कि बहुआ जो दिता बनवास (७९)

३. कुलू जाया की नोख्या खाणा, कुलू जाया खि-खिचडू खाणा,
कूलु देषा सा पौटु रा बाणा (कुल्लु-हि.प्रदेश का जिला)

विवाह गीत, पृ.१९६, सुहाग गीत-१९७

'हिडिम्बो' उपन्यास हिमाचलप्रदेश की घाटियों, लोग, नेता का स्वरुप, त्यौहार, काहिका उत्सव, मेले, नदी, जंगल, पहाड, पुलिस के व्यवहार को रुबरु करता है । हिमाचलप्रदेश के भोले लोग उपन्यास में चलते फिरते दिखाई देते है ।

नेता का स्वरुप उपन्यास में यथार्थ है । आज जो स्थिति दिखाई देती है, वैसी स्थिति उपन्यास में है । नेता के पास पैसे है, पुलिस है, कुत्ते जैसे लोग है जो उनकी चापलूसी करते और राजशक्ति है जिसका भरपूर लाभ उठाते है । उनको पसंद आये ये चीज प्राप्त करने के लिए वे हत्याओं का सिलसिला भी करते है, जमीन, पहाड, नदी, स्त्री, या औद्योगिक एकम खरीदने में सारे दावपेच लगाते है और ये प्राप्त करते ही है । उपन्यास में शावणु की जमीन लेने के लिए उसके बेटे, पत्नी की हत्या करते है । उसकी जिन्दगी नर्क बना देते है । पटवारी, ठेकेदार, प्रधान, जिलाधीश, थानेदार ये मंत्री को मदद करते है, हाँ जी

हाँ करते है क्योंकि उनको प्रमोशन मिल जाए । गरीबों की कई एकड जमीन लेकर फार्महाउस बनाते हैं, गायें रखते है और रोज नई लडकियों के साथ अपनी वासनापूर्ति करते है उनको किसी का डर नहीं है क्योंकि वे सर्वस्व है ।

स्कूल के मास्टर की भूमिका उपन्यास में बहुत ही गलत है। वे भी प्रिन्सीपाल बनने के लिए मंत्री का चमचा बनता है । और जिसकी जमीन मंत्री को लेनी है, उसके बच्चे की स्कूल में हत्या करता है । बच्चों के पास भांग मलने का कार्य करवाता है । वे भी सरकारी नौकर है, मंत्री के पैरों की धूल चाटता है । उपन्यास में ईश्वरवाद ज्यादा है । सूरमा कोई अडचन आती है तो मन्नत रखती है जैसे हरकाम देवीमाँ ही करती हो । हिमाचलप्रदेश के यह गाँवो में काहिका उत्सव महत्त्वपूर्ण है । जितने भी पाप किये हो, उसे नष्ट करने के लिए मनुष्य की बलि देते है । ये मनुष्य नड जाति का होता है, उसे अछूत मानते है किन्तु उत्सव में देवता मानते है । उस दिन ये पुरुष किसी भी स्त्री के गुप्तांगो पर हाथ मार सकता है, उसकी पत्नी कोई भी पुरुष के गुप्तांगो पर हाथ मार सकती है, गाली दे सकते है । उसको तीर मारते है और जीवित करने के लिए देवता से प्रार्थना करते है किन्तु ये कैसे जीवित हो सकता है, ये परम्परा है, उत्सव है ।

यह प्रदेश में कोन्ट्रेक मेरेज का सिलसिला भी है । दो-तीन साल के लिए कोई भी पुरुष लडकी से शादी कर लेता है, लडकी के पिता को पैसा देता है, उसके बच्चे हो तो लडकी को ही दे देता है बच्चे का पैसा भी वह देता है । राजनेता उनमें दखल भी करते है । गरीब माँ-बाप लडकी की शादी-किसी लडके के साथ करवाने के लिए सरकार से सहाय, प्रबंध माँगते है तो नेता ही ये लडकियाँ की इज्जत लूंटते है ।

उत्सव और मेला सभी लोगों को प्रिय है । उपन्यास में शावणु और उनका परिवार उत्सव प्रिय है । गरीब भले हो लेकिन दिल से गरीब नहीं, मेले में भी जाते है, गीत गाते है और आनंद का मजा

लूंटते है ।

कोन्ट्रेक मेरेज ये लोग करते है जिसको अच्छा लडका नहीं मिलता या अछूत होने के कारण दूसरी जातिवाले कन्या नहीं ले जाते । कोई उपाय न होने के कारण दु:खी होकर लडकी के पिता अपनी लडकी को कोन्ट्रेक्ट मेरेज की छूट्टी देता है । राजकीय प्रोत्साहन उन्हें नहीं मिलता किन्तु उनको परेशानी जरुर मिलती है । दु:खी को ज्यादा दु:खी करके राजकीय नेता अपनी फरज अदा करते है ।

पुलिस को ट्रक चालक सलाम करते है, जो यथार्थ है, समाज में पुलिस अपनी फरज किस तरह निभाते है ये हम जानते है, किन्तु उपर से उनको सलाम करते है, मन से गालियाँ देते है, क्योंकि ये पुलिस हफ्ता लेती है । सुखी लोग सोने की अंगूठी पहनते है, उनमें ग्रह निवारण के कई कीमती नंग जडते है । पुलिसथाने में गालियाँ से बातें होती है । हररोज गुंडे, बदमाश, लफंगे, शराबीयों से त्रस्त होने के कारण पुलिस भी मानसिक रुप से टूट जाती है और ऐसा व्यवहार करने से मजबूर होती है । किन्तु अच्छी पुलिस भी होती है जो राजनेताओं से नहीं डरती और गरीब को न्याय देने में मददरुप होती है किन्तु उनकी संख्या दो प्रतिशत से ज्यादा नहीं होगी । और ऐसे पुलिसवाले की ट्रान्सफर जल्दी कर देते है । उपन्यास में आंतरिक छूआछूत भी दिखाई देती है । ब्राह्मण-लुहार से छूआछूत रखता है तो लूहार कोली, चमार से छूआछूत रखता है ।

आजकल नेता हमारी जमीन, जंगल, पहाड विदेशी कम्पनी को देकर ज्यादा रुपये इकट्ठे करते है, अपना घर भरते हे । देश को क्या घाटा (नुकशान) होगा ये उनकी चिंता नहीं है । प्रजा में भी हिम्मत नहीं है, जो उसका सामना कर सके, विद्रोह कर सके । ऐसे नेता का सम्मान करे ऐसे लोग भी भारत में है, उन्हें सिक्को से तोलते है, जिन्दाबाद के नारे लगाते है । समाज को लूँटनेवाले नेता भी है तो दूसरी और समाज को देनेवाले दानवीर भी है उपन्यास में शावणू मंत्री सेत्रस्त होकर अपनी जमीन अस्पताल को दान में दे देता है जो सचमुच दानवीर है । अपनी जमीन सस्ते में बेचकर भांग, अफीम, शराब पीते है, और वही जमीन में

मजदूरी करते है । युवान व्यसनों के शिकार है । आजकल की लडकियाँ कम कपडों में दिखाई देती हे । (पृ.६५, ७१) राजकीय नेता अपने को सर्वस्व मानते है, अपने प्रदेश में गुंडाराज करते है, मनमानी करते है, गरीबों को लूंटते है, शक्तिशाली लोगों को साथ में रखते है ।

कई लोग लडकी की शादी जमीन बेचकर करते या रैहन रख के । बाद में कर्जा बढता जाता, व्याज बढ जाता, मजबूरन उन्हें जमीन हाथ से खोनी पडती (पृ.१९१) इस प्रकार उपन्यास में भोले-भाले लोग है जिन्हें जमीन, जंगल, पहाड, नदी की चिंता है तो ऐसे राजनेता भी है जो ये विदेशी कम्पनीयों को देकर बढिया रुपया इकट्ठा करते है । आम प्रजा को लूँटते है, समाज में रौफ जमाते है और देश को उपर उठाने की बडी बडी डींगे मारते है ।

हिडिम्ब उपन्यास में आधुनिक समस्याएँ है । परम्परा का विरोध है, उनको तोडने का प्रयास किया है । सचमुच हिडिम्ब एक महान उपन्यास है जिनमें कई समस्याओं का हल मिल सकता है । उद्देश्य महान है, जो इस प्रकार है ।

१. नेता का स्वरुप दर्शाने का उद्देश्य है जो सारे उपन्यास में देख सकते है । शावणु नायक है मंत्री खलनायक है । शावणु की जिन्दगी नर्क बना देता है । जमीन लेने के लिए मंत्री, शावणु के बेटे, पत्नी की हत्या करता है । सरकारी अफसरों, पुलिसवालों को अपने उंगली से नचाता है । ये आज के नेता का लक्षण है । ऐसे नेता का कोई विरोध नहीं करता, उनको सम्मान देते है, सिक्को से तोलते है । प्रजा अंधी है दूध और छाछ का भेद पारखने में असफल है ।

२. दलितों की स्थिति दर्शाने का उद्देश्य है- दलितों से छूआछूत रखते है, किन्तु दलित स्त्रीयों से नही । काहिका उत्सव में देवता मानते है वही नड को छूते नहीं है, परछाई से भी दूर रहते है । उनकी बेटी से कोई शादी नहीं करता, हाँ उसके साथ आडे संबंध रख सकते है । पुलिसथाने में सरकारी ऑफिसो में उनकी कोई किंमत नहीं है । समाज से तिरस्कृत है ।

३.   **काहिका उत्सव और नड जीवित मनुष्य की बलि**

ये उत्सव एक परम्परा है, अंधश्रद्धा है उसे दूर करने का प्रयास किया है । प्रदेश के लोग इकट्ठे होकर ये उत्सव मंदिर में मनाते है । जो भी पाप किये हो (चोरी, झूठ बोलना, परस्त्री संभोग, अन्याय) उसे दूर करने के लिए कोई अछूत जाति के पुरुष को तीर से खत्म करते है बाद में उन्हें जीवित करने के लिए देवता से मंत्र, हवन करवाते है किन्तु वह कैसे जीवित हो सकता है । दूसरे काहिका उत्सव में शावणू भाग जाता है और परम्परा का विरोध करता है जो लेखक कि एक सही दृष्टि है । ईश्वरवाद का खंडन किया है ।

४.   **सरकारी अफसर, पुलिस की स्थिति :**

सरकारी अफसर नेताओं के गुलाम है । नेता कहे वैसे गलत काम भी करते है क्योंकि अपनी नौकरी की चिंता है । सही को गलत और गलत को सही करना पडता है । आम जनता को उनके कारण सेहना पडता है । पुलिस की आलत भी वैसी ही है । चोर को छोडना पडता है, और निर्दोष को दंड देना पडता है । ये हमारे राजनेताओं की नीति का परिणाम है, बेचारे अफसर तो चिट्ठी के चाकर है ।

५.   रोजगार समस्या - शावणु पी.डबल्यु.डी में नौकरी के लिए चक्कर काटता है किन्तु सूनने के लिए कोई तैयार नहीं है । ये समस्या बढती जा रही है ।

६.   व्यसन समस्या - उपन्यास में व्यसन की बोलबाला है । भांग, अफीम की खेती, लोगभांग पीते है । शराब पीते है युवाओं में व्यसन ज्यादा है जो एक रेड सिग्नल है । लडकियां कम कपडो में दिखाई देती है । जो समाज का कलंक है ।

७.   स्कूल मास्टर की भूमिका - राजनेता का चक्रव्यूह स्कुल तक आ गया है । मंत्री का चमचा बनने के लिए प्रमोशन के लिए मास्टर बच्चों के पास भांग मलने का काम करवाता है । मंत्री को खुश करने के लिए शावणु के बेटे को खत्म कर देता है, ऐसे मास्टर की आज जरुरत नहीं है ये उपन्यास में दर्शाया है ।

८. राजकीय प्रोत्साहन- उपन्यास में नहीं है । यहाँ तो लोगो को हैरान करने में नेता अपनी फरज निभाते है । अपना घर भरने के लिए दूसरों की हत्या करते है, निर्दोष को खत्म करते है । लडकियों की शादी कराने के बहाने उनका ही शोषण करते है यहाँ तो गुंडाराज है । उपन्यासकार का तीर यहाँ सही निशाने पर है, वे प्रजा से विद्रोह चाहते है, राजनेता के स्वरुप में आमूल परिस्वर्तन चाहते है ।

उपन्यास में मानसिकता पर ज्यादा बल दिया है । शावणू, सुरमा, सूमा, काशी, शोभालुहार मानसिक रुप से त्रस्त है । शुरु से अंत तक हैरान है । मंत्री शावणु की जमीन लेने के लिए नये नये पैतरें रचता है । शावणु की शांत जिन्दगी को हैरान-परेशान कर देता है । हर समय डर रहता है कि उनके लोग खत्म कर देगे ! पुत्री-पत्नी की इज्जत- लूँटेगें । शावणु के घर आकर ठेकेदार और प्रधान गालियाँ देते है, जमीन दे देने का कहते है, फसल में नूकशान करते है तो सूरमा उन दोनों को धक्का मारकर भगा देती है, दोनों के टूकडे टूकडे करने की धमकी देती है दोनों चले जाते है किन्तु शावणु की मानसिक स्थिति शोचनीय हो जाती है जुगाली करने खेत में जाता है- 'शावणु का मन आज बेहद उदास और उजडा उजडा सा था । बादलों और धूप-छाँव के खेल की तरह उसके मस्तिष्क में कुछ दूसरे ही ख्याल उमडने लगे थे । कभी कुछ सोचता तो कभी कुछ ।'[8]

मंत्री के लोग, कांशी, सूरमा की हत्या कर देते है शावणु को सूमा की चिंता है- शावणु परिवार के साथ हुए हादसों से इतना टूट चुका था कि उसे ऊब जाने की भी इच्छा नहीं रही थी । एक जिन्दा लाश बन गया था । देखने के लिए आँखे, सुनने के लिए कान थे । सूंघने के लिए नाक भी था । स्वाद के लिए जीभ तथा महसूस करने के लिए चमडी थी । जुबान ठीक थी । काम करने के लिए हाथ और चलने के लिए पैर थे । इन सभी के उपर मन भी था । पर ऐसा लगता था कि ये सारी चीजें एक जगह स्थिर हो चुकी थी ।'[9]

काहिका उत्सव के लिए एक आदमी शावणु को बुलाने आता है उस रात शावणु सो नहीं पाया था । काहिका सिर पर बैठा रहा । बचपन की यादें बाहर-भीतर टहलती रही ।[1]

काहिका उत्सव में उसे रहने के लिए गाय बाँधने के कमरे में जगह देते है उस रात सोचता है- 'अचानक तहसीलका दफतर याद आ गया । जब उसे मंत्री ने जमीन के सौदे के लिए बुलाया था । बाहर धाम के लिए रस्सी में बंधा बकरा... जैसे उसे भी आज उसी तरह लाया गया हो ।'[2] शावणु जेल में था- रात के बारह बजे का समय होगा । शावणु को नींद नहीं आ रही थी । आती भी कैसे ? रात एक काल की तरह लगने लगी थी । जितना अंधेरा बाहर, उससे कहीं ज्यादा भीतर पसर गया था । सोचकर घबरा भी रहा था कि पता नहीं जालिम पुलसिये रात को कैसा सुलुक करेंगे । आंखे मींचता तो कुछ चुभने लगता । किरकिरी से आंखे खुल जाती ।[3]

किन्तु शावणु अपनी जमीन अस्पताल को दान में देकर खुश हो जाता है । उसके मन में प्रसन्नता के तूफान उठ रहे थे । पर उसे समझ नहीं आ रहा था कि इस खुशी को व्यक्त कैसे करे । उसने छाता शोभा को पकडा दिया और खुद बारिश में खडा हो गया । भीगता रहा... काफी देर । फिर बाहे कुछ इस तरह फैलाई मानो आसमान को उन पर उठाना चाहता हो ।

इस प्रकार उपन्यास के पात्रों की मानसिकता तटस्थ है । शावणु टूट जाता है, मगर झूकता नहीं । जो हमारे लिए पथदर्शक है ।

उपन्यास का शीर्षक हिडिम्ब यथायोग्य है । हिडिम्ब अर्थात् राक्षस । सारे उपन्यास में यह राक्षस (मंत्री) छाया हुआ है । शावणु की जमीन लेने के लिए पैंतरा रचता है, शावणु के पुत्र और पत्नी की हत्या कर देता है । उसको किसी का डर नहीं है क्योंकि वह सर्वस्व है । राजसत्ता उनके पास है । सरकारी अफसर उनके नौकर है । इसीलिए मनमानी करता है- जमीन लेकर फार्महाउस बनाता है, गायें रखता है, उनके शरीर पर पार्टी का चिन्ह खुदवाता है । बूरे कर्म गायों के कारण दब जाते है ।

भगवे कपडें पहनता है, माला लंबी गले में लटकाता है । उसके कारण संत, महात्मा लगता है किन्तु उसके बूरे कर्म राक्षस से भी बढिया है । इसीलिए ये हिडिम्ब आज प्रजा को लूंटता है, हैरान, परेशान करता है । शावणु को सपने में वह कहता है- 'देख, शावणु..देख... ये देख मेरा असली रुप.. जिस रुप में मैं नेता के वेश में जनसेवा कर रहा हूँ... । मुझे आज न किसी तपस्या की जरुरत है और न किसी ईश्वर या देवता के वरदान की । मेरी शक्ति तो तुम जैसे अभागे और लाचार गरीब लोग हो । मेरा वरदा तुम ही हो । मेरे सर्वस्व तुम ही हो । तुम जैसों की पीठ पर चढ कर ही मैं पृथ्वी का राजा बना हूँ । कोई असुर या राक्षस नहीं हूँ मैं । मेरे कोई डरावने या भयंकर रुप भी नहीं है मैं तो एक आम और साधारण सा व्यक्ति हूँ । धोती-कूरते में रहता हूँ । नेता कहते हैं मुझे लोग । राक्षसों से भी कहीं खतरनाक ।[5]

जमीन दान में देते वक्त मंच पर शावणु और मंत्री नजदीक होते है तब शावणु मंच पर पहुच कर मंत्री से दूर खडा हो गया । एक टेढी नजर उस पर डाली । थाने की जेल में देखे उस भयानक स्वप्न की कई तस्वीरें उसकी आँखो में कौंधी । शरीर में बिजली का सा झटका लगा । उस भयंकर स्वप्न के प्रतिबिम्ब मन-आँखों में उभरने लगे- मंत्री को सिर से पाँव तक ध्यान से देखा । हल्का सा मुस्करा दिया शावणू। खदरधारी राक्षस-हिडिम्ब पर कितना असहाय.. बेबस और अनाथ ।

उपन्यास का आधार मंत्री है । खलनायक है, राक्षस ने आज रुप बदल दिया है वह नेता के रुप में है यहाँ शिर्षक हिडिम्ब उपर्युक्त है ।

संदर्भ

१. हिडिम्ब उपन्यास मुखपृष्ठ

२. हिडिम्ब पृ.२३५

३. वही, पृ.२४३

४. वही, पृ.३५

५. वही, पृ.३४

६. वही, पृ.२१३

७. वही, पृ.२३२

८. वही, पृ.२३५

९. वही, पृ.२४६

१०. वही, पृ.३७

११. वही, पृ.१७५

१२. वही, पृ.२०६

१३. वही, पृ.२०९

१४. वही, पृ.२३०

१५. वही, पृ.२३५

अध्याय-५

दलपत चौहाण व्यक्तित्व एवं कृतित्व (मलक और गीध उपन्यास का विवेचन)

नाम : दलपत चौहाण

जन्म स्थल: मंडाली (खेरालु)

अभ्यास : बी.ए.

व्यवसाय : सरकारी नौकरी और हाल में निवृत्त

प्रकाशित कृतियाँ : तो पछी, क्यां छे सूरज (कविता संग्रह)
मलक, गीध, भलभाँखलु (उपन्यास)
हरीफाई, अनार्यावर्त (नाटक संग्रह)
मुंझारो (कहानी संग्रह) वणबोटी वार्ताओ
दुंदुंभी (कविता)

पुरस्कार : संतोक बा सुवर्णचंद्रक-१९९९

- गुजरात सरकार (अनु.जाति कल्याण और अधिकारीना विभाग की ओर से संत श्री नरसिंह महेता साहित्य सन्मान-२००२.
- कविता के लिए इस्कस शांति मैत्री पुरस्कार-१९८३
- क्यां छे सूरज? काव्य संग्रह के लिए गुजरात साहित्य अकादमी पुरस्कार
- दरबार कहानी के लिए गुजरात समाचार आश्वासन इनाम-१९९१
- ઢાનું મૃત્યુ कहानी के लिए नानुभाई देसाई तादृर्थ्य पुरस्कार-१९९४
- પાટણ ને ગોંદરે नाटक के लिए अखिल भारतीय रेडियो नाट्यलेखन के लिए प्रतियोगिता पारितोषिक-१९८७-१९९४
- अनार्यावर्त के लिए अखिल भारतीय रेडियो नाट्यलेखन प्रतियोगिता पारितोषिक-१९८९-९०, और गुजराती साहित्य अकादमी पुरस्कार -२०००
- दीवालो एकांकी के लिए बटुभाई उमरवाडिया प्रथम पारितोषिक-१९९८-९९ (गुजराती साहित्य परिषद)

गुजरात में दलित कविता का प्रारम्भ दलपत चौहाण ने किया । इसीलिए प्रवीण गढवी कहते है कि 'दलित कवियों के वे आद्य है ।' गुजराती दलित साहित्य को संपूर्ण प्रतिबद्ध ऐसे दलपत चौहाण दलितों की समस्याओं के हल के लिए कटीबद्ध है । अन्य दलित साहित्यकारों की तुलना में दलपत चौहाण ज्यादा आक्रमक है । हकारात्मक आक्रमकता धार बक्षती है, धार से वेधकता और असरकारकता सृजन होती है । विवेचकों को जो कहना है वो कहे, दलपत चौहाण, दलित साहित्य के पक्षधर है, सिर्फ दलित साहित्य । वो अपनी विचारशैली में स्पष्ट है । सत्य के लिए जोखिम उठाते है । अपने नुकशान की कभी भी परवाह नहीं करते । ईनाम-अकराम की जरा भी चिंता नहीं । दलित साहित्य के लिए सदैव तत्पर रहे है । अन्य साहित्यकारों की तरह ईनाम अकराम के लिए पगचंपी या प्रदक्षिणा नहीं करते, चाहे जितनी लालच-लोभ केलिए घूटने टेकते नहीं, ललित-दलित यानी कि दूध-दहीं में पैर रखते नहीं । एकलव्य की तरह आँख के सिवा कोई लक्ष्य नहीं । सामाजिक, राजकीय, सांस्कृतिक दृष्टि से समग्र दलित-शोषित-पीड़ित प्रजा के प्रश्नों को बानी देते दलपतभाई स्वयं झंडाधारी तो खरे ही साथ साथ दलित साहित्य के सच्चे भेखधारी है । दलित साहित्य के सर्जन और प्रसार, प्रचार के लिए हंमेशा खडे रहते है। अरविंद वेगडा उनके बारे में लिखते है कि 'श्री दलपत चौहाण गुजराती दलित साहित्य में जुझारुं प्रतिबद्ध कवि, उपन्यासकार, कहानीकार और नाट्यकार है । पेहली दृष्टि में सौम्य और नम्र लगते यह सर्जक जब सर्जनकार्य में गर्म होते है, तब जलते अंगारे जैसे लगते है ।

आक्रोश, पेन्थर और कालो सूरज में उनकी कविता प्रकट होती थी । कालो सूरज (अनियतकालीन) सामयिक स्वयं प्रकट करते थे । स्वयं के पैसों से उन्होंने ये सब प्रवृत्तियाँ की है । मजदूर विस्तार की चौल में सदा घूम-घूमकर जागृति के लिए नारेबाजी से लेकर संघर्षो तक की गंभीर प्रवृत्तियों में सदा सक्रिय रहे है । उनकी 'ताो पाछी' और 'क्यां छे सूरज ?' की काव्य रचनाओं ने सबका ध्यान खींचा है । 'क्यां छे सूरज ?' काव्य

संग्रह के बारे में रमेश पारेख लिखते है 'क्यां छे सूरज ?' के काव्यो में कवि ने परदेशी गुलाम, हिरोशीमा में ध्वस्त हुई प्रजा और कुचले, शोषित आदिवासी जनों को भी ध्यान में लिया है । यह बात कवि की विचारशैली को जोम देती है । (धुपसली -फूलछाब)

(क्षणो चिरंजीवी) कवि की अस्पृश्य रचना की पंक्तियाँ

'शालामां प्रथम प्रवेश,
हतो साक्षात प्रलयनो
ध्रुजता हाथे पाटीमां एकडो नहीं,
बलबलता सहरानी अंगारभूमि शी धबकती
छातीमां लखी मारी जात '

हरीश मंगलम् आस्वाद्य कराते हुए लिखते है कि अस्पृश्य व्यक्ति को शाला प्रवेश समय होती अनुभूति की तीव्रता यहाँ वेधक रुप से-पारधी के तीर की तरह सन्न्न् करती हुई ह्रदय के आरपार निकल जाती है । अस्मिता का प्रागट्य बहुत कुशलता से हुआ है ।

यह वेदना कवि जिस समाज में से आते है, यह समाज की हयाती के अणु अणु में वीछीं के डँख की तरह प्रसारित होता है । शाला के वर्ग में प्रवेश करते ही जो आनंद होना चाहिए उसके बदले में हिमालय चढने पर जो थकान लगे वह थकान कवि को मेहसूस होती है । शाला के वर्ग में भी उन्हें कोने में अंतिम स्थान पर बिठाते है, तब ही कवि को त्रिपुरारि की तरह आक्रोश प्रकट हुआ था । (पणछ)

उनका कहानी संग्रह '-ा ू ं झ ा ा र ा' के बारे में भी कई विवेचको ने अच्छे प्रतिभाव दिये है । भरत महेता ने कहानी के बारे में गेहराई से विवेचन किया है । उनके मत मुताबिक '-ा ु ं झ ा ा र ा' कहानी यह संग्रह की विशिष्ट कहानी जैसी है । देख सकते है कि दलित कहानी परीघ पर से फिरती फिरती कैसे कैसे आंतर संकेतों की ओर बढ चूकी है । दलित कहानियों का यह एक नया ही कोना है समाज का साक्षात्कार दूसरे समाज के सामने रखकर भी यह रुप से सच्चाई कर सकते है ।

रवीन्द्र ठाकोर यह कहानी संग्रह का परिचय कराते हुए अपना अभिप्राय देते हुए कहते है कि यह संग्रह की सभी कहानियों में लेखक की कहानी कला की झाँखी मिलती है । और उनके कलातत्त्व को हानि नहीं पहूँचायी, वह आनन्द की घटना है । लाघव और संघर्ष यह दो कहानी कला के प्राणतत्त्व है । और सभी कहानियाँ में यह दिखाई देता है । संघर्ष की सूक्ष्मता ध्यानपात्र है । कहानी गूँफन में भी लेखक सफल रहे है । इस तरह वर्णनात्मक कथनशैली रोचक है । किन्तु कभी कभी शैली की नाट्यात्मकता कहानी को विशिष्ट रुप देती है । संवादो में ढा ा े ला ी का ही प्रयोग किया है । जिसे समजने के लिए पाठक को प्रयत्न करना पडे, किन्तु समजने के बाद खुश खुश वह कलानंद देता है । चौहाण प्रतीबद्ध दलित साहित्यकार-कहानीकार है, इसीलिए अन्याय के सामने प्रकोप सभीकहानियों में दिखता है । और लेखक का ध्येय भी वही है । किन्तु वह बोलनेवाला बनता नहीं या शिथिल करता नहीं । वही तो लेखक की सिद्धि है । ढादला्‌ रबा्‌शा ंगा ा मा्‌ढा ा ंल्ला्‌मा ू ंझ ा ा र ा्‌ चारस्मारणीय कहानी है । (कलमघर, कोलम-समभाव-२३/१०/०२)

ठं ड ु ला ो ह्‌ी कहानी को रेखागत समय का चैतसिक परिमाण सर्जन में लेखकने दर्शायी कलाकीय सज्जता ध्यान योग्य है । यह रीत से बाबू दावलपुराने नवाजी है । (हयाती, सप्टे.२००१)

उनके ड्डलाक' और ग ा ी ६ ी उपन्यास के बारे में भी काफी चर्चा हुई है । यह कथा मूल्क के केन्द्र में थी । हिजरत के समय ठोकर खाता समाज अपनी व्यथा की कथा खूली करता जाता है । यह प्रकार की रीति रसप्रद थी । एक ही रात के समय की संकलना भी नोंधपात्र है । ग ा ी ६ ी उपन्यास को भी भरत महेता ने नोंधपात्र दलित उपन्यास के रुप में मूल्यांकन किया है । (प्रत्यक्ष-ओक्टो, डीसे.-२००१) तो नरेश शुक्ल ने काले इतिहास का छोटा सा कौना गिनकर उसके बारे में विवेचन किया है । (शब्दसृष्टि- फेब्रु-२०००) हरिश मंगलम्‌ने 'सामाजिक तथ्यो और सत्यो आधारित ग ा ी ६ ी उपन्यास गुजराती दलित साहित्य की मूल्यवान कृति बनकर रहेगी एसी श्रद्धा दी है ।'

मणीलाल ह. पटेल का गीध में हुआ-लोकबोली, परिवेश, पात्रमानस, संघर्ष एवम् कथन वर्णन का संयोजन पसंद है । गीध रचना का गहरा परिशीलन करके विशद् विस्तृत माहिती देते हुए विवेचक बाबु दावलपुरा लिखते है कि विषय से भरी, कालजी से पूर्ण अतीत और वर्तमान में सरलता से आवन जावन हो सके । इस प्रकार के समय संविधान में सजीव-स्वाभाविक परिवेश निर्माण में और दलित एवम् सवर्ण जातिओं के इन्सान की विभिन्न मनोवृत्तिओं का संकेत करे ऐसा 'गीध' का गतिशील कल्पन के प्रतिक विधान में प्रगट होती लेखक की कलाकीय-सूझ-सभानता सविशेष ध्यानपात्र हो ऐसी है । (गीध-गीधवृत्ति पीडित दलित समाजनी वीतककथा लेखमांथी)

दलपत चौहानने दलित नाटक लिखे है । उनके नाटक में से पार होते ही क्षणभर ऐसा लगता है कि उनका मुख्य रस का विषय नाटक है । 'कोरस' संस्था के निमेष देसाई ने 'अनाया वार्ता' का पठन रखा था, पूरा कार्यक्रम जीवंत और स्पर्शक्षम बना रहा था । उस प्रकार 'अधिकार' के कार्यक्रम निमित्त 'हरिफाई' एकांकी का पठन निमेष देसाई ने किया था । डॉ.चीनुमोदी कार्यक्रम के अध्यक्ष थे । यह कार्यक्रम की चंदु महेरिया ने व्यक्त की हुई प्रासंगिक नोंध के मुताबिक नाट्य दिग्दर्शक और रंगपर्व के तंत्री निमेष देसाई ने दलपत चौहाण के 'हरिफाई' एकंकी का काबिले दाद पठन किया था । कवि नाट्यकार लाभशंकर ठाकरने प्रतिभाव में कहा था कि दलपत चौहाण के यह नाटक का निमेष ने किया पठन हम सब को नाटक खेला जाता हो की अनुभूति कर गया । 'हरिफाई' नाटक नहीं है, ऐसा कहने की किसी की हिंमत न चले । 'हरिफाई' नाटक शुद्ध प्रभावक और प्रयोगशील नाटक है । यहाँ पात्र नाम या स्थलनाम नहीं है । सभी पात्र है पूरा नाटक रुपक बन जाता है । नाटक को रुपक बनाते है । लेखक का स्थलकाल में से मुक्ति का प्रयोग, भागता-फिरता इन्सान उसका प्रतिक बन जाता है । अध्यक्ष स्थान से डॉ.चीनु मोदीने कहा था कि अंतिम कई दशक में से हमारी भाषा में से बाहर रख सके ऐसा कई लिखा हो तो उसमें एकांकी मुख्य है । दलित साहित्य

वास्तव के साथ जुडा साहित्य है । आज जो हरिफाई है, गति है उसमें जो दौड नहीं सकता उनकी बात यह एकांकीयो में है । दलपत चौहाण का हरीफाई, एकांकी इतना पोटेन्शियल है, ऐसा उसमें से पार होते नहीं लगा, किन्तु निमेष देसाई के पठन से वह सिद्ध कर दिया । नाटक की सच्ची कसौटी अनुवाद में होती है । अनुवाद होता है तब ही मजबूती दिखती है और दलपत चौहाण का एकाकी 'धोपट भूख्यो नथी' का सबल अनुवाद हो सकता है । (बुद्धि प्रकाश- जनवरी-२००४)

दलपत चौहाण दलित साहित्य सर्जनप्रवृत्ति में सदैव प्रवृत्तिशील है । भरभांखलु उपन्यास प्रगट हो चुका है । जिसे सामाजिक अधिकारीता विभाग (गु.सरकार की ओर से इनाम भी मिला है । अल्पविराम (विवेचन) प्रकट होगा । उन्होंने दलित निबंध भी लिखे है । उस तरह दलित साहित्य को सभी स्वरुपों में उनका प्रदान महत्त्वपूर्ण रहा है ।

हाल में वह गु.द.सा. अकादमी के संगठनमंत्री और मुखपात्र 'हयाती' के परामर्शक है ।

मलक

'मलक' उपन्यास में दलित समाज का चित्रण है, उपन्यास के केन्द्र में बूनकर समाज है । जो आजादी पूर्व गाँव में बसता था । गाँव में उच्चवर्ग और दलित वर्ग रहते है । दलित वर्ग का आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक शोषण उच्चवर्ग करता है । यहाँ बूनकर युवक और उच्चजाति की स्त्री का प्रेम सह नहीं सकते, ग्रामीण समाज गाँव छोड़ने के लिए विवश करते है । एक व्यक्तिने गुनाह किया उसकी सजा सारे मुहल्ले वालों को भूगतनी पड़ती है । यह अन्याय है गुजरात के दलित समाज को ऐसा अन्याय सेहने की आदत आजादी से पूर्व भी थी ।

हिजरत की घटना के मूल में बूनकर युवक और पटेल किसान युवती के बीच हुआ प्रेम है । ऐसा कभी कभी होता है, पर संतोक (युवती) का पति नामर्द है, इसीलिए बुनकर बंधुआ मजदूर भगा के संपर्क में आते ही लाचार होती है । शारीरिक संबंध लगाव के रुप में विकसित होता है । संतोक और भगा मेले में भी आनंद लूंटते है । लोगों की

नजर में आते है, यह एक सबूत तो है, दूसरा सबूत बच्चे के जन्म के साथ होता है ।

संतोक पुत्र को जन्म देती है, यह समाचार गाँव के बडे लोगों तक पहुँचता है, बात में रहस्य है, इसीलिए सब एक मन से सुनते है, लेखक यहाँ स्त्रियाँ के बीच हुई बात भी लिखते है ।

“बच्चा तो है अच्छा, गुड्डे जैसा.. सचमुच फतामा कहते है, क्यों बहन आगे बोले नहीं ! यह तो जिह्वा कुचलने जैसी बात है । बच्चा सचमुच उसके बंधुआ मजदुर भगा ढेड जैसा है । फतामा एक ही श्वास में पूरा वाक्य बोल गये । ऐसा है । और यही पूरी बात मैंने खटिया में सोते सोते सुनी ”

बात को छूपानेवाले भी है । अंत में तो गाँव की इज्जत जायेगी, जाति में बदनाम होगे, दूसरे गाँववाले जानेगे तो संबंध भी नहीं करेंगे, यह महत्त्व की बात थी ।

“ये तो क्या हुआ ? ढेड बच्चे पैदा करेंगे और हम देखते रहेंगे ?

कूए में गिरने जैसा होगा ?

तो कूए में गिर जाओ न !

हम नहीं ! यह ढेड लोगों को कूए में फेंकेगे । कुछ तो करना ही पडेगा न !

बात तो सच है, मेरे भाई ! करेगा कौन ?

तू नहीं न तेरा भाई ”

और शाम को गाँववाले इकट्ठे हुए दो दिन बाद ढोल बजा और ... !

कथा के अंत की घटना का यह अंश पहले आ गया । नामर्द उच्चवर्ग पुरुष की पत्नी बूनकर युवक के पुत्र की माँ बने उसके मूल में जो परिस्थितियाँ और मन:स्थितियाँ थी, उसको दिखाकर लेखक ने हिजरत का न्याय करने के सिवा पाठक पर छोड दिया ।

उच्चवर्ग के लोगों को टेढे संबंधो की धृणा नहीं होती, किन्तु उच्चवर्ग की स्त्री दलित पुरुष का हाथ पकडे यह सह नहीं सकते, यह उल्टाक्रम पड गया था ।

इस घटना के संबंध के निरुपण के साथ लेखक ने मूल्क छोडने की वेदना को व्यक्त करने की ओर ध्यान दिया है । करुण, हास्य रस भी देखने को मिलता है, कहीं कहीं वीररस भी है । लेखकने भगा के सिवा दूसरी कथा का भी सहारा लिया है । और यह उचित भी है । साहित्यकार समाज में सुधार ले आता है । कमीयाँ दूर करता है । लेखक के सामने व्यक्ति नहीं ग्रामसमूह है । जिसमें बूनकर (दलित), पटेल, गरासिया (ठाकुर) जैसी जातियाँ है । बूनकर युवकों में भी वीरता की झलक है । फिर भी उसके निरुपण में पक्षपात नहीं है । भगा के सिवा, छगन, गोकल, रमण, मना जैसे अनेक पात्रो द्वारा कथासृष्टि की रचना हुई है ।

श्री उशनस् जैसे तो लिखते है कि प्रथम क्रांति के मशालची के सामने यह दूसरी क्रांति आकार ले रही है । ऐसी छोटी छोटी क्रांतियाँ का इतिहास में स्थान हो या न हो किन्तु दो पाँच कृतियों से साहित्य सम्मृद्ध होगा । 'मूल्क' जैसी कृतियाँ भाषा के शब्दकोश को जरुर बढावा देती है ।

प्रथम प्रकरण में गाँव छोड़ने की बात की हवा आने के साथ ही छगन के सामने खेत, मूहल्ला, घर ये सब उसको नजदीक बुलाते है, ऐसा लगता है । दूसरों को बूलाने की हिम्मत उसमें नहीं थी, विह्वल स्थिति छगन की है, तो गोकल भी कहता है-

"माँ तेरे सहारे बहुत रहे... बहुत रहे.. तूने बहुत दिया, प्रेम दिया, माया में यह शरीर फँसा, तेरी छाँव अब छोड़नी पड़ती है । माँ हमको माफ करना... और क्या कहूँ.. यहाँ के अन्नपानी कम हुए नहीं तो इस तरह रात में गाँव छोड़ना नहीं होता ।"

गाँव छोड़ने का संवेदन लेखक एक व्यक्ति के द्वारा नहीं,

बल्कि समूह द्वारा व्यक्त करना चाहते है । इसीलिए विविध पात्रों के द्वारा कहा गया है । यह वर्णन लेखक ने कथा संघर्ष को व्यक्त करने के लिए किया है । इस प्रकार यहाँ खलनायक एक व्यक्ति नहीं, किन्तु मानव समुदाय है । इस प्रकार के मानव समुदाय की वास्तविकता, अखबारों में भी कईबार प्रकाशित होती है । ये भी सबूत है । लेखक ने अखबार वास्तविकता का मोह नहीं रखा, उनका लक्ष्य है... सेहनेवाले वर्ग का संवेदन व्यक्त करना । लेखक संवाद और वर्णन दोनों में सफल हुए है । मान्य भाषा और उत्तरगुजरात के बुनकर जाति की बोली यहाँ नजदीक आई है ।

प्रजा की स्मृतियों और अपने अनुभव को कथा स्वरुप में व्यक्त करने में 'मूलक' को सफलता मिली है ।

प्रथम अध्याय में छगन चिंताग्रस्त है । खेत में मेहनत करके युवान वर्षो को मिट्टी के ढेले की तरह पिघल जाने दिया था, मिला क्या ? वर्ष के पचास रुपये, दो समय खाना, खाने में भी रोटी और छाछ उधार में ही पचास रुपये से अधिक वह ले लेता था, बचपन याद करता है.. । मूहल्लेवालों को पता नहीं था कि उच्चवर्ग के लोग मुहल्ले को जलानेवाले है ! मूहल्ले में बच्चो के सिवा कोई न था । अपना सामान बाँध लेता है ।

दूसरे अध्याय में मजदूरी करने के लिए जो गये थे, उसमें से वृद्ध पुरुष और स्त्रियाँ मुहल्ले में आ गये थे । बूनकर, बेगार, मृत पशु की चिरफाड का काम करते थे । सेनमा ढोल बजाने का काम करते थे । छगनने सबको समजा दिया था, कि रात में मुहल्ले को जलानेवाले है । संतोक-भगा की बात सब जानते थे, कुछ होगा । यह भी जानते थे ।

एक दिन रात में मूहल्ले पर पत्थर बरसने लगे थे, सब घर में घूस गये थे, गोकल दूसरे दिन 'अनारजी' को मिलता है, उसने कहा कि- संतोक और भगा के आडे संबंध के कारण पत्थर पडे थे, अब ये बंध होना चाहिए । फिर भी दो बोतल शराब, मूर्गी अनारजी को दी तब ये मामला शांत हुआ था । गोकल भगा को समजाता है कि संतोक के

साथ संबंध मत रख । तो भगा ही कहता है कि संतोक मेरे पीछे हो गई है में दूर रहता हूँ तो कहती है कि सबको कहूँगी मेरी इज्जत भगाने लूँटी ।

तीसरे अध्याय में मजदूरी पर गये युवान गाँव छोड़ने के बजाय मरने-मारने तैयार होते है, किन्तु गोकल उन्हें शांत करता है । सब गाँव छोड़ने के लिए तैयार हो गये थे, गोकल मूल्क के प्रति अपना प्रेम प्रकट करता है । दलित शादी में बैलगाडी, घोडा नहीं ले जाते थे, तो ऊँट ले जाते है । चौथे अध्याय में शादी में जो ऊँट लाये थे, उनको गाँववाले कूए में गिरा देते है । ढोल बजता है, दलित क्रोधित होते है । बच्चे, स्त्रियाँ के कारण मुकाबला करने के सिवा विवश होकर गाँव छोड़ रहे थे । चिल्लाने की आवाज सूनकर क्या होगा ? आकाश में गाँव की ओर लाल रंग दिखाई दे रहा था ।

पाँचवे अध्याय में गोकल चलते चलते सोचता था, गोकल - हेमी (पति-पत्नी) का प्रेमवर्णन है । गोकल को मानसंग याद आता है ।हेमी की छेडती उसने की थी, आपस की लड़ाई करने की हिंमत नहीं थी, अतः बदला ढूँढ रहा था । एक दिन मानसंग के मजदूरने लडाई की थी, घास जलाने की धमकी देकर वह चला गया- तो रात में गोकलने ४०० मन बाजरा और घास के ढेर को जला दिया था ।

छट्ठे अध्याय में भगत नदी किनारे बैठकर भूतकाल को याद करते है, कि उसकी पत्नी शीवी पर मुखिया के घर में पाँच आदमीयों ने बलात्कार किया था, शीवी ने आत्महत्या की थी । भगत और मना मंदिर में दर्शन करने गये थे, तो चंदुजीने भगत की पिटाई की थी, लोग इकठट्ठे हो गये थे । तब भगत को याद आता है कि चंदुजी के लड़के को साँपने दंश दिया तब भगत ही उस लडके को उठाकर मंदिर ले गया था । चंदुजी तब रोता था- वही आज मेरी पिटाई कर रहा है । भगत को चौक में मुखिया बुलाता है ।

सातवें अध्याय में मुखिया भगत को मंदिर प्रवेश के गूनाह में शिक्षा करता है । २० कि.ग्रा. अन्न पंछी को फेंकना, मंदिर, तालाब

की ओर दलित को जाना नहीं और मंदिर की चारो ओर थूँहर की बाड करना । रमण और मुखिया के बीच शाब्दिक प्रहार भी होता है ।

आठवे अध्याय में मना भूतकाल को याद करता है । मानसंग बलपूर्वक मना की माँ और बहन (सूरज) को खेत में मजदूरी के लिए रोक लेता है, मना दूसरे के यहाँ मजदूरी करने जाता है । शाम को खाना पकाने के लिए सूरज माँ से पहले घर जाती है, तो मानसंग सूरज पर बलात्कार करके तालाब में फैंक देता है । मूहल्लेवाले सूरज को ढूँढते है, मुखिया को पूछते है पर चौथे दिन तालाब में से सूरज की लाश मिलती है । उसी तरह मना का बाप भी खो गया था ।

नवमें अध्याय में मना के बाप की कथा है, करशन सूत लेने के लिए तेहसिल गया था, पर वापस नहीं आया, अतः लोग कहते थे कि वो तो साधु बन गया होगा !

मना की माँ अनावृष्टि के दिनो में तालाब में पानी भरने गई थी, वहाँ पानी तो नहीं था, पर पत्थर के साथ चेईन (लोहे की) बंधी हुई थी, कपडे का टूकडा भी मिला, उसे मालूम हो गया कि यह कपडा मेरे पति का है । चेईन खरीदनेवाला वजेसंग उसे याद आया, पर अब क्या ? बेचारे दलित क्या कर सकते है ? तीन रुपये के कारण हत्या करके तालाब में फैंक देते है क्योंकि बात फैल न जाये !

छगन बात करता है कि रमण के कारण हम बच गये है वेलिया जलती हुई लकडी लेकर कूद रहा था भगला को बाहर निकालो, नहीं तो मूहल्ले को जला देंगे... रमण को देखकर वापस चला गया, किन्तु फिर से सब आये और घर को जला दिया, हम वहाँ से भागे आज घर छूट गया, बिना मूल्क के हो गये, पर सिर सलामत है तो पघडियाँ मिलेगी ।ऊँची जगह पर से देखा तो अग्नि की ज्वालाएँ और छाती फट जाए ऐसी आवाज आ रही थी ।

दसवें अध्याय में छगन भूतकाल को याद करता है, रमण और जीवा, मानसंग की पिटाई करना चाहते थे, क्योंकि सुरज पर बलात्कार करके तालाब में फैंक दी थी । मुखिया जैसे आदमी की भी पिटाई

करके उनके घर जाकर ही कहते है कि मुखियाने हमको पिटा है ।

हेमा की भैंस मर गई थी, अतः चिरफाड करके दलित लोगों ने घर पे माँस लाकर पकाया था । एक जश्न जैसा माहौल हो गया था ।

बारहवे अध्याय में रमण-जीवा को मासंग का डर लगता है कि वह जरुर बदला लेगा । जीवा को मासंग की बहन के घर आम (ऽlg) लेकर जाना पड़ता है । बेगार से नफरत है ! किन्तु ना कहने की हिम्मत नहीं थी । आधार रास्ता उसने काट लिया था, तब उसके पैरो में तीन तीर कोई मारता है और वहाँ ही गिर जाता है ।

तेरहवे अध्याय में भगा जमीन पर लकीरें खींच रहा था , मिटाता था । स्वयं को दोषित मानता था कि मेरे कारण उन सबको गाँव छोड़ना पडा है । उसे बैल का प्रसंग याद आता है । बैल युवान था, दौड़ता है तब भगा दौडकर रस्सी पकड लेता है, बैल उसे दो चार कदम घसीटकर ले जाता है बाद में भगाने जमीन पे पैर जकड दिया तो बैल भी खडा रह गया । संतोक, पभा आदि पटेल की स्त्रियाँ भगा की ताकत पर खुश हो जाती है । संतोक गठर उठाने के लिए भगा को बूलाती है और अपना सिर उससे टकराती है । फिर तो भगा बंधुआ के रुप में था, और संतोक का पति नामर्द था, दोनों का प्रेम वटवृक्ष बन जाता है । चौदहवें अध्याय में भगा-संतोक की बातें चारों ओर होती है । मेले में वह उसे चूडियाँ पेहनाता है । मस्ती से दोनों मेले में घूमते है । पंद्रहवे अध्याय में मेले की बात बडे लोगो तक पहूँचती है । थोडे समय के बाद संतोक को पुत्र होता है- फतामा दायन कहते है कि भगला ढेढ जैसा बच्चा है तब गाँव के सवर्ण क्रोधित होते है ।

ढेड घरमें भी घूस जाते है, हम बैठकर देखते रहेंगे.. मेले में चूडियाँ पेहनाई थी.. दूसरे गाँववाले को पता लगेगा तो संबंध भी नहीं करेंगे । तो कोई कहता है-

"ढेड बच्चे पैदा करेंगे और हम देखते रहेंगे ? साले ढेड को कूए में फेंकेगे ! ये दिन बाद दलितो को निकालने के लिए ढोल बजता है ।

सोलहवें अध्याय में गोकल नये मूल्क की खोज के बारे में सोचता है । हरेक की बाहो में शक्ति और विश्वास था कि जहाँ भी जाऐगे वहाँ मिलकर रहेंगे, किन्तु पूरा मूल्क अत्याचार के बिना कहाँ बाकी है ? जहाँ भी जाऐंगे वहाँ बेगार, मजदुरी, तिरस्कार, अछूतावस्था, की प्रतिबिंब साथ में ही आयेगा । किस मूल्क में जाये ?

यह मूल्क तो उच्चवर्ग का है, वे ही इन्सान है, हम कहाँ इन्सान है ? हम तो बेगार, मृत पशु को खींचने के लिए, और स्वयं नंगे रहकर उनके कपडे बूनने के लिए है । फिर भी ये सब सेह लेना । गोकल कहता है कि भगा के कारण गाँव छोड़ना नहीं पडा । अब चलिए- धरती जैसी माँ है, यह मूल्क जैसा मूल्क पडा है !

सब अपना सामान लेकर चलने की तैयारी करते है, नये मूल्क की खोज में...। श्री भी.न.वणकर ने 'मलाक' के बारे में लिखा है-

दलपत चौहाण के मूल्क उपन्यास में दलित समाज और दूसरे समाज के वर्गो के साथ संबंध, और उनमे से पैदा होती (व्यथा) विडंबना का चित्रण है । पात्रो द्वारा निरुपण होने पर भी नायक-नायिका नहीं है, सामूहिक मानस है । यहाँ अत्याचार के कारण दलितों की हिजरत की एक रात है । किन्तु उनमें दलितो में रहा आशावाद ध्यान खिंचता है । यह विशाल मूल्क है । निराशा नहीं किन्तु (हिम्मत) खुंआरी है । यह सुंदर उपन्यास है [1] दलितों का जीवन, उनकी गरीबी, गुलामी और उनका दु:ख उनके साहित्य में पेश किया है ।

एक ही रात की घटना का सामाजिक माहोल बनाकर लेखक कथा पूर्ण करते है । और पाठक पर छोड देते है । लेखक को सामाजिक अनुभव है । कथा को तानेबाने में बूनने का कौशल्य है । इसलिए बात को घाट देने में कई घटनाएँ उभरती है । जो मूलकथा के साथ उपकारक है । लघु उपन्यास व्यक्ति के जीवन की कथा का आलेखन स्वरुप है । किन्तु लेखक व्यक्ति जीवन के साथ समाज जीवन का भी आलेखन करता है । इसीलिए लेखक बाह्य जीवन की घटनाओं द्वारा सामाजिक जीवन का

मनोगत दर्शन सुदृढ कराते है । लेखक ग्राम्यजीवन के आंतरिक बाह्य रुप को अच्छी तरह जानते हैं । लेखक को सामाजिक जीवन की घनिष्ठ पहेचान है । इसीलिए ही सामाजिक अत्याचार की आपत्तिओं के सामने झूझते इन्सानों की असाहयता, कमनसीबी, प्रतिकूलता, निष्ठूर नियति, और करुण जीवन शैली का अच्छी तरह परिचय करवाते हैं । इतना ही नहीं किन्तु प्रबल जीवन शक्ति का आविष्कार करवाते है ।

लघु उपन्यास में ग्रामीण सवर्ण समाज और गरीब दलित समाज का प्रतिनिधित्व है । लेखक स्वयं दलित समाज के होने पर भी किसी वर्ग की तरफदारी करते हो, ऐसा नहीं हकीकत में तो वास्तविक समाज की पीडाओं को तटस्थता से बानी दी है लेखक ग्राम्य समाज में पले है, दलित समाज की व्यथा का अनुभव किया है । और सवर्ण समाज के अत्याचार का भी अनुभव किया है । इसीलिए असाधारण निष्ठा और पूरे दिल से कथा का आलेखन किया है । लेखक का एक पैर भूतकाल में है और दूसरा पैर नये मूल्क की खोज में भविष्य के ओर की गति का है । रमण और छगन जैसे पात्रों के द्वारा लेखक परिवर्तन पाते इन्सान का आबेहूब दर्शन करवाते है ।

यह लघु उपन्यास में कोई एक व्यक्ति की कथा नहीं है, किन्तु एक समाज की कथा विशेष है । दलित समाज की हरेक व्यक्ति ने सही वेदना की स्मृतिरुप से कथा विस्तृत होती है । जिसमें समग्र समाज का व्यक्तित्व उभरता है । भगा और संतोक के संबंधो के सहारे यहाँ व्यक्तियों को नहीं किन्तु, पूरे समाज को सहना पड़ता है । सबको बिस्तरे बाँधने पड़ते है । इस तरह यहाँ व्यक्ति या व्यक्तियाँ गौण है । पर इसमें आती सभी व्यक्तियों मिलकर पूरे दलित समाज का जीवनदर्शन करवाती है । जिसमें गभराहट, उदासी और पीडा होने पर भी नये मूल्क की खोज में उज्जवल भविष्य के आशा के किरणों की प्रतीक्षा भी है ।

'मूल्क' की कथा सृष्टि में सारे पात्रो का विवाद, स्वगत संवाद, मानसिक विश्लेषण, भूतकाल की घटनाओं की यादें आदि के द्वारा

लेखक पात्रो के मन की गतिविधियों का आंतरविश्लेषण करते है । लेखक ने पात्रो के मन की सूक्ष्म गतिविधियो का सूक्ष्मता से आलेखन किया है । पात्रों के मानस में द्वन्द्व से ज्यादा द्विधा देखने को मिलती है ।

मूल्क उपन्यास में नायक के रुप में पूरा दलित समाज है । खलनायक के रुप में भी उच्चवर्ग समाज है । फिर भीकथा का विकास पात्र द्वारा ही होता है । उपन्यास में भगा-संतोक, छगन, रमण, गोकल, जीवा, मना, भगत, अनारजी, मानसंग (मुखिया) मगन, चंदुजी, राजी जैसे पात्र है । संतोक, अनारजी, मानसंग, चंदुजी जैसे सवर्ण पात्र है । उसके सिवा दलित पात्र है ।

भगा का चरित्र मूल्क उपन्यास में बहूत अच्छी तरह से उभरकर आया है । भगा हट्टाकट्टा, रुपवान है, इसीलिए किसी भी स्त्री की आँखों में समा जाता है । उसकी वीरता के कारण ही संतोक उसके प्रेम में पड़ती है । भगा ढेड होने के कारण ऐसा सबंध बाँधने से डरता है, पर संतोक ही कहती है कि मुझ से प्रेम नहीं करोंगे तो मैं सबको कहूँगी कि मेरी इज्जत भगाने लूंटी ! इसीलिए भगा संतोक के साथ अच्छा व्यवहार विवश होकर रखता है ।

गोदड के यहाँ (बंधुआ मजदुर) के रुप में काम करता है । कैसा भी बैल हो ये वश में रख सकता है । छगन के शब्दो में “गोदड के लड़के की बहू का संग किया, इसीलिए दुश्मनों ने हमको भगाने का खेल किया और संतोक राँड को भी भगला के सिवा कोई दूसरा पुरुष ही नहीं मिला । भगा एक मेहनती, खेत-मजदूर है ।

उपन्यास में नायिका कोई नहीं है, पर जिसके कारण उपन्यास की कथा आगे बढती है, वह संतोक के कारण उसके कारण ही हिजरत करने की नौबत आती है । संतोक एक अच्छी औरत है पर पटेल समाज के नियम के मुताबिक बदला पद्धति में वह गोदड के पुत्र की बहू बनती है, गोदड का पुत्र (सोमला) नामर्द है, छोटा है । इसीलिए वह भगा की ओर झूकती है, और डरती भी नहीं ।

भगा के साथ मेले में हवा में उड़ती हो- उसी तरह घूमती है, संतोक की सास भी संतोक को साथ देती है । संतोक पुत्र को जन्म देती है तब सारे गाँव में चर्चा का विषय बन जाती है ।

छगन बंधुआ खेतमजदूर था । छगन के लिए उजाला या अंधकार एक समान था, सूबह में चार बजते ही काम में लग जाता था, बैल की तरह ही वह तो कहता है की बेल की तरह भी नहीं, बैल तो सर्दी की ऋतु में गुड..तिल खाता है उनका बचा हुआ गुड-तिल खाये तो भी मार खाना पड़ता था, कूए में से वह खुद पानी निकालकर बैल को पानी पिलाता था, पर पानी नहीं पी सकता था, फिर भी जीना पड़ता था, जीने के लिए सहारे की जरुरत थी, सहारा का अर्थ वह रोटी करता था ।

गोकल का पात्र समजदार है बडी उम्रवाला है । किसी भी परिस्थिति में खडा रह सकता है । मूहल्लेवाले उनके बोल का ही अनुसरण करते है । मूहल्ले पर पत्थर फेंकते है, तो अनारजी को मिलकर कारण जानता है और दो बोतल शराब, मुर्गी देकर वातावरण शांत रखता है । भतीजे की वरयात्रा में ऊँट पर वर को बिठाकर परगने में अपना डंका बजाता है । वरयात्रा के पीछे तलवार लेकर ठाकुर के साथ रहता है । अपना मूलक छोडने के वक्त आँखों में आँसू आ जाते है ।

मानसंग ने हेमी की छेडती की थी, तो आपस में झघडा करने की हिम्मत तो गोकल में नही थी, किन्तु मौका मिलते ही मानसंग के चार सौ मन बाजरे को आग लगा देता है ।

धरती छोड़कर तो निकल गये थे, अब कहाँ जायेंगे ? यह सोचकर आकाश के सामने देखता है, ईश्वर को याद करता है, सबके बाहूबल में उसको विश्वास था कि जहाँ भी जाऐंगे., वहाँ समा जायेंगे, किन्तु पूरे मूल्क में अत्याचार कहाँ बाकी है ? एक कदम जमीन भी बाकी नहीं है, जहाँ उनका पसीना न गिरा हो, जहाँ भी जायेगे मजदुरी, अछूतावस्था, परछाई की तरह साथ में रहेगी । किस मूल्क में जायेगे ?

गोकल मूल्क उपन्यास का सशक्त पात्र है । जिनकी ऊँगलियाँ से सब काम करते है, दलित समाज में यह पात्र अपने निर्णय के कारण सर्वोच्च पद का अधिकारी है ।

रमण दलित समाज का वीरपुरुष है । कोई भी पटेल, या ठाकुर उसको देखकर शांत हो जाता था । रमण के कारण ही उच्चवर्ग के लोग भी डरते है । उपन्यास में पहलीबार मूहल्ले में पत्थर गिरते है तब, मुखिया को मारने के वक्त, भगत को मूखिया के समक्ष ले. गये तब और गाँव छोड़ने के वक्त उसकी वीरता का परिचय मिलता है । मूल्क छोड़ने का निश्चय करते है तब रमण बूरे व्यक्तियों के साथ बूरा ही बनना चाहता है । लड़ने के लिए तैयार होता है ओर कहता है कि यहाँ से छूटकारा होगा, मर जायेंगे तो भी बेगार, अछूतावस्था से तो छूटकारा मिलेगा !

श्री भरत महेता ने करुणांत और दलित चेतना की सक्रियता की नोंध लेते उपन्यासों में 'मूल्क' उपन्यास का गिनती की है । मूल्क (दलपत चौहाण) में हठा चौधरी के वहाँ काम पर रहे बुनकर भगा से हठा की पत्नी संतोक को बेटा पैदा होते ही, होता विवाद केन्द्र में है । यहाँ तो यह घटना के कारण हरिजन मूहल्ले को हिजरत करनी पडी यह केन्द्र में है । एक हिजरत- रात की समय- संकलना में सवर्ण अत्याचारों का विश्व खुला होता है, इस प्रकार की प्रयुक्ति यहाँ सफल हुई है । दलित वर्ग के आंतरद्धन्द्ध को यह सर्जक प्रगटाने का टालते है । इसीलिए यह कृत्ति थोडी दुर्बल लगती है 'भद्रं भद्रं' के 'मिथ्याभिमान' के लेखक अपने वर्ग की कमी को स्पष्टता स दिखा सके थे । भगा की घटना तो सवर्ण हुमला को तार्किकता पूरी पाडता है । किन्तु ऐसे कोई गूनाह दोष बगैर के अत्याचारो का क्या ? जो समाज के आंतरद्धन्द्ध की ओर आँख आडे कान करेंगे तो ! मेरे बच्चे सोने के पडौसी के पित्तल के और गाँव के बच्चे मीट्टी के जैसी पक्षधरता में कृति फिसल जायेगी । मूल्क छोड़ना पडा यह व्यथा यहाँ है किन्तु सलामती के छत्र बिना वाले समाजने जो गेरीला प्रतिसाद दिया वह खुऑरी भी नोंधपात्र है ।[1]

श्री बाबू दावलपुरा 'मूल्क' और 'गिद्ध' उपन्यास के बारे में लिखते है- 'मूल्क और गिद्ध में लेखक कहेलाती सवर्ण जाति की ओर से करने में आते अमानवीय अत्याचारों को केन्द्र में रखकर मनुवादी वर्णाश्रम प्रेरीत समाज रचना पर घाँव करते है । एक उच्च तो दूसरा नीच, एक स्पृश्य तो दूसरा अस्पृश्य, फिर तो बात ही कहाँ रही ? सवर्ण जाति की स्त्री के साथ दलित जाति के पुरुष नैसर्गिक संबंध भी नहीं रख सकते । मूल्क और गिद्ध दोंनो उपन्यास के विषय के बीज दलित पात्र का बिनदलित स्त्री के प्रति आकर्षण मूल में है । उसके गेहरे प्रतिघात दलित समाज की हिजरत, आग, अत्याचारों में परिवर्तित होते है । इक्कीसवीं सदी में भी ऐसी परिस्थिति में फर्क नहीं हुआ । दलितों की परावलंबी जिंदगी, रुढियाँ, व्यथा, वेदना, मृत भैंस को खिंच जाने की परंपरीत रीत, ठोस देने में आया अस्वच्छ धंधा, मृत पशु चिरफाड, मांस का हिस्सा करना आदि दृश्यो दर्शित हुए है ।'[3]

मूल्क उपन्यास में संवाद संक्षिप्त, चोटदार, यथायोग्य और कथा को आगे बढानेवाले है । कम शब्दों में अधिक केहनेकी शक्ति है । श्री दलपत चौहान एक अनुभव सिद्ध लेखक है । गाँव को छोड़ना पड़ेगा, दो-तीन वाक्य में ही छगन कहता है- क्यों ?

'गोदल के लड़के की बहू का संग किया, और दुश्मनों ने गाँव छूडवाने का खेल रचा, ससूर की संतोक.. भगा के सिवा कोई दूसरा नजर में ही नही ठेहरा ।'[4]

बेगार के बारे में रमण और जीवा के बीच संवाद

"रमण - क्या हुआ जीवा ! क्यों बोलता नहीं !

जीवा - कुछ नहीं ! यह ससूरी बेगार कालिया आया था कहने...

रमण - यह तो मस्तक पर लिखी है ! ढेड और बेगार दोनों अच्छे है ।

जीवा - यह बेगार कहाँ तक लहूँ पीती रहेगी ।

रमण - तू देगा तब तक..."

संतोक ने पुत्र को जन्म दिया, गाँव में टेढी-मेढी बातें होने लगी, उसके संवाद इस उपन्यास में बहुत ही उपयोगी है ।

"फतामाँ - जीवी माँ, कुछ सुना !

जीवी माँ - नहीं, बहन, क्या ?

फतामाँ - यह गोदड के लड़के की बहूने पुत्र को जन्म दिया !

जीवीमाँ - संतोक ने!

फतामाँ - हाँ, लड़का है, भगा जैसा रुपवान... सचमुच

जीवी माँ - क्यों बहन- आगे बोले नहीं ?

फतामाँ - यह तो जिह्वा कुचल जाए ऐसा है...

लड़का है सचमुच इसके बंधुआ मजदुर भगा ढेड जैसा... गाँव के लोग भी बातें करते है ।"

'मूल्क' उपन्यास में संवाद काफी समृद्ध है । उपन्यास के संवाद कहीं पात्रो के चरित्र-विकास में सहयोगी दिखाई देते है तो कहीं उनकी मन:स्थितियों को भी भली भाँति उजागर करते है । जैसे बंधुआ मजदूर छगन अपनी विवशता पर सोचता है- "इस बाड के किले में पसीना बहाते बहाते जिन्दगी के कई किमती वर्ष ढेले की तरह पिघलने दिये थे.. मिला क्या ? वेतन ? और वेतन में रुपये पचास एक जून घेंस, दो जून रोटी और छाछ ? दूसरे दलित मजदूर रमण का व्यथा कथन है कि यह ससुरी गुलामी कब तक हमारा खून पीती रहेगी ?" दलित भगत के मंदिर प्रवेश पर ठाकोर कहता है- "ओ..हो... मेरे साले ढेडे को मा देव के दर्शन करने हैं, देखो न सिढियाँ चढ आया । अरे भगतडा, इस भगति में मंदिर को अपवित्र बना दिया ।"

दलित युवक तथा सवर्ण औरत के यौन सम्बन्ध के चलते तमाम दलितों को भूगतनी पडी हिजरत पर गोकल अपनी व्यथित मन:स्थिति इस रुप में प्रक्ट करता है कि - "ये सभी वैसे तो पत्थर में से पानी निकाले, किन्तु मलक तो सवर्ण लोगों का न ! हम...हम मनुष्य है ? हम कई बार कहते है मनुष्य है, किन्तु माने कौन ? ससुर सब दुश्मन है !

क्या करे कुछ समझ में नहीं आता ! क्युं कर सही जाय यह गुलामी ढोर खींचने की बारी, बुनना, नंगे रहकर सवर्णो को कपडे पहनाना ।

मूल्क उपन्यास में आजादी से पूर्व के गाँव का वर्णन है । दलित मुहल्ला, चौक, मंदिर, खेत, गाँव, दलित लोगो की परिस्थितियाँ मेला आदि का वर्णन मुल्क उपन्यास में मिलता है । व्यक्तिवर्णन, मानसिक परिस्थिति का भी वर्णन बडी कुशलता के साथ किया है ।

दलित मुहल्ला का वर्णन गर्मी के दिनों में मानव बस्ती मुहल्ले में ज्यादा होती-घर में कपडे बूनने के करघे की आवाज- किन्तु वर्षाॠतु में घर के सब धंधे बंद हो जाते, बस्ती खेतो में जाती- छोटे बच्चों, बूढो को छोड़कर सब खेतो में मजदूरी करते, कोई तो पूरे साल के लिए मजदूरी में लग जाते । दलित लोगों के घर में रजाई (कपडों के टुकडे से बनी), तंबाखू, मिर्च-प्याज का थेला, ग्लास, लोटा, मूँग, दीप, मृत पशु की चर्बी (तैल) का डिब्बा, अन्न आदि होता है ।

आदमीयों को तंबाखू पीने का शौक था । दलित लोग उच्चवर्ग के आश्रित थे । स्त्रियाँ भी मजदूरी करने जाती थी । जमीनदार बंधुआ मजदूर को गुलाम की तरह समजते थे काम ज्यादा और पैसे कम देते थे। मानसिक रुप से भी हैरान करते थे । फिर भी कोई उपाय न होने के कारण मजदूरी के लिए जाना पड़ता था ।

मजदूरों की औरतें भी खेतो में मजदूरी करती थी, उसके साथ छेड़ती का प्रसंग उपन्यास में उभरकर आया है । रामी, हेमी, सूरज, शीवी जैसी औरतों की छेड़ती करना उच्चवर्ग के लिए सामान्य बात समजी जाती थी । सूरज जैसी लड़कियों पर बलात्कार करके तालाब में फैंक देते थे । दलितों से कुछ नहीं होता था । सामना करना, दुश्मनी करनी उनके बस की बात नहीं थी । शीवी जैसी औरत पर भी पाँच आदमियोंने बलात्कार किया था, और शीवी को आत्महत्या करनी पड़ी थी ।

गाँव के मंदिर में दलित लोग दर्शन नहीं कर सकते थे । दलित लोग-उच्चवर्ग के लोगों को छू नहीं सकते थे- यदि छूए तो मार खाना पड़ता था ।

मुंशी प्रेमचन्द के श्रेष्ठ उपन्यास 'गोदान' के होरी की तरह छगन भी जमींदार पर आश्रित है । सालभर की मजदूरी के बाद भी जो पैसे देने का बाकी है वह बाकी ही रहता है । दस साल मजदूरी करने पर भी ऋण कम नहीं होता ।

सेनमा (दलित) जाति के लोग झाडु आदि बनाते थे, ढोल बजाते थे, सिर्फ उच्चवर्ग के यहाँ बूनकर (दलितो के) यहाँ ढोल बजाने की मनाई थी । दलितों में भी आंतरिक निम्नऊँच जैसी कई जातियाँ थी जो अपने को बडी समजते थे ।

घराक की मजदूरी, बेगार, बूनकर करते थे, उसके बदले में त्यौंहार पर अन्न और मृत पशु ले जाने का हक्क मिला था । पशु चिर-फाड का काम चमार करते थे । बूनकर, चमार, सेनमा माँस खाते थे । खटिया में उच्चवर्ग के सामने बैठ सकते नहीं थे ।

उच्चवर्ग के लोग दलित लोगों की स्त्रीयों की छेडती बलात्कार कर सकते थे, किन्तु दलित लोग उच्चवर्ग की स्त्रीयों के सामने भी नहीं देख सकते थे, उपन्यास में मुख्य कथा है, वह इसका परिणाम है ।

गाँव के कूए में से दलित पानी भर नहीं सकते थे ।

दलित और उच्चवर्ग के आदमी तंबाखू पीते थे । अंग्रेजो के राज में सबने व्यसन को पकडा था । रमणीका गुप्ता 'गुजराती साहित्य में दलित कलम' में लिखती है- मैंने ऊपर भी जिक्र किया कि गुजराती दलित साहित्यकार अभिजात लेखकों को कविता मे बहुत पीछे छोड आया है । उसका फलक व्यापक है, उसमें वह समाज तो है ही जो ५००० वर्षो से अनुछूआ था, उसमें वह समाज भी है जिसने उसे गुलाम बनाया । इस प्रकार दोनों का समायोजन [illegible] है । पक्ष-विपक्ष के साथ-साथ तीसरा आयाम है परिवर्तन के लिए संघर्ष और परिवर्तन ।"

श्री भरत महेता 'मूल्क' के बारे में 'हयाती' में लिखते है-

"मूल्क की कथावस्तु भी दलित समाज की है । समाज के अन्य वर्गो के साथ उनके सामाजिक, आर्थिक संबंधो का निरुपण केन्द्र में है ।"

बूनकर युवक भगा का हठा चौधरी की पत्नी संतोक के साथ लग्नेतर संबंध चौक में -फजीहत करके हरिजनों की हिजरत तक की घटना केन्द्र में है । सवर्ण स्त्री का दलित युवक केसाथ संबंध आश्चर्यजनक घटना नही है फिर भी प्रस्तावना में श्री रघुवीर चौधरी लिखते है- ऐसा कभी कभी हीहोता है उसका आश्चर्य जरुर होगा ! बूनकर मूहल्ला रात सिर पर लेकर हिजरत करे इतना ही भौतिक समय लेकर लेखक ने कुशलता से प्रतीति करवाई है । समय संकोचन की दृष्टि से कृति ने बहुत सावधानी बर्ती है । हिजरतीओ के मानसिक समय में कृति विशेष चलती है । एक के बाद एक पात्र की व्यथा की वेदना लेखक पेश करते है । समयसंकलन की खूबी को लेकर कथाविफराट को सर्जक संमित रख सके है। कातिल रात की यह कथा छोटे सोलह प्रकरण में बाँटी है । वर्षो पूर्व की हिन्दी साहित्य की 'मैला आँचल' या मेघाणी 'सोरठ तारां वहेता पाणी' नायक-नायिका केन्द्रित नहीं किन्तु परिवेश परक रचनाएँ थी । मूलक भी समूह मानस को लेकर चलती है ।[1]

रमेश र. दवे लिखते है- हिजरत की, वर्तमान काल निरुपित घटना जो यह उपन्यास का ताना है तो दूर-नजदीकी भूतकाल में घटी घटनाओ की हिजरतीओ की आपबीति यह कथा का भातीगल बाना है ।[2]

प्रस्तावना में श्री रघुवीर चौधरी कहते है- 'प्रश्न होगा लेखक ने केवल भगा के दृष्टिबिन्दु से पूरी कथा पेश की हो तो ? ऐसा नहीं किया क्योंकि उनके सामने व्यक्ति नहीं, ग्रामसमूह है । जिसमें बूनकर, पटेल, गरासिया आदि जातियाँ है । बूनकर युवकों में वीरत्व का आरोपण होगा फिर भी यह निरुपण में पक्षपात नहीं है । पुरानी पीढी की लाचारी और मुल्क की ममता भी संभाल के निरुपित की है । बोली के सिवा यह कारण भी प्रादेशिकता का तत्त्व दोहराया है ।[3]

श्री दलपत चौहानने 'मूल्क' उपन्यास में महेसाना, साबरकांठा जिल्ले के गाँवो की गुजराती बोली का प्रयोग किया है । दलित लोग अपने साहजिक रुप में बोलते है, वही भाषा का प्रयोग किया है । मुहावरें, कहावतें, व्यंग्यात्मक शब्द, संगीतात्मक शब्द का प्रयोग अधिक किया है ।

- संगीतात्मक शब्द- टपक..टपक... खूँ... खूँ.... (९)

खिलखिलाट- चैड... चूँ, चैड....चूँ... पृ. (१६६)

- **कहावतें**
- घाँची के बैल की तरह गोल गोल घूमता रहा- पृ.३
- चींटी पर पहाड तूटेगा... पृ.९
- कबूतर घूसे तो कूआँ व्यर्थ, भगत घूसे तो घर व्यर्थ-१२
- दुबला पति, पत्नी पर जोर करे-१३ - चडती के बाद पडती-
- दुःख का औषध दिन - लोहा लोहे को काटे- पृ.२१
- जैसी करनी वैसी भरनी- पृ.१६५

मुहावरा

- कंटक वाले पेड पर मध है- पृ.४४ - बाड सूने, बाड का कंटक सूने-
- कच्चा ही खा जानेकी हाम भींडी थी- पृ.५४
- सब धूल में मिल गया
- मुँह में मूँग भरे है क्या पृ.७६

हास्यरस

- बुढिया के द्वारा बहू की मजाक करना । गाँव छोड दिया फिर भी चलते चलते हँसकर मजा लूँटते है । पृ.६१
- मानसंग के बाजरे का घास कोई जला देता है, तो कोई कहता है कि उसने कई घरों में आग जलाई है, तो उसके घर घास भी न जले !
- भगत मंदिर में छूपकर दर्शन करने के लिए गये थे, वहाँ चंदुजी ने उसकी पिटाई की, घर पर आए तो रमण कहता है कि- भगत यात्रा करके आये- प्रसाद बाँटो- किसी ने कहा-प्रसाद तो भगत खाकर आए है-

करुणरस

- भगत की पिटाई, पत्नी शीवी की यादें, बलात्कार, हिजरत का समय करुण रस से ओतप्रोत है ।

उपमा- पंछी जैसी शिवी-

- ऐसा रुप और कोकिल जैसी आवाज- पृ.१६३

विरोधाभास

-किन्तु ये छोटे छोटे हाथ भारी कंगन का भार कैसे सेह पायेगा । पृ.१६२

अतिशयोक्ति

करशन की चद्दर में पानी रखना हो तो भी रहे, पृ.९६

धूलची रे तारी मनअ माया लाजी- पृ.१०९

मेले का शाब्दिक वर्णन

जंगल के नीले पेडों में मानवसमुदाय लाल, पीले, नीले रंग में मस्त हो रहा था, बाँसूरी के सूर और लोकगीतों की आवाज में मानवहृदय मोर के टेंहुक, टेंहुक, की तरह बजता था । बबुल जैसा बबुल भी अपने सुनहरे फूल में मतवाला बन गया था । फिर भी भगा अपने को अकेला समझ रहा था । पृ.१५९

उपन्यास में लोकगीत, देशज शब्द, कहावतें- मुहावरों की भरमार दिखाई देती है, जो लोकजीवन को कथा में बडी सहजता से जीवंत बनाये रखते है । पात्रानुकुल भाषा व बोली पात्रों के चरित्र के साथ-साथ उनके सहज विकास व सच्चाई को भी खोलती है । इसके चलते पात्र बनावटी या गढे हुए न लगकर स्वयं स्फूर्त दिखाई पड़ते है ।

दलपत चौहान के उपन्यास 'मलाक' और 'गिद्ध' में भी उत्तर गुजरात के बुनकर, चमारों में बोली जानेवाली विशिष्ट बोली का सहज प्रयोग हुआ है । भाषा जहाँ एक और पात्रों का वर्गीय चरित्र खोलने में सक्षम है, वही दूसरी ओर पात्रों की मनःस्थितियों की गुत्थियाँ भी सुलझाती है । दलित पात्रो में पुरानी पीढी के बुजुर्गो में समझौते का स्वर है तो नयी पीढी के विद्रोही युवको में आक्रोश का चेतनात्मक स्वर । भी.न. वणकर का कहना है कि उत्तर गुजरात के बुनकरों की भाषा, आँचलिक बोली, कहावतें, मुहावरें, लोकोक्तियाँ का लेखक ने ठीक-ठीक प्रयोग किया है । वाक्यों में ध्वन्यात्मकता और मार्मिकता देखने को मिलती है । इसलिए आंचलिक जीवन शैली ज्यादा जीवंत बनती है ।

बिम्ब-विधान

'मलाक' में बँधुआ बने दलित के बचपन की घटना पर स्मृति

बिम्ब-लट्टु कब खो गया उसका पता ही न चला, छगन का वन (जीवनरुपी) खारा जहरिला हो गया । मवेशियों के गोबर-मूत भरने की टोकरी सिर पर रखी तो ओर भैंसे का मूत टोकरी में से टपकता टपक... टपक पृ.(२) यहाँ लेखक ने दलित बँधुआ मजदुर की नारकीय जिन्दगी का बडा यथार्थ वर्णन दृश्य बिम्ब के माध्यम से किया है । कुत्ते का रोना और कुछ अशुभ होना वाली लोकमान्यता का लेखक ने बडा सफल बिम्ब खडा किया है- कुत्तो के खींच-खींच कर रोने से गंगा बड़बड़ायी थी । आज ये कुत्ते टाऊ.....टाऊ.. नहीं छोड़ते भगवान को पता क्या होगा, प्रभु तूम बचाये तो । पृ.२८

प्रतिक- विधान

'मलाक' में नीग्रो साहित्यकार की अनुभूति कि "Where is my mother land" की तीव्र अनुभूति का प्रतीक ।

बँधुआ दलित छगन की स्थिति पर 'मैं और मेमद घाँची का बैल समान । गोल गोल फेरे फिरते ही रहना, और सौ माईल चले तो वहीं के वहीं ।' पृ.३

"दलित साहित्य की भाषा दलित जीवन की भाषा है ।"

- खांडेकर

लोकबोली के लहेंके (ताल) द्वारा दलित साहित्य में भाषा की अभिव्यंजना शक्ति का दर्शन होता है । दलित समाज की आशा, एषणा, आदर्श और अपेक्षाएँ, प्रजाजीवन की रीत आदि का प्रतिबिंब लोकबोली द्वारा दलित साहित्य में सहज और स्पष्टरुप से निरुपित हुए है । श्री लक्ष्मण माने कहते है उसी तरह अपने समाज में एक जाति के लोगों को दूसरी जाति के दु:खो का ख्याल नहीं होता ।[३]

सभी दलित व्यथा में जन्म लेता है, व्यथा में जीता है, और व्यथा में ही मरता है । भी.न.वणकर

सामान्यत: दलित साहित्यकार वास्तविक जीवन को ज्यादा चोटदार बनाने के लिए लोकबोली का उपयोग करते है । दलित साहित्य की यह

भी एक विशिष्टता है । उनसे भाषाकीय बल मिलेगा । अस्पृश्य रहे समाज की उनकी अपनी बोली कितनी शक्तिशाली है यह यहाँ देख सकते है । शिष्ट साहित्य के सामने यह भी एक (पडकार) ललकार है । गुजराती साहित्य को भाषा के नये शब्द मिलेंगे । दलितो में उपयोग में आते ऐसे कई शब्द जो शब्दकोष से भी अस्पृश्य रहे है, वह दलित साहित्य के कारण प्राप्त होगा । इसीलिए गुजराती साहित्य का विस्तार बढेगा और भाषा को बल मिलेगा ।[1]

मूल्क उपन्यास का उद्देश्य, गुजरात में दलितों का जीवन कैसा है ? क्या खाते है ? क्या काम करते है ? कौन उसका शोषण करता है ? कौन सी परिस्थिति में से वे लोग गुजरते है ? स्त्रीयों का हाल क्या है ? उच्चवर्ग और दलित वर्ग में कितना संघर्ष है ? उन प्रश्नों का उत्तर ही मूल्क उपन्यास का उद्देश्य है ।

मूल्क की समस्या शोषित तथा दलितों की आर्थिक, सामाजिक विडंबना की समस्या है । दलित जीवन के विविध पक्षों को उपस्थित कर दलित ग्रामीण स्थिति का उद्‌घाटन करना है । नया मूल्क खोजने की चिंता है । नये मूल्क में रामराज्य हो, छूत-अछूत के भेद न हो- शारीरिक त्रास न हो- स्त्रीयों का जीवन अच्छा हो-आदमी, आदमी की तरह व्यवहार करे यह उद्देश्य है ।

ऊँचे लोग ही मानव है, हम तो मानव कहाँ है ? हम को पशु की तरह देखते है ! गोकल के यह शब्द मानव-अधिकार माँगते है । 'मूल्क' की समस्या ऋण की समस्या भी है । उपन्यास की समस्या दलित वर्ग के विभिन्न पक्षो, समस्याओं, संघर्ष एवं विषमताओं का चित्रण करना है । लेखक स्वयं दलित है, उन्होंने स्वयं ये दुःख झेला है, उनके साथ भी ऐसा ही व्यवहार सवर्णो ने किया है, उनके साहित्य में प्रत्यक्षविवरण ज्यादा है । और अपने अनुभवों को ही कथा का आधार बनाया है । कृति का मूल स्वर यथार्थवादी है।

श्री दलपत चौहानने मूलक में स्वातंत्र्यपूर्व गुजरात के ग्रामो में दलितो की दुर्दशा, और मजदूर के अधःपतन तथा उसमें जमीनदार,

मुखिया, सभी मिलकर दलितो को रोंदकर उनका लहूँ जोंक की तरह चूस रहे थे, यह दर्शाने का उद्देश्य है । साथ ही दलित समाज का परम्परागत ढाँचा, जातिप्रथा, वर्गभेद, विवाह, मृत्यु आदि में धार्मिक परम्पराएँ एवं सामाजिक खोखलापन प्रकट करके नये समाज का ही संकेत किया है ।

दलितों का होनेवाला भरपूर शोषण, शिक्षा का अभाव, स्त्री की हालत, जैसे अनेक उद्देश्य लेखक ने दर्शाये है । कुछ स्थानों पर घटनाओं और व्यक्तिगत व्यवहार का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी है । दलित-मजदूर सदियों से कुचले-पिछडे शोषित वर्ग के उत्थान का प्रमुख उद्देश्य भी है ।

जीवनभर आर्थिक अभावों की भयंकर चक्की में पिसकर मजदूर के प्राण निकल जाते है । छगन, भगा, जैसे आदमी दस साल से बँधुआ मजदूर के रुप में थे, फिर भी ऋण ज्यों का त्यों था । जरुरत होती इस प्रकार पैसे लेते रहते और पचास रुपये से ज्यादा पैसे ही हो जाता, जिन्दगी के पूर्व दिन भी इस प्रकार गुलामी में जकड जाते । बाजरे की रोटी, और छाछ, मृत पशु का माँस खाकर जीवन व्यतीत करते है ।

'मूल्क' की सबसे बडी उपलब्धि संभवतः यह है कि प्रत्यक्ष रुप से सामाजिक समस्या पर बल देकर सामाजिक वैषम्य और वर्ग-संघर्ष को अपने पूरे भयावह और नग्न रुप में उभरकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में सफल हो सका है । शोषण पर आधृत -वर्तमान वर्ग विभाजित समाज व्यवस्था का सही चित्र प्रस्तुत किया है और अपने पाठकों के हृदय में इस व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश की भावना उत्पन्न कर सकता है । गुजरात के दलितों के समूचे जीवन और उसके दुखः-दर्द को वाणी प्रदान करने का प्रयास किया है ।

नारसंग, मानसंग या अनारजी सभी दलितों को लूँटते है । इसी कारण दलित मजदूर का जीवनरस निचुड गया है । उसके जीवन में कोई रस, आशा, उमंग, आनंद या हरियाली नहीं रह गई है । उसके सामने कोई भविष्य नहीं है, कोई वर्तमान नहीं है । उसकी संपूर्ण ईन्द्रियाँ

और चेतना शिथिल हो गयी है । वह जीवित मनुष्य न रहकर, एक ऐसी चलती फिरती कठपुतली मात्र रह गया है, जिसकी डोर उसके शोषण कर्ताओं के हाथ में है ।

सामाजिक व्यवस्था के कारण एक उच्चवर्ग समुदाय और दूसरा दलित समुदाय दोनों के बीच में जो संघर्ष है उनकी कथा मूल्क उपन्यास में है, मूल्क छोडकर जा रहे है ! उनके अनुभव को कथा के रुप में कहा गया है । छगन के द्वारा ऋण की समस्या और जमीनदार की ओर से होनेवाला शोषण, बाल-मजदूरी, अंधश्रद्धा, निरक्षरता, छूत-अछूत के भेद, दलित स्त्री का शारीरिक शोषण जैसी समस्याओं पर बल दिया है ।

गाँव के कुए में से दलित पानी भर नहीं सकते, मंदिर प्रवेश नहीं कर सकते, दलित स्त्री पर बलात्कार करके तालाब में फैंक देना, या उनको आत्महत्या करनी पड़ती है उसका वर्णन भी योग्य है । हर पात्र को तंबाखू का व्यसन है, व्यसन मुक्ति का भी संदेश है । बदला पद्धति के कारण अनमैल विवाह का उदाहरण भी है ।

मूल्क उपन्यास की विशेषताएँ -

(१) गुजराती भाषा में शब्दों की वृद्धि (२) सामाजिक संघर्ष

(३) साहित्य में दलित पात्रों का प्रवेश (४) रिश्वत द्वारा शोषण

(५) दलित लोगों की स्थिति का यथार्थ चित्रण

(६) दलित नारी की विवशता (७) दलितों में संप की भावना

(८) दलितों में भी वीरता है, उसी का यथार्थ चित्रण

(९) दलितों को थोपा गया व्यवसाय-मृत पशु की चिरफाड, माँस खाना आदि का यथार्थ चित्रण

(१०) बाल मजदूरी

'मूल्क' उपन्यास में दलित समाज और सवर्ण समाज का संघर्ष दिखाई देता है । मूल्क उपन्यास की कथा एक संघर्ष की कथा है, हिन्दु धर्म की वर्ण व्यवस्था (जाति व्यवस्था) के कारण दलितों की स्थिति दयनीय है । यह उपन्यास की कथा भले ही आजादी पूर्व की है पर आज भी भारत में दलितों की स्थिति वैसी की वैसी ही है । उच्चवर्ग दलितों का

शोषण आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक दृष्टि से करता है । दलितो के मन को तोड देते है, एक पशु से बदतर जीवन जीने के लिए विवश करते है । कविश्री मैथिलीशरण गुप्तने कहा है-

"अबला हाय ! तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी"

ये बात सही है, जहाँ देखते है वहाँ नारी की स्थिति वैसी की वैसी ही है । शिक्षा के कारण कानून के कारण नारी की स्थिति में सुधार अवश्य हुआ है, लेकिन दलित नारी की स्थिति तो वैसी की वैसी ही है । उच्चवर्ग के लोग बाज (पक्षी) की तरह है, और दलित नारी सामान्य पक्षी की तरह है । अकेली मिल जाये तो छेड़ती, शीलभंग, और बलात्कार करके तालाब में भी फैंक देते है ।

श्री दलपत चौहाण अपने पथ पर सही है, उन्होंने संघर्ष, नारी की स्थिति के बारे में सूक्ष्म दृष्टि से देखा है । और उपन्यास में स्थान दिया है । गाँवो में मजदूरी करती स्त्रीयाँ की हालत में आज भी सुधार नहीं दिखाई देता । शिकार तो बनती है, पर पुलिस में रपट कैसे करे ? इज्जत के कारण उनको आत्महत्या करनी पड़ती है ।

नारी पात्रों में छगन की पत्नी (रामी), गोकल की पत्नी (हेमी) मना की बहन सूरज, भगत की पत्नी (शीवी) की स्थिति देखकर लगता है कि दलित नारी की स्थिति क्या है ? दलित नारी विवश है, अपनी आवाज में ताकत नहीं है । रामी की छेड़ती नारसंग करता है, रामी मजदूरी करने जाती है, तो नारसंग जमीनदार है । नारसंग के. दिए हुए कंगन फैंक देती है, आर्थिक रुप से गरीब है, लेकिन स्त्री धर्म से बहुत बडी है । हेमी की छेड़ती मानसंग (मुखीया) करता है । वह भी अपनी रक्षा कर लेती है । ऐसे गाँव में रहकर अपनी इज्जत रखना सरल बात नहीं है । मना की बहन सूरज भी मजदूरी करने जाती है, तो मानसंग बलात्कार करके तालाब में फैंक देता है ।

पंद्रह साल की लड़की पर बलात्कार करके फैंक देता है और दलित लोग बोल भी नहीं सकते, यह दलित नारी की विड़बना है ।

दलित लोगों की विड़म्बना है । भगत की पत्नी शीवी पर भी पाँच आदमियों ने बलात्कार किया, इसीलिए उसे आत्महत्या करनी पडी ।

आज भी अखबारों में ऐसे समाचार आते ही है, ऐसी कई शीवी नर्क में जाती है, कौन सुननेवाला है ।

उपन्यास में दलित नारीयों को आदर्श की कठपुतली बनाकर रखी है । रामी, हेमी, राजी और एक-दो अन्य स्त्रीयाँ का उल्लेख उपन्यास में है, दलित नारी सिर्फ आदर्श नहीं होती- वे भी गलत रास्ते पर तो जाती ही है । कहीं कहीं विवश जरुर होती है । पर उच्चवर्ग के साथ संबंध तो रखती ही होगी, और उनके कारण संघर्ष में और वृध्धि होती है। श्री दलपत चौहान यह यथार्थ वर्णन करने में थोडे असफल रहे है ।

इस प्रकार दलित पुरुष भी उच्चवर्ग के लोगों को अपनी बातें दलितों की बाते सुनाकर अपने के उच्चवर्ग के सामने स्वयं को महान मानता है । और संघर्ष में वृध्धि करता है, जो इस प्रकार का चित्रण किया होता तो उपन्यास श्रेष्ठ होता ।

श्री भरत महेता ने 'मलक' उपन्यास की मर्यादा के बारे में लिखा है - नजदीकी से देखे समाज की कई बाबतों के प्रति लेखक ने आँख आडे कान किये है । भारतीय समाज वर्ग में नहीं किन्तु वर्गो में विभाजित समाज है । शिया-सुन्नी या क्रिश्चियन नोन क्रिश्चियन जैसे दो स्पष्ट हिस्से में विभाजित समाज नहीं है । भारतीय समाज की रचना अनेक स्तरीय है, टेढा मेढा उसका रुप है । यह रुप को पाने रेणुजी जैसी संप्रज्ञता अनिवार्य है । तो ही 'मलक' पा सकते है । प्रत्येक वर्ग को भी अपना आंतरद्धन्द्ध होता है । यह द्धन्द्ध को लेखक परख सके नहीं ऐसा कह सकते है । सवर्ण शोषण करते है, रावल आंतरिक रुप से झगडते है, जेहा शराब पीता है मासंगजी, अनारजी भी शराब पीते है । जेहा की बहू, और मुखिया की बुआ फुवड है, हठा की बहू संतोक भगा को पटाती है ! एक बूनकर मुहल्ला ही सच्चा है । छगन-मगन मेरे सोने के, पडौशी के पित्तल के और गाँव के बच्चे मिट्टी के यह कहावत में है

ऐसी मर्यादा में वर्ग संघर्ष को ध्यान में रखती कृतियाँ दूर हो जाती है। 'मलक' में गोकल या रमण तक तो ठीक किन्तु उसके बाद जो चेईन चलती है यह पात्र संकुल नहीं है ।

हिजरत समय में ठोकर खाता समाज भगा को एक शब्द भी नहीं कहता यह अतिरेक है । हजरत जैसी घटना को जो परिमाण वैविध्य (Gross Dimension) मिलना चाहिए वह नहीं है । 'भद्रं भद्र' या 'मिथ्याभिमान' के लेखक जिस वर्ग में से आते थे, यह वर्ग की दरारो को जिस प्रकार दिखा सके है, वह यहाँ नहीं है । उसका अर्थ यह नहीं कि दोलतशंकर या जीवराम भट्ट संकुल पात्र ही थे । संदर्भ वर्ग के अपने आंतरद्वन्द्व का है ।

मार्जरी बाब्दनने उपन्यास के चरित्रों के संदर्भ में संकुलता पर भार रखा है, यह श्री दलपत चौहान को आवश्यक नहीं लगता । भेमा सेनमा के बारे में लेखक ने छोटा सा प्रयास किया है । किन्तु गहरे में जाने की जरुरत है । किन्तु तीन रुपये के लिए वजेसंग राजी को विधवापन दे और उसकी साबिती (गवाही) तीन-चार वर्ष के बाद तालाब में पत्थर के साथ चेईन द्वारा राजी को मिले यह सब तालमैल वाला है । गाँव के लोगों की ओर से पत्थर फैंकने के बाद भी गोकल भगा को कुछ न कहे, गाँव गोकल को कुछ न कहे तब ठोकर लगती है ।'

दलित उत्पीड़न व यंत्रणाओं के इतिहास के भुक्त भोगी रचनाकार है दलपत चौहान । उन्होंने 'मलक' तथा 'गीध' में दलित जीवन की उन सच्चाईयों पर से पर्दा हटाने का काम किया है, जो अभी तक तथाकथित गुजराती उपन्यास साहित्य जिससे मूँह मोडे हुए था । 'मलक' में दलित मजदूर भगा तथा सवर्ण संतोक यौन सम्बन्ध में समग्र दलित समुदाय को किस तरह विस्थापना का भोग बनना पड़ता है ? इस व्यथा को बडे कलात्मक ढंग से उजागर किया गया है । तो 'गीध' में सवर्ण लड़की दिवाली के साथ शनाजी ठाकोर का यौन सम्बन्ध चलता है, जिसका शिकार बन जाता है कथानायक ईसो । इसको भी लेखक ने सहज व वास्तविक रुप से निरुपित किया है । कुल मिलाकर दलपत चौहान की रचनाओं में

समग्र दलित समाज की व्यथाओं को न केवल वाणी मिली हैं, बल्कि अतीत की एक एसी विरासत मिलती है, जो उसे हर समय अपनी मुक्ति के लिए प्रेरित करती है ।

गिद्ध :

'गिद्ध' श्री दलपत चौहान का दूसरा उपन्यास है । पहला उपन्यास मूल्क (१९९१) में लिखा था । गुजराती साहित्य में दलित उपन्यास लिखनेवाले में श्री दलपत चौहान का नाम आदर के साथ लिया जाता है । उपन्यास के स्वरुप को ध्यान में रखकर कथा लिखी है और उनमें सफल भी हुए है । गुजराती साहित्य में जिस विषय का किसी ने स्पर्श नहीं किया, ऐसे विषय को दलपत चौहानने उपन्यास की मुख्य घटना के रुप में रखकर धूम मचा दी है । एक लेखक अपने समाज की भूली हुई बात को लिखता हो तो वह लेखक सम्मान के योग्य है । दलित समाज की वास्तविक हालत को कला के रुप में प्रस्तुत किया है ।

उपन्यास का प्रारंभ भलाभा से होता है । भूतकाल को याद करता है । इसो (इसा) कथा का नायक है । आज का भलाभा, ईसा की पीढी का भला, इसा की व्यथा का साक्षी नहीं है, किन्तु इसा पर आई आफत से ज्ञात है । प्रारंभ में भलाभा है वह उन्नीसवे अध्याय में भला बनकर आता है... और अंत में बाईसवें अध्याय में भलाभा होता है । पाटक को समजने में कोई परेशानी नहीं होती । 'गिद्ध' की मुख्य कथा इसा (दलित) और मावजीभा चौधरी (सवर्ण) की लड़की 'दिवाली' के संबंध के आसपास है । पूरक घटना के रुप में दलितों का व्यवसाय मृत भैंस की चिरफाड का प्रसंग है । ईसा दलित होने के कारण दिवाली से दूर रहना श्रेयकर मानता है । इसा समझदार है और वह जानता है कि मैं दिवाली के साथ संबध रखूँगा तोसारे मूहल्ले की और खुद की हालत क्या होगी ? किन्तु मावजी भा का दूसरा बंधुआ मजदूर 'शानाजी' जो केली (ठाकुर) है वह दिवाली के साथ बाजरे के खेत में लीला करता है । इसा दोनों को देखता है.. लवजी, वेलजी, मावजीभा डंडे लेकर आते

है, तो दिवाली-शनोजी भाग जाते है, ईसा पकडा जाता है और उनकी धान की तरह पिटाई करते है । बच तो जाता है, पर शनोजी उसको नहीं छोड़ता । शनाजी के मन मे था कि ईसाने ही उसकी बात (दिवाली की बात) गाँव में फैलाई है, और उसी कारण मनोरजी के द्वारा शनोजी के द्वारा इसा मारा जाता है । यह कथा को भला-भलाभा बनता है, तब याद करता है कि ईसाने गुनाह नहीं किया फिर भी मारा गया । कथा बाईस अध्याय में विभाजित है जो इस प्रकार है -

ईसा आज बंधुआ मजदूर के रुप में मावजी भा के यहाँ है । रात-दिन काम करना, कूँड में से पानी भी नहीं पी सकता, गिद्ध को देखकर ईर्ष्या होती है, क्योंकि वे आजाद है ? मुझे ही बेगार करनी पड़ती है । दिपावली पर हिसाब करते है ! पैसे बाकी रहते है, और जिंदगी के अगले दिन भी गिरवी हो जाते है ।

ईसा के सामने दिवाली अंगप्रदर्शन करती है, किन्तु ईसा को डर लगता है, क्योंकि पकडा गये तो भूगतना स्वयं को ही पड़ेगा, पूरा गाँव दुश्मन होगा । दिवाली और शनोजी के बीच आडे संबंध है, किन्तु खुद को कौन सा नुकशान है, सोचकर चुप हो जाता है ।

ईसा घेमर और वाली का पुत्र था । कई मन्नतों के बाद हुआ और प्यार में ही बडा हुआ था । बालमजदुर के रुप में ईसा था, तब से दिवाली को वह पसंद आ गया था, दिवाली उसे छू लेती तो उसकी माँ कहती चमार है- पानी छिड़कना पड़ेगा, छोटी दिवाली यह समझती नहीं थी । दिवाली और ईसा दोनों की शादी अपने अपने समाज में हो गई थी । खेतो में ये दोनों एकदूसरे के प्रति आकर्षित होते थे । दिवाली कटाक्ष और हरकतें भी करती थी । खेत में दिवाली के ससूर और पिताजी मिलते है, लड़की को अकेली खेत में भेजना नहीं, क्योंकि एक लड़की बंधुआ मजदूर के साथ रपटी है, दोनों अपनी बेटी तो अच्छी है, ऐसा कहते है, फिर भी मावजीभा, फूली माँ को शनाजी और ईसा पर वहम् होता है ।

वर्षा अच्छी होने के कारण बाजरा अच्छा था, दिन में पंछी, रात में चोर का ध्यान रखने के कारण ईसा को छूट्टी नहीं मिलती थी । पढा लिखा नहीं था, अत: तारे गिनना भी नहीं आता था, माँस खाना, और गुड याद आता है । मृत भैंस को लेने के लिए रात में रणछोड बुलाने आता है । भैसं को उठाकर पाँच, छे आदमी लेकर आते, करशन हँसी, मजाक की कहानी, बातें करते, ताजा ताजा पशु मर गया, हईसो... एकदूसरे को साथ देते, बदलाव देते, हँसते बातें करते एक माईल से मृत भैंस को लेकर मूहल्ले के नजदीक ले आते है ।

मृत भैंस आ जाने से मुहल्ले में चहल पहल हो जाती है, उत्सव का माहौल हो जाता है, बुनकर, चमार, भंगी, ब्राह्मण (दलित) जाति के लोग भी माँस लेने आ जाते है । माँस के हिस्से, झघडा, माँस पकाना की रोचक बातों का वर्णन है । कुत्ते, गिद्ध और इन्सान तीनों माँस के लिए कोहराम मचा देते है ।

गाँव में दिवाली के आडे संबंध की बातें हो रही थी, मावजी भा बेचैन थे, तब बाजरे में शनोजी-दिवाली होते है । लवजी चिल्लाता है तो दोनों भाग जाते है, और ईसा जो देख रहा था, उसकी पिटाई करते है, बेहोश हो जाता है । अंधेरे की राह देखते है, उसके उपर घास डालते है । अर्ध जाग्रत अवस्था में ईसा सोचता है उसे कोई काट रहा है, चमडी नहीं है, माँस को बाँटते है, लोमडी दौड़ती है, शनाजी जैसा चेहरा, मावजीभा, लवजी, वेलजी ईसा का शरीर करवट लेता है, दिशाहिन दौडता है ।

रणछोड कूँड की ओर जाता है, तो बेहोश ईसा को देखता है । खटिया में उसे ले आते है । किसने मारा होगा ? मुखिया को पुलिस पटेल को खबर दो, ऐसी बातें सब करते है । ईसा को देशी उपचार करते है । ईसा के माता-पिता को प्रश्न होता है कि किसने मारा होगा ? मावजी भा की दिवाली खराब है ! फरियाद लिखवाये तो लोग दुश्मन होंगे !

ईसा वाली को धीरे धीरे कहता है, कि दिवाली के कारण यह सब हुआ है । घेमर फरियाद करने जा रहा था, किन्तु वाली ने मना किया । दोनों ने सोचा मुहल्ले पर आफत आयेगी ! शनाजी, मावजी भा दुश्मन होंगे !

वाली-घेमर ने सोचकर एक विचार रखा कि ईसा देव की (हवा) झपट में आ गया है, ऐसा सबको कहना । वाली ने बडी मन्नत रखीं थी । उसमें धुलाभा, बूनकर, सेनमा मुहल्ले के लोग भी आये, धुलाभाने फरियाद लिखवाने की बात कही । घेमर ने कहा मुहल्ला दुश्मन होगा, गाँव दुश्मन होगा, फरियाद लिखवाना नहीं है । मुज गरीब को क्यों कहलवाते है । शनोजी मावजी का देव का नाम लेते है । मैं दूसरा कुछ कहूँ तो मुश्केली आये । ईसा बच गया वही ठीक है । बंधुआ मजदुर के रुप में अब रखना नहीं है ।

पंद्रह दिन में ईसा घूमने फिरने लगा । मावजी भा के खेत में जाना बंद कर दिया था । धुलाभाने कहा था, मावजी भा पैसे लेने आये तो मेरे पास भेजना ! ईसलिए रुपये वापस करने की चिंता टल गई थी । शनाजी भी बंधुआ मजदूर के रुप में नही रहा । शराब पीकर गाँव में कहने लगा कि ईसा को मावजी भा ने मारा था । ईसा को बंधुआ मजदूर के रुप में घेमर रखना चाहता नहीं था । रणछोडने ईसा को बुलाकर कहा कि शनोजी इस तरह क्यूं कहता है ? तब ईसाने ही कहा था कि अपना पाप ढँकने के लिए वह ऐसा करता है, उसका पाप उसको ही खायेगा ।

ईसा को किसने मारा ? यह पूछने के लिए घेमर बडी मन्नत रखता है । मन्नत में बकरे की बलि देते है । भगत (भूवा)ने किसी का नाम नहीं दिया ? अतः घेमर को शांति होती हे । दिवाली ससुराल जाती है ।

ठाकुर मुहल्ले के प्रवेशद्वार पर सीकोतर माँ का छोटा मंदिर था, यह मंदिर पर कुत्ते बैठते, संडास, पेशाब करते ओर दलित यहाँ से

निकले तो दूर रहने का कहते । हठाजी को बुलाया लेकिन एक लडके ने कहा कि हठाजी और मनोरजी दोनों सुबह में ही बाहर गये है । भला को शंका हुई कि मनोरजी आया, किन्तु ईसा क्यों नहीं आया ? ईसा आयेगा, ऐसा सोचकर माधाभा के खेत की ओर जाने लगा ।

भला बाड के पास जाकर गीध देखता है । गीध खड्डे की ओर उतर रहे थे, खड्डे में एक-एक करके दो तीन गिद्ध गये, पशु होगा । भलाने देखा कि कुछ है ? मानव जैसा लगता है, कमीज पहेचाना, ई....सा... अंधेरा छा गया । सब गोल गोल घूमने लगा । कई चेहरे- आकार, तीव्र प्रकाशवाले., कमीज पेहने हुए, चिल्लाते हुए उसकी ओर आ रहे थे । ये शनाजी, दिवाली, मावजी, लवजी जैसे लगते थे । उसके चेहरे नजदीक आते और गिद्ध के रुप में परिवर्तित हो जाते थे । गिद्ध में ईसा नहीं दिखाई देता था, भला डंडे को चारो और घुमाने लगा । गिद्ध पर टट पडा, गले में से आवाज निकल गई । गोल गोल घुमने से डंडा घूमाते-घुमाते वह गीर पडे । किसी ने देख लिया, मुहल्लेवाले ईकट्ठे हो गये । भलाभा को खटिया में सोने का प्रबंध किया, कोई पैर दबाते, हवा डालते, ये सब देखकर भलाभा मुस्कुराये । सबको शांति हुई । भलाभा के पौत्र ने पूछा क्या हुआ था ? भलाभाने पूछा कि ये सब क्यों इकट्ठे हुए ? फिर कहा कि तुम तो घेमर के घर की खुली जमीन में गिर गये थे । भला भा को सब याद आ गया । माँनी ने सबको जाने के लिए कहा, कहीं चोट तो नहीं लगी न ? ईतने वर्षो के बाद आप क्यों गोल-गोल घूमने लगे ? भलाभा असमंजस में पड गये, पानी पिलाया । घेमर की खूली जगह देखकर बोले इसका कुछ नहीं रहा ! मांनी मां ने कुछ सूना, पर समझे नहीं, इसीलिए पूछा कि क्या बोलते हो ? कुछ नहीं, यह तो घेमर भा का ईसा याद आया, जैसे कि उसके सिर पर सौ मण का भारी वजन गिरा ! ऐसी धबराहट हुई और ईसा के मौत की काली छाया उसके उपर बरस पडी ।

दलित परिवेश, दलित विषयवस्तु उसमें भी मुख्यतः दलित समस्या, दलित पात्र, और दलित संवेदना एवम् दलित चेतना का प्रादुर्भाव

ही दलित उपन्यास की पेहचान है ।

श्री भी.न.वणकर 'दलित साहित्य' में 'गिद्ध' के बारे में लिखते है 'गिद्ध उनका दूसरा उपन्यास है । जिसमें लेखक लिखते है- 'हैमारी काली-कारमी बाजू का ईतिहास है । हमको जिस अंधकार में धकेल दिया उसकी कालाश का यह छोटा सा कौना है ।' यहाँ उपन्यास के स्वरुप को वफादार रहकर दलपत चौहान ने कथा की नींव रखी है । और उसमें सफल हुए है । यह उपन्यास विषयवस्तु की मावजत के कारण नवीन लगता है ।'

उपन्यास में ईसा नायक और दिवाली नायिका है । ईसा दलित है, तो दिवाली पटेल है । ईसा के माता-पिता, भलाभा और दलित मुहल्ले के पात्र है । दिवाली के माता-पिता और शनाजी ठाकुर है जो कथा विकास में सहयोग देते है । गिद्ध उपन्यास का नायक है ईसा । ईसा दलित है, युवान है, किसी भी परिस्थिति का सामना कर सके ऐसी मानसिक अवस्थावाला व्यक्ति है, फिर भी अपनी जाति के कारण ही वह पीछे ही रहता है । क्योंकि दलित कम और उच्चवर्ग के लोग ज्यादा थे, थोडी सी गलती करें । तो भी अपनी और मुहल्ले की हालत क्या होगी उससे वह ज़्ञात है । लेखक नायक का आलंबन लेकर समग्र दलित समाज की व्यथा उफसाने में सफल रहे है ।

ईसा घेमर-वाली का एक ही संतान है, मध्यमवर्ग का परिवार है, घेमर खेतमजदूरी, चमडे के जूते, रस्सी आदि बनाता, बैगार करता, वाली भी खेतमजदूरी में साथ देती थी, फिर भी थोडी सी आर्थिक कमी रहती, इसीलिए इसा को मावजी भा के यहाँ बालमजदूर के रुप में रखते है । भैंसो को चराना, पानी पिलाना, गोबर भरना आदि काम करता था। बालमजदूर से बँधुआ मजदुर कब बन गया उसका उसको पता नहीं था ! खेत में उसको पंद्रह बीस दिन हो जाते, कभी कभी कोई बुलाने जाता तब घर देख सकता था । रात में भी खेतों की रक्षा करनी पड़ती थी, दिन में पंछियों से और रात में चोर, रानी पशु की चिंता रहती थी । सुबह में चार बजे से रात के दस बजे तक काम

करना था, रात में सोते सोते तारे दिखाई देते, उसको देखकर समय तय करता कि अब सुबह होगी !

दिपावली पर एक वर्ष पूरा होता, वार्षिक रुपये का हिसाब होता और उसमें तो जमींदार को पैसे देना बाकी रहता, अतः फिर एक साल के लिए बंधुआ मजदूर के रुप में रहना पड़ता था । ईसा और दिवाली दोनो की शादी अपनी-अपनी जाति में हो गई थी, गौन नहीं हुआ था । दिवाली के हृदय में ईसाने जगह बना ली थी । दिवाली उसके साथ नखरें करती, पर ईसा अपनी जाति के कारण साहस नहीं करता था । बैल को पानी पिलाने के बाद, दिवाली अपनी मन की बात कहती है । मानव प्यासा है और उसके सामने तो देखते नहीं है ?

'ओ...हो मानव भूखा है तो ! यह रही बालटी, रस्सी और ये कूआँ, पानी खींचो ...है सो ?

ईसा जल्दी से बोल गया, उसका चेहरा हँसता हुआ हो गया था, यह कूँआ है ! इसका क्या ?

हँ तो बालटी पिलाओ न ! पानी खींचते टूट नहीं जाओगे ! ईसा खडखडाट हँसने लगा, ईसा को हँसते देखकर दिवाली नरम हो गई, शर्म से सिर नीचा करके बोली-

'मैं टूट नहीं जाऊँगी भैया, ये प्यास ससुरी कुएँ के पानी से नही मिटेगी ?' (गिद्ध, पृ.४५)

ईसा नामर्द नहीं है, पर अपनी जाति दलित है, इसलिए वह डरता है, और दिवाली की प्यास मिटा नहीं सकता था । ईसा को शनाजी-दिवाली के आडे संबंध का पता था, क्रोध भी आता था, पर अपना क्या बिगडता है, ऐसा सोचकर कुछ बोलता नहीं था ।

मावजी भा का बंधुआ मजदूर हुआ, इसलिए पूरे वर्ष के दो सौ रुपये, एक जोडी कपडे, एक जोडी पुराने कपडे, बरतन में अेल्युमिनियम का बडा कटोरा, उसमें ही वह शब्जी, दाल, घेंश, पानी लेता था, ईसा का अक्षयपात्र था । कोई दिन शिरा, मालपुएँ कटोरे में स्वीकारना पड़ता

था । बचपन में हुई शादी के कारणवह कर्जके नीचे दब गया था, जिन्दगी के वर्ष शादी का कर्ज चुकाने में उलज गये थे ।

मृत पशु का माँस खाना ही उनके लिए फिस्ट (मिजबानी) है । और ये ईतिहास को याद करके ही जीवन बिताता है । मजलेवाली झोंपडी में रात बिताता है, रानी पशु, चोर का डर, आसपास के उनके जैसे मजदुर से चिल्लाकर अपनी हयाती का एहसास, तो कभी दोहे, गीत गाकर आनंद व्यक्त करता है । अनपढ ईसा गिनती जानता नहीं है, निरक्षरता का अफसोस नहीं है, क्योंकि पूरा गाँव अनपढ है । ईसा ताकतवर है, चार पाँच युवान उसके साथ हो तो बडी भैंस भी उठाकर एक माईल तक ला देते थे ।

खेत में दिवाली और ईसा शारीरिक सबंध पूरा करते है या नहीं ये दूर की बात है, किन्तु नखरें दोनों करते है । दोनों आनंद व्यक्त करते है । एक दिन बाजरे के खेत में वेलजी देखता है कि दिवाली और कोई आदमी है, शनोजी भाग जाता है और ईसा जो केवल देख रहा था, वह पकडा जाता है, बेहोश हो जाय उतनी पिटाई करते है ।

मावजीभा के खेत में रहा बंधुआ मजदूर ईसा की करुणात की पराकाष्ठा तो तब होती है, जब शनाजी का नाम जाहिर नहीं करता.. जहाँ वह साथी केरुप में रहा है वह मावजीभा और दिवाली की ईज्जत के चिंथरे उड जाय ये उसको पसंद नहीं है, यहाँ शनाजी का डर जरुर है, किन्तु समझ ज्यादा है, दिवाली की ईज्जत बचाने के लिए वह....

"ईसाने खटिया में करवट ली, मुझे कहाँ उसके साथ शादी करने की इच्छा थी, मेरी बहु यह वर्ष नहीं तो अगले वर्ष तो आएगी । यह रांड का नाम नहीं लेना है, यह शनोजी का नाम भी नहीं लेना है, यहाँ साथी ही किसको रहना है ? मजदूरी तो मिलती ही है, ससुरी, ईसका निवंश जाय, किसी को दुश्मन नहीं करना है, ईसा मन के साथ तालमेल करता रहा, यह सीधा हुआ धीरे से आँखें खोलकर किसी का नाम नहीं देना है, रामापीर, माँ मेलडी सब बातें करते है, ईस प्रकार ही चलने देना है भला करना रामापीर ..." पृ.२१९ (गिद्ध)

ईसा को मनोर, शनाजी खत्म कर देते है, एक दलित युवान की हालत क्या होती है, इस उपन्यास में स्पष्ट दिखाई देता है । वह डर से दिवाली के साथ आडे संबंध नहीं रखता, फिर भी शनोजी के कारण ईसा ने गलती नहीं की है, गलती शनोजी ने की है, उसने पाप किया है, फिरभी ईसा मावजी भा के हाथों से बेहोश हो जाता है । बच जाता है पर उसके पिता मावजी भा के विरुद्ध फरियाद नहीं कर सकते, गाँव दुश्मन होगा उसका डर है, दूसरी तरफ शनोजी ने दिवाली के साथ यह काम किया है ऐसा भी ईसा कह नहीं सकता क्योंकि ईसा को वह जान से मार देता, धर्मसंकट में आ जाता है, गाँववाले ईधर-उधर की बातें करते है । उसमें से ईसा के नाम से किसी ने बात फैलाई कि शनोजी-दिवाली के बीच आडे संबंध है, उसी कारण शनोजी ईसा को खत्म करना चाहता है । ईसा को बैगार के बहाने परगाँव ले जाकर खत्म कर देते है । एक दलित की यही विड़म्बना है, किसी को स्पष्ट शब्दों में कह नहीं सकता ।

भलाभा गिद्ध उपन्यास का एक सशक्त पात्र है, श्री दलपत चौहानने उपन्यास लिखने की एक नई पद्धति प्रस्तुत की है, एक वृद्ध अपने भूतकाल को याद करके कहानी कहता है, यह वृद्ध ही भला-भलाभा है ।

उपन्यास का प्रारंभ ही भलाभा की क्रिया प्रक्रिया से होता है । ईसा कथा का नायक भले ही हो, पर भलाभा ईसा की पीढी का भला ईसा की व्यथा का साक्षी नहीं है, पर ईसा पर आई मुश्केलियाँ से पूरा ज्ञात है । ईसा को जानता है, ईसा के दुश्मनों को जानता है, इसीलिए ईसा की कथा कहता है । प्रारंभ में दिखाई देता भला-उन्नीसवें अध्याय में दिखाई देता है और अंत में भलाभा में परिवर्तित होता है । अपने समय के चाँदी के रुपये, मिट्टी के घर, छूआछूत की तुलना करते है । ढेढ को मारना चिंटी के मारने के बराबर, मजदूरी, बेगार, परिस्थिति को याद करते है ।

दिवाली गिद्ध उपन्यास की नायिका है, वह मावजीभा चौधरी की एकलौती बेटी है । शादी छोटी सी उम्र में बदला पद्धति के कारण

हो गई थी, गौना अभी नहीं हुआ था ।

ईसा और दिवाली बचपन से दोस्त बन गये थे । बडी होने पर ईच्छाएँ बडी हो गई थी और शारीरिक तृप्ति के लिए ईसा, शनोजी, मंगोजी के साथ नखरें करती थी । दिवाली खूबसुरत थी, ठुमक ठुमक नाचती हुई मोरनी जैसी, पूरा जंगल, खेत को सिर पर लेती कोयल जैसी, उसके रंगढंग अलग थे । ओढनी का आँचल सिर पर नहीं रखती थी, पल्लू हवा में फरफर होता था, लीले रंग की चोली, लाल घाघर में कठपूतली नाचती हो ऐसी लगती थी ।

दिवाली कामासक्त थी, ईसा को प्यार करती थी, पर उस प्रेम में वासना का विकार ज्यादा था, दो तीन प्रसंग खेत में हुए वह देखनीय है (पृ.४२) (स्नान करते समय की स्थिति), बैल को पानी पिलाने के वक्त तो एकबार - "ईसा तू क्यों दूश्मन हुआ है । अब दूर कहाँ तक रहेगा ? एक दिन तुमको..."

दिवाली 'गिद्ध' उपन्यास का प्राण है । दिवाली के कारण ही ईसा की हत्या होती है । शनोजी और ईसा दोनों को वह नचाती है । दिवाली कभी शनोजी के साथ तो कभी ईसा के साथ आँखें पटपटाती रहती, शनाजी तो खुलेआम कहता कि ऐश करना है ! दोनो के बीच बैर दिवाली के कारण होता है ।

शनाजी का पात्र उपन्यास में एक खलनायक की भूमिका अदा करता है । शनाजी और ईसा मावजीभा के यहाँ साथी के रुप में रहता है वह कोली (ठाकुर) है, उसी कारण हल जोतने का काम वह करता है, जब कि अन्य काम ईसा कर लेता है । वह शराब भी पी लेता है, तंबाखू तो पीता ही है । वह दिवाली के साथ ऐश करता है । दिवाली जब दोनो को नचाती है, तो शनोजी को क्रोध आता है, इर्ष्या होती है कि ढेढ में क्या है ? तू उसकी ओर देखती है ।

शनाजी आलसी और शराब पीनेवाला था, काम करता तब भूत की तरह करता और सो जाता तो लगता कि कुंभकर्ण है । स्वयं माँस खाता है और ईसा के प्रति धृणा करता है । दिवाली के साथ आडे

संबंध रखता है और समय मिलने पर शारीरिक संबंध तृप्त करता है, और शाहुकार ही रहता है । ईसा देव की झपट में आ गया ऐसा सुनता है तो खुश होता है । और स्वयं बंधुआ मजदुर के रुप में रहता नहीं है । गाँव में बात फैलाता है कि ईसा की मावजी भाने पिटाई की है ।

गाँव में शनाजी-दिवाली के आडे संबंध की बात फैल जाती है तो शनाजी को ईसा पर वहम् होता है और ईसा बो खत्म कर देता है ।

श्री दलपत चौहान की नारी भावना सचमुच प्रसंशनीय है । दिवाली का चरित्र बहुत सफल रहा है । लेखकने उच्चवर्ग की स्त्री है, इसलिए ऐसा चरित्र बनाय, यह बात गलत है, क्योंकि दलित स्त्रीयों को भी उसने छोडा नहीं है, जो गलत है उसी बात को गलत, और सही बात को सही प्रस्तुत की है । दिवाली, शनाजी, इसा या मंगाजी के प्रति खुश है, तो दलित स्त्रियों में भी ऐसा चरित्र मिल जाता है ।

'ससुर के सभी ऐसे ! कौन सी बाई बहुत अच्छी है ? कोई मेले में तो कोई खेत में, फिसलते ही जीव ही ऐसा '' (पृ.२९२ गिद्ध)

उपन्यास में संवाद का महत्त्व कम है, फिर भी संवाद के माध्यम से ही लेखक पाठकों को कथा, पात्रों का परिचय, उद्देश्य करवाता है । इसीलिए संवाद की आवश्यकता है । संवाद के उत्कृष्ट उदाहरण गिद्ध उपन्यास में जरुर मिल जाते है

- दिवाली और ईसा के संवाद जिसमें दिवाली अपनी प्यास मिटाने को कहती है ।

दिवाली- बैल की प्यास मिटी न ! (ईसाने उत्तर नहीं दिया)

दिवाली- मूँह में मूँग भरे है, इस प्रकार गाल फूलाएँ है ? (दिवाली क्रोधित थी)

ईसा - हाँ (उतना बोलकर ईसा फिर गया ।)

दिवाली- मैं कहती हूँ, उसका कुछ नहीं !

ईसा - क्या कहती है ?

दिवाली - बैल की प्यास बूझी ना ?

ईसा - हाँ... !

दिवाली- मानव बेचारा कब से प्यासा है ? उसका कुछ नहीं (पृ.४५,गिद्ध)

छूआछूत का भेद दिखाने के लिए जो संवाद दिवाली और फूलीमाँ के बीच है वह -(दिवाली छोटी उम्र की लड़की है)

दिवा ! ध्यान रखना ! हाँ ! यह ईसा को छूना नहीं

क्यों बाई !

छूआछूत लगेगी ! उसको नहीं छूते ?

ईसा और भला के बीच संवाद दिवाली के बारे में-

भला- क्या हुआ ?

ईसा- कहने जैसा नहीं... ।

भला - तब तो मैं समज गया.. कहीं फिसल गया.. ?

ईसा - मुझे तो डर लगता है !

भला - कौन है ?

ईसा -दिवा ?

भला -मावजी भा की ..!

ईसा- हाँ मैं अकेला नहीं...

भला - दूसरे को तो मैं पेहचानता हूँ तू निकल जा

ईसा - मैं गिरा नहीं हूँ

भला -तू गिरना नहीं, ढेढ का कोई मालिक नहीं, सब डराएँगें सिर्फ काम करना ... हाँ

उसमें भला की समझ प्रकट होती है, कि ढेढ है, इसीलिए दिवाली के पीछे फिरना नहीं, दूसरे लोग कुछ भी कर सकते है, हम नहीं ।

'गिद्ध' उपन्यास में साबरकांठा, महेसाना जिल्ले की आँचलिक भाषा का प्रयोग किया है । शुद्ध गुजराती भाषा और यह महेसाना की आँचलिक बोली में अंतर जरुर है ।

ग्रामीण बोली उसके परिवेश के साथ प्रयुक्त की है । इसीलिए

ग्राम्य जीवन के पात्र जीवंत लगते है । हमको दलित समाज के अनुभव भगत का परिचय मिलता है ।

उपन्यास में भैंस की चिरफाड, दलितों का जीवन, दलित और उच्चवर्ग के बीच संघर्ष का यथोचित वर्णन किया गया है ।

श्री गिरीश रोहितने अपने संशोधनग्रंथ में 'गिद्ध' को बोलचाल की भाषा तथा आँचल विशेष की बोली में लिखा गया उपन्यास कहा है । लोकगीत, देशज शब्द कहावतें- मुहावरों की भरमार दिखाई देती है, जो लोकजीवन को कथा में बडी सहजता से जीवंत बनाये रखते है । पात्रानुकुल भाषा व बोली पात्रों के चरित्र के साथ-साथ उनके सहज विकास व सच्चाई को भी खोलती है । इसके चलते पात्र बनावटी या गढ़े हुए न लगकर स्वयं-स्फूर्त दिखाई पड़ते है ।[1]

दलपत चौहान के उपन्यास मलक ओर गिद्ध में भी उत्तर गुजरात के बुनकर चमारो में बोली जाने वाली विशिष्ट बोली का सहज प्रयोग हुआ है । भाषा जहाँ एक ओर पात्रों का वर्गीय चरित्र खोलने में सक्षम है वहीं दूसरी और पात्रों की मन:स्थितियों की गुत्थियाँ भी सुलझाती है । दलित पात्रों में पुरानी पीढी के बुजुर्गो में समझौते का स्वर है तो नयी पीढी के विद्रोही युवकों में आक्रोश का चेतनात्मक स्वर भी.न.वणकर का कहना है कि उत्तरगुजरात के बुनकरों की भाषा, आंचलिक, बोली, कहावतें, मुहावरें, लोकोक्तियाँ का लेखक ने ठीक-ठीक प्रयोग किया है । वाक्यो में ध्वन्यात्मकता और मार्मिकता देखने को मिलती है । इसलिए आँचलिक जीवन शैली ज्यादा जीवंत बनती है । तो 'गिद्ध' के बारे में जयंत गाडीत का कहना है कि बोली का आँचलिक रुप कृति को आस्वाद्य बनाता है ।[2]

ईसा की मानसिक अवस्था का चित्रण देखनीय है । 'आज दिवाली जल्दी घास लेने आई थी । और मेड की ओर घास लेने जाने के बजाय कुए पर आई, यह उसको पसंद नहीं आया । खेत में ये दो इन्सान के सिवा कोई नहीं था । इसा को आज की दिवाली कडवी जहर जैसी लगी ।

भूँडी तू इस प्रकार क्यों करती हे ? यह हम समजते नहीं ऐसा नहीं है । तुम को जवानी काट रही है । हमको नहीं काटती होगी! और धीरे से सिर हिलाकर बैलो की पकड रखी रस्सी की ओर देखकर बबडा-

'क्या करे ? यह तो बोल से संजोग टालते है, वरना तो सब चाँदनी में !

मृत पशु को लेने जाने के समय दलितों की रीतभात, रहन-सहन, करशनभा की दृष्टांतकथा, भैंस चिरकाड की प्रक्रिया, पशु के माँस के टूकडे, माँस बाँटने की प्रक्रिया आदि बातों का लेखकने सूक्ष्म दृष्टि से वर्णन किया है ।

'गिद्ध' उपन्यास में गिद्ध एक प्रतिक बनकर आया है । यह दलित समाज अंदर से बिलकुल बिमार, गिद्ध की तरह जीता है । ऐसी दयाजनक स्थिति उसको पसंद आ गई है, चमार समाज की यह स्थिति को गिद्ध के प्रतिक द्वारा पूरे जतन से लेखक ने चित्रित की है ।

'साले, गिद्ध लगते है । ससुर के साथरी को छोड़कर कोई जगह जाते नहीं है । कहीं कुछ मर गया तो भूत की तरह हाजिर होते है ! पशु की, बू पशु खाऊ !'

'ससुर के सब माला में छिप गये, मैं अकेला पशु लेने दौडा, साले गिद्ध तो पहुँच गये होगे ?'

'गिद्ध' चमार जाति का प्रतीक है, लेकिन उच्चवर्ग के लोग जैसे मावजीभा, लवजी, वेलजी, शनाजी में भी गिद्धवृत्ति देखने को मिलती है । ईसा के ऊपर फिरते 'गिद्ध' में भलाभा को गिद्ध ही नहीं, शनाजी, वेलजी, मावजी भा ही दिखाई देते है । दलित समाज के ज्यादा दु:खी बनाने में, उसको पीछे ही रहने देने के लिए उच्चवर्ग की गिद्धवृत्ति ही कारणभूत है ।

दलित साहित्य में दलित लोगों की अपनी भाषा, मुहावरें, ग्राम्य आंचलिक शब्दों के द्वारा एक अलग भाषाबल और साहित्य जगत उभरता है । भविष्य में दलित शब्दकोश, शब्दावलि का निर्माण होगा ।

कहावतें

- समय समय बलवान, -फाटक पर चढा इसीलिए चोर
- सौलह आनी सच-काले अक्षर भैंस बराबर,
- कौए का हँसना और मेढक की जान जाय
- मटके के मूँह पर कपडा बाँध सकते है, गाँव के मूँह पर नहीं ।
- मियाँ की बिल्ली चूप, बाड सूने बाड का काँटा सूने
- भिल की दोस्ती नहीं और मुसलमान की मश्करी नहीं

मुहावरें

- लाल-पीला हो जाना, मूँह में मूँग भरे है । (पृ.१५२)
- तीरछी नजर, दिवार को भी कान होते है ।
- बात छप्पर पे चढ गई, कूए में मूँह धोकर आना
- काँटवाले पेड में हाथ डाला, ईसने तो लंका जला दी (पृ.१७६)
- वाली का क्रोध धीरे धीरे ऊपर चढता था ।
- मन खट्टा हो गया (पृ.२०४) - ठंडे प्रहर में ठंडी बात (पृ.२२३)
- जैसा लकडा, वैसी छाल (पृ.२५३) - दाढ में बोलना

संगीतात्मक शब्द

- होला बोलता था ... प्रभु तु.... प्रभु तु...
- फुररर, पो....ओ...भा...आ...पोओ...बाप्पो...बाप्पो....(पृ.३७)
- सडसडाट, खडखडाट (पृ.४५) - टूक....टूक....टूक (पृ.५१)
- दडबड दडबड (पृ.११८)
- कूत्ता कहता है.... ले ....वऊ .... ऊ.....ले... वऊऊ ऊ
- लोमडी कहती है....ले ...उकोले.... (पृ.१३३)
- आँखे झगमग, झगमग, -धडाधड...धडाधड... बें ...बें... (पृ.२५६)
- फड... फड....फड....फफडाट.... (पृ.३१२)

गीत

- काना कहता था, मेले में आऐंगे....

  काना सचमुच झूठा

  काना मेले में तुम क्यों न आये... (पृ.७७)

भजन -

प्राणीया भजी लेने किरतार

आ तो सपनु रे संसार

उत्साहवर्धक शब्द

अच्छा खासा ढोर मर गया

हईसो

साथरी पे उसे खींच लाओ

हईसो

कलेजा कलेजा मुझको दे... दो

हईसो (पृ.१३१)

अलंकार, उपमा -

सुबह तो जाने अभी रुमजुम...

जैसे की ठुमक ठुमक नाचती मोरनी.. (पृ.४२)

-काम करता तब भूत की तरह करता, और सो जाता तब लगता जैसे कुभकर्ण ... (पृ.५३)

रांड (स्त्री) बनकर नाचता तब अप्सरा जैसा लगता (१२१)

मृत भैंस जैसे की एक छोटी काली शीला (पृ.१३१)

- मेरे फूल जैसे लडके को मारा

- तवा गरम हो, ऐसा शरीर गरम हुआ है

दलित जाति के खास शब्द

मृत पशु का माँस, बाही, कोंकणी, कूँड, आंह (माँस में से निकला तैल) (डांगरी, मोगरी, बुक्का (कलेजा), गुल्ली, भेजो,)

रस :

ईसा और दिवाली की बातचीत में शृंगाररस

हास्यरस

शिवा महाराज को माँस देते है, तब वह दो शब्द (आशिष) बोलता है- तुम्हारा भला हो, हमको देते है ब्राह्मण समजकर, तुम्हारे घर

लक्ष्मी ज्यादा हो, तुम्हारे राज अमर रहो ! यह सुनकर सब हँसते है, क्योंकि हमारे राज में तो मांस उगता है ।

वीररस

उसके तो राई राई जितने टूकडे कर दूँ तो भी, क्रोध शांत नहीं होगा । शनाजी के प्रति ईसा का क्रोधिक स्वरुप

करुण रस

ईसा की बिमारी का प्रसंग

प्रतिक

- लोमडी- (शनोजी) चतुराई का प्रतीक है, जो स्वयं दोषित है, पर दूसरे को फँसा देता है, काली काली परछाई मावजीभा, वेलजी, लवजी, का प्रतीक है, गिद्ध की तरह टूट पडते है ।
- गिद्ध शिर्षक ही प्रतीकात्मक है ।

गिद्ध में दलपत चौहान ने शोषक व शोषितदोनों वर्गो केलिए गिद्धों को प्रतीकात्मक रुप में लिया है । जैसे सवर्ण जमींदार दलितों का आर्थिक-सामाजिक-नैतिक शोषण करनेवाले (नोंचनेवाले) गिद्ध है । तो दूसरी और मरे हुए मवेशियों के मांस पर जिन्दा रहनेवाली नीरिह जाति (चमार) को भी उन्होंने गिद्ध के रुप में देखा है । यानी दोनों समाज को प्रतीकात्मक रुप में उजागर किया है । फिर भी यहाँ ध्यान रहे कि एक का अहंकार उसे गिद्ध बनाता है तो दूसरे की लाचारी-विवशता उसे गिद्ध होने पर मजबूर करती है ।[१]

'गिद्ध' की भाषा भी प्रतीकात्मक है ।

बिम्ब

गिद्ध उपनयास में लेखक ने एक बँधुआ दलित मजदूर को किस प्रकार मौत के घाट उतार दिया जाता है इसका वास्तविक वर्णन कथावाचक, भला द्वारा किया है । पूरी कथा भलाभा नामक वृद्ध की स्मृतियों के जरिए हमारे सामने आती है, जो कई प्रकार के बिम्बों से ओत-प्रोत है । दृश्य ध्वनि बिम्ब का एक उदाहरण- 'कोला अभी भी जी

रहा है । कैसे मरे, सब यहाँ भुगतना पडेगा । अभी तो कीडे पडेंगें' (पृ.२३) यहाँ अत्याचारी शनोजी ठाकोर, जो वृद्ध हो गया है, बिमार है, पर मर नहीं रहा है, इसके कृत्यों पर भलो अपनी व्यथा इस प्रकार प्रकट करता है ।[२]

अंधेरे में करशनभा की बात से जंगल हँस पडा (पृ.१२१) (मुँह में हुक्के का पानी आ जाना (प्रतीक) आडे संबंध की बात शनोजी के मन में)

उपन्यास में व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग ज्यादातर हुआ है । दिवाली अपनी प्यास बुजाने के लिए बैल की प्यास का सहारा लेती है ।

गिद्ध उपन्यास का समय आजादी से पूर्व का है । गाँव में दलितों की स्थिति, आंतरिक संघर्ष, छूआछूत, बैगार, दलित मजदूर, बँधुआ, मजदुर की स्थिति, पंचायत, दलित नारी, उच्च समाज की नारी की स्थिति पर प्रकाश डाला है ।

यह उपन्यास का महत्त्व दलितों का व्यवसाय, मृतपशु की चिरफाड आदि के वर्णन के कारण ओर भी बढ गया है ।

मृत पशु को खींचकर ले जाने की क्रिया दलितो का अतीत है, ये बात सच है, किन्तु यह करुणस्थिति खडी करने में सामाजिक व्यवस्था जिम्मेदार है ।

मृत पशु को लेने के लिए जाते वक्त दलितों की रीतभात, रहन-सहन, करशनभा की दृष्टांतकथा, भैंस चिरफाड करने की क्रिया, पशु के मांस के हिस्से, यह सब बातों का सूक्ष्मदृष्टि से प्रयोजन किया है ।यह चित्रण देने के पीछे लेखक का उद्देश्य स्पष्ट दिखाई देता है । एक बीमार समाज का सामाजिक व्यवस्था का स्वीकार है । मृत पशु खींचना, उसका माँस खाना, ये सब दलित जीवन जीने का साधन समजकर जीते है । ऐसी दयनीय स्थिति में जीते इन्सान को कोई विद्रोह की ईच्छा नहीं है । ऐसी स्थिति में से मुक्ति लेने हेतु यह प्रजा अब तक तैयार नहीं है । विद्रोह संघर्ष या क्रान्ति जैसे शस्त्रो के उपयोग से ये सब अनजान है । जागृति प्राप्त करने का कोई विचार किया नहीं है । सिर्फ मृत पशु खींचना,

चिरफाड करना, माँस खाना, ये सब उनकी आदत है एक गिद्ध की तरह । लेखक यहाँ एक अनुभवी की दृष्टि से सब वर्णन करता है । छोटी-छोटी बातें देकर ऐसे प्रसंग में भी दलितों के हर्ष, उल्लास को भी निरुपीत किया है ।

गाँवो में लोग मुहल्ले में रहते है । मुहल्ला जाति के अनुसार होता है- मियोर मुहल्ला, बूनकर, सेनमा, भंगी, ठाकुर, रबारी, आदि मुहल्ले थे । तालाब के किनारे रामापीर का मंदिर, पहले जहाँ मिट्टी के घर थे, आज ईटो के घर है ।मेहमान आये तब गुड की चाय बनाना आदि गाँव का यथार्थ चित्रण है ।

दलित मुहल्ले का वर्णन रमण के घर के आगे आवल का ढग, बबूल के छल्के, रमण जूते. बनाता है । वीरा के घर चमडा था, मखीयाँ उड रही थी, सुखी हुए फिर भी यह धंधा छूटता नहीं है । पैसे मिलते है । बिल्ली, कुत्ते आदि चमडे को ले जाते है, इसीलिए आँगन में ही रखना पड़ता है ।

खेत में रहेनवाले बंधुआ मजदुर का जीवन यथार्थ है । रात में नींद नही आती, तारे देखकर समय का अंदाजा, सुबह में चार बजे उठ जाते है ।

दलित लोग सवर्ण व्यक्ति न होने के कारण कूँड में से पानी हाथोंहाथ लेकर खुश होते है । जमींदार और बँधुआ मजदूर के बीच मालिक-गुलाम जैसा व्यवहार होता है, पंछी को मुक्त देखकर अपनी हालत पर सोचते है । गिद्ध को देखकर भी दलित लोग लाभ होगा ऐसा सोचकर मन ही मन आनंद से झुम उठते है ।

बँधुआ मजदुर के यथार्थ जीवन को व्यक्त करने का प्रयास किया है । जमींदार शोषण करता है, उनका वर्णन गाँव के दलित लोगों की भाषा में किया है । गोदान उपन्यास की तरह खेतमजदूर या दो-पाँच बीघे जमीनवाला किसान पूरी जिंदगी कर्ज में ही ढोता है । ईसा एक वर्ष के लिए साथी के रुप में रहता है, पर कर्ज के कारण वहाँ ही

दूसरी, तीसरी साल रहना पडता है । जिंदगी ही बँधुआ मजदूर के रुप में र हना पडता है । दिपावली पर हिसाब करने पर कर्ज बाकी ही रहता है ।

दलित लोगों के रहन सहन का वास्तविक दस्तावेज है । किसी स्त्री को बच्चे नहीं होते तो मन्नत ररखते थे, मेलडी माँ, सिकोतर माँ, रामापीर की पूजा करते थे । दलित पुरुष बैगार करते, चमडे के जूते, रस्सी बनाते थे, खेत मजदूर का काम भी करते थे । स्त्रियाँ भी खेत में काम करने जाती थी, दलित लोग अपने घराक का पशु मर जाता तो खुश होते थे । पशु को खींचने के लिए मुहल्लेवाले सब आदमी जाते थे, चिरफाड का काम करके माँस, हड्डीयाँ, कलेजा के हिस्से को बाँटकर अपने घर ले जाते थे, माँस खाने में लिज्जत आती थी, पशु मर जाता तो मुहल्ले में उत्सव जैसा माहौल हो जाता था । जिंदगी में ओर कोई आनंद ही नहीं था, इसीलिए आनंद सिर्फ उसी प्रकार प्रकट करते थे, पशु के माँस को सुखाते थे, उनको कोंकणी कहते थे, और जब खाना बनाने के लिए कुछ नहीं होता तब उनको बनाकर खाते थे । चमार, बुनकर, सेनमा, ब्राह्मण, भंगी आदि दलित जाति के लोग बाँटकर माँस खाते थे । माँस न मिलने पर झगडा करते थे ।

उच्चवर्ग के लोग दलित लोगों को अछूत रखते थे, ईसा मावजी भा का बंधुआ मजदूर था, पर हल जोत नहीं सकता था, घर में भी नहीं जा सकता था, उसका बरतन भी अलग रहता था । ऊँचे हाथ से इसमें खाना देते थे । दलित और सवर्ण दोनों छोटी उम्र में शादी करते थे, गौना अठारह, बीस उम्र होती तब ही करते थे ।

दलित लोग मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे, मंदिर के नजदीक भी जाये तो पिटाई करते थे । तालाब में से पानी पी नहीं सकते थे । दलितों के ब्राह्मण दलितों की पूजाविधि का काम, बाल, दाढी भी वही करते थे । मेला का महत्त्व ज्यादा था, थके-हारे लोग मेले में अपना आनंद व्यक्त करते थे । हुक्का, सभी लोग पीते थे । उच्चवर्ग में शादी बदलापद्धति में होती थी । सभी लोगो को अपना घर इज्जतदार है, उसका गर्व होता था किन्तु पाप का घडा जब फूटता तब ही मालुम

होता कि अपनी इज्जत क्या है ? गाँव में पढा-लिखा नहीं था, सब अनपढ थे, इसीलिए अज्ञानता ज्यादा थी ।

मृत पशु खींचने के लिए सारे युवान जाते थे, आते-जाते वक्त मृत पशु का इतिहास खोलकर आनंद करते थे । रात में तूरी जाति के लोग नाटक (खेल) करते थे, तुरी का खाना, रहने का प्रबंध दलित मुहल्लेवाले ही करते थे । थोडी सी कमी रहने पर गाँव गाँव वही बात करते थे ।

मृत पशु के समाचार से मुहल्ले में उत्सव जैसा वातावरण हो जाता था, सभी काम में झडप आ जाती थी । माँस का क्या करना ? दूसरे को देना या नहीं ? माँस बाँटने में भी झगडा होता था । सेनमा, बूनकर, भंगी, चमार, ब्राह्मण (दलित) जाति के लोग माँस खाते थे । कोली, वाघरी, जाति के लोग भी रात में छुपकर चमार के घर से भीख माँगकर माँस ले जाते थे और दिन में दलितों से छूआछूत रखते थे । माँस के कारण माँस को उबालने के कारण मुहल्ले में विशिष्ट गंध आती थी ।

किसी को कोई परेशानी, बिमारी होती तो मुहल्लेवाले इकट्ठे हो जाते थे, देवी-देवता में पूरा विश्वास करते थे । शारीरिक दर्द मे भी मन्नत रखते थे । दलित लोग गाँववालो से डरते थे, ईसा की पिटाई मावजीभा ने की, फिर भी करुणता यह है कि कुछ बोल नहीं पाते और मुहल्लेवाले पर कठिनाई आयेगी ऐसा सोचकर फरियाद भी नहीं करते, शनोजी दुश्मन होगा, गाँववाले-मुहल्लेवाले दुश्मन होंगे, ऐसा सोचकर फरियाद नहीं करते पर अपना बेटा देव की हवा में (झपट में) आ गया ऐसा सबको कहते है ।

दलितों में भी वीरता होती है, उपन्यास में यह संकेत किया है, कि ईसाने एक ही बाही से झरख को गिरा दिया था, पर उच्चवर्गने उनकी वीरता को दबा दिया है ।

ईसा, घेमर, वाली मावजी भा की मानसिक स्थिति का वर्णन भी उल्लेखनीय है ।

'मुखिया ने रुपये लिये होंगे और पोलीस पटेल ने बकरा खाया होगा, इसलिए दोनो चुप है '(पृ.२३३) यह हमारी पंचायत का नतीजा है, जिसके पास पद है, जो समाज की रक्षा करते है, न्याय करते है, वही पैसे लेकर मूँह बंद रखते है । दलित समाज अंधश्रद्धा में ज्यादा महत्त्व देता है, इसीलिए देव का नाम सुनते ही कोई बोलता नहीं है ।

बडी मन्नत, भूवा का खेल, बकरा काटना, माँस खाना, ये अंधश्रद्धा को स्पष्ट करके नये समाज की संकल्पना पर जोर दिया है ।

बेगार के बहाने दलितों का शोषण, दलितों की हत्या, यह दलितों की विड़म्बना है, आज तक उनका उपाय नहीं सोचा गया, दलित उन पीडा से बाहर निकलना चाहते नहीं है, उच्चवर्ग भी दलितों को कुचलना छोड़ते नहीं है ।

दलितों के आंतरिक संघर्ष भी कम नहीं है, मुहल्ले में झगडा होता ही रहता था, दो-तीन दिन शांति रहती तो भी अच्छा लगता था, स्त्रियाँ भी आडे संबंध रखती थी, कोई खेत में तो कोई मेले में रपटी हुई थी ।

दलितो में भी ऊँच-नीच का भेद कितना भयंकर रुप में है यह दिखना गिद्ध उपन्यास की श्रेष्ठ उपलब्धि है । हिन्दु धर्म की वर्ण व्यवस्था (जाति व्यवस्था) कितनी गलत है- एक जाति दूसरी जाति को नीच मानती है, उनका शोषण करती है, यह दूसरी जाति तीसरी जाति का शोषण करती है, तीसरी जाति चौथी जाति का शोषण करती है, यह चौथी जाति में भी कई निम्न जातियाँ है, जो एक दूसरे का शोषण करती है। उनका वास्तविक स्वरुप की एक झलक 'गिद्ध' उपन्यास में वर्णित है ।

गिद्ध की मूल समस्या-शोषित तथा मजदुर (दलित) के आर्थिक सामाजिक विडंबना की समस्या है । गुजरात दलित जीवन का प्रत्यक्ष दर्शन करवाता है । गुजरात ग्रामीण जीवन के विविध पक्षों को उपस्थित कर दलित ग्रामीण स्थिति का उद्घाटन करना है । दलित और उच्चजाति के संघर्ष को निरुपित किया है । पर खुलेआम हाथापाई नहीं है, यहाँ तो कोई देखे नहीं, इस प्रकार पिटाई करते है, खत्म कर देते है, स्वयं दोष

करते है, दूसरे पर आरोप लगाते है, दलितो को ही पिटते है । गुलाम जैसा व्यवहार करते है । गाँव में गुंडाराज है, पोलिस पटेल, मुखिया रिश्वत लेकर मुँह बंद रखते है ।

'गिद्ध' उपन्यासकार की सबसे बडी उपलब्धि संभवत: यह है कि प्रत्यक्ष रुप से सामाजिक संघर्ष नहीं दिखाया है, यहाँ तो चोरी छुपी से दलितो को हैरान करतेहै, पिटते है, खत्म करते है, इसीलिए लेखक का उद्देश्य यह भी है कि यह समाज व्यवस्था का ढाँचा तोडा जाय, सदियो से जो परंपरा आ रही है वह गलत है, बैगार के बहाने दलितों का शोषण करते है, ठाकुर गुनाह करके भाग जाता है और दलित की पिटाई होती है । पटेल और ठाकुर दोनों ही मिलकर दलितो की पिटाई करते है । दलितो की हालत सुपारी जैसी होती है । यह वर्णन करना लेखक का उद्देश्य तो है पर उसमें सुधार की ओर दृष्टि फैंकते है ।

गिद्ध दु:खी बंधुआ मजदूर की करुणकथा है । कृति यथार्थवादी है । सभी पात्र यथार्थ के पूजक है, एक दो पात्र आदर्श है, ईसा के जीवन की वास्तविकता को प्रकट करके गुजरात दलित समाज के व्यक्ति की वेदना को साहित्य में प्रवेश करवाया है ।

'गिद्ध' का विषय और वातावरण आजादी पूर्व का है । मृत भैंस को खींचकर ले आने की घटना दलितों का अतीत है, बात सच है, किन्तु यह करुण स्थिति खडी करने में सामाजिक व्यवस्था कारणभूत है । मृत भैंस को ले आनो के समय दलितों की रीतभात रहन-सहन, करशनभा की दृष्टांतकथा, भैंस चिरफाड की क्रिया, पशु के माँस के हिस्से, हास्य-करुणरस पूर्ण माँस की बातें, लेखकने स्पष्ट रुप में लिखा है । यह चित्रण देने के पीछे लेखक का उद्देश्य स्पष्ट रुप में प्रकट होता है । यह एक बिमार समाज का सामाजिक व्यवस्था का स्वीकार है । मृत पशु को घिसटना और उसका माँस खाना आदि दलित रोजी रोटी का साधन मानकर जिंदगी ढोते है । ऐसी दयनीय स्थिति में जीते इन्सान को विद्रोह की कोई इच्छा नहीं है । ऐसी स्थिति में से मुक्ति प्राप्त करने के लिए यह

प्रजा अभी तक तैयार नहीं है । विद्रोह, संघर्ष या क्रान्ति जैसे शस्त्र के उपयोग से वह बिलकुल अनजान है ।

दलितो को कोई आनंद ही नहीं है इसीलिए वह अपने घराक का पशु मर जाता है, तो माँस मिलेगा, चमडा मिलेगा, माँस छ-सात दिन चलेगा ऐसा सोचकर आनंद करते है । मुहल्लेवाले भी माँस मिलेगा अतः आनंद में उत्सव मनाते है । लेखक ने स्वयं उपन्यास के संदर्भ में लिखा है-

“यह उपन्यास मेरे अपनों के लिए है, समाज के लिए है, अनुज के लिए है, सहृदयी पाठक और शुभचिंतको के लिए है । विशेष कहूँ तो हमारी काली-कारमी बाजु (साईड) का इतिहास है । हमको जो अंधकार में ढकेल दिया, उसकी कालाश का यह छोटा सा कौन है । यह कोना का रुप रंग तुम को काला न लगे, उनकी यातनाएँ या दुःख दर्द तुम को अपने न लगें । क्योंकि यह समय के कारण थोडा दुर गया है गाँव दलित समाज के लिए कभी भी रम्य नहीं था ।”

यह कथा में कम पात्र है, किन्तु आज भी गाँवो में कहीं न कहीं जीते है, मरता है कोई बंधुआ मजदूर (बोन्डेड लेबर) या तोकोई खेतमजदूर (लेन्डलेस लेबर) मध्ययुगीन बैगार क्रम, मानव के प्रति तिरस्कार, छूआछूत जैसा है वैसा ही दुर्गधयुक्त गाँव को उसमें से अभी मार्ग नहीं मिला । छोटे समूह सबसे ज्यादा अत्याचारी होते है, बिलकुल छोटे को कुचल देते हे । उसमें से निकलने का कोई मार्ग तो ढूँढना ही पडेगा न ? मैने मार्ग ढूँढा नहीं है, किन्तु एक बोन्डेड लेबर-साथी की जिन्दगी का बयान किया है । यह ईसा जिदगी से हाथ धो बैठता है कोई राव नहीं, फरियाद नहीं, केवल याद, याद और वेदना.... (पृ.१६, गिद्ध)

गिद्ध उपन्यास का उद्देश्य इस प्रकार है-

(१) दलित व्यवसाय का यथार्थ चित्रण

दलितों का व्यवसाय मृत पशु को उठाकर ले जाना, उसकी चिरफाड करना, माँस खाना, चमडे के रस्सी, जूते आदि बनाना है ।

समाज द्वारा यह व्यवसाय थोपा गया है, दलित जाति ने यह व्यवसाय स्वीकार किया है । उसका यथार्थ वर्णन गिद्ध उपन्यास में मिल जाता है ।

(२) **दलित बँधुआ मजदुर के जीवन का चित्रण**

गिद्ध उपन्यास की मुख्य कथा बँधुआ मजदूर ईसा पर है । साथी को (मजदुर को) खाना कम देते है, काम ज्यादा करवाते है, रात-दिन खेत में ही रहना पड़ता है, पंद्रह दिन कभी कभी महिना होने पर या कोई बुलाने आये तब ही घर देखने को मिलता है । घर आने पर भी ज्यादा रुकने पर कडवे बोल सेहने पडते है । थोडे पैसे लेन पर एकबार (मजदुर) साथी के रुप में रहना पड़ता है, पर (कर्ज) के कारण उसके घर ही बँधुआ मजदूर के रुप में जिन्दगी बितती है । गुलाम जैसा व्यवहार सेहना पड़ता है ।

(३) **शिक्षा का महत्त्व समजाना**

लेखक का उद्देश्य यह भी है कि पढे-लिखे आदमी की ही किंमत है, समाज में बोल सकता है, समज सकता है । ईसा और सारा दलित मूहल्ला निरक्षर है, गाँव के बाहर की दुनिया देखी नहीं है इसीलिए कोई विकास नहीं होता, गुलामी सेहनी पड़ती है ।

(४) **व्यवसाय स्वीकार, शोषण स्वीकार, सेहने की परम्परा**

उपन्यास का एक पात्र-करशनभा के शब्दो में-

'रणछोड तू व्यर्थ बोलता है, वाघरी मूर्गी देता है, हरतानजी माँस बनाता है, वो मफा कुम्हार मटका बैंगार में ही देता है । भाई गाँव का काम, बैगार तो बैगार किन्तु गाँव की'

भला अपनी जाति के प्रति बोलता है-

मेरे नीले घोडे के असवार, तुमको भी हमारी दया नहीं आई, तूने ऐसा ईन्सान बनाया, साला ! भगवान कैसा, हमें गिद्ध जैसे बनाये, बैगार, पशु चिरफाड करके खाना बाद में वही कहता है-

चमडे की रस्सी, जूते, अर्थात् दाने ही दाने ...इन बातों से लगता है कि दलितों ने यह व्यवसाय स्वीकार कर लिया है, गलत भी लगता है, फिर भी छोडना नहीं चाहते ।

ईसा के शब्दों में बँधुआ मजदुर का शोषण

“चार बजे उठकर भैंस, बैल को घास-पानी देना, तबेला साफ करना, खेत की बाड अच्छी रखना, घर और खेत की आवन-जावन, पूरे दिन -रात खेत में ही रहना और देते है खाने में कटोरी...”

मावजीभा के शब्दो में काम नहीं करना है तो निकल जाओ, पैसे वापिस कर दो...

दलित लोगों ने यह व्यवसाय, शोषण स्वीकार कर लिया है, सेहने की उनको आदत हो गई है । लेखक यह आदत को दूर करना चाहते है और उच्चजाति की यह अमानवीयता को भी दिखाते है कि तुम जो कर रहे हो, वह गलत काम है ।

(५) दलित समाज का आंतरिक संघर्ष

गिद्ध उपन्यास की यह श्रेष्ठ उपलब्धि है कि दलित समाज कई जाति में विभाजित है, जो अपने आपको एक अलग जाति मानते है, दूसरी जाति को नीच मानते है ।

जैसे कि ब्राह्मण (दलित), बूनकर, चमार से उच्च मानते है, चमार, सेनमा जाति से उच्च मानते है, सेनमा जाति भंगी (वाल्मिकी) जाति से उच्च मानते है, यह उँच-नीच का भेद उनको खाई में धकेलने का काम करता है ।

लेखक यहाँ स्पष्ट रुप से कहना चाहते है कि जहाँ तक दलित एक नहीं होगे तब तक दलितो का उद्धार नहीं है, हम संगठित होगे तब दूसरी जातिवाले हम से डरेंगे, और हमारा स्वीकार करेंगे, समाज में विद्रोह करना है तो संगठित होना जरुरी है, गुजरात में हर दलित समाज में यह स्पष्ट रुप में दिखाई देता है, आज तक उनमें कोई परिवर्तन नहीं आया है ।

(६) बैगार का गलत परिणाम

बैगार अर्थात् बिन पैसे की मजदूरी, मजदूरी करने पर पैसे मिलते है पर बैगार में पैसे नहीं मिलते । उपन्यास में बैगार के कारण ईसा की मृत्यु होती है, गाँव में किसी ने बात फैलाई कि शनोजी दिवाली

के आडे संबंध की बात ईसाने कहीं है इसीलिए शनाजी ईसा को खत्म करना चाहता है, ढेढ को मारना चिंटी मारने के बराबर । शनाजी का मित्र मनोरजी ईसा को बैगार लेकर परगाँव ले जाता है । रास्ते में मनोरजी और शनोजी मिलकर ईसा को खतम कर देते है । दलित लोग एक शब्द भी बोल नहीं पाते, हिम्मत नहीं है, आदत है सेहने की ।

(७) बालविवाह एक गलत परम्परा

छोटी उम्र में शादी और अठारह, बीस की उम्र होने पर गौना यह समाज की परम्परा है । लडका-लडकी स्वयं पसंद नहीं कर सकते, माता-पिता अपनी इच्छानुसार संबंध करते है और कई गलत परिणाम युवा पीढी को सेहने पडते है । दिवाली उसका परिणाम है । जो आजकल प्रथाबंद हो रही है ।

(८) दलित-सवर्ण समाज के बीच संघर्ष किन्तु मार्ग भिन्न

'गिद्ध' उपन्यास में दो जाति के बीच संघर्ष जरुर दिखाया है, पर दूसरी कृतियों से मार्ग भिन्न है । प्रत्यक्ष हाथापाई दिखाई नहीं है, हाँ जरुर मावजी भा, और उनके पुत्र ईसा की पिटाई करते है, वह भी दलित है, इसीलिए नहीं पर अपनी लडकी की इज्जत पर हाथ डाला है इसीलिए ईसा की जगह दूसरा कोई होता तो, भी वह पिटाई अवश्य करते ये बात ओर है कि ईसा की जगह शनोजी ने इज्जत पर हाथ डाला है ।

मनोरजी शनोजी मिलकर ईसा को खत्म कर देते है । लेकिन प्रत्यक्ष हाथा-पाई दिखाई नहीं है । दलित लोग उच्चलोग से जरुर डरते है, इसी कारण तो घेमर फरियाद भी नहीं लिखवाता, मुहल्लेवालो में से धुलाभा जैसे बूढे व्यक्ति कहते है फिर भी घेमर मुहल्लेवाले पर आनेवाली आपत्ति के कारण फरियाद भी नहीं लिखवाता ।

'गिद्ध' उपन्यास का शिर्षक यथायोग्य है । दलित समाज को गिद्ध के रुप में दिखाया गया है । गिद्ध मृत पशु को खाता है, दलित लोग भी मृत पशु को ही खाते है, यह समाज अंदर से बिलकुल खोखला गिद्ध की तरह जीता है । ऐसी स्थिति उसे पसंद आ गई है । मियोर

(चमार) समाज की यह स्थिति को गिद्ध के प्रतिक द्वारा ही चित्रित की है ।

'साले गिद्ध' ही लगते है । ससुर के, साथरी छोड़कर कहीं जाते नहीं ! कहीं पशु मर गया, तब भूत की तरह हाजिर ! पशु की गंध पशु खाऊँ ।'

'ससुर के सब घोंसले में गुम हो गये, मैं अकेला पशु लेने दौडा, साले गिद्ध तो पहूँच गये होंगे ।'

उसकी आँखों में अंधेरा छा गया, उसने दो हाथ से जकड़कर बाही को पकडा, अब उसे कुछ दिखाई नहीं देता था, पेड, पत्ते, बाड, खेत, सब एकाएक मिट गया, उसकी चारों ओर गाढ अंधकार, लंबी-छोटी, राती-पीली परछाई की आभास जैसे की भूत, अनेक चेहरे, कई आकार, लंबे लंबे तिव्र प्रकाशवाले शर्ट पहने हुए फव्लाग (कदम) लगाते उसकी ओर दौड़कर आते थे ।

यह जोर से बबडा, बीजली का झटका लगा हो, इस प्रकार कूदा, उसकी आँखें लाल हो गई, उसको सब गोल गोल चक्कर चक्कर फिरता हो ऐसा लगा । उसने बाही को जकड़कर पकडा, सिर झटक से हिलाया, कमर से झुककर खड्डे की ओर देखा, लाश की चारों और गिद्ध ही गिद्ध... अभी दूसरे गिद्ध उतर रहे थे, पँख की फफडाट...फड...फड...फफडाट

गिद्ध मियोर जाति का प्रतीक है । वह मावजीभा, लवजी, वेलजी शनोजी सब में परिवर्तित होता रहता है । ईसा की लाश पर घूमते गिद्ध में भला को यह सब गिद्ध स्वरुप में ही दिखाई देते है । लंबे लंबे नाखून से किसी को खाते हो ऐसे लगते है, ईसा की लाश को कुरेदते गिद्ध के सिवा ईसा की यह स्थिति करनेवाले मावजीभा, शनोजी सब सही रुप में गिद्ध है । दलित-पीड़ित समाज को ज्यादा ही गरीब, दु:खी बनाने के पीछे उच्चवर्ग समाज की गिद्धवृत्ति ही कारणभूत है । भला को देता यह आभास (संकेत) यथोचित है, क्योंकि गिद्ध जैसी दशा में जीते दलित के सामने सवर्णो की गिद्धवृत्ति की टक्कर ही सामाजिक दूषण खडी करती है ।

आधुनिकता के बारे में गिद्ध उपन्यास दर्शनीय है । आजादी के साठ साल बाद भी हमारा देश कई समस्याओं में उलजा हुआ है । आजादी से पहले हमारे देशवासीयोंने कई रंगीन स्वप्न देखे थे । कुछ स्वप्न साकार हुए है, कुछ बिखर भी गए है ।

गिद्ध उपन्यास की कथा आजादी से पूर्व की है, तब दलित समाज की स्थिति गिद्ध जैसी थी, पशु का माँस खाना, बैगार करना उच्चवर्ग के यहाँ बँधुआ मजदूर केरुप में रहना शोषण स्वीकार, बालविवाह, निरक्षरता, अंधश्रद्धा में विश्वास, उच्चवर्ग का कोई व्यक्ति दलित व्यक्ति का खून कर दें तो भी दलित समुदाय चूप रहता, ये सब गिद्ध उपन्यास में दिखाया है, कि दलित समुदाय की स्थिति वैसी थी, मिट्टी के घर, छूआछूत का भेद, दलित व्यक्ति की मृत्यु चिंटी मारने के बराबर थी ।

आज के संदर्भ में देखा जाय तो दलितों की स्थिति में सुधार अवश्य् है, लेकिन उच्चवर्ग में जो सुधार है वैसा नहीं, शिक्षा के कारण कुछ दलितों को सरकारी नौकरी मिली है, अपने अधिकार के प्रति जाग्रत हुआ है । मिट्टी के घर की जगह ईटवाले घर बने है, सरकार की ओर से भी घर बनाए है । सभी के घर नहीं, लेकिन सौ में से दो-तीन तो जरुर बने है ।दलित मुहल्लो में थोडा परिवर्तन जरुर है। घार में गंदकी कम है, चमडे का काम बाहर ही करते है, चमडे को बेच देते है। मृत पशु को उठाकर ही ले आते है, दो पहियोंवाली गाडी का उपयोग भी कोई जगह करते है । माँस भी खाते है । बैगारकी समस्या ७५ प्रतिशत मिट गई है । कहीं कहीं देखने को मिलती है, वह तो जबरदस्ती उच्चवर्गवाले अपनी ताकात से काम करवाते है । बँधुआ मजदुर मे रुप में रहना पडता है, पर वैसी की वैसी हालत नहीं है । कटोरे में ही आज भी खाना देते है, कम देते है, उच्चवर्ग के लोग पूरी फसल को घर ले जाते है, बाद में बँधुआ मजदूर को हिस्सा देते है, वो फसल के प्रमाण में जो मिलना चाहिए उनसे कम ही देते है ।

थोडे थोडे पैसे देते है, व्याज लेते है, वर्ष के अंत में गिनती

करन पर थोडे पैसे बाकी ही रहते है । इस प्रकार साथी के रुप में रहकर शोषण स्वीकार कर लेते है ।

दलित वर्ग के हरेक व्यक्ति के पास जमीन नहीं है, दूसरा कोई व्यवसाय नहीं है, व्यवसाय करना चाहते है, तो छूआछूत का भेद बीच में आता है, इसीलिए बंधुआ मजदूर के रुप में रहना पड़ता है । मजदूरी करनी पड़ती है ।

बालविवाह की समस्या ८० प्रतिशत कम हो गई है । निरक्षरता की समस्या कम हुई है, ज्यादातर दलित व्यक्ति पढते है, ७० प्रतिशत से ज्यादा दलित पढे लिखे होंगे, स्त्रियों में ५० से ६० प्रतिशत पढी लिखी जरुर है । छूआछूत का भेद स्कूल में अवश्य कम हुआ है, लेकिन जहाँ उच्चवर्ग का शोषण है, पक्कड है वहाँ पढाई अवश्य कम है । प्रयत्न करने पर उनमें सफलता अवश्य मिलेगी । पढकर नौकरी सब को नहीं मिलती, यह नई समस्या है नौकरी मिलने पर किराये का मकान का प्रश्न साथ में उच्चवर्ग और दलितवर्ग की खाई भी प्रश्न खडा करती है ।

अंधश्रद्धा आज भी है, लेकिन डॉक्टरी उपाय आज भी उपलब्ध है, फिर भी दलित वर्ग अंधश्रद्धा में जरुर विश्वास रखता है ।

गिद्ध उपन्यास की तरह दलित व्यक्ति की हत्या हो जाय तो पुलिस अवश्य् मदद करती है, पर उच्चवर्ग का प्रभुत्व है, वहाँ दलितों की समस्या वैसी की वैसी है । पुलिस अेफ.आई.आर भी नहीं लिखती, तो आगे क्या ? अखबारों में प्रद्रह दिन में एक घटना दलित हत्या अवश्य देखने को मिलती है, अखबार के पन्नो में नही आनेवाली घटनाएँ तो ज्यादा है । उच्चवर्ग के हाथ बहुत लंबे होते है, इसीलिए उसका कुछ नहीं होता, दलित स्त्रीयाँ की हालत में भी थोडा सुधार अवश्य है, दलित नारी पढी-लिखी है, नौकरी भी करने लगी है । प्राईवेट में भी नौकरी करती है, वहाँ शारीरिक यातनाएँ जरुर भुगतनी पड़ती है, खेतमजदूरी, या मजदूरी में भी वही समस्या है । फिर भी दलित नारी मन में दु:ख दबाकर, आँसू छुपाकर कार्यरत है । दलित नारी बलात्कार का भोग भी बनती है, उच्चवर्ग की जोहुकमी, ताकत के कारण दलित लोगों का कोई सुनता नहीं

है, या इतना डर होता है कि वे कुछ बोल नहीं पाते । समाज का डर भी उतना ही होता है ।

दलितों में आंतरिक संघर्ष गिद्ध उपन्यास में जो दिखाया है, वही का वही है । गाँव में बूनकर, ब्राह्मण, चमार, भंगी, सेनमा जाति के मुहल्ले अलग अलग होते है, कोई भी काम एक हाथ से नहीं करते, सबकी अपनी अपनी मान्यताएँ है । गाँव में दो भाई में मनमैल नहीं है, दो भाई एक है तो उनकी पत्नीयाँ उसे एकसाथ बैठने नहीं देती । परिवार में कोई न कोई समस्या जरुर उसे एकसाथ बैठने नहीं देता ।

दलितों में व्यसन का पूरजोश में प्रचार हुआ है, आज के दलित तंबाखूँ, चाय, शराब में फँसे हुए है, गिद्ध में सिर्फ हुक्का दिखाया है, पर आजकाल गुटखा, बीडीयाँ, शराब में सब पागल है । गिद्ध उपन्यास में जो समस्या व्यसन के कारण है वह आज भी विद्यमान है ।

ईसा जैसा व्यक्ति दलित समाज में आज भी मिल सकता है, साठ साल बाद भी दलित लोग उच्चवर्ग के मायाजाल में फँसे हुए है । उनमें से निकलने का कोई मार्ग नहीं है । ईसा की हत्या कर देते है, उसी तरह आज भी हत्या कर सकते है, उस समय से कम हत्याएँ होती है, ये बात जरुर है, लेकिन हत्याएँ अवश्य होती है ।

श्री भरत महेता ने 'गिद्ध' को दलित चेतना की विवेचनात्मक वास्तववादी दृष्टिकोण की प्रस्तुति में विभाजित की है । रंगदर्शीयना से दूर रहकर दलपत चौहान कथानायक ईसा के कारण सवर्णो के प्रभुत्व में जीते दलित समाज की वास्तविकता प्रगट कर सके है ! 'मलक' के बाद यह रचना में अपनी सर्जकता का विकासशील परिमाण ही दलपत चौहानने पूरा नहीं किया, कन्तु साथ साथ दलित उपन्यास कैसा हो उसका एक मॉडेल आंगलियात के बाद दिया है ।[3]

श्री हरीश मंगलम् 'मलक' और 'गिद्ध' के बारे में लिखते हे- मलक और गिद्ध में लेखक कहेलाती सवर्ण जाति की ओर से होनेवाले अमानवीय अत्याचारों को केन्द्र में रखकर मनुवादी वर्णाश्रम प्रेरित समाजरचना पर प्रहार करते है । एक उच्च तो दूसरा नीच । एक स्पृश्य तो दूसरा

अस्पृश्य । फिर तो बात ही कहाँ रही ? सवर्ण जाति की स्त्री के साथ दलित जाति का पुरुष नैसर्गिक संबंध भी रख नहीं सकता ! मलक और गिद्ध दोनों उपन्यास के विषय के बीज-दलित पात्र का बिनदलित स्त्री के प्रति का आकर्षण मूल में है । उसके गेहरे प्रत्याघात दलित समाज की हिजरत, आग, अत्याचार में परिवर्तित होती है ।इक्कीसवी सदी में भी ऐसी परिस्थिति में फर्क नहीं हुआ । दलितो की परावलंबी, जिंदगी, रुढियाँ, व्यथा, पीडा, मृत भैस को ले जाने का परंपरित- ठोक दिया हुआ अस्वच्छ धंधा, पशु की चिरफाड, माँस के हिस्से आदि दृश्य हूबहू हुआ है । गिद्ध में भला के पात्र का मनोजगत का Psychological Realm जीवंत बना है । प्रवीण गढवी मृत भैंस की चिरफाड के दृश्य के बारे में कहते है कि ‘पन्नालाल ने तो यह घटना कालु की आँख से दूर से ही देखी है । दलपत चौहानने तो नजदीकी से देखी है । मृत भैंस का माँसाहार आनंदायक घटना नहीं, किन्तु भूख और गरीबाई एक बडी मजबूरी है । यह मजबूरी का सूक्ष्म निर्वहरण हुआ है । यह छोटी-सी घटना नहीं है ’

श्री प्रवीण गढवी ‘गिद्ध’ उपन्यास के बारे में अपना मत प्रकटकरते हुए लिखते है- उपन्यास के हर पन्ने में लोकजीवन और वन्य जीवन जीवंत स्वरुप में प्रगट होता रहा है । एक तरफ मानवसमाज की असमानता, अन्याय की विरुपता है तो दूसरी और प्रकृति की अप्रतिम सुंदरता है । ईसा को दिवाली का चेहरा आकाश के तारे जैसा सुंदर झगमगता लगता है । श्री दलपत चौहान सीमान्त के पूष्प और वृक्षों के नाम जानते है । हरएक को आत्मीय मित्र की तरह पेहचानते है । नाम देकर बुलाते है । प्रकृति का यह नखशिख जीव, उपन्यास के द्वारा यह सब प्रकट करता है । उदाहरण देने बैठे तो पन्ने कम पडेंगे ’

श्री गिरीशकुमार रोहितने अपने संशोधन ग्रंथ में ‘गिद्ध’ का विवेचन किया है । जो निम्नलिखित है ।

दलित सम्मान, स्वाभिमान, स्वाधिकार व अस्मिता की पहचान

‘गिद्ध’ के दलितो में अस्मिता व स्वाभिमान के दर्शन अवश्य

होते है । लेकिन उधर आर्थिक विपन्नता और सामाजिक विषमता के आगे खमान स्वाधिकार की भावना में परिवर्तित न होकर संघर्षहीन बन जाते है । क्योंकि यह जाति अभी तक इसके लिए अभ्यस्त नहीं है ।

शोषण, अन्याय, अत्याचार को वे लोग कर्मफल मानकर भोगते अवश्य आये है । उनमें चेतना नहीं है, अस्मिता की पहचान नहीं है, ऐसा नहीं है, उनका अवरोध है केवल उनकी मजबूरी ।

गिद्ध उपन्यास में स्वानुभव की प्राामाणिक अभिव्यक्ति हुई है। यथार्थ केसाथ कल्पना और आदर्श के विचार अपनी सोद्दृश्यकता के साथ लिए है । इसीलिए वे लेखक दलितों के विद्रोह को इसकी अन्तिम परिणति तक पहुँचाने में सक्षम दिखाई पड़ते हैं ।

संदर्भ

मलक :

१. मूलक -पृ.१६७

२. वही पृ.

३. वही-पृ.

४. दलित साहित्य- पृ.४३ (भी.न.वणकर)

५. प्रत्यायन पृ.११९

६. शब्दसृष्टि- पृ.१९०-अंक-११ नवम्बर-२००३

७. वही, पृ.२०८

८. गुजराती साहित्य में दलित कलम पृ.११

९. हयाती मार्च,जून-२०००, पृ.१२०

१०. शब्दसृष्टि- ऑगस्ट-९५, पृ.४० (रमेश र.दवे)

११. मलक-प्रस्तावना- पृ.४ रघुवीर चौधरी

१२. दलित चेतना केन्द्रित (हिन्दी) गुजराती उपन्यास, पृ.३२५ (गिरीश रोहित)

१३. अनुसंधान- पृ.८५ (भी.न.वणकर)

१४. प्रत्यायन- पृ.११३

१५. हयाती, मार्च, जून-२००० पृ.१२१

१६. दलित चेतना के हि.गु.उपन्यास पृ.२८५ (गिरीश रोहित)

गिद्ध :

१७. दलित साहित्य पृ.४३ (भी.न.वणकर)

१८. द.चेतना केन्द्रित हि.गु.उपन्यास पृ-३२१ (गीरीश रोहित)

१९. वही, पृ.३२५

२०. विदित- पृ.२८

२१. द.चेतना केन्द्रित हि.गु.उपन्यास, पृ.३३१

२२. वही, पृ.३३०

२३. शब्दसृष्टि अंक -११, नवम्बर- २००३, पृ.१९४

२४. वही, पृ.२०८

२५. हयाती-मार्च, जून-२०००-पृ.१४६

२६. द.चेतना केन्द्रित हि.गु.उपन्यास, पृ.२८३

अध्याय-६
जोसेफ मेकवान व्यक्तित्व, एवम् कृतित्व

नाम : जोसेफ मेकवान

जन्म स्थल: त्रणोल (गुजरात)

अभ्यास : ए.म.ए, बी.एड्. हिन्दी सेवक, साहित्य रत्न

प्रकाशित कृतियाँ : उपन्यास : (१) मारी परणेतर (२) दादाना देशमां (३) मनखानी मिरात (४) आ जन्म अपराध (५) मावतर (६) बीज त्रीजना तेज (७) आंगलियात (८) लक्ष्मणनी अग्नि परीक्षा (९) अमर चांदलो (१०) दरिया

कहानी संग्रह : (१) साधनानी आराधना (२) आगलो (३) पन्नाभाभी (४) फरी आंबा महोरे

रेखाचित्र : (१) व्यथानां वितक (२) जनमजलां (३) मारी भिल्लु (४) न ये चांद होगा (५) वहालनां वलखां (६) मानव होवानी यंत्रणा (७) जीवतरना नाटारंग (८) रानां रखोपां

निबंध : व्यतीतनी वाटे

चिंतन : पगलां प्रभुनां

संपादन : अनामतनी आंधी

ईनाम : आंगलियात उपन्यास को केन्द्रीय साहित्य अकादमी का एवोर्ड, के.एम.मुनशी सेन्टेनरी एवोर्ड, गुजरात साहित्य अकादमी प्रथम पारितोषिक, दलित साहित्य अकादमी- दिल्ही का आंबेडकर एवोर्ड, ओल इन्डिया ईन्दिरा ओपन युनिवर्सिटी- आंध्र, पूरे साहित्य के लिए एवोर्ड आदि मिले है ।

- 'साधनानी आराधना' कहानी संग्रह को गुजरात साहित्य अकादमी का दुसरा पुरस्कार ।
- 'जनमजलां' रेखाचित्र को काकासाहेब कालेलकर ऐवोर्ड (गुजरात साहित्य परिषद)
- 'मारी भिल्लु' रेखाचित्र को गुजरात साहित्य अकादमी पुरस्कार
- 'लक्ष्मणनी अग्निपरीक्षा' को माटुंगा गार्डन गृप की ओर से श्रेष्ठ उपन्यास का चंद्रक
- 'मानव होवानी यंत्रणा' रेखाचित्रो को गुजरात साहित्य अकादमी का दुसरा पुरस्कार

जोसेफ मेकवान व्यक्तित्व, एवम् कृतित्व :

जोसेफ मेकवान का नाम गुजराती दलित साहित्य में एवम् गुजराती साहित्य में सर्वोच्च स्थान पर है । उन्होंने विपुल मात्रा में साहित्य सर्जन किया है । किन्तु पेहले वह कर्मशील है । समाज सुधारक है । सामाजिक विषमताओं के सामने आग प्रज्जवलित करते और ज्वलनशील शैली में विद्रोह जगाते लेखक है । सामाजिक अन्याय के सामने मुकाबला करना उनको प्रिय है, चरोतर प्रदेश में ही नहीं, किन्तु समग्र गुजरात के किसी भी कोने में दलितों-शोषितों- पीड़ितों के ऊपर अत्याचार हुए हो तो वे तुरंत पहुँच जाते है । इन्सानियत के कार्यो में आगे रहते जोसेफ भाई हृदयसे अति-संवेदनशील और भावनाशील है । उनके पूरे साहित्य में चरोतर प्रदेश का पूरा परिवेश खडा हुआ है । आंचलिक आलेखन में जोसेफभाई ईक्का साबित हुए है । उनकी भाषा की पकड अच्छे अच्छे इन्सान को भी हलबला देती है । ग्रामीण भाषा पर का प्रभुत्व लेखक को हस्तगत है, और इसीलिये ही उनकी कृतियाँ जनहृदय तक पहुँच पायी है ।

उनकी सारी कृतियों में से पार होते इस शक्तिशाली लेखक का हमें चमत्कार होता है । ज्यादातर कृतियाँ किसी न किसी ईनाम, पुरस्कार चंद्रक से सन्मानित की गई है । सामाजिक जागृति के लिए लेखक आये दिन वक्तव्य देने जाते है । देश में और यु.के., यु.एस.ए. में भी कई जगहों पर भी वक्तव्य दिये हैं । ऐसे दलित साहित्य के साथ साथ दलित साहित्य आंदोलन में भी शुरु से ही सक्रिय रहे है । उनकी सुख्यात कृतियाँ आंगलियात (उपन्यास) और व्यथानां वीतक (रेखाचित्र) को विद्वान साहित्यकारों ने अकल्प्य आवकार दिया है । जाने की नई ही सृष्टि का एहसास करते हुए मंजु झवेरी ने लिखा है कि “जोसेफ मेकवान का ‘आंगलियात’ उपन्यास पढने से जाने कि मैं एक अलग ही सृष्टि में प्रवेश पाई, जिसका प्रवेशद्वार आज तक मेरे लिए बंद था ।” चरोतर की बूनकर जाति में बोली जाती चरोतरी बोली जिसके कई शब्दों के अर्थ भी मालूम नहीं है । अरे! स्वयं ‘आंगलियात’ शब्द का अर्थ भी आप को देर से समज में आता है-

फिर भी वो पढने में रसभंग तो नहीं करता, लेकिन कई बार एकविधता और शब्दों में सिरकती शिष्ट भाषा के मुकाबले में प्रफूल्लित लगती है । लेखक की सहजस्फूर्ति और थोडे में बहुत कुछ कहने की भाषाभिव्यक्ति यह उपन्यास की विशेषता है । साहित्य में चीनी सूत्र लेकर कहें तो Let hundred flowers bloom । एक के पास से Craft के प्रति सभानता पानी होती है तो दूसरे के पास से जीवन को समजने की उसे समग्रता में पानेकी अपार कुतुहलता पानी होती है एक को छोड़कर के दूसरे अंतिम छोर तक पहुँच जायेगे तो जनता के संस्कार सिंचन के नाम पे या सिर्फ भाषाकर्म के नाम पे निम्नकोटी का साहित्य रचता जायेगा । (फार्बस त्रैमासिक: जुलाई ८६) सुभाषादवे ने अपनी सजीवसृष्टि का वास्तव के साथ वास्तव सामग्री के साथ का हृदय का संबंध पात्रनिरुपण में एवम् प्रसंगो की परिकल्पना में हम अनुभव कर सकते है, उसमें लेखक की कलाभिव्यक्ति की सिद्धि के दर्शन होते है । धवल महेता ने आंगलियात को गुजराती साहित्य चौथी लहर कहकर सच्चे अर्थ में प्रशंसा की है । गुजराती साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार उमाशंकर जोशी ने जोसेफ मेकवान से ला मिझ़ारेबल जैसी रचना जन्मे-ऐसी अपेक्षा की है ।

व्यथाना वीतक में कुल उन्नीस रेखाचित्रों का समावेश है, रेखाचित्र जो इतने धबकते निरुपे हो तो वो एक स्वामी आनन्द और दूसरे जोसेफ मेकवान ने । स्वामी आनन्द के रेखाचित्रो से जोसेफ मेकवान के रेखाचित्र बढिया है । गुजराती भीरु विवेचक उनके बारे में ठहाके से बोल नहीं सकते । हर्षद देसाई And in the genre of character sketches his work and stand, comparison with the work of former swami anand, one of the new Pathos of the सर्जक को संबोधकर हर्षद पंड्याने थोडे में बहुत कुछ कहते लिखा है कि आप के गद्य में गजवेल की ताकत है । तो माघ महिने की आबोहवा भी । शब्दों की तीनों शक्तियों का उसमें दर्शन होता है । उसमें भी लक्षणा और ध्वन्यार्थ ज्यादा घनीभूत होते दिखाई देते है । (व्यथाना वितक-२१ नं. ४) नगद वास्तविकता ना कलामय रेखाचित्रो शिर्षक लेख में हरीश मंगलम् ने शुभ संकेत किया है कि

गुजराती दलित साहित्य की मुश्किल से होती त्रिज्या को जोसेफ मेकवान का सर्जक कर्म व्यास में परिवर्तित करने में जरुर फलदायी होगा । सर्जक नो नगद वास्तविकता ना कलामय रेखाचित्रों देकर कलाकृति की व्याख्या देने की खींचातानी में डूबे विवेचकवर्ग को दो घडी स्तब्ध कर दिया है । (विदित : पृ.८१)

जोसेफ मेकवान गुजरात दलित साहित्य अकादमी के प्रमुख की जिम्मेदारी भी निभा रहे है । उनको जानने-पहचान ने के लिए भावक को उनके सारे साहित्य में से पार होना होगा ।आंगलियात मध्य गुजरात के दलितों का दस्तावेज है । सवर्ण जाति और दलित जाति के बीच संघर्ष है, उनका यथार्थ निरुपण करने का प्रयास सफल हुआ है । उच्चवर्ग के लेखक अपने वर्ग की अच्छाई पर ध्यान देते है, खुशामत करते है, उनकी ये बुराई है, ऐसा नहीं कहते, वह तो काका कालेलकर की तरह उच्चवर्ग की प्रजा इतनी शांत है कि ऐसा काम ये नहीं कर सकती । लेकिन गाँवो में जाओ तो आज भी २००५-०६ में भी दलित वर्ग सिर ऊँचा करके नहीं जी सकता, वह तो कुचला हुआ है, उसकी फरियाद न तो पुलिस, नेता, अधिकारी, या समाज सुधारक ने सुनी है, न सुनेगा..क्योंकि ये सब तो उच्चवर्ग के नौकर है... उसे तो है जो चलता है वह चलने दो, उनको तो दलितों के जलने से उसमें अपनी रोटी पकाने में मजा आती है ।

आंगलियात एक दलित ने अपनी आँखों से देखी कहानी का शब्दरुप है । अनुभव, सेहना, कुछ कर नहीं सकने की असमर्थता ये दलितों का जीवन है, उसका छोटा सा अंश है । आंगलियात दलितों का महाकाव्य है ।

प्रथम अध्याय में कथा का नायक (टीहा) बुनने के लिए बैठा है, वालजी (टीहा का मित्र) बुनने के लिए आता है जिसकी कंकु के साथ तीन साल पहले शादी हुई थी, भवानचाचा की सलाह थी कि "जो कर्म किये उसके पूण्य साथ में गये पीछे की क्रिया दिखावा" यह स्वीकार करके टीहाने माँ-बाप की बारहवें की क्रिया नहीं की थी, और समाज के लोग संबंधी सब दुश्मन हुए थे ।टीहा चर्चास्पद बना था,

युवानों को थोडा बहुत अच्छा भी लगा था ।

टीहा और वालजी बडे बाजार को छोड़कर शिलापर छोटे बाजार में कपडे के व्यापार के लिए जाते है । दोनों आपस में बाते करते है.. पानी गाँव में भर गया तब पाँच दिन के बाद टेकरी पर से नीचे उतरे थे, बिमारी का उपद्रव हो गया, दवाई, कपडे, बरतन, सब रणछोड डेलेवाला खा गया, दलित बुजुर्ग गये तो गाँव की सफाई, मूर्त-कुत्ते, बिल्लीयाँ खिंचवाई और कुछ नहीं दिया । टीन के पतरे धर्मशाला पर लगवा दिये, जीवन यहाँ नर्क जैसा है ।

कपडे के व्यापार में टीहा अव्वल नंबर पे था, इतनी उम्र में तो काफी इज्जत जमाई थी । शीलापर में सारा माल बेच दिया था, सिर्फ दो चद्दर की हराजी करता था, उसी समय लड़की के मटके को फोड़कर पत्थर टीहा के हाथ में लगता है, लड़की नालायक लड़के को गाली देती है... दूसरे लड़के हँसते है । टीहा उस लड़के की पिटाई करता है, मुखियाँ दोनों को छुडवाता है, मामला बढ जाता है टीहा को पत्थर लगता है, मुखिया सब शांत कर देता है । टीहा और वालजी दलित मुहल्ले में जाते है, कोई सहारा नहीं देता, अस्सी घर दलित के पच्चीस घर पटेल के थे लेकिन पटेल दबोचने थे, ठाकुर भी पटेल के आश्रित थे। मेठी की माँ आश्रय देती है और कहती है तुम ही मर्द हो यहाँ तो कोई सामना नहीं करेगा । मुखिया टीहा को चौक में बुलवाता है ।

पटेलों ने टीहा को पकडने के लिए बारैया जाति के लोगो को पैसे दिये, सब रास्ते पर चौकी करते थे, पटेल की पिटाई करे ये कैसे सेह लिया जाय ? मुखिया के चौक में बैठना पडा, पटेल तो टीहा को खत्म करना ही चाहते थे । किन्तु मुखियाने धमकाये, और टीहा न जाये तो दलित मुहल्ले को जला दे ऐसी परिस्थिति हो गयी थी ।

आज तक मटके हीं नहीं, खेतो में हाथ भी पकडे थे, गौना के अगले दिन इज्जत लूँटी थी, और दलित जाति ने ये सेह लिया था ।

टीहा चौक में आता है, सवा सो रुपये दंड मुखिया माँगता है, चद्दरो में से तलवार हाथ में लेकर चेतावनी देता है, और भागता है,

सामने जो आता है उसको डराता है, मटके फोड़नेवाले की अच्छी तरह पिटाई करता है, मेठी की शादी केरडीया [illegible] के साथ हुई थी, वह शराबी, जुगारी था, इसीलिए मेठी गौना नहीं करती थी, तलाक होनेवाला था ।

टीहा के कारण शीलापर में दलित-किसानों के खेतो में नुकशानी करते है, धमकी देते है, रत्नापर के दलितों के साथ व्यवहार रखेंगे तो तालाब में से पानी नहीं भरने देंगे, लड़की के बाप को जाति से बाहर करो, टीहा के पराक्रम को लेकर लोग अैसी तैसी बाते करते है ।

मेठी के कारण मुहल्ले में आफत आई थी, मुँह दिखाने लायक नहीं थी। मजदूरी करने के लिए दलितो को पटेलोने बंद कर दिये थे । शीलापर के पटेल मेठी की इज्जत लूटनेवाले थे, पर मुखिया के कारण ये नहीं हो सका ।

मास्तरने कलेक्टर को बात कही, अरजी दी, पुलिस रणछोड और मुखिया को तेहसिल ले गई, फोजदार ने टीहा, वालजी, मास्तर को बुलाकर कहा जिसका डर लगता हो उसका नाम दे दो, शीलापर के पटेलो पर फरीयाद लिखाते है, मेठीने मुहल्ले के विरुद्ध जाकर नानजी के सामने फरियाद लिखवाई । पुलिस मनजी, नानजी की पिटाई करते है, कोंग्रेस के नेता ने पुलिस विरुद्ध जोहुकमी का ठराव किया और टीहा को पूछने भी कोई नहीं आया ।

बूढे लोग टीहा ने गलत काम किया ऐसा कहते थे, कीन्तु युवानोंने साथ दिया, पंच बुलाया, रामला की पत्नी और रणछोड के बीच आडे संबंध है, भीखा की बहन भी ऐसी है, पंच न्याय करता है, रामला की बहू को मजदुरी करने पर प्रतिबंध करते है, भीखला की बहन को ससुराल भेजने का तय करते है । मुहल्ले में युवानो केबीच संप होता है किन्तु रामला, भीखला दुश्मन बन जाते है ।

भवानचाचा मेठी का प्रस्ताव लेकर शीलापर जाते है, टीहा ने बैर किया, हीरा अकेला पड गया था, अत: मना करते है, जाति बाहर करने का डर, पटेलो का डर लगता था । फिर भी मेठी का हरण करने

को कहते है । मेठी भी भवानचाचा को कहती है कि पूनम के दिन टीहा मुझे लेने के लिए शीलापर सीमान्त पे आ जाए ।

टीहा पुनम के दिन मेठी को खेतो के रास्ते से लाना चाहता था, लेकिन वालजी गोला की मोटर में लाना चाहता है, एक तरफ टीहा की रक्षा करना, दूसरी और रामला मुहल्ले की बात पटेल को देता था, उसमें वालजी को गहरे भेद दिखाई देते थे ।

वालजी दाना को समझा देता है कि मेठी को किस तरह लाना है, गोला मोटर का मना करता है, क्योंकि उसे पुलिस का डर लगता है । दानजी गोला की मोटर के लिए डेलेवाले को ही कहता है, डेलेवाला चिट्ठी देता है, गोला को वह दे देता है, दाना अनपढ था, गोला फेरे के लिए तैयार हो जाता है, डेलेवाले ने मेघजी को समाचार दे दिया अतः मनजी नानजी को बदला लेने का मौका मिल जाता है, मेठी का हरण करके चूंथिया को देने की योजना बना लेते है, शर्त मुताबिक दानजी और वालजी रत्नापर समान्त पे खडे रहते है, लेकिन मोटर देखे उससे पहले निकल जाती है, मोटर को पकडने के लिए आठ माईल वालजी को दौडना पडता है, थोडी सी दूरी रह जाती है तब स्त्री मोटर मैं बैठती है, अंदर चिल्लाने के बाद आवाज बंद हो जाती है, वालजी मोटर पे चढ जाता है छप्पर पे चढकर गोला को पैर मारता है, तब मनजी वालजी को हेन्डल मारता है, गोला वटवृक्ष के नीचे से मोटर लेता है, डाली वालजी के सिर पे लगती है और लहु से लथबथ नीचे गिरता है, मेठी यह सुनकर मूर्छित हो जाती है गोला सबको केरडीया फूलजी पटेल के यहाँ उतार देता है, खुशला खोंट सबको गाली देता है और मेठी को संभालता है, चूंथिया को मेठी सौंप देता है और धमकी देता है कि तेरा पति है घर छोड़कर अब तू नहीं जा सकती ।

वालजी की मौत के सिलसिले में डेलेवाले को और गोला को हथकडी होती है । टीहा, कंकु होश खो बैठते है, मनजी नानजी को भी हथकडी होते है, खुशला खोंट, और फूलजी पटेल की पिटाई पुलिस करते है ।

वालजी की मृत्यु के सातवें दिन क्रिया में ढाई हजार इन्सान आते है, डेलेवाला कहता है कि दलित संगठित नहीं होगे, वरना सवर्ण जाति को रहने की मुश्केलीयाँ हो जाती, वे एक होंगे उस दिन स्वराज आयेगा, लेकिन स्वराज अपना ही होगा । डेलेवाले के समर्थन में कोग्रेस के नेता गाँव में भाषण करते है दलित जिस तरह जीते थे, उसी तरह जिओ.. सिर पर मत चढने दो उसको तो जला देना चाहिए.. और पटेलो को जागृत रहना चाहिए । लेकिन एक नेता कहता है शांति से रहने की अपिल और डेलेवाले को इसमें पडने की जरुरत नहीं थी, कायदा- कायदा का काम करेगा, गरीबो को मुश्केलियाँ होगी तो गाँव के पैसे से लश्कर रखना पडेगा, गाँव में सन्नाटा छा जाता है । मास्तर ने शोकसभा रखी, किन्तु दोपहर तक तो सब चले जाते है । मनजी, नानजी, गोला को जनमटीप की सजा होतीहै । दिवाली का त्योहार मुहल्ले में नहीं हुआ ।

जीवन की शादी दबदबापूर्ण कंकु की बहन के साथ होती है। डेलेवाला पैसो के बल से नेताओं के संपर्क से १९४२ के आंदोलन में पचास गाँव का प्रतिनिधि बन जाता है, गाडी के ड्राईवर के रुप में रामला हरीजन को रखकर बापु के रास्ते पर चलने का दिखावा करता है। एकदिन डेलेवाला मेघजी को लेकर नडियाद जाता है, रामला ड्राईवर दलित मुहल्ले की हकिकत से अवगत कराता है कि जीवन-मोंघी की शादी, कंकु-दानजी की शादी हो गई, टीहा मेठी को लानेवाला है, मेघजी ये सेह नहीं सका । डेलेवाले ने मेघजी मुखिया बने ऐसे कागज करवाये, मास्तर की ट्रान्सफर करवा देता है । और वकील को मिलकर मेठी उनके पति को मिले ऐसी खुशला खोंट को मिलकर कार्यवाही करता है । वकील के द्वारा चार पंचातिया को नोटीस मिलते ही मेठी के बापु को जकडते है । मेठी सबको कहती है हम कोर्ट में उत्तर देंगे ।

कंकु दाना को मेठी को लेने शीलापर भेजती हे पर मेढी का गौना हो चूका था, रत्नापर से ही किसीने टीहा का नाम लिखकर पत्र लिखा था कि अब तू चूंथा का घर संभालकर खुश हो, मेरी शादी मोंघी के साथ हो गई है । दाना कहता है ये सब गलतकाम रामलाने

किया होगा ! कंकु यह जानकर दुःखी होती है ।

मेठी चूंथा का घर संभालती है, मेहनत से अच्छा घर बना देती है, गेहने बेचकर खेत छूडवाकर खेती, दायन का काम करती है । चूंथा भी व्यसन कम कर देता है । प्रसुति के लिए अपने मायके में जाती है तो फिर से चूंथिया व्यसनी हो जाता है मित्रो के कहने से अब तो मेठी की पीटाई करता है, एक दिन शराब के नशे में मेठी को मारने आता है, निशान चूकने से मिट्टी की कोठी में माथा घुस जाता है, मेढी को भी क्रोध सवार हो जाता है, और चूंथा की पिटाई करती है, लहू से लथबथ चूंथा को छोड़कर अपने भाई के घर आती है, तो वह भी पुलिस के डर से स्वीकार नहीं करता और मेठी पुलिस थाना जाने के लिए निकल जाती है । अकेली जेल में जाने के बजाय कूआँ अच्छा लगता है, पुत्र को दूध पिलाकर अकेली कूए में गिरने जाती है तब टीहा उसका हाथ पकड लेता है । अपने घर ले जाता है, मेठी चूंथिया की स्थिति से अवगत कराती है, टीहा जेल में जाने के लिए भी तैयार हो जाता है ।

बाजार में दुकान रखकर युवानों को रोजगार देना चाहता है, संसार में ध्यान कम देता है । चूंथा जीवित था, और चूंथा का खेत लेनेवाले पर पिटाई का आरोप होता है । मेठी तलाक के बाद ही टीहा के साथ शादी करेगी ऐसा निश्चय व्यक्त करती है ।

चूंथा तलाक नहीं देता, अतः दोनो दर्द की अनुभूति करते है, आधी रात तक अपने अपने घर में काम करते, लेकिन तन से दोनों अलग ही रहते है ।

मुहल्ले में गालियाँ देता है, जीवन उसकी पीटाई करता है लेकिन उसने तो गाडी के काँच तोड दिये और डेलेवाले को हकीकत कह दी, पटेल जीवन को मारने आते है, जीवन चला जाता है, घर पर हमला करते है, कंकु मशाल जलाकर सबको भगाती है, दलित पुरुष तो घर में घूस जाते है, जीवन, टीहा मास्तर को बुलाने बडौदा जाते हे, मास्तर आनन्द, खेडा जाता है लेकिन पुलिस, कलक्टर सहीं उत्तर नहीं देते,

और तीनों के पुलिस में हाजिर होने को कहते है मास्तर कहते है यह डेलेवाले के लंबे हाथ है ।

मास्तर अहमदाबाद जाकर गांधीबापू के साथी को मिलकर डेलेवाले की बात करते है कि गलत हस्ताक्षर करके लोगमत लिया है, बापू के एक कार्यकर ने डेलेवाले के विरुद्ध अरजी भी की है, गरीब वर्ग को यह अन्याय करता है, छप्पर पे चढेगा तो कोग्रेस की इज्जत जायेगी । बापू के साथीने डी.एस.पी. को जानकारी दी कि टीहा, दानजी, जीवन के विरुद्ध कोइ कार्यवाही न करे । डेलेवाले को पक्ष में रखना या नहीं उसकी जाँच पडताल भी शुरु कर देते है ।

डेलेवाला कुशलता से गूनाह में से निकल जाता है, बूनकर मुहल्ले पर हमला किया था, उसके बदले में उपवास करता है, बम्बई से आदर्श नेता का पद मिल जाता है, स्वतंत्रता लेकर अपने गाँव आकर भंगी के साथ बैठकर खाना खाते है, बंबई में प्रधान भी बन जाता है ।

गोकल शाला में होता प्रश्न कि मुझे आंगलियातों कहकर चिढाते है, टीहा उसे समजाता है, मेठीने गोकल के पीछे टीहा का नाम बाप के रुप में लिखावाया था ।

टीहा की वाली के साथ शादी होती है, वाली मेठी और टीहा के संबंध देखकर जलती है, शादी ही क्योंकी ? मेठी दूसरे मुहल्ले में रहेने के लिए चली जाती है, तब गौना होता है । वाली टीहा को समय पर खाना नहीं देती और झगडा करती रहती है ।

चूंथिया की मृत्यु होती है, मेठी विधवा के रुप में रहती है । टीहा के लिए चूंथिया जीवित हो या मृत कोई फर्क नहीं था । वाली झगडा करती है-गोकल की शादी में टीहाने पैसे दिये है, मेरे बेटे के लिए क्या रखा ?

टीहा-वाली के बीच झगडा होता है, बिना खाये ही टीहा बाजार में हराजी करने जाता है । सरपंच (डेलेवाले का भतीजा) दो चद्दर मुफ्त में माँगता है, टीहा नहीं देता अतः सरपंच क्रोध करता है, टीहा ने दो-तीन बार पटेलों का पानी उतार दिया था बैर लेने हेतु सरपंच डंडा

ऊपर उठाता है, खिंचातानी में सरपंच गिर जाता है, दो दांत टूट जाते हे, पटेल के आठ-दस लड़के टीहा की पिटाई करते है, पुलिस भी पिटाई करके थाने के बाहर फेंक देते है ।

अस्पताल में डॉक्टर दवाई नहीं करता, आनंद के फोजदार उमरेठ केस लिखवाने का कहता है । डेलेवाला बम्बई में प्रधान हो गया है, यह फोन करता है की टीहा झगडालु इन्सान है । मिशन के अस्पताल में सारवार करते है किन्तु टीहा की मृत्यु होती है । मास्तर कहते है ये स्वराज है, ऐसे स्वराज की जगह रामराज के लिए कई टीहा, वालजी को बलिदान देना पडेगा ।

टीहा के पीछे मेठी और भवानचाचा की मृत्यु होती है । गाँव से त्रस्त होकर दानजी शहर चला जाता है, गोकल अपना धंधा करता है । टीहा-वाली के दो पुत्र मोहन और मना । मोहन की शादी गोकल ही करता है घर के पैसे मना चोरी करके ले जाता है । वाली अंधी हो जाती है, घर बाँटने में दोनों भाई झघडा करते है, पंच द्वारा मना को घर मिलता है, वह रामला को बेच देता है, मोहन माँ (वाली) को रखने के लिए तैयार नहीं था, मना घूमता फिरता है, तब वाली को गोकल अपने यहाँ आश्रय देता है, रामला के पास से गोकल बाप का घर पैसे लेकर लेना चाहता है तब वह गोकल के आंगलियात कहता है ! तेरे बाप का घर कैसे ?

मोहन अहमदाबाद अपनी माँ को छोड़कर चला जाता है, मास्तर पाँच हजार फिक्स का कागज लेकर आता है तब गोकल वाली के लिए संडास बना रहा था, दूसरे महिने डेलेवाला मंत्री श्री हाईस्कूल बंधवाने की बोली बोलता है तब गोकल, टीसाभाई गोकलभाई परमार के नाम से सात हजार एक रुपया देता है ।

इस तरह आंगलियात में दलित और :उच्चवर्ग के बीच का संघर्ष निरुपित किया है, टीहा, वालजी, दानजी, जीवन जैसे दलित ही मुकाबला करते है, दूसरे तो घर में घूस जाते है, और रामला, भीखला जैसे तो पटेलो को मुहल्ले की हकिकत से अवगत कराते है घर का भेदी

लंका ढाये कहावत को सार्थक करते है, टीहा-मेढी को एक नहीं होने देते और पटेल लोग इन दोनों को दुःख के दर्द में धकेल देते है ।

श्री भरत महेता ने ‘आंगलियात’ को सुखान्त और दलित चेतना की सक्रियता वाली कृति कहा है । ‘आंगलियात’ और ‘आंसु भीनो उजास’ दोनो ऐसी कृति है । ‘आंगलियात’ में कथा के अन्त में टीहा का पुत्र गाँव में बननेवाली हाईस्कूल में पिता के नाम दान करता है । टीहाराम और देवराज के कारण समाज यहाँ सक्रिय हुआ है ।

आंगलियात में खुशला खांट के कारण समाज का आंतरद्धन्ध्व भी लेखक ने खुला किया है । जिसको चाहता था, यह मेठी के कारण टीहा सवर्णो के साथ संघर्ष करता है, मेठी की छेडती टीहा को क्रोधित करती है । क्षत्रिय-पटेल- हरिजनों की पूरी सामाजिकता यह पडकार से हलबली उठती है । यह वलय (भँवर) स्पर्शक्षम बना है । शरीर, पेहनावा, रहन-सहन, बोलचाल के वर्णन में लेखक की पकड ज्यादा है । कृति का उत्तरार्ध फिल्मी बन जाता है । व्यक्तिकथा से समाजकथा तक फैलाते संकेतो को सर्जक ने उत्तरार्ध में छीन लिया है । उसका बचाव करते हुए श्री रघुवीर चौधरी कहते है- वस्तु संकलना को केन्द्र में रखकर समीक्षा करनेवाले अभ्यासीओ को ‘आंगलियात’ के उत्तरार्ध के बारे में प्रश्न करते है । प्रश्न मात्र संकलना का नहीं है । मानव मन का लेखक ने ध्यान नहीं रखा । जो मेठी समग्र संघर्ष के मूल में है वह विधवा बनकर अकेले टीहा के पास में लेखक ने सात-सात वर्ष तक रखी है । फिर भी नेरेटर कहता है- ‘शरीर की भूखने उसे सारी रात जगाया हो ऐसी एक भी रात उसे याद न थी !’ (पृ.२६०) इस तरह वालजी के मृत्यु के बाद व्यक्तिकथा मे निरुपित यह कथा में लेखकने आंतरजीवन की चिंता नहीं की ।

ईश्वर की अनउपस्थितिवाली यह कृति में मास्तर का पात्र इश्वर जैसा है । मुश्केली के समय में ही आनेवाले यह मास्तर की अन्य किसी सक्रियता यहाँ नहीं है । समस्या हल निवारण के कारण मास्तर की उपस्थिति हो ऐसा लगता है । कृति का समय ‘मलकके ालो’ अंग्रेजों की तरह सामंतशाही का है । आंबेडकर की जगह बिनदलितो के हाथ में सत्ता आते

ही दलितवर्ग ने किया हुआ अनुभव का फफडाट कंपन यहाँ है ।

फिर भी प्रथम दलित उपन्यास के रुप में आंगलियात को ही स्वीकारना पडेगा । दलित उपन्यास की मर्यादा ऊपर दर्शायी ये मानकर स्वीकार करते है तो भी प्रतिबद्धता के संदर्भ में दो प्रश्न उपस्थित होता है । कृति में आर्थिक शोषण नहीं है । बिनदलितों की दलित पर की सर्वाश्लेषी पकड में यह स्थावर जंगम मिलकत पर का आधिपत्य है यह प्रकट नहीं होता । दूसरा भारतीय ग्रामजीवन अभाव में भी हसता-कूदता रहा है । आंगलियात में हास्य का नाम भी नहीं है ।[1]

दलित उपन्यास में दलित समाज का परिवेश, समस्या, विषयवस्तु और सूक्ष्म भावों की वास्तवपूर्ण अभिव्यक्ति कलात्मक रुप में हुई है । जिसमें वेदना है, व्यथा है और चेतना है ।

आंगलियात जोसेफ मेकवान का प्रथम उपन्यास । गुजराती दलित साहित्य का भी प्रथम उपन्यास, जिसको भारतीय साहित्य अकादमी का अेवोर्ड मिलता है । चौथी लहर कहते हुए धवल महेता कहते है यह उपन्यास असाधारण है, लेखक के पास ऊँची सज्जता है । खेडा जिल्ले को छोटे गाँव में बसते बुनकरों की यह कथा है । प्रथम बार ही एक अस्पृश्य जाति को केन्द्र में रखकर उनके जीवन संघर्ष का निरुपण लेखक ने किया है । इस तरह आक्रोश कलात्मक अभिव्यक्ति के रुप में है । उनके पात्रों में उच्चकोटि की खुमारी और मर्दानगी दिखती है । पात्रसृष्टि समृद्ध है... जो आंगलियात है वह एक व्यक्ति नहीं है, किन्तु गाँव में पिसाता समस्त पछात समाज है । यह लेखक के पास भाषा है, भाव है, गहरी संवेदनशीलता है । विपुल अनुभव अपने पास है । कला सिद्ध करने का उनकी कलम में बहुत कौवत है ।[1]

श्री हरीश मंगलम् शब्दसृष्टि अंक में लिखते है-आंगलियात उपन्यास से गुजराती साहित्य में भँवर (वलय) उत्पन्न हुए है । गुजराती दलित साहित्य की आंगलियात उपन्यास यशस्वी एवम् प्रथम दलित उपन्यास है । यह उपन्यास की बहुत चर्चा-बहस और पुरस्कृत भी हुआ है । गुजराती कथा साहित्य प्रवाह में यह विशिष्ट रचना है, इतना ही नहीं, एक विशाल

सहानुकंपावाला समजदार मानवी यह भाषा बोलनेवालो के बीच में घूमता फिरता देखने का सौभाग्य मिलता है । और हैयाधारण मिलती है । ऐसा कहकर उमाशंकर जोशी ने उत्साहपूर्ण बधाई दी थी ।'आंगलियात' में पूरे बूनकर समाज की खामीयाँ, खूबीयाँ, रीतरिवाज, बानी-वर्तन, खुमारी, विवशता, बोली, मुहावरा आदि का दर्शन होता है । संघर्षमय पात्रों के निरुपण में लेखक अव्वलनंबर पे आते है । टीहा, मेठी और वालजी के पात्र गुजराती समग्र साहित्यजगत में अनन्य है [3]।

आंगलियात के बारे में 'साठोत्तरी गुजराती नवलकथा' अपने संशोधनग्रंथ में श्री के.एम. मकवाणा लिखते है- उपन्यासक्षेत्र में दलित समाजजीवन का समग्र प्रवेश नवें दशक में 'आंगलियात' उपन्यास से हुआ । १९८६ में गुजराती उपन्यासक्षेत्र में 'आंगलियात' उपन्यास का प्रवेश कला और जीवन की दृष्टि से उपकार हुआ । आज तक अपने उपन्यास में कभी-कभी देखने में आते दलित जीवन का निरुपण कैसा अपाहिज था, उसका एहसास हुआ । ग्रामजीवन केन्द्रित 'आंगलियात' उपन्यास में दलित समाजजीवन की धडकती चेतना का चितार इस तरह पहलीबार दिखाई देता है । उसके सर्जक जोसेफ मेकवान की दलित प्रतिबद्धता कला सन्दर्भ में कहीं हानिकारक हो तो भी जीवन सन्दर्भ में उनकी प्रभावकता उतनी ही तीव्रतम रही है कि कविता और छोटी कहानी क्षेत्र में प्रवृत्त ऐसे दलित साहित्यकार अब उपन्यास क्षेत्र में प्रवृत्त हुए । दिल्ही साहित्य अकादमी ने 'आंगलियात' को अर्पित पुरस्कार से उसको प्रोत्साहन मिला । जिसके परिणाम स्वरुप दलित उपन्यास की एक पूरी परंपरा अस्तित्व में आई [4]।

ग्रामजीवन के प्रवर्तन-प्रयोजन सन्दर्भ में परम्परा से चलता रहा समाज का उच्चवर्ग के जीवनकक्षा के सामने वही समाज का अभिन्न अंग समान दलित समाजजीवन की चेतना को बानी देता आगलियात उपन्यास ग्रामजीवन की नई दिशा प्रकट करता है ।

'आंगलियात' के बारे में मंजु झवेरी कहती है जोसेफ मेकवान का 'आंगलियात' उपन्यास पढते ही मैंने एक अलग ही सृष्टि में प्रवेश किया । जिसका प्रवेशद्वार आजतक मेरे लिए बंद था [5]।

ग्रामसमाज की एक निराली जीवनसृष्टि का साहित्यक्षेत्र का बंध द्वार ‘आंगलियात’ खुला करता है । उपन्यास की भूमिका ‘मारी धरतीनी महेंक’ में लेखक कहते है- एक अस्त हुई संस्कृति और सायसपूर्ण शांत करने में आ रही सामाजिकता की बात है आंगलियात ! यह समाज व्यवस्था की पुनः प्रतिष्ठा का यह प्रयास नहीं, किन्तु उसमें रहे सत्वशीलता के पुरस्कार का उद्देश्य है .... १९३५ से ६० तक के ढाई दशक की यह कथा में सामाजिक अन्याय और तिरस्कृत एक जातिके प्रति संपन्न सवर्णो के द्वेष का भी चितार (दर्शन)है ।’

इस तरह यह कथा में सत्य घटनात्मक दस्तावेज सामग्री है । किन्तु हरीन्द्र दवे कहते है- उसी तरह ऐसी कठीन वेदनाएँ सेहनेवाले और प्रत्यक्ष फिर भी किसी कडुआहट के बिना निरुपण करनेवाले जोसेफ मेकवान में केवल दस्तावेजी नक्करता नही.. एक सर्जक की महक है ।’

श्री भी.न.वणकर ने अनुसंधान में ‘आंगलियात’ के बारे में लिखा है-राष्ट्र इक्कीस-वें शतक में प्रवेश के लिए उत्सुक हो रहा है, तब दलित समाज कई समस्याओं से त्रस्त है, ग्रस्त है । आखिर में रहनेवाले यह उपेक्षित, तिरस्कृत और शोषित, दलित समाज की समस्याएँ, उसकी जमीन के भीतर दबी गूंगी यातनाएँ ऐसी तो जटिल और संकुल है कि जिसको यथार्थ स्वरुप से जानने, समजने के लिए दलित माता की कोख से जन्मे हुए भी आज तो पिछे रह जाय, ऐसी विषम परिस्थिति में दलित समाज की प्रतिबद्धता और दलित साहित्य की प्रतिष्ठा करने हेतु श्री जोसेफ मेकवान ‘आंगलियात’ (१९८६) उपन्यास लेकर आते है । गुजराती साहित्य जगत की यह एक अपूर्व घटना है, एक शकवर्ती सरजत है ।’

आजादी पूर्व समाज के आखिर में जीते दलित मनुष्य से आजादी की अर्धी सदी केबाद भी आज का दलित मनुष्य बदतर दमनीय जीवन जी रहा है । इन्सान की सामाजिक जीवन की गतिविधि का, अकथ्य यातानाओं को बोली देने का, विपत्ति और आकांक्षाओ का स्वानुभवमूलक एवम् प्रभावक आलेखन श्री जोसेफभाई ने आंगलियात में किया है । जोसेफभाई दलित समाज में जन्मे है, जीते है । अपनी सामाजिक संप्रज्ञता

है, साहित्यिक सज्जता हे, कलम में कौवत है । उन्होंने दलितों की वेदनाओं को अपना दर्द समझकर लिखा है । यह उपन्यास की विषयवस्तु महाकाव्य से जितनी विस्तृत है, किन्तु जोसेफभाई कथनकला के कसबी है । इसीलिए समाज की बदलाती वास्तविकता का कथा के अनुरुप बाह्य घटनाएँ और आंतर मन का चेतना सभर और सबल चित्रण देते है । बदलते सांप्रत समय में उपन्यास एक जीवंत साहित्य स्वरुप है । सभी साहित्य स्वरुप के लक्षण समय के मुताबिक बदलते रहे है, इसीलिए सर्जक की कथन कला की रहस्यमयता (हेन्नी जेम्स) का कृति को विशेष लाभ मिलता है । अः आंगलियात उपन्यास कला के निश्चित लक्षणो से सज्ज संपूर्ण उपन्यास है । इस तरह आंगलियात लोकप्रिय ही नही, प्रतिष्ठा प्राप्त सबल और सफल उपन्यास है 1

टीहा का चरित्र गुजरात के अजेय दलित का चरित्र है । आंगलियात उपन्यास में मुख्य पात्र, टीहा, और मेठी है जो दलित है, वालजी, दानजी, जीवन, कंकु, भवानचाचा, मास्तर, रामला, भीखला, हीरा, मोती, उजम, खुशला खोट आदि भी दलित पात्र है । रणछोड डेलेवाला मुखिया, मेघजी, पटेल, मनजी, नानजी, फुलजी आदि उच्चवर्ग के पात्र है ।

आंगलियात के पात्र बहुत ही प्रभावी है, एकदूसरे से बढिया है । उनके नसीब में सुख की कल्पना भी नहीं है । किन्तु दु:ख को गोलकर पी जानेवाले पात्र है । शक्तिशाली दूसरों के सुख के खातिर स्वयं दु:ख जेलते है । चारित्र्य के आदर्शपात्र है, टीहा, दानजी, कंकु, मेठी दु:ख सेहते है, किन्तु चारित्र्य को आँच नहीं आने देते ।

श्री जोसेफ मेकवान के पात्र यथार्थपात्र है । केवल आदर्श के पूतले नहीं है । कंकु, मेठी, जैसे आदर्श स्त्री पात्र है तो रामला की बहू, भीखला की बहन जैसे हल्के स्त्रीपात्र भी है, जो पटेलो के साथ आडे संबंध रखते है । अपनी जाति की स्त्रीयों की इज्जत रखने के लिए विद्रोह करनेवाले पात्र है, जबकि अपनी ही जाति की स्त्रीयों की इज्जत उछालने के लिए पटेलो को पूरी जानकारी से अवगत करनेवाले पात्र भी है । मेठी, टीहा जैसे पात्र जीवनभर एकदुसरे के वियोग में जीते है,

वालजी, टीहा, के घर में मेठी को ले आने के प्रयत्न में अपने प्राण गँवा देता है, उसकी याद में टीहा शादी करना ही टाल देता है, और योगी जैसा जीवन बिताता है ।

कंकु विधवा होकर जीवन बिताती है तो मैं भी अपने मित्र के लिए कुछ तो गँवाऊ ? मेरे लिए तो उसने जान दे दी है । कंकु भी दूसरी शादी के लिए तैयार नहीं होती और दानजी भी कहता है वालजी ने मुझे भाभी और भतीजे को संभालने की जिम्मेदारी सोंपी है । इस तरह तीनों व्यक्ति अपने अपने तरीके से वालजी के प्रति ऋण अदा करते है ।

किन्तु परिस्थिति ही इन्सान को इन्सान बना देती है । टीहा को संसारी बनाने के लिए कंकु दानजी के साथ शादी करती है, और टीहा के लिए मेठी ले आने का प्रयत्न करतेहै । इस प्रकार मेठी, कंकु, टीहा, दानजी, वालजी, जीवन आदि पात्र भट्ठी में भूने हुये पात्र है ।

टीहा आंगलियात उपन्यास का नायक है, जो जन्म से लेकर मृत्यु तक दुःख,दर्द, सेहकर लोगो के सामने हँसता मुख रखता है । दुःख जो हररोज का हो तो सेह लेना ही चाहिए । वह अन्याय का सामना करता है, एक दलित वीरनायक है, जो सवर्ण जाति के सामने संघर्ष करता है, स्त्री की इज्जत के लिए प्राण देने के लिए तत्पर रहता है । बहादुरी से जीता है और बहादूरी से प्राण न्योछावर करता है । रात, दिन मेहनत करके, पसीने की कमाई से जीवन ढोता है । दूसरे व्यक्तियों को रोजगार देना चाहता है । ऐसे प्रयत्न में ही उसकी मृत्यु होती है । कपडे बूनने का व्यवसाय करता है, बाजार में उसके कपडे की माँग रहती है, वालजी उसका मित्र है जो उसे साथ देता है ।

मेठी की छेड़ती के कारण मनजी-नानजी के साथ संघर्ष पिटाई करना आदि में टीहा की वीरता दिखाई देती है । मूहल्लेवाले साथ नहीं देते तब भी कहता है अस्सी घर दलित के और पचीस घर पटेल के फिर भी दलित डरते है । पानी में रहना और मगर से डरकर जीने के बजाय, मगर को ही खत्म करना चाहता है । चौक में तलवार दिखाकर

सबको डराना, भागना-ललकार करना और मनजी की ही पिटाई करना सचमुच वीर के लक्षण है । टीहा भी कहता है आज तक सीमान्त पे खुले आम हाथ पकडे गये थे, गौना के अगले दिन इज्जत लूटी थी, पूरी जाति ये सेहती आई है, लेकिन दानजी कहता है "टीहा जैसे दस आदमी मिल जाए तो कैसा भी काम पूरा (विद्रोह) कर सकते है ।"

कोई भी गाँव, कोई भी मुखिया, सरपंच या बडे व्यक्ति से नीति में डरता नहीं है, अन्याय का सामना करता है, कलेक्टर से फरियाद करता है, फोजदार को भी कहता है साहब मुझे किसी का डर नहीं लगता तुम्हारे जैसी सरकार है फिर किसका डर ! एक एक व्यक्ति सामने आए तो मरने की भी मजा आएँ, किन्तु हमारे लोगों की बेइज्जती और पीठ पीछे के दावपेच को नहीं पहूँचा जाता ।

आत्महत्या करने जाती मेठी को कहता है- मेरे सामने कोई आत्महत्या नहीं कर सकता । इतना ही नहीं मेठी को अलग घर देता है, उसकी इच्छा के विरुद्ध नहीं जाता और तलाक मिले तब तक धैर्य रखता है । आज के युवानो को, बलात्कार करनेवालो को टीहा बहुत कुछ कहता है वह स्त्री को पूज्य मानता है ।

मेठी का तलाक नहीं होता तब वाली के साथ शादी करता है लेकिन वाली उसे शांति के बजाय अशांति ही देती रहती है । टीहा का पात्र भारतीय समाज में व्याप्त जातिवाद व अस्पृश्यता से उत्पीडित है। साथ ही इन अत्याचारों से मुक्ति के लिए उनमें छटपटाहट भी है । इसके लिए जितने ही बाहरी तत्त्वों से संघर्षरत दिखाई देते हे, उतने ही अपने अंदरुनी जड संस्कारो, रुढियों और अन्तविरोधो से भी ।

टीहा का जीवन आर्थिक दृष्टि से अच्छा है, किन्तु असफल प्रेमी है, असफल पति है, विरह में जिंदगी बिताता है, करुणता तो यह है कि जिसे प्रेम करता है, उसको अपनेपास ले आता है, लेकिन उसके साथ संसार का सुख नहीं भोग सकता, उसकाो देखता जरुर है, पर दूर से... नजदिक से देखने का मौका न तो समाज ने दिया न तो मेठीने...

गुजराती साहित्य में टीहा वीरनायक है, जिसने पूरा जीवन

अन्याय का विरोध किया है, डटकर मुकाबला किया है, दलितों को रक्षा दी है, दलितो को हैरान करनेवालों के दाँत तोड दिये है ।

आंगलियात में मूलभूत स्थिति के साथ संभवित परिस्थितिओं का घर्षण विस्तृत है । इसीलिए स्थिति जड समस्याएँ सहजरुप से अलग है ।

लेखक का प्रयत्न ये रहा है कि अपने संपर्क में रहनेवाले पात्रों को ही उपन्यास में ढाल दिये है । श्री जोसेफ मेकवान के स्त्री पात्रों में महत्त्व का स्थान मेढी का है । मेठी टीहा जैसे वीर दलित को प्रेम करती है किन्तु अन्त तक उसकी पत्नी बनने का मौका नहीं मिलता । विधि की यह करुणता है कि जीवन जीने के स्वप्न जिसके साथ देखती है उसको देखती है, साथ में रहती है, खाना बनाकर उसको पहुँचा सकती है, किन्तु तन से एक नहीं हो पाती, मन से एक है किन्तु तन से बिलकुल भिन्न है, मेठी जैसी नायिका गुजराती साहित्य में अमर रहेगी, क्योंकि मेठी ने अपने पति के सिवा किसी की परछाई भी छूने नहीं दी, महेनत से, बुद्धि से जीवन बिताती है ।

बाजार में मटके फोडनेवाले को गालियाँ देना, कोर्ट में उसके विरुद्ध बोलना दलित स्त्री का काम नहीं है फिर भी एक वीरनायिका है और ये ऐसा काम करती है । समाज भी उसे तिरस्कृत करता है फिर भी पीछे हट नहीं करती । चूथिया जैसे शराबी को भी सही रास्ते पे ले आती है, और सेहने की हद होती है तो उसकी ही पिटाई करके चली जाती है । तलाक के बिना टीहा के साथ भी शादी नहीं करती और अपनी स्त्रीशक्ति का दर्शन करवाती है । दायन के रुप में माहिर है, अस्पताल के डॉक्टर, नर्स जब दलितों के काम नहीं आते थे, तब मेठी जैसी दायन ही प्रसूति मुफ्त में करवाती है ।

श्री जोसेफ मेकवानने गजब का पात्र पेश किया है, एक स्त्री (दलित) ऐसी हो सकती है । उच्चवर्ग की स्त्रियों से ज्यादा समझनेवाली दु:ख को घोलकर पी जाने वाली, मेठी सही रुप से प्रशंसा के पात्र है। शीलापर में होती छेडती, समाज द्वारा होता अन्याय, चूंथिया का स्वीकार

करके पापी को सही मार्ग पे रखकर समाज में अपना और अपने पति का स्थान बनाना ऐसी वैसी स्त्री का काम नहीं है, उसके लिए तो मेठी ही चाहिए । कोर्ट में गवाही देना, १९४७ के पहले की बात है, जब स्त्री ने अपना घर गाँव नहीं छोडा था, ऐसे समय में कोर्ट में जाना, गवाही देना सचमुच हिम्मत का काम है । सचमुच मेठी जैसी स्त्री आधुनिक युवतीओं को बहुत कुछ केहती है ।

'गुजराती साहित्य में दलित कलम' पुस्तक में रमणिका गुप्ताने लिखा है- "जोसेफ मेकवान के उपन्यास के माध्यम से दलित समाज के संघर्ष की एक झांकी मिलती हे । आंगलियात की नायिकाएँ मेठी और कंकु है जो मध्यमवर्गीय या सवर्ण मानसिकतावाले समाज की नहीं बल्कि उस समाज की नायिकाएँ है जिन्हे हर रोज मरने के लिए तैयार रहना पडता है । सवर्ण नैतिकता का बोझ तो उन पर नहीं है लेकिन वे त्याग और वफादारी की नैतिक समझ रखती है । उनकी शैली दलित जीवन शैली है जो कहीं मुक्त है तो कहीं ढीली तो कहीं अंधविश्वासों से इतनी कसी हुई कि पंख भी न फटकाया जा सके । मेठी का बालविवाह हो चुका है और उसका अपहरण कर उसे जबरन चोथिया के साथ रहने को मजबूर किया जाता है । उसके बावजूद भी मेठी का जिन्दा रहकर संघर्ष करना, किसी सवर्ण महिला के बस की बात नहीं थी । उसके लिए मेठी को ही होना होगा । अपनी ही कुरीतियों के खिलाफ खडी- अपने समाज के अंधविश्वासों और सवर्ण समाज के षडयंत्र की शिकार है दलित समाज की ये औरतें, लेकिन निडर है वे । इतनी त्रासदियों में भी दलित साहित्य के दलित-पात्र, महिला हो या पुरुष अपने पर्वो पर खुशी से नाचते है- अपनी खुशी के लिए भी और शोषण सवर्ण समाज को खुशियों पहुँचाने के लिए भी । ये मध्यम वर्ग की तरह कुंठित नहीं हैं, जीवट है इनमें । एक आलोचकने आंगलियात की नायिका कंकु और मेठी की मनोभावना और कुंठा को अभिव्यक्ति न दे पाने का आरोप लगाया है उपन्यास लेखक मेकवान पर । किन्तु मेरी राय में वैसी स्थितियों में कुंठा का स्थान कहाँ रह जाता है । वहाँ तो सीधे स्थितियों से मुकाबला करना होता है, खुद

ही-निर्णय भी खुद ही लेना होता है । इस उपन्यास की नायिका कंकु ऐसा ही करती है । उसके भीतर हलचल है । वह अपने से सवाल भी करती है और अपने देवर के प्रति उभरे आकर्षण के लिए अन्दर ही अन्दर खुद से बहस भी । पर शहरी नैतिकता की कुंठा नहीं है उसमें । बिरादरी और बिरादरी का गुरु भगत भी उसे व्यावहारिक रुख अपनाने के लिए अपने देवर से शादी करने की सलाह दे चुके है । लेकिन वह अपने मृत पति के प्रति प्यार और वफादारी के जज्बे तथा अपने मन के संकोच के चलते उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती । उसका देवर भी उससे बच कर रहता है मृत भाई के प्रति आदर को बरकरार रखने के लिए । समय बीतने पर वे दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते है। समाज के तानों से बचने के लिए कंकु दाना से विवाह का निर्णय नहीं लेती । वह दाना के प्रति अपने मन में उमडे प्रेम और उसकी बलिष्ट बाहों में मिलनेवाली सुरक्षा के सत्य के रुबरु होकर ही उसे मन से स्वीकारती है । यह उसका अपना फैसला है, समाज का गढा हुआ फंदा नहीं ।[११]

आंगलियात में वर्णित समाज सभी तरह से कुचला हुआ है, लेखक भी वही समाज के है इसीलिए पात्रो के विकास और विनाश में अतिशयोक्ति दिखाई नहीं देती । प्रमोदकुमार कहते है "कथा के मुख्यपात्र टीहा, वालजी, कंकु, मेठी में प्रगट होती आत्मश्रद्धा और खुमारी यह जाति की प्रबल अस्मिता का संकेत देते है । दलित समाज केएक वर्ग के जीवन संघर्ष के कई मर्मस्पर्शी चित्रण यह कथा में मिलते है । जोसेफ मेकवान बुनकर समाज के इन्सानों के साथ गुलमिल रहे है, इसलिए यह वर्ग की जीवनरीति, आचार-विचार, कर्मकांड, व्रत तप सब नजदीकी से उन्होंने देखा है । इस तरह एक दलित समाज का मर्मस्पर्शी चित्र यहाँ उपसा है ।[१२]

दलितों में मास्तर का पात्र ही उलझनों को दूर करनेवाला पात्र है । शोषण के खिलाफ विद्रोह एवम् शिक्षा, युवानों को जागृत करता है । वालजी एक अच्छे मित्र की भूमिका अदा करता है । टीहा की शादी करने का काम अपने सिर पे है ऐसा मन ही मन मानता है, टीहा मेठी को चाहता है तो उसे ले आने का प्रयत्न जान की बाझी

लगाकर करता है और अधूरे अरमान के साथ मर जाता है । टीहा की तरह संघर्ष करना नहीं चाहता किन्तु सेह लेने में ही सार समजता है फिर भी उसकी वीरता का वर्णन ऑांगालियातों में अनन्य है ।

दानजी भी युवानों का पंच बुलाता है, टीहा को साथ देता है, डेलेवाले को आडे संबंध में रात को पकड़ता है, किन्तु अपने मुहल्ले की पोल खुलने के डर से मूँह बंद रखता है । वालजी की मौत के बाद कंकु जगु की देखभाल, अप्रतिम कंकु की मर्यादा रखना और अंत में कंकु के कारण ही उसके साथ शादी करना, पटेलो के दावपेच से तंग आकर शहर चले जाना, फिर भी एक वीर के लक्षण विद्यमान है ।

आधुनिक समय में दलित नारी पति की परछाई बनकर रहती है, काम में मदद करती है, अर्धागिनी के रुप में जीवन बिताती है । मेठी, कंकु दोनों अपने घर काम करती है, पुरुष को मदद करती है । मर्यादा रखती है, चारित्र्य के बारे में उसके शिखर को कोई पहूँच नहीं सकता । दूसरी शादीकरना भी श्रेयकर है अपने आप तैयार होती है । दलित पुरुष जब घर में घूस जाते है तो कंकु मशाल लेकर पटेलों को भगाती है । इस प्रकार ये वीरनायिका है फिर भी इन्सान है, देवी नहीं ।

भवानचाचा जैसे पात्र व्यवहारकुशल और औषध के जानकार है, जिसके बोल सर्वमान्य माना जाता है, दश गाँऊ में ऐसे व्यक्ति का जन्म वो भी दलित यह प्रभु की बलिहारी मानी जाती है । रामला, भीखला जैसे दलित दलितद्रोही भी है दलितों की बातों को पटेल के आगे पेश करके अपनी रक्षा मजबूत करते है, अपने भाईयों को परेशान देखकर खुश होनेवाले ये अपनी बहू, बहन की इज्जत भी दाव पे लगाते है । घर फूटे घर जाय कहावत को सार्थक करनेवाले ये दोनों खलनायक है । डेलेवाले का ड्राईवर बनके मुहल्ले में रौफ जमाता है ।

रणछोड डेलेवाला सचमुच आज के नेताओं का प्रतिनिधित्व करता है । दलितो के पास मुफ्त में बेगार करवाता है । गाँव में पानी भर जाता है तो सरकार में से आनेवाली सहाय को स्वयं खा जाता है, और दलितो के पास कीचड, मृत कूत्ते, बिल्लीयाँ खींचवाकर पैसे नहीं देता ।

टीन के पत्तरे जो दलित सहाय के थे वे अपनी धर्मशाला पर चढाता है ।

टीहा को शिक्षा करना ही चाहता है, मेठी उसके पति को मिले ऐसी कार्यवाही करता है, दलित जाति को पहेचानता है, दलित कभी एक नहीं होगे । पैसो के बल से पचास गाँव का प्रतिनिधि बन जाता है, मंत्री भी बनकर गाँधी की राह पर उपवास भी करता है और टीहा को खत्म कर अपनी नेतागीरी का पूरापुरा फायदा उठाता है ।

"यह कथा के चरित्रों की गति अपनी स्वभावगत विकासयात्रा है । अपनी सुझबुझ से व्यवहार करते है, जीते है, सामना करते है, शक्ति कम होने पर वश हो जाते है, घटनाएँ आकस्मिक नहीं है, इसीलिए रामला, रामला ही रहता है और समाज में मिल जाते है, वाली जैसी स्त्रीयों की भी कमी नहीं है, स्टेइन बेक कहते है हमारी जाँघ दिखाने का क्रूर कर्म हमारे हाथों से ही करना पड़ता है ।"

ग्रामजीवन की लोगों की रीतिनीतियाँ, प्रामाणिकता, स्वभावगत आदत, विकृतियाँ, शूरवीरता, असहायता आदि का निरुपण तो गुजराती साहित्य में हुआ था किन्तु जोसेफ मेकवान का अनुभव सभी पात्रो में (एकरुप) होकर सहजभावों के संयोजन के साथ पात्रसृष्टि रचते है । जिसकी छवि भावक के चित्त में अंकित होती है । पात्रो के विविध रुप चित्त को जकड़कर रखते है । वास्तविकता के साथ संवाद उच्चकोटि का है ।

लेखक की संवादकला पूर्ण है, पात्र-पात्र के बीच के संवाद छोटे है, रोचक है, कहीं कहीं लंबे संवाद भी है । आत्मसंभाषण भी है, उससे पात्र के मानसदर्शन होता है, लेखक ने जैसा व्यक्ति है वैसी ही भाषा, संवाद पेश किये है । हिन्दी का प्रयोग भी किया है । इस उपन्यास में छोटे, ज्यादा असरकारक और पात्रोचित संवाद भी रचकर इस क्षेत्र की अपनी अपनी शक्ति बता दी है । संवाद की दूसरी विशेषता मुहावरें और छोटी लेकिन मर्मस्पर्शी लोकोक्तियाँ है ।

बहसशक्ति, मर्मित रमूज, रसिकता, सूक्ष्म व्यवहार षडयंत्रो का ज्ञान और जीवन के दाव-पेच की सुझ-बता है । उनकी पूरी कहानी लक्ष्य जाँचनेवाले को उसमें कुशलता से रचे छोटे, पात्रोचित, सही रसभरे संवादो

की गिनती छोटी नहीं मालुम पडेगी ।

आंगलियात उपन्यास के संवाद समृद्ध है । दलित जाति की अपनी प्रादेशिक भाषा है, एक ही गाँव में सवर्ण की बोली और दलितो की बोली में भी सामान्यत: फर्क होता है और श्री मेकवानने उसका काफी ख्याल रखा है । और इसके कारण ही वातावरण जीवंत बन पाया है ।

उपन्यास में टीहा हराजी करने पर जो संवाद बोलता है वह उल्लेखनीय है । टीहा के शब्द शब्द परिपकवता की पूरी निशानी है ।

टीहा - घर की मुरघी

वालजी - दाल बराबर .... !

टीहा - घर का गुड...

वालजी - गार (मिट्टी) बराबर पृ.४५

चूंथालाल का व्यक्तित्व

पटेल - क्या नाम है भाई ?

चूंथा - चूंथालाल !

पटेल - व्यवसाय ?

चूँधा- सब करते है वही !

पटेल - हीरा खाना तुम्हें क्या होता है ?

(हीरा खाना के साथ क्या संबंध है ?)

चूँथा - सगा ससुर !

पटेल - तेरी बहू को क्यों नही ले आता ?

चूँथा - तुम्हे किसने कहा ?

पटेल - सूना है !

चूँथा - गलत ! ये गौना ही नहीं करता !

पटेल - क्यों ?

चूँथा - में टेढा पडता हूँ किन्तु...

पटेल - कैसा किन्तु ?

चूँथा - दूसरी जातिवाले को इतनी हलबली क्यों है ?

शीलापर के दलितो ने उनकी लड़कियो को व्यवहार पटेलों को कब से सोंपे है ? पृ.४५

मेठी की निर्भिकता

भवानचाचा - कौन है तू ?

मेठी- मैं हीरा खाना की लड़की मेठी बापा !

भवान चाचा - बोलिए बेटा, क्यों मेरे कदम मिलाने पडे, यहाँ तक ?

मेठी - मेरे स्वार्थ के कारण !

चाचा - कौन सा स्वार्थ, दिकरा ?

मेठी- जिंदगी का हृदय के सच्चे सबंध का... !

चाचा- कहिए... जो कहना है वह विश्वास से कहिए ...!

मेठी- मेरे पिताजी ने नाक काटने की बात कहीं तूम को ? मेरी नाक की इज्जत रखना हो तो समाचार लेकर आये है उसको कहना नाक-काटने में दैर न करे ? (पृ.६५)

भवानचाचा और टीहा के संवाद युवान विधवा स्त्री साल दो साल बाद स्वभाव, परिवर्तन बदल जाते है..... तथा उच्चवर्ग में यह किस प्रकार युवान विधवा रहती होगी यह संवाद से स्पष्ट होता है कि युवान विधवा के लिए शादी करना श्रेष्ठ उपाय है ! (पृ.१३१)

गोकल को स्कूल में बच्चे आंगलियात कहते है.. यह संवाद

गोकल - चाचा, एक बात कहूँ ? (आवाज धीमी)

टीहा - हाँ बेटा ?

गोकल -स्कूल में सभी मुझे सताते है ?

टीहा - क्या कहते है ?

गोकल - सभी मुझे आंगलियात... आंगलियात कहते है ? (पृ.२३७)

संवाद के बारे में गिरीश रोहित लिखते हैं - उपन्यास में ज्यादातर संवादों में सामाजिक विषमता के प्रति विद्रोह की भावना सुनाई पडती है । शोषक-उत्पीडक, पात्रो की वाणी में जहाँ गाली, दलितों के प्रति उपेक्षा धृणा नजर आते हैं, वही शोषित उत्पीडित पात्रों के संवादो में अपनी पीडाओ के प्रति करुणा और आक्रोश नजर आता है । साथ ही इस आक्रोश में

एक नये समाज की स्थापना की अनुर्गूज भी सुनाई पडती है, जो समतावादी दृष्टि लिये हुए है ।

आंगलियात में शुरुआत से ही टीहा में परिवर्तन की भी सोच दिखाई पडती है । अपने पिता की मृत्यु पर उसने बिरादरी को भोज खिलाने से मनाकर सामाजिक रुढियों को तोडा है - तुम लोग खाकर खडे हो जाओगे इसमें मेरे मरे हुए बाप को क्या मिलेगा ? जो पुण्य वे कमाये वे उनके साथ गये, अब पीछे का कर्मकांड सब लोक-दिखावा, मुजे नहीं करना । जाईये आप जो चाहे करिये ।(पृ.४) नायिका मेठी में भी अपने अनमेल विवाह के प्रति उतना ही रोष है - क्युं नहीं सोचते मेरे भविष्य के बारे में ? जिन्दा ही मुझे नरक में डाल देने का पाप आप कौन से भव में भोगेंगे ? (पृ.११५)

भवानचाचा जैसे बूढे दलित के संवाद में एक नई चेतना दिखाई पड़ती है 'वालजी जैसी हिम्मत रखना जिन्दगी में सीखना । बूरा होता बहुत देखा- सहा अब सामना करना सीखना ।' (पृ.१५१)

श्रीजोसेफ मेकवान का गुजराती साहित्य में महत्त्व बढता जा रहा है, मध्यगुजरात, आनंद, खेडा जिल्ले के गाँवो का यथार्थ वर्णन उनके उपन्यास में दिखाई देता है । गाँवो में दलितो की स्थिति पटेलों का शोषण, शादी, मरण, रीति-रिवाज, पटेलों की गुंडागीरी, अनपढ दलित, प्रेम व्यवहार, अत्याचार, तत्त्वज्ञान, आदि का जोसेफ मेकवान ने बडा ही स्वाभाविक एवं वातावरण के अनुकूल चित्रण किया है । इसीसे उपन्यास में यथार्थता की ध्वनि अधिक मुखर उठी है । आंगलियात के पात्र एवं घटना को सूक्ष्मता से देखने पर हम कह सकते है कि श्री जोसेफ मेकवान ने अपने युग की दलित समाज की वास्तविक दशा को बडी गहराई से समझकर आंगलियात के रुप में उसका सच्चा चित्र प्रस्तुत किया है । तंबाखू के कारखाने में शोषित, दलित स्त्रीयाँ, खेतो में शोषित दलित स्त्रीयाँ दलितो के आंतर संघर्ष की चरमसीमा भी इस उपन्यास में देखने को मिलती है ।

आंगलियात में चित्रित समाज की अंतहीन दुर्दशा के मूल में

आर्थिक अभाव भी कारणभूत है, आर्थिक कारण के लिए ही दलित पुरुष स्त्रीयों को मजदूरी करने के लिए खेतो में तंबाखू के कारखाने में जाना पड़ता है । टीहा, वालजी, दानजी आदि कपडे बूनने का धंधा करते है, मेठी, कंकु, जैसी स्त्रियाँ उनको मदद करती है, अपने धंधे पर गर्व करते है ।

दलित वर्ग और उच्चवर्ग के संघर्ष को चित्रित करने में लेखक को कामयाबी मिला है । सत्य घटनाओं का यथार्थ वर्णन है । नेता हो या बडा पटेल, मुखिया, सरपंच किसी का डर नहीं रखा और समाज के खोखलापन को स्पष्ट किया है । दलित समाज की आंतरिक कमजोरियों को भी स्पष्ट रुप में अभिव्यक्ति की है । ठाकुर, पटेल और दलित जाति के बीच जो समाज में सघर्ष दिखाई देता था, वह आज भी दिखाई देता है, जमीन के मालिक पटेल है, ठाकुर के पास थोडी बहुत जमीन है पर सामाजिक व्यवहारो के कारण आर्थिक समस्या को सुलजाने के लिए पटेलो के आश्रित है । दलितो के पास अपना धंधा जरुर है, पर ये धंधा सभी नहीं करते, कुछ लोग पटेल के यहाँ मजदूरी करने के लिए जाते है ।

दलित मुहल्ले का वर्णन, टीहा मूर्घे की बाँघ याने की चार बजे उठ जाता था, बुनने का काम करना, दीया, फानस से उजाला करते थे, भवानचाचा भजन, सारंगी के साथ गीत गाते थे। चक्की की आवाज, सारंगी का संगीत और टीहा के बूनने की आवाज से वातावरण आनंदमय हो जाता था । वृद्ध माँ-बाप की बारहवे की क्रिया करनी पडती थी, नही करने पर कठोर शब्द, तीखे वचन लोग बोलते थे । बडे गाँव के चौक में जीवन उपयोगी चीजें मिलती थी, हराजी (निलामी) भी होती थी, पैदल ही लोग एक गाँव से दूसरे गाँव जाते थे, बैलगाडी, घोडा, ँऊट का उपयोग भी करते थे । किसान मेहनत करते थे फिर भी आर्थिक अभाव में जीवन बिताते थे । छोटे किसान व्यापारी को फसल देते थे, कभी कभी पैसे नहीं देते थे, झगडा होता था, डेलेवाले जैसे व्यापारी पैसे नही देते थे, उनके बदले में रणमल ठाकुर जैसे बैल भी ले आते थे । दलितो

के सामान चद्दर, का गट्ठर को गाडी में रखने देते थे । किन्तु चद्दर बूननेवाले को गाडी में बैठने नहीं देते थे । कुदरती आफत में बडे लोग सहायता चूरा लेते थे, दलितों को सहायता नहीं मिलती थी, और मुफ्त में सफाई करवाते थे । फिर भी गाँव की ईज्जत रखते थे ।

दलितो में बालविवाह प्रचलित था, माता-पिता ही संबंध तय करते थे, अठारह बीस साल की उम्र होने पर गौना करते थे पति-पत्नी में मतभेद, मनमेल होने पर भी जीवन बिताते थे । चूंथिया -मेठी उसका उदाहरण है । पटेल द्वारा खुलेआम अत्याचार होते थे, धमकी देते थे एकाद दलित ने यदि सामना किया हो तो उसको पूरा ही कर देते थे, उसके खेत में आग लगा देते थे । फरियाद करने की हिमत किसी की नहीं थी ।

दलितों में एकजूटता की भावना नहीं थी, घर फूटे घर जाय कहावत सार्थक है । आपस आपस में सिंह बनकर झघडा करते थे, किन्तु सवर्णो के सामने गाय बन जाते थे । दलित जाति में दूसरी शादी कर सकते थे, पहली शादी की हो, किन्तु मनमेल के कारण तलाक होते थे, बाद में दूसरी शादी कर सकते थे, समाज में यह स्वीकार्य था । आंगलियात लेने की परंपरा थी, उसमें भी समाज, परिवार की अनुमति से ही काम होता था ।

दुश्मनों का मूँह नीचा करने के लिए अनेक दावपेच खेलते थे, स्त्री को उठाकर ले जाने का प्रपंच भी करते है उपन्यास में दलित अशिक्षित है, यह यथार्थ है, अशिक्षित रहने के कारण उनमें परस्पर विद्वेष, असहनशीलता, अन्य रुढियो के प्रति दृढ आस्था, भाग्यवादी व कर्मवाद पर अटूट विश्वास, लडाई-झगडे, नारी की दीन-दशा, अशिष्टता आदि दुर्गुण अपना प्रभाव जमाये रहते है । हम अत्याचार तभी सेहते है, जब हम निर्बल होते है और निर्बल धनाभाव से होते है, यदि पैसे हो तो हम किसी के अत्याचार क्यों सहन करे ? पटेल यह जानते थे, इसीलिए उसकी कोशिश यही रही कि दलित सदैव अंधकार में रहे, अपनी शक्ति एकता एवं वास्तविक स्थिति से अज्ञान रहे । इसीलिए शिक्षा का प्रचार दलितो में नहीं किया ।

कारण कि शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति सत्य का वस्तु स्थिति का ज्ञान प्राप्त करता है ।

दलितो में भी होशियार होता था वह मेहतर (मुखिया) बनता था वह शादी के संबंध जोड़ता-तोड़ता था । खुशला खोंट जैसे मुखिया उलटा का सीधा और सीधे का उलटा करके किसी के घर जोड़ते तो किसी का तोड़ने का काम करते थे । पैसे दोनों और से लेकर ऐशाराम जिंदगी बिताते थे । अनपढ होने के कारण ब्राह्मण की बोली, कर्मवाद पर विश्वास करते थे । पटेल बूरे काम करते थे, फिर भी पेसो के बल से छूट जाते थे । कभी कभी ईमानदार फोजदार के कारण पटेल जरुर सिडक जाते थे ।

पति की मृत्यु होने पर अंतिम बार पत्नी को सोलह शृंगार करना पड़ता था । मृत व्यक्ति को याद करके रोते थे, उनके कर्म को रोते रोते व्यक्त करते थे । स्त्रीयाँ करुण रस में शोकगीत गाती थी । हाथो से छाती पीटती थी ।

"रहर्या चिया परदेश रसिया वालमजी
मून नोधारी मेलीने नाथ-नागर केशरिया !
लोरे जोद्धा हाय ! हाय !"

यह करुण दृश्य शब्दों में देखे :

मृत व्यक्ति के घर शोकसभा रखते थे । फोटू को अगरबत्ती करते थे, बाबासाहब आंबेडकर को दलित कम पेहचानते थे, रात्रीशाला में युवान थोडे बहुत पढे थे, युवान व्यक्ति के मृत्यु के बाद शोक रखते थे, त्योहार मनाते नहीं थे । त्योहार, शादी के प्रसंगो में उच्चजाति के यहाँ दलित खाना लेने जाते थे, दलितों का उच्चजाति के बीच नौकर-शेठ जैसा सबंध था, किन्तु दलित छू नहीं सकते थे, उनके आँगन में ही बैठना पडता था, उनके पशु को मल-मूत्र की सफाई, मृत पशु कुत्ता, बील्ली खींचने का काम, बेगार करनी पडती थी ।

युवान विधवा की दूसरी शादी दलितो में मान्य है, वो भी

देवर के साथ हो तो बहुत अच्छा मानते है और स्त्री की इच्छा के मुताबिक ही शादी होती है, और युवान विधवा अकेली रहती है तो युवानी को सेह नहीं पाती और उल्टे मार्ग पे चढ जाती है ।

शादी में तोरण बाँधते थे, गणेशजी को याद करते थे, फोटु लगाते थे । वर कन्या को हल्दी लगाते थे ।

बडे-बडे गुन्हगार भी पैसे देकर नेताओं के संपर्क से सजा से बच जाते थे, खद्दर पहनते थे, ओर घर जाकर आसपास के गाँवों में अंग्रेजो के विरुद्ध आंदोलन करके प्रजा के नेता बन जाते थे । एक हरीजन को रखकर अपने को गांधीनेता मानते थे । और सारे लोग उनकी ये बात की प्रशंसा करते थे । लेकिन वास्तव में दलितो को तुच्छ मानते है। अपेन लंबे हाथो से सरकारम ा ेंपटेल लोग कुछ भी करवा सकते थे । अधिकारियों की ट्रान्सफर भी करवा सकते है, टीहा जैसे व्यक्ति का खून भी करवा सकते है और स्वयं तो निर्दोष ही रहते है ।

दलितों में आंतरिक संघर्ष आपस में शूरातन, माँ-बहन को गालियाँ देना, एक पक्ष पटेलो से मिलकर दूसरे दलित पक्ष पर हमला ये गाँवो का चित्रण है । स्वराज के बाद गांधीनेताओ की दादागीरी, उपवासशस्त्र का दुरुपयोग, नेताओं की कठपुतली पुलिस, गाँवो में बढते जाते झघडे और त्रस्त होकर शहर चले जाते दलित उपन्यास में वर्णित है । दानजी, जीवन, शहर चले जाते है तो गोकल अपने धंधे को आगे बढाता है । गाँवो में दलितो की हालत नर्क के कीडे जैसी है, उसे सीधा कोई चलने नहीं देता, उच्चवर्ग के नेता उनको जलाकर उसमें अपनी रोटी पकाते है, यह गाँधी का गुजरात है ।

शादी, गौना गोदलभराई मृत्यु के बाद की क्रिया में दलित पैसे खर्च करते थे, न होने पर जमीन, जेवर बेचते थे, सूद पर पैसे लेते थे, ये सामाजिक व्यवहार उनकी कमर तोड देते थे । भाई-भाई में बँटवारे के बारे में झघडा होता था, माँ-बाप की सेवा करना कपूत जानते नहीं थे ।

नैतिक दृष्टि से दलित ज्यादा होने पर भी अल्पसंख्यक पटेल

अनैतिकता से उन्हें दबाये रखने के लिए राजकीय, कानून, आर्थिक, पुलिस, धर्म, अशिक्षा, अत्याचार आदि की सहायता लेता है । अशिक्षा ने उन्हें अपने अधिकारो को पहचानने से वंचित रखा है । दलित अत्याचार तभी बंद होगे जब दलित जाग्रत होंगे, ऐसे अनेक टीहाओं की कुर्बानी देनी पडेगी, वरना ये सिलसिला चालु ही रहेगा । राजनेता डेलेवाला जैसे बनते रहेंगे तो देश ऊपर नहीं, नीचे जायेगा, उसमें कोई प्रश्न ही नहीं है ।

सामाजिक समस्या, आर्थिक समस्या, शारीरिक समस्या, अछूतोद्धार समस्या, पारिवारिक समस्या, राजनैतिक समस्या प्रस्तुत की है । इन समस्याओं का हल गाँव या निम्नवर्ग से ही करना होगा ।

एकतरफ कहलाते सवर्ण अपने अहम् के संतोष के कारण दलितों के उपर अत्याचार करते है । उनको दबाये, कुचले हुए रखने के लिए नये नये दावपेच करते है, और सब अपनी जागीर हो ऐसा मानते है । दूसरी ओर दलित द्वेष, डर, आंतरिक झघडे के कारण गरीबी, लाचारी और अज्ञानता के कारण उनका भोग बनते रहते है । इस तरह यह सामाजिक परिस्थिति के निर्माण के लिए स्वयं सवर्ण ही जिम्मेदार है ऐसा नहीं, दलितों भी इतने ही जिम्मेदार है इसीलिए टीहा और वालजी जैसे मर्द इन्सान, हिम्मतपूर्वक बहादूरी से सामना करते है, फिर भी वे मिट्टी में मिल जाते है, कुर्बानी व्यर्थ जाती है । मर्द इन्सान की अपमृत्यु हो ऐसी दूसरी कमनसीब घटना कौन सी ? यह सर्जक का वास्तवलक्षी और सामाजिक दर्शन है ।“मार्क्सवाद भलेही यह कहता हो, कि वर्गहीन समाज रचना से समाज में समानता आती है किन्तु ऐसा नहीं है यह देश में तो जातिभेद सुलगती समस्या है । जिसके मूल गहरे है । वर्ग भेद की समाप्ति के साथ जातिभेद समाप्त नहीं होगा । इस देश की एक अलग समस्या है । अस्पृश्यता हिन्दु धर्म का कलंक है । (गांधीजी) किन्तु यह कलंकित छूता-छूत की जन्मदात्री जातिव्यवस्था है ।(डॉ.आबेडबर)”[१३]

समाज में जो स्थान दलितों का है, वैसा स्थान साहित्य में भी है । सवर्ण लेखक होने के कारण उनका ध्यान गाँव के अंत में नहीं गया । साहित्य में भी दलितवर्ग को अछूत रखने में आया है ।

"गुजराती उपन्यास में दलित समाज का चित्रण बहुत कम मिला है । गुजराती उपन्यासक्षेत्र में प्रा.ची.ना. पटेल कहते है उसी तरह-प्राचीनकाल से आज तक हमारे कवियों को, साहित्यकारों को रस ऊपर की तीन जाति के पात्रो में रहा है । संस्कृत, प्राकृत या अपभ्रंश कृतियो में शायद ही कोई शुद्र पात्र को रसभरा उठाव मिला हो, क्योंकि साहित्यकारों को दलित समाज का अनुभव ही नहीं होता ।"[6]

पूरी यह बुनकर जाति थोडे अपवादो के सिवा सवर्ण वर्गके अमानुषी अत्याचारों के सामने कायर बनी रहती लेखक ने (दर्शाई) है । संसार में सभी जगह वैसे यहाँ भी आंतरिक इर्ष्या, बैर, बडाई- उदारता, क्षुद्रता धबकती है । लेखक कहते है वैसे अपनी ही जाँघ खूली करने का क्रूर कर्तव्य बजाती है । दूसरी और सवर्णो का इस कुचली जाति प्रत्ये का भयानक द्वेष, गुमान, नामर्दाई, और कुटीलता का भी चितार उसकी सर्व संकुलता में पूरी तरह हुआ है । बहुत छोटे प्रतिकार की किंमत भी इस पछात जाति के लोगों को जान की बाझी लगाकर चूकानी पड़ती है । मास्तर और भवानकाका जैसे पात्र कथा के विस्तार को नया परिमाण देते है । मास्तर तिरष्कृत प्रजा की सामाजिक चेतना को जागृत करते है । तो भवानकाका होती घटनाओं को देखते है और मार्गदर्शन देते रहते हूै । इस प्रकार यह कथा विशिष्ट होने पर भी अनेक स्तरीय बृहद इन्सान की कथा बनी रहती है ।

लेखक ने प्रास्तविक निवेदन लिखा है और अपने तरीके से यह अत्यंत रसप्रद है । फिर भी हमें तो कृति में जो निष्पन्न होता है उसकी ही जाँच करनी होगी । कृति में जो सहसस्फूर्त हो यह कई बार लेखक के नियम-लक्ष्य-वृत्ति कथा बाहर अभिव्यक्त होते ही मर्यादित करते है । यहाँ एक दृष्टांत दे सकते है और वह कंकु का पात्र, लेखक कहते है वैसे कंकु के सामने मूह से यथार्थ का स्वीकार करने का जोश है - सच्ची बात । पति वालजी की मौत के बाद कंकु समग्र परिस्थिति का ख्याल देखकर दानजी के साथ शादी करती है । किन्तु लेखक सच्ची कंकु को टाँकने का लोभ रोक नहीं सके, क्योंकि सवर्णो का यह पछात जाति

कोटोना है कि तुम्हारे यहाँ तो स्त्रीयाँ एक जिंदगी में दो-पति करनेवाली है । निवेदन में कंकु अपने बेटे जगु को कहती है कि दानाने उसके साथ शादी करने के बाद संसार शुरु नहीं किया था । अच्छे नसीब यथार्थ का स्वीकार करनेवाली कंकु को उपन्यास में यह कहती नहीं बतलाई । लेखक यहाँ प्रतिबद्ध व्यक्ति से भी सर्जक के रुप में ज्यादा उफसे हुए है ।

ग्रामजीवन में लोगो की रीत-नीति, प्रामाणिकता, स्वभावगत टेव, विकृतियाँ, शूरवीरता, असहायता आदि का निरुपण गुजराती साहित्य में हुआ है किन्तु जोसेफ मेकवान का अनुभव सभी पात्रो में एकाकार होकर सहजभावों के संयोजन के साथ पात्रसृष्टि रचते है । जिसकी छवि भावक के चित्त में अंकित होती है । पात्रों के विविधरुप चित्र को जकडकर रखते है । वास्तविकता के साथ संवाद उच्च कोटि तक है ।

महात्मा गांधीजी के गुजरात में भी दलितो एवं गरीबों को छूआछूत के सामाजिक बंधन के विरोध करते हुए सेहना पड़ता है । (उनके पर अत्याचार किया जाता है) १९८१ में हुए आरक्षण विरोधी आंदोलन में केहलाते सवर्णो ने दलितो पर सुगंठित त्रास देने में कोई भी कसर नहीं रखी थी । १९८६ में गोलाणा गाँव में (तेहसिल- खंभात, जिल्ला खेडा) चार बुनकर की केहलाते सवर्णो के द्वरा की हुई हत्या ने सामाजिक समरसता, न्याय, छूआछूत विरोधी सूर को दबा देने का अनन्य उदाहरण है ।

उपन्यास में अंग्रेज राज के समय बूनकर, दलितो को न्याय मिलने के उदाहरण दिये है, किन्तु आजादी के बाद यह देखने में नहीं मिले । आजादी संग्राम के समय से चलती विडंबना है । स्वराज ने (स्वतंत्रताने) दलितो को दमनकारी जातियों के प्रभुत्व में से छूटने की तक दी है । स्वतंत्रता आने से दलितो को प्रगति की तक मिली है यह स्वतंत्र भारत की कुरुणांतिका है । दलितो के मत से स्वतंत्रता से सवर्णो को ही लाभ मिला है । सवर्णो ने स्वतंत्रता मिलते लाभ लेने में अग्रिमता ही रखी है । उपन्यास में डेलेवाला उसका उदाहरण है । जिसने सत्ता सर्वोपरिता सिद्ध की है, अलग प्रतिभा खडी की है । डेलेवाला उसकी गांधीटोपी के

नीचे दृष्टता, जूठापन आसानी से छिपा देता है । उसके शब्द "टारा जा आने दो यह लोगो को देख लेंगे" हृदय विदारक परिस्थिति का हूबहू चित्रण कर देता है । पुराने हिसाब पूरे करने की तरकीब में हंमेशा सवर्ण रहते है । आंगलियात में उसके कई मानवजात के लिए उदाहरण मिल रहे है । यह उपन्यास चरोतर के बूनकर जाति के असंख्य उदाहरण से समृद्ध है । बूनकर जाति की आंतरिक प्रथाएँ जैसे कि आंगलियात, देवरप्रथा, कन्याविक्रय, कुलदेवी की मनौती एवं गरोडा जाति उनके पुरोहित (ब्राह्मण) है । मेहतर उनकी ज्ञाति के मुखिया (अगुआ) है । जाति की सांस्कृतिक छवि उफसाने में मेकवानने बहुत संभाला है ।[१]

भाषा स्वाभाविक है, रसपूर्ण है, आंचलिक, सरल, सुबोध, यथायोग्य शब्दवाली भाषा है । भाषा पर प्रभुत्व ज्यादा है । स्वयं दलित है, अपने मूहल्ले की छोटी-छोटी बात पर ध्यान दिया है । वृद्धों की भाषा, गालियाँ का भी प्रयोग किया है । दलितो की अपनी भाषा है, हवाई किल्ले जैसी बात, भाषा नहीं है, यहाँ तो सत्य की अनुभूति है ।

शैली में ही लेखक का व्यक्तित्व झलक उठता है । उपन्यासकार को अपने भाव एवं विचारो को व्यक्त करने के लिए सरस ओर सरल भाषा एवं शैली का प्रयोग करना पडता है । भाषा का प्रयोग तत्कालीन समाज के दृष्टिकोण से हो तो अधिक श्रेयस्कर होता है । आंगलियात में लोकभोग्य सरलता एवं सरसता है । रचनाशैली सजीव एवं प्रभावोत्पादक है। यहाँ ठाठ-बाट नहीं है, शाब्दिक आडंबर नहीं, सरलता है ।

कथनात्मक शैली या वर्णनात्मक शैली है । उपन्यास समाप्त करने के बाद पाठक को टीहा-मेठी के प्रति सदभाव जाग उठता है । टीहा धंधा करता है, विफल होता है, उठने की कोशिश करता है और गिरता है, अपने गाँव के युवानों को रोजगार देना चाहता है । वास्तविक जीवन की गहराइयों में डूबा है । जिसने जिन्दगी के ऊँच-नीच देखे है, सम्पति और विपत्ति का सामना किया है । टीहा की जिन्दगी मखमली गद्दों पर नहीं गुजराती और लेखक भी स्वयं मजदूरी करके, दुःख का अनुभव करके आगे बढे है । इसीलिए दलित उपन्यास वही लिख सकता

है, जो दलित मुहल्ले के गाढ सम्पर्क में रहता है, जिसने उच्चवर्ग के द्वारा होते अपमान सेह लिया है । अनुभव किया है, संघर्ष किया है...

अपने भाईयों को वही सलाह दे सकता है, जिसने दु:ख भोगा है । तुम ऐसा करो, वैसा करो वह तभी कह सकता है जिसमें हिम्मत हो अपने भाईयो के प्रति लगाव हो, हृदय का हृदय के साथ सबंध हो तभी दलित उपन्यास सही होता है, और आंगलियात तो दलित उपन्यास का शिखर है ।

आंगलियात की भाषा दलितो की भाषा है । चरोतर की ग्राम्य दलित भाषा और चरोतर ग्राम्यभाषा का समन्वय है ।

शब्द कहीं सरल, छोटे, कहीं बडे, कहीं तत्सम, कहीं तद्‌भव तो कहीं देशज है । हम देख चूँके है कि इनके संवादो की वाक्य रचना काफी छोटी एवं सरल है । जो भाव वृत्तियों की दृष्टियों से प्रभावपूर्ण है । पात्रो के तनाव, चाचल्य, उन्मुक्तता, झिझक, मनोकामनाएँ और द्वन्द्वात्मकता से बने वाक्य नाट्यशिल्प को जीवन्त बनाते है । साथ ही उनकी भाषा में दृश्यात्मकता और चित्रात्मकता भी है, इस उपन्यास की भाषा बोधगम्य और सभीश्रेणी के पाठको के लिए सुरुचिपूर्ण भी है ।

श्री जोसेफ मेकवान की अपनी निजी शैली है । उनकी छोटी-छोटी घटनाओं से सम्बद्ध रीति पूरे परिवेश को समेटकर कथानक में एकसूत्रता ला देती है । कहीं संघर्ष एवं तनाव में पात्र नाटकीय ढंग से टकराते है तो कहीं पीछे मूडकर अपने अतीत में पहुँचकर पूर्वदिप्त का पात्र संकेत दे जाते है । कहीं पात्रों एवं असामाजिक तत्त्वों पर व्यंग्यात्मक ढंग से चोट करते है । तो कहीं चित्रात्मक एवं बिम्बात्मक प्रणाली के द्वारा पात्रो और प्रकृति के यथार्थ का चित्रांकन करते है और कहीं भावात्मक शैली द्वारा ही परिवेशगत यथार्थ को जीवित कर देते है । कहीं लेखकीय कथन में वर्णनात्मक शैली का आभास होता है । श्री जोसेफ मेकवान ने शादी के गीत, शोकगीत भी पात्रो के द्वारा प्रकट करवाये है । जो शृगार रस से भरपूर है, कहीं कहीं चूटकुले भी है । और शोकगीत में तो माहिर है । स्त्रीयाँ युवान व्यक्ति के मर जाने पर आक्रंद करती है, छाती पिटती है,

सभी स्त्रीओं के बीच में एक स्त्री आकर जोर जोर से छाती पिटकर शोकगीत गाती है । हाय, हाय शब्द से वातावरण करुण बन जाता है । लेखक करुण रस में माहिर है । लेकिन दलित समाज में स्त्रीयाँ जो छाती पिटती है वह गलत परम्परा है । समाज सुधारक उसे बंद करवाये तो सही बात हो सकती है, हृदयरोग के कारण कहीं कहीं स्त्रियाँ जोखिम डाल सकती है ।

श्री जोसेफ मेकवान के दोनो दलित उपन्यास मूलतः आंचलिक है अतः उनकी लेखनशैली आँचलिक है । सुषमाजी के अनुसार आंचलिक उपन्यास लिखने की कोई भी शैली हो सकती है, पर सर्वाधिक सफल शैली चित्रात्मक शैली है, जिसमें उपन्यासकार एक फोटोग्राफर का रुप धारण कर उस आंचल का एक के पश्चात् एक स्नैपशाट प्रस्तुत करता चलता है ।[७]

आंगलियात में हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी शब्द भी है, मूहावरे, लोकोक्तियाँ, रस, अलंकार, अंग्रेजी शब्द, संगीतात्मक शब्द, व्यंग्यात्मक शब्द वाक्य, गीत, भजन भी प्रभुर मात्रा में है ।

- **उर्दू शब्द**

  बाँग, दुआ,खून, फाँसी, लाश, आशक (आशिक)

- **अंग्रेजी शब्द**

  कन्ट्रोल, पोस्टमोर्टम, रिपोर्ट

- **मूहावरें**

  बे पांदडे लीला था- सुखी था (पृ.२)

  भीतर नो भालतांय नो आवडयुं- मित्र के हृदयको पहेचाना नहीं

  मोनो- मोख आल्य- सीधा जवाब दे (पृ.५)

  पोणो हो दोकडा- ७५ प्रतिशत

  नवतर जोणु हतुं-नई बात थी (पृ.१३)

  मारकणी आँख- टेढी आँख

  आँख डबक डबक चूई रही हती-

  रुमाल लेते समय मेठी कुछ खो बैठी थी (पृ.२९)

  तीर की तरह देखना -

मोछे लेबू ठरे- मूछ पर लींबु ठहरे पृ.३७

खंभे पे कफन रखकर अब जीना रहा ! पृ.४९

होल आना हाचु- सौलह आना सच (सौ प्रतिशत सच) पृ.५५

खोखरा करी नाख्या- अच्छी तरह पिटाई की ।

सोंपो पडी गयो- छाप पड गई (पृ.६०)

नाक वाढवामां झाझी वार ना लगाडे-

लोकोक्तियाँ

- घी के बरतन में घी- पृ.४
- घर की मूर्गी दाल बराबर/घर क गूड गार (मिट्टी) बराबर- पृ.३
- पोणीमां रेवु ने मगर हंगाथ वेर राखवुं पृ.२३
  (पानी में रहना और मगर के साथ बैर रखना- पृ.२३)
- पटल, पाडो न पारधी, ऐमना भरु से ना रे वुं
  (पटेल, पाडा और पारधी के विश्वास में नहीं रहना- पृ.२४)
- घरनो भेदियो लंका पाडे- (घर फूटे घर जाय-पृ.७१)
- पाटीदारोना तां विवाह होय तो ढेयडी मेंश घालीनं फरे
  (पटेल के यहाँ शादी हो तो बुनकर की पत्नी काजल लगाकर फीरे)
- काले अक्षर ऐने माटे भेंस बराबर हता.
  (काले अक्षर उसके लिए भैंस बराबर थे ।-पृ.८३)
- खुदा के वहाँ देर है, मगर अंधेर नहीं है (पृ.१०२)
- डूबते को तिनके का सहारा- पृ.२१९
- पूतर पारणामांथी ने वहु बारणामांथी - पृ.२४४

संगीतात्मक शब्द

- खट, खट, खट..खट, खटा खट । पृ.१
- हो..हो...हो...हो... पृ.८
- फट, फटा, फट, खट, खट, खट ! पृ.३६
- घर्र्र् करती जीप .... पृ.१०१
- तड् ....तड्.....तड्..... पृ.१५५
- ऊँ...अ...ऊँ..आ...आ...पृ.२१९

व्यंग्यात्मक शब्द

- हवाशेर हूँठ तो मारी माने य पचाववी भारे पडे !
- काले अक्षर भैंस बराबर पृ.८३
- डूचा...पृ.९३
- कूत्ते को रोटी फैंकते हे, आसन बिछाकर तो इन्सान हो उसको खिलाते है ।

रस

- हास्यरस- किधर है वो बामणा ?

(मंछाराम की धोती का छोर छूट गया, साहब ने मूँह फेरकर हुकम दिया - रे मान ! ईस बामणे के करम में पाँच दंड लिखे है, इस पर मेख मार दे ! पु.१०१

- तू अभी भी कंकुभाभी को भाभी, भाभी क्यों करता है !

(क्योंकि अब तो दानाने कंकु के साथ शादी की थी । जीवन हँसता है ।

करुण रस

वालजी कीलाश को देखने कंकु जाती है तब का दृश्य

परहर्या चिया परदेश रसिरा वालमजी

मुन नोंधारी मेलीने नाथ-नागर केशरिया !

ल्यो रे जोद्धा हाय ! हाय ! (पृ.१०७)

(शोकगीत के कारण करुणता खुद राग में ढलीने कंकु ना कंठे रेलाई हती ! एका एक स्त्रीना कंठ ने कान कंकुना क्रंदन मा हाहाकार थई गया हता । झाडवां जड बनी गयां हतां । लीमडाना डाल हालतां अटकी गयां हतां । वहेतां जल जाणे थंभी गया हतां । काल क्यांक अगोचर अटवाई गयो हतो ने वायु ऐनु वहन वीसरी बेठो हतो । सूनकारो व्यापी गयो हतो आखा मलकमां ।

थंभी जा...... पियुडा प्राण, संग मारो साही ले

हुं सोले सजु शणगार, हैये मारा हींची ले ।

मनना मोह्या हाय ! हाय !!!

दिलना दोह्यला हाय ! हाय !!!

आगमच हेंड्या हाय ! हाय !!!

अधवच्च मेल्या हाय ! हाय!!!

जोद्धो चाल्यो हाय ! हाय !!!

जमडे झाल्यो हाय ! हाय!!!

भाईबंध छोडया हाय ! हाय !!!

भार्या त्यागी हाय ! हाय !!!

ऐको रस करुर्ण : भवभूति की उक्ति को श्री जोसेफ मेकवान ने चरितार्थ की है ।

वीरस-पृ.१४६.. पृ.३२ (टीहा का पराक्रम)

अलंकार

अतिशयोक्ति अलंकार- पानी का पोटका बाँधे तो भी पानी की बूँद बाहर न जाय ऐसी बूनाई होती.. पृ.१३

उपमा अलंकार- डामर जैसे खूलेबदन पे

नर्या पूतलानी जेम ठरी गया, पृ.१०४

कंकु माखण ताववा पहेलां जाणे ऐने ज तावी लेवा ताकती हती

शोकभरे बादल बिखर गये (महोल्ला उपर गोरंभायेला शोकछायां बादल जाणे विखेराई गयां)

रुपक अलंकार

- होठ कालाभट्ट थई गया हता (पृ.१०६)
- जड बनकर टीहा को देखती रही (पृ.१४९)

विरोधाभाषा अलंकार

- उनका ही ध्यान रखना, फिर भी उनसे लाखो माईल दूर रहना ।
- पैर जमीन पर नहीं रखता था । पृ.२२१

Myth

- अईलोचन, अभिमन्यु दृष्टांतकथा
- दुर्योधन को दान करने के लिए कहना, यहाँ वाली दान करने बैठती है ।

चित्रात्मक वर्णन

- मूछे कान तक लंबी थी, लंबे बाल गरदन को ढाँकते थे, इसीलिए गरदन बडी दिखाई देती थी, सहज चिपकी मुखकृति पे लंबगोल बडी आँख, उनको कहे बिना भयंकर दिखाई देते थे । (पृ.४१)
- कंकुना चीमलाई गयेला चेहरा ऊपर उजेत नहोतु फरकतु (पृ.१२२)
- भावविहोणी आँखे अनराधार आँसुओ रोवा मांडती
- टीहाना मोढा उपर उदासी लिंपाई वली

चूटकुले

- चक्करडी, भम्मरडी मारा घेर झाझां रे मोघां भाभी,
  घूघरो रमनार झटपट लवोरे रे मोघां रे भाभी ।(पृ.१३९)

प्रतीक

प्रतीक अंग्रेजी शब्द Symbol का हिन्दी पर्याय है । रचना में चाहे वह शब्द हो या पूरा वाक्य या संकेत मात्र उसमें प्रतीकात्मकता गागर में सागर भरने का काम करती है । प्रतीकों के जरिये रचनाकार अपनी बात को पाठको के सामने बडे प्रभावक ढंग से रख देता है । प्रतीकात्मक प्रयोग की ओर उपन्यासकार तभी उन्मुख होता है जब उसका कथ्य या अनुभूति ऐसी होती है कि मात्र अभिधा शक्ति सम्पन्न भाषा उसकी सफल अभिव्यक्ति में अपने को असमर्थ पाती है या सामान्य चलाताऊ साहित्यिक भाषा में उसका वर्णन कर वह मनोवांछित प्रभाव तथा सौंदर्य उत्पन्न कर पाने में संशयशील होती है ।

आंगलियात शीर्षक ही प्रतीकात्मक है ।

दलित वालजी की वैयक्तिक व्यथा में पूरे समाज की व्यथा को उद्घटित किया गया है । मेरे मन से साली यही कसक निकल नहीं पा रही है कि कब तक लोग मुझे पराया मानते रहेंगे ।

श्री. के.एम. मकवाणा ने 'ग्रामजीवननी साठोत्तरी गुजराती नवलकथाओं' में लिखा है-

आंगलियात में लेखक का भाषाकर्म निराला है । लेखक के पास भाषा का भरपूर वैविध्य है । चरोतर के ग्रामप्रदेश में बोलती भाषा

की स्वाभाविकता और वेधकता पात्रो की बोलचाल में अनायास सिद्ध हुई है । पात्र के मंथन, संवेदन, विचार, स्वभावगत लक्षण अपलक्षण रागद्वेष, भाव, मानवसहज, मर्यादा आदि को वेधक और वास्तविक रुप में उभर आनेवाली सक्षम भाषा लेखक ने प्रयोजित की है । जातिगत बानी व्यवहार की और उच्चारभेद का ख्याल भी रखा है । यह संदर्भ में प्रमोदकुमार पटेल कहते है- बुनकर समाज की तलपद (आचंलिक) शब्दोवाली बोली का जोसेफ मेकवान ने सबल प्रयोग किया है । ये वर्ग के इन्सानों के अंदर का हीर उसमें उभर आता है । इस तरह आँचलिक बोली का समर्थ विनियोग यह उपन्यास का एक जमा पक्ष है ।

खेडा जिल्ले की आंचलिक भाषा की शक्ति यहाँ जिस रुप में प्रवर्तमान है यह लेखक के भाषा सामर्थ्य की साबिती देती है । तो प्रशिष्ट पदावली के प्रयोजन में भी लेखक पीछे हट नहीं करते । इसीलिए रघुवीर चौधरी कहते है- श्री मेकवान बूनकर समाज की ताकत को पिछान सके है । और स्वयं हिन्दी गुजराती के अभ्यासी है इसलिए प्रशिष्ट पदावली के प्रयोग भी छूट से कर सकते है । एक संमिश्र भाषारुप भी अभ्यास का विषय बन सकता है ।[10]

'गुजराती साहित्य में दलित कलमें' पुस्तक में बाबू दावलपुरा आंगलियात की भाषा के बारे में लिखते है-

लेखक ने संवादो को गद्य में चरोतरीबोली के अनुसार प्रायोजित करने की शैली अपनायी है । कम शब्दोंमें बहुत कुछ व्यक्त करने की क्षमता और लोकबोली, लय-लहजा, ओर रुढ शब्दों के प्रयोगो को कार्यसाधक रुप में उपयोग करने की क्षमता भी उनमें है । परन्तु शीलापुर, रत्नापुर के ग्रामीण पात्रो की वाणी में सोन देना (हापी देवु) समझाना (हमजाववुं) खेत (खेतरां, छेतरां) मैं (उ/हूँ) भाई, (भई, भाई) सूनना (सांभळणुं, होभणवुं) जैसे वैकल्पिक उच्चारणों की सहोपस्थिति लेखक की भाषिक असावधानी को व्यक्त करती है ।[11]

श्री जोसेफ मेकवानने आंगलियात में स्वातंत्र्य पूर्व और पश्चात गुजरात ग्रामीण दलितों की दुर्दशा और अध:पतन तथा उसमें पटेल, पुलिस,

नेता, ब्राह्मण, मेहतर (मुखिया), पंच सभी मिलकर कैसे दलितो को लहू जोंक की तरह चूस रहे थे, यह दिखाने का उद्देश्य रखा है । साथ ही हमारे समाज का परम्परागत ढाँचा, जातिप्रथा, वर्गभेद, विवाह, मृत्यु आदि में धार्मिक परम्पराएँ एवं सामाजिक खोखलापन प्रकट करके नये समाज का संकेत भी किया है ।

दलितों का होनेवाला भरपूर शोषण, दलित स्त्रीयों का शारीरिक शोषण, शिक्षा का अभाव, आदि अनेक उद्देश्य भी लेखकने दर्शाये है । अंग्रेजो के समय में न्याय मिलता था, किसी भी व्यक्ति को शिक्षा होती थी, पर आजादी के बाद सगावाद के कारण नेताओं के सगे संबंधी अत्याचार करके भी निर्दोष ठहरते है । दलित, शोषित प्रजा को ये सेहना पडता है । सरकार ऊपर ऊपर से अच्छे प्रलोभन देती है, पर गाँवो में दलितों की स्थिति गुलामों से भी बदतर है, उसका न तो कोई सूनता है, न सूनेगा। कुछ स्थानो पर घटनाओं और व्यक्तिगत व्यवहार का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी है । ग्रामीण दलित सुधारणा, छूताछूत भेद, कुचले-पिछडे शोषित वर्ग के उत्थान का प्रमुख उद्देश्य इस उपन्यास का रहा है ।

जनवादी कलाकार जीवन का समग्र चित्रण करके अपनी पूर्ण सहानुभूति पीडितो व सताये हुओ के प्रति प्रकट करते है । सच्चा कलाकार सत्य, असत्य का रुप स्पष्ट करता है । गुजरात के दलितों की वास्तविक परिस्थिति को सच्चे रुप में अंकित करने का प्रयास सफल किया है ।

जो ग्रन्थकार किसी जाति को सच्चे रुप में उपस्थित करता है, उसके गुणदोषों को ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त कर सकता है- वह संसार की सबसे बडी सेवा करता है । लेखक झोंपडियो से लेकर महलों तक, दलितो से लेकर पटेलो तक, ग्राम पंचायत के सरपंच से लेकर धारासभा, मंत्री तक सफर करवाते है ।

आंगलियात का उद्देश्य निम्नलिखित है-

(१) अपने व्यवसाय पर गर्व

आंगलियात में बूनकर दलित जाति की कथा है । टीहा, दानजी, वालजी, जीवन, कंकु, भवानचाचा, मेठी, वाली, गोकल आदि सबको अपना

धंधा अच्छा लगता है, कपडा बूनना, बेचना उनको प्रिय लगता है, टीहा तो दूसरे युवानों को रोजगार मिले, इसीलिए बाजार में अपनी दुकान खरीदकर उसके (माल) कपडे को बेचना चाहता है । उस धंधे में किसी के घर जाना नहीं पडता, दलित लोग पटेल, ठाकुर जैसी उच्चजाति के घर जाते हे तो बाहर बिठाते है, स्त्रीयों का शारीरिक शोषण करते है, छूताछूत भेद रखते है, रोटी, पानी, ऊपर हाथ से देते है, छू न जाय उसका ख्याल रखते है, और यदि छू जाय तो ठंडे पानी से नहा लेते है । पशु से बदतर जीवन का ऐहसास करवा देते है । मारते, पिटते है, थोडी सी गलती पर व्यंग्यबाण सुनाते है इसीलिए कपडे बूनने के व्यवसाय में मान है, सम्मान है किसी का हस्तक्षेप नहीं, अपने घर पे बैठकर ही बूनाई करके पुरुष कपडे को बाजार में बेच सकता है । मिलो के कारण यह व्यवसाय बंद हो गया है ।

(२) दलित सामाजिक व्यवहारों में पटेलों का हस्तक्षेप

छूताछूत का भेद तो दलितों के साथ रखते हैं, पर उतनी बात से पटेलों को संतोष नहीं है । टीहा मटके फोडनेवाले की पिटाई करता है तो पटेलो को यही बात मन में होती है कि एक दलित पटेल को मार नहीं सकता । पटेल चाहे कुछ भी करे, इज्जत भी लूँट सकते है ।

मेठी के बाप को जाति से बाहर, करना कहते है, तालाब में से पानी नहीं भरने देगे, हमला करेंगे, वकील के द्वारा मेठी चूंथिया के घर जाय ऐसे प्रयत्न करते है । टीहा को भी जातिबाहर करने को कहते है, रामला, खुशला जैसे दलित द्रोही उनके गुप्तचर बनकर दलितों का सत्यानाश पटेल करते है ।

(३) मेहतर (मुखिया) प्रथा का दुरुपयोग

हरेक जाति में समुदाय के नेता (मेहतर) होते है, जो चार, छे गाँव का मुख्य व्यक्ति होता है, सामाजिक प्रसंग सगाई, शादी, मृत्यु आदि में उनका वर्चस्व रहता है, जो कहता है उसी प्रकार संबंध करते है,

जोडते है, तोडते है । खुशला खोंट जैसे गलत ही काम करते है, किसी अच्छे व्यक्ति का संबंध तोडते है, पैसे लेते है, विरोधवाले व्यक्ति के परिवार का सर्वनाश करते है, एकचक्री शासन करते है । मेठी जो दु:ख सहती है उनमें खुशला खोंट का हिस्सा ज्यादा है, पटेलों से मिलकर मेठी को दु:ख मिले, चूंथिया जैसे जुआरी, शराबी के साथ गौना करवाते है ।

(४) दलितों में आंतरविग्रह

(घर फूटे घर जाय) रामला, भीखला जैसे दलित मुहल्ले में होनेवाली बातचीत पटेलो को पहूँचा देते है, पटेल उनके आधार पर ही आगे षडयंत्र बनाते है, इसके कारण ही मेठी, टीहा, जीवन, वालजी का जीवन नर्क बना देते है । इस प्रकार आंतरविग्रह समाज के लिए खतरनाक है ।

(५) स्वराज्य पूर्व और स्वराज के बाद दलितों की स्थिति

लेखक ये नहीं कहना चाहते कि अंग्रेजो का राज अच्छा था, लेकिन अंग्रेज छूआछूत भेद में नहीं मानते थे, न्याय मिलता था, दलितों पर अत्याचार नहीं होते थे, और होते थे तो सामनेवाले पक्ष को शिक्षा करते थे, इसीलिए दलितों का जीवन एक मनुष्य की तरह था । उपन्यास में स्पष्ट निर्देश है कि वालजी का खून करवाया उसकी शिक्षा के रुप में मनजी, नानजी को कैद, रणछोड डेलेवाला, गोला, फूलजी पटेल को दंड किया, ये अंग्रेज राज का परिणाम है ।

आझादी के बाद पहेले जैसी परम्परा चालु हो गई, राजा गये, लेकिन नेता आये, राजा तो न्याय करता था, लेकिन नेता तो अन्याय करते थे, उनके सगे-संबंधी भी अपने विस्तार में रौफ जमाते है । अत्याचार करते है और राजकीय लागवग के कारण उसका कुछ नहीं होता । सभी नेता नहीं लेकिन थोडे बहुत नेता अपने को बडा दिखाने दलितों पर रौफ जमाने ऐसा व्यवहार करते है । आज अनेक अत्याचार उसके उदाहरण है ।

(६) नेताओं के रुप और दलित

थोडे बहुत नेता बाहर से अच्छा दिखाने का प्रयत्न करते है, और अंदर से षडयंत्रो से भरपूर होते है, आंगलियात में स्पष्ट किया है

कि रणछोड रामला जैसे दलित को ड्राईवर रखकर गांधीजी के रास्ते पर चलने का ढोंग करता है । वही डेलेवाला टीहा का खून करवाकर डी.एस.पी., फोजदार को मिलकर केस भी नहीं लिखने देता । एक सत्यपथ पर चलनेवाले व्यक्ति का करुण अंत करवाकर अपने को अच्छा मंत्री साबित करवाता ा है ।उपवास करता है, दलितो के हाथ से रस पीकर अपने को गांधीनेता कहता है ।

(७) भवानचाचा, मेठी जैसे वैद्य, दायन के रुप में होंशियार

भवानचाचा देशी दवाएँ देतेथे, पैसे नहीं लेते थे, मुफ्त में लोगों की सेवा करते थे, गूढ प्रश्नों का निकाल करते थे,

मेठी भी दायन के रुप में होंशियार थी, धर्मादा अस्पताल के डॉक्टर, नर्स दलितों के काम नहीं करते थे, ऐसे समय में मेठी जैसी दायन ही स्त्रियाँ की प्रसूति करवाती थी । दलित समाज के लिए ये वेनों भगवान के बराबर है, आदर्श समाज के लिए ये सीमाचिह्न रुप है ।

(८) उच्चजाति और दलित जाति के बीच संघर्ष

आंगलियात में दोनों जाति के बीच संघर्ष खुलकर दिखाया है, जैसा है वैसा लिखा है, यथार्थ है ।

मेठी जैसी युवान लडकी का मटका फोड दिया, फिर भी एक शब्द बोल नहीं सकती थी, आज तक दलितों ने सेह लिया है, एक भी दलित उसका सामना करने के लिए तैयार नहीं है, टीहा उस लडके को सबक सिखाता है, तो गाँव के पटेल लडकी के बाप को दलित जाति से बाहर करने के लिए दलितों के पर दबाव करता है । मेघजी पटेल टीहा को कहता है-तुम (मुखिया) दूर रहो, ठाकुर, उनकी ससुर के नाती की जीभ बहोत चलती है । (पृ.१९)

टीहा की पिटाई करने के लिए पटेल लोग इकट्ठे होते है, पर मुखिया के कारण बच जाता है । टीहा भी कहता है,

मैं भी एक दो को लेकर जाँऊगा...

टीहा मुहल्ले में आश्रय ले.. तो गाँव के उच्चलोग पूरा मूहल्ला ही जला दे..... पृ.२१

टीहा गाँव से बाहर निकले तब पूरा करने के लिए पटेल, बारैया (एक जाति) लोगो को चारो तरफ भेज देते है, टीहा को मुहल्लेवाले चूपके से भगा दे तो पूरे मुहल्ले को जलाने की धमकी देते है ... पृ.२७

मटके ही नहीं फोडे थे, खेतो में खुलेआम हाथ पकडे थे, गौने के अगले दिन इज्जत लूंटी थी ... पृ.२८

टीहा को चौक में बुलाते है तब पटेलो की आँखों में खून टपकने लगा पृ.३१

टीहा तलवार लेकर भाग जाता है, खेतो मे आठ व्यक्ति पर थूँहर फेंककर भगाता है, मनजी की पिटाई करता है । पृ.३२

टीहा के जाने के बाद दलितों के खेतो में नुकशान पटेल करते है । पृ.३५

लेखक का उद्देश्य यह है कि इस् प्रकार के दावपेच नहीं खेलना चाहिए । दलितों की स्थिति से सबको अवगत कराने का उद्देश्य भी है । पटेलो ने मजदूरी पर दलितों को बुलाने का बंद किया था । टीहा जैसे दस मिल जाए तो सामना कर सकते है, अब तो खंभे पे कफन रखकर जीना है ... पृ.४९

युवान ही देश का, जाति का भविष्य बदल सकता है । दलित युवान पंच उसका उदाहरण है ।

दलितों पर पटेलों का कितना वर्चस्व है, दलितो को कठपुतली की तरह नचाते है ।

बीजलने मराठा सरदार की पिटाई की गायकवाड सरकार को मिलकर बेगार बंद करवाता है । पृ.(११३)

लेखक ये स्पष्ट करते है कि दलितों में भी वीरता है पर अंगारे पर राख जम गई है, ये राख दूर करनेवाला कोई नहीं है ।

वालजी की शोकयात्रा में कई लोग आते है, पर सब पटेलो से डरते है, अन्याय का विरोध करनेकी शक्ति नहीं है ।

रणछोड डेलेवाला कहता है कि दलितों में एकता होती तो हम गाँव में नहीं रह सकते । पृ.११४

दलितों की मानसिक स्थिति- अंदरो-अंदर झघडा करते है, एक दूसरे का बूरा इच्छते है, जिस दिन ये जाति जागेगी उस दिन पटेलो का सुरज अस्त हो जाएगा । पृ.११५

कूए, तालाब के पानी बत्रीस लक्षणवाले का भोग माँगत है, उसी प्रकार पटेल जाति दलित जाति के पास भोग माँगती है, पर अब नहीं चलेगा, अन्याय का सामना करना, सच्चाई हो तो साथ देना...

वालजी और टीहा की मौत उपन्यास का करुण प्रसंग है । रामराज्य के लिए ऐसे कई वालजी, टीहा को मौत देनी पडेगी, तभी दलितों को कोई इन्सान की तरह देखेगा- यहाँ लेखक का उद्देश्य शिखर सर करता है ।

इस प्रकार आंगलियात में पटेलों और दलितो के बीच संघर्ष खुलकर दिखाया है, लेखक का उद्देश्य है कि ऐसे संघर्ष कम हो, सबको न्याय मिलना चाहिए और दलितो को इन्सान की तरह देखना चाहिए ।

(९) पुलिस का स्वरुप

उपन्यास में पुलिस का स्वरुप यथार्थ है । अंग्रेजो के समय में पुलिस का काम अच्छा था, लेकिन आजादी के बाद पुलिस नेताओ की कठपुतली बन गई है, उसका उदाहरण टीहा की मौत, और पुलिस का काम स्पष्ट है । पुलिस जनता का मित्र नहीं, प्रधानों की मित्र है ।

(१०) दलित नारी की स्थिति

साहित्य समाज का दर्पण है, वैदिक युग में स्त्री -पूज्या थी, पर उसके बाद राजाओं के समय में, मुस्लिम युग में, अंग्रेजो के समय में, आजादी के बाद स्त्रीयों की स्थिति में परिवर्तन चलता रहा है ।

मेठी का मटका फोडना प्रसंग उसका उदाहरण है । मोटर में उठाकर ले जाना, प्रसंग भी कम नहीं है । गौने के अगले दिन स्त्रियो की इज्जत लूटीथी और ये दलितो ने सेह लिया था । दलित नारी अशिक्षित है, कंकु की तरह सामना करना और आगे बढना चाहिए, तब भविष्य अच्छा हो सकता है ।

(११) **अशिक्षा**

शिक्षा के बिना मनुष्य का जीवन पंगु हो जाता है, सारे दलित आंगलियात में अनपढ है, और पटेलो ने उनका फायदा उठाया है, मुहल्ले में सिर्फ मास्तर ही शिक्षित है, जो यहाँ नौकरी करने आया है, वह रात्रीशाला में युवानों को पढना-लिखना सिखाता है । दाना को डेलेवाला जब चिट्ठी लिख देता है तो वह अनपढ सीधा गोला को देता है । उसमें गाडी तय करने का लिखा है, पर अकेली मेठी को उठाकर ले जाने का प्रबंध भी लिखता है जो दानजी पढा-लिखा होता तो शायद वालजी की मौत नहीं होती ।

रामला पत्र लेकर मेठी के घर देता है, डेलेवाले ने उसमें लिखा था, "टीहाने शादी कर ली है, मेठी तू अब चूंथिये का घर संभालना" यह पत्र के कारण मेठी चूंथिये के घर जाती है और जीवन नर्क बन जाता है । इस प्रकार नहीं पढनेवालो की जिन्दगी अन्धकारमय है ।

(१२) **टूटते गाँव और शहर की ओर दृष्टि**

दलितों को गाँवो में छूताछूत का भोग बनना पडता है । कूत्ते से बदतर हालत हमले का डर, संघर्ष, दलित स्त्रीयाँ असलामत, बेगार ये सभी कारणो से त्रस्त होकर गाँव छोडकर शहर जाना ही पडता है ।

शहर में छूताछूत का भेद कम होता है, रोजगार मिलता है । उन्यास में दानजी, जीवन, मोहन आदि गाँव छोडकर शहर चले जाते है ।

(१३) **सामाजिक व्यवहार में दलित (जन्म, शादी, मृत्यु, आंगलियात परम्परा)**

'आंगलियात' में सामाजिक व्यवस्था का निरुपण है । साहित्य कार समाज में रहता है, उसमें भी दलित साहित्य जब दलित साहित्यकार लिखता है तो छोटी छोटी बातों का उल्लेखकर सही बातों का निरुपण करता है, जो आज तक साहित्य से अज्ञात था । श्री जोसेफ मेकवान जैसे महान साहित्यकारों ने आगलियात में दलितों की सामाजिकता का पूर्ण ख्याल रखा है । पुत्र का जन्म होता है तो खुश होकर थाली बजाते है, डॉक्टर, नर्स, प्रसूति करवाने नहीं आते थे तो दलित दायन ही प्रसूति करवाती थी ।

शादी में सगे-संबंधी आते हैं, खट्टे-मीठे गीत भी गा लेते हैं, हल्दी लगाते हैं । पुत्र-पुत्रवधु, माता-पिता एक ही घर में रहते है, संयुक्त परिवार की परम्परा है । रिश्ता बडे लोग तय करते हैं ।

मृत्यु का वातावरण करुणमय होता है, युवान मृत्यु होने पर सारा मुहल्ला शोक रखते है । पुरुष के मरजाने पर उसकी पत्नी अंतिम बार शृंगार करती है, चूडियाँ तोडते है, सवा महिने तक कभी कभी छे-बारह महिने तक शोक रखते है । त्योहार मनाते नहीं है । शोकगीत गाते है, स्त्रीयाँ छात पीटती है । सातवें दिन शोकसभा रखते है । वृद्ध की मृत्यु पर शोक कम रखते है, बारहवें दिन सगेसंबंधी, मुहल्लेवाले को खाना खिलाना पड़ता है, पैसे ज्यादा खर्च होता है, नहीं खिलाने वाले को व्यंग्य भरे शब्द कहते है । टीहा जैसे विद्रोह करके खाना नही खिलाते और युवानों को ये अच्छा भी लगता है, ये आधुनिकता भी है । शादी मृत्यु में ज्यादा खर्च होने पर कर्जा करते है, ब्याज में ही फसल देते रहते है, इस प्रकार गरीब बनते है ।

आंगलियात लेने की परम्परा- स्त्री की पेहली शादी हुई हो और उसके पति से तलाक या पति की मृत्यु हुई हो और उसके बच्चे को लेकर वह दूसरे पति के घर जाती है तब वह बच्चे को आंगलियात कहते हे । उपन्यास में ‘गोकल’ का पात्र आंगलियात है । उच्चवर्ग में ऐसे बच्चे को आश्रम में भेज देते है, दलित ऐसे बच्चे का स्वीकार करते है, यह अच्छी परम्परा है ।

भाभी विधवा होती है, और देवर यदि कँवारा हो, तो वह भाभी के साथ शादी करता है यह भी एक अच्छी परम्परा है । धन्यवाद के पात्र है ।

(१४) हमले का डर

दलितों को ‘बसाए हुए लोग’ कहते है क्योंकि गाँव में सफाई करने मलमूत्र साफ करने, मृत पशु को ले जाने के लिए, कपडे बूनने के लिए बसाते है, इसीलिए उन्हें उच्चवर्ग की दया पर रहना पड़ता है, एक गुलाम से बदतर हालत उनकी होती है, बेगार करवाते है, पशु की तरह

माल ढोने का काम मुफ्त में करवाते है, फिर भी थोडी सी गलती करने पर पिटते है, गालियाँ देते है । किस समय हमला करेंगे उसका पता ही नहीं, मानसिक भय सदा ही रहता है ।

उपन्यास में स्पष्ट है तीन, चार हमला हुआ है, और ये बात यथार्थ है, कितने दावपेच खेलते है । दलित लडकी की छेडती करके कुछ कहने पर दलितो को पिटते है, कहाँ न्याय है ? स्त्री की इज्जत उच्चवर्ग के लोग किस प्रकार रखते है ? क्या ऐसे उच्चगुण उनके पास है ! इसीलिए उच्चवर्ग कहलाते हे, दुर्गुण से भरे है, फिर भी अपने को अच्छे मानते है ।

सचमुच आंगलियात गुजराती साहित्य का उत्तम उपन्यास है । दलित शोषित आत्मा का करुण क्रन्दन है । आज तक ऐसाा उपन्यास मैने नहीं देखा । समाजसुधारक, नेता, पुलिस, उच्चवर्ग के लोग यदि इस उपन्यास को समझे तो सचमुच नये समाज का उद्‌भव होगा, दलित एक मानव है, और मानव के रुप में जीवन व्यतित करे यही लेखक की कामना है ।

उपन्यास में वर्ण संघर्ष के आलेखन में सर्जक की प्रतिबद्धता ने जो कलासंयम बरता है वह श्रेष्ठ है ।

उपन्यास का नामकरण ही मुख्यतः उसके प्रति पाठको के आकर्षण का कारण होता है । अतः उपन्यास का नाम कल्पनापूर्ण, बिम्बात्मक, संक्षिप्त, पूरे कथानक के सत्व रुप एवं उत्सुकता वर्धक होना चाहिए । इस दृष्टि से ‘आंगलियात’ नाम इस उपन्यास के लिए उपयुक्त ही है ।

पृ.७६,७७ में कंकु वालजी को कहती है “सात महिने में जन्मे फिर भी सशक्त है तो नौ महिने के बाद जन्मे होते तो पूरे नवघण होते ।”

कंकु के शब्दो से वालजी को बूरा लगता है, क्योंकि मुहल्ले में लोग उसे आगलियात मानते थे, कंकु भी मुझे आगलियात मानती है ।

वालजी की माँ ने बीजल के साथ (वालजी के पिता) दूसरी

शादी की थी, पहेली शादी की थी, वहाँ गौने के पाँचवे दिन से ही अपने मायके में चली गई थी और तलाक लिया था । तलाक के दूसरे महिने में ही बीजल के घर संसार की शुरुआत की और सातवे महिने (अधुरे महिने) में ही वालजी का जन्म हुआ, वालजी उसके पिता बीजल जैसा ही था, मोंघी कहती थी कि पाँच दिन ससुराल में रही थी, किन्तु पति की परछाई भी मेरे शरीर पर नहीं पडी थी, लोग गलत ही कहते थे कि "वालजी बीजल का नहीं, पहेले घर का, यहाँ आकर जनम हुआ वरना ए आंगलियात ।"

बीजलने तंग आकर मुहल्लेवाले को कहा था "मेरे साथ व्यवहार रखना हो तो रखना, किन्तु मेरे बेटे को इस बात से ऊँगली उठाई तो काटना मुझे आता है, मैं जानता हूँ कि कौन सच्चे बाप के है ?"

ब्राह्मण ने पावागढ की मनौती की, पूरे मुहल्लेवाले को दावत दिया कि बीजलभाई के घर सह परिवार खाने का दावत देता हूँ, वालजी को बीजल का बेटा कहते है वही खाने के लिए आए और आंगलियात मानते है वह दूर रहे । उस दिन सभीने खाना खाया था ।

यहाँ आंगलियात की व्याख्या है । वालजी ने टीहा को साथ दिया और मित्र के कारण जान दे दी । वालजी कथा को आगे बढाता है, आंगलियात की कथा का आधा श्रेय वालजी है ।

वास्तव में उपन्यास में आंगलियात गोकल है । जो मेठी को अपनी पेहली शादी के कारण जन्मा था । वह चूँथिया का पुत्र है । मेठी कूए में गीरती थी तब टीहा उसे ले आता है, गोकल भी साथ में था वह स्पष्ट रुप में आंगलियात है । गोकल को अपना पुत्र ही मानता है । स्कूल में भी मेठी इस प्रकार नाम लिखवाती है । गोकल टीहाभाई परमार । बच्चे जब चिढाते है तब भी गोकल को टीहा समजाता है कि तू मेरी ऊँगली पकडकर चलता है इसीलिए तुझे सब आंगलियात कहते है । वास्तव में गोकल ही टीहा का नाम आगे बढाता है, टीहा के अपने पुत्र नालायक निकलते है, तब वाली की देखभाल गोकल करता है ।

टीहा के पुत्र घर के बँटवारा करते है, तब छोटे मनु के हिस्से में घर आता है तो रामला को बेच देता है, गोकल समझाता है कि हमारे बाप का घर लेकर हमारा नाक काट लिया है, ये कैसे सेह लिया जाय । दोढे-दुगुने पैसे ले-ले किन्तु ये घर आने का रेहने दो ! तब रामला कहता है- चल, चल, तू आंगलियात । तेरे बाप का ?

गोकल वाली माँ के लिए संडास बनवा रहा था, तब मास्तर आते है, पूछने पर गोकल कहता है कि वाली माँ के लिए संडास बनवाता हूँ । तब वाली कहती है, "दो, दो बेटे जिंदे है, फिर भी दूसरे के यहाँ रेहने का समय आया है !" तब गोकल कहता है- "देखो मास्तर ! उसके मन अभी भी आंगलियात नहीं मिटा ?"

माता को अपना पुत्र नहीं रखता तब आंगलियात अपनी माँ तो नहीं है पर पालक पिता की पत्नी की देखभाल वह करता है । लेखक का उद्देश्य यहाँ स्पष्ट होता है । सचमुच 'आंगलियात' शिर्षक यथायोग्य है ।

उच्चवर्ग के लोगदलितों को आंगलियात की तरह मानते है, जिस प्रकार आंगलियात को मुहल्लेवाले तू...तू करते है, तुच्छ व्यवहार करते है व्यंग्यभरे, तीखे वचन सुनाते है, इस प्रकार उच्चवर्ग के लोग दलितो को अछूत मानते है, आंगलियात मानते है, गालियाँ देते हे, मुफ्त में मजदूरी बेगार करवाते है, बहु-बेटियों की इज्जत लूँटते है, क्योंकि दलित तो समाज का आंगलियात पुत्र है ।

साहित्य का उपयोग, साहित्य का समाज पर प्रभाव, साहित्य का भविष्य के बारे में तर्क ये सभी शब्द उत्तम साहित्य के लिए है । आंगलियात में भले ही १९३५ से ६० तक की कथा हो लेकिन उसका प्रभाव आज भी है । रामायण, महाभारत लिखे कई वर्ष हो गये, लेकिन उसका सत्य आज भी विद्यमान है, घर घर में प्रभाव है, यही उत्तम साहित्य हो सकता है जिसका प्रभाव युगों युगों तक चलता है ।

'आंगलियात' के बारे में देखें तो उसका प्रभाव आज भी है

१- शिक्षा सबके लिए अनिवार्य है, जो पढे-लिखे नहीं है, उनका

भविष्य दानजी, मेठी, वालजी की तरह है । शिक्षा से ही मनुष्य का विकास होता है । आधुनिक समय में शिक्षा का महत्त्व ज्यादा है, अनपढ व्यक्ति अंधे की तरह हो जाता है । दानजी को रणछोड डेलेवाला चिट्ठी देता है उसमें मेठी को ले जाने का प्रबंध करता है, यदि दानजी पढा-लिखा होता तो चिट्ठी पढ लेता और मेठी का जीवन व्यवस्थित हो जाता, इस प्रकार मेठी को चिट्ठी रामला देता है, वह भी इस प्रकार है । ये चिट्ठी के कारण ही मेठी चूँथिये के साथ गौना करती है । मास्तर सभी युवनो को पढाते है, जिसके कारण युवानो जागृत होते है । यह उपन्यास चेतावनी देता है कि अनपढ व्यक्ति की हालत मेठी, दानजी, वालजी जैसी होगी ।

[illegible]आधुनिक समय में भी गाँवो में उच्चवर्ग के लोग दलितो को अछूत मानते है, मनुष्य चंद्र पर पहूँच गया है, किन्तु मानव के हृदय तक नहीं पहूँचा ।

[illegible]उपन्यास में युवानो के संगठन पर बल दिया है, क्योंकि समाज परिवर्तन के लिए यह अनिवार्य है । युवान बूढे लोगो को कहता है कि आज तक तुमने सेह लिया है, अब हम अन्याय नहीं सेह लेगे, हम ईन्सान की तरह जीना चाहते है, मास्तर का प्रभाव भी युवान पर है, आधुनिक समय में युवान को जाग्रत होना चाहिए और संगठन करके संघर्ष करना चाहिए । अन्याय का प्रतिकार करना चाहिए, तब नये समाज की कल्पना साकार होगी ।

[illegible]:अंग्रेजों के समय में पुलिस का व्यवहार अच्छा था, अन्याय करनेवाले को शिक्षा करते थे, इस प्रकार समाज व्यवस्था ठीक बनी रहती थी । पर आजादी के बाद, पुलिस-नेता का खिलौना बन गई है । अन्याय करनेवालों को शिक्षा नहीं मिलती इसलिए समाज व्यवस्था बिगड रही है । कोई भी जगह जाओ, यह सत्य हो रहा है, पुलिस अच्छा काम करेगी तो उनकी ट्रान्सफर कर देते है, इसीलिए पुलिस बेचारीबन गई है ।

[illegible]: आंगलियात में नेता का व्यवहार यथार्थ स्वरुप में दिखाया है, आज भी यह सत्य है, जहाँ देखो वहाँ यह सत्य साबित हो रहा है । नेता तो गलत काम करते है, पर उनके सगे-संबंधी भी गलत काम करके, दलितो पर अत्याचार करके छूट जाते है । उनको मालूम है कि हमारा बाल भी बाँका नहीं होगा और ये दलित बेचारे बेचारे ही रहते है । ऐसी राजनीति के कारण अनेक टीहे मारे जाते है, अनेक स्त्रीयों की इज्जत लूंटी जाती है । कोई किसी का सुननेवाला नहीं है, पुलिस उनका खिलौना है, नेता दबाव डालते है कि उसका सुनना नहीं ।

आंगलियात में देखते है कि सारे के सारे दलित मानसिक रुप से त्रस्त है, पटेलो ने उन पर दबाव रखा है, और ये यथार्थ है, सत्य है । टीहा ने शीलापर में संघर्ष खेला, मेठी हरण करने की तैयारीयाँ के कारण वालजी पूरी तरह खाना भी नहीं खा रहा था । आँख भी मिल नहीं रही थी, पूरी रात बेचैन रहता था ..। पृ.७६

वालजी की लाश घर में ले आते है तब कंकु जो बोलती है वह उसकी मानसिक स्थिति का परिचय है । एक विधवा स्त्री की मानसिक स्थिति करुण हो जाती है । फिर भी अंतिम बार जो श्रृंगार करती है, कंकु की यह स्थिति सचमुच पागल की तरह ही लगती है ।

कंकु एक साल तक शोक रखती है, दानजी उसके घर का ख्याल रखता है, काम करवाता है । फिर भी लोकलाज के कारण दानजी यहाँ काम आए ऐसा व्यवहार करने में सामाजिक डर है । साथ-साथ मानसिक रुप से भी डरती है । लोग कुछ कहेंगे तो मेरी दशा क्या होगी ?

टीहा का बनावटी खत सुनकर मेठी में बदलाव आता है । मानसिक रुप से हारकर चूंथिया का घर सजाने के लिए जाती है । यह बदलाव में मेठी के सारे सपने चूरचूर हो जाते है । टीहा को पति के रुप में देखना चाहती थी, मगर लोगो ने चूंथिया का द्वार खुला करवाया ।

चूँथिया हररोज शराब पीकर मेठी की पिटाई करता है, चूँथिया कोदो बिघा जमीन पर पैसे देकर अफीन, शराब, के व्यसन में मशगूल रखते है और मेठी के विरुद्ध मेठी का काँटा निकालने तक के षडयंत्र

उसके मित्र करते है । मेठी और उसका बेटा दुश्मन है, ऐसा व्यवहार तो करता है, किन्तु उसको खत्म करने के लिए डंडा लेकर पिटाई करने आता है, तब समयसूचकता से मेठी बच जाती है, किन्तु क्रोध से वह चूँथिया को ही पिटती है, लहू लूहान चूँथिये को छोड़कर अपने मायके में चली जाती है, वहाँ कोर्ट के डर से भाई-भाभी नहीं रखते, तब उसकी मानसिक स्थिति विकट बन जाती है, कोई विकल्प न रहने पर कूए में गिरने जाती है । पृ.१९४

टीहा मेठी को अपने घर ले आता है, किन्तु उससे दूर रहता है, मेठी भी दूर रहना चाहती है, फिर भी लोग तरह तरह की बाते करते है । दोनों अलग घर में रहते है.. टीहा बुनाई का काम रात के एक दो बजे तक करता है, तो मेठी भी रेटिया चालू रखती है, दोनो विरह में दिन काटते है, एकदूसरे को कह नहीं सकते कि सो जाओ ! पृ.२१७

२०-२५ घर पटेल के अस्सी घर दलित के फिर भी पटेलों से डरते हे । टीहा ने हंगामा किया तो बहादूरी के बदले में पीठ कोई थपथपाता नहीं क्योंकि दलितो को डर है अब हमला करेंगे, हमको हमारे घर को जला देंगे, खेतो में फसल जला देंगे, ऐसा मानसिक डर हरेक दलितों को होता है ।

आंगलियात में सामाजिकता दूसरे उपन्यासों से अलग है, क्योंकि आजतक के उपन्यास उच्च समाज का वर्णन करते है, जबकि यह उपन्यास दलित समाज का नेतृत्व करता है । टीहा ने माँ के मर जाने के बाद खर्चा नहीं किया, तो जातिवालों ने व्यवहार बंद किया, फिर भी टीहा टस से मस नहीं हुआ ।

पटेल जाति का दलित जाति पर पूरा वर्चस्व था, दलित जाति की पंचायत में मनचाहे नियम करवाते थे । काँटे की तरह चुभने वाले व्यक्ति को अपनी ईच्छानुसार जाति से बाहर भी करवाते थे । ऐसे व्यक्ति का खून करना चिंटी मारने के बराबर मानते थे ।

पंच का न्याय आंगलियात में देखने लायक है । बूढो की जगह युवान रस लेते है । पूरा दलित मुहल्ला एक हो जाता है..... आज

तक बहुत सेह लिया, किन्तु अब वालजी-टीहा के बारे में युवान नेता जीवन बूढो से कहता है- "उनके बारे में उच्चवर्ग के यहाँ बात-चीत करेंगे तो बूढे लोगों की इज्जत मिटा देंगे । हम युवान एक है, और बाप भी टेढे रास्ते पे चलेगा तो खूला कर देंगे" टीहा को साथ देंगे ।पृ.५७

किसी की बहन या बहू पटेल के साथ अनैतिक संबंध रखती है तो पंच न्याय करता है उनके घर को जाति से बाहर करते है ।पृ.५९

जाति से बाहर करना.. हर व्यक्ति के लिए मौत से भी ज्यादा दंड है ऐसा सभी स्वीकार करते है । पृ.६३ मेठी का बाप हीरा भवान भगत को कहता है- "काँठावाले हम को जाति से बाहर करे !

एक यही बात का जीवन में डर है ...!"

पूनम के दिन डाकोर मंदिर के दर्शन करने के लिए लोग पैदल जाते है... पृ.७४

आंगलियात लेना हो तो पूरे परिवारवाले और मुहल्लेवाले को बुलाकर छूट्टी (परवानगी) लेनी पडती थी, सबकी संमति होने पर ही आंगलियात ले सकता था ।

बुद्धिशाली वर्चस्ववाली व्यक्ति हर जाति में मेहतर बनता है । मेहतर जो कहता है, वह सबको मानना पडता है, दलितो में भी मुहल्ले में एक दो मेहतर (मुखिया) होते हे, जो सगाई तय करते है, जन्म, मृत्यु शादी में अगुआई करते है, गलती करने पर दंड करते है, मुखिया मनमानी भी करते है, नीतिवाले भी होते है, किन्तु ज्यादातर मेहतर मलिदे खाकर अपने ही लोगो का खून चूसते है । गलत को सही और सही को गलत करार देकर अच्छे लोगो को भी गलत है, ऐसा न्याय करते है । सीधे सादे व्यक्ति को यह स्वीकार करना ही पडता हे, नहि तो ये मेहतर जाति से बाहर भी कर देते है । खुंशला खोंट इसका उदाहरण है । पृ.९८

विधवा भाभी और देवर का संबंध पवित्र होने पर भी समाज के लोग (मुहल्लेवाले) बूरी नजर से ही देखते है । इसीलिए विधवा के लिए कोई इच्छा न होने पर भी दूसरी जगह शादी करनी पड़ती है या तो अपने देवर के साथ रहना पड़ता है । दलित लोग ऐसी बातें को

बढा-चढाकर कहते फिरते है, जबकि सवर्ण लोग ऐसी बात मूठ में रखते है ।

शराबी व्यक्ति को यदि पत्नी सीधे रास्ते पे ले आती है, तो शराबी के मित्र या शराबी की मिल्कत पचाने वाले ही शराबी को बिगाडते है, पत्नी के विरुद्ध विद्रोह करवाते है पृ.१८५ ऐसे शराबी से समाज, परिवार भी दूर रहता है क्योंकि गालियों की ब्यौछार बरसाते है ।

पटेल के यहाँ मजदूरी करते है, किन्तु मुहल्ले में स्वयं ही पटेल है ऐसा गर्व कई दलित करते है रामला ड्राईवर उसका उदाहरण है । स्वयं बहाना बनाकर मुहल्ले में झघडा करता है और पटेलो को बुलाकर उनके पर हमला करवाते है, दलित बेचारे हो जाते है इसीलिए दलित स्त्रीयाँ कभी कभी वीरांगना बन जाती है । मुहल्ले में ऐसी हरकतो से हारकर जीवन जैसे गाँव छोडकर शहर में चले जाते है ।पृ.२३२

उपन्यास में आर्थिक स्थिति के बारे में चर्चा बहुत कम हुई है । टीहा सुखी है, वालजी-कंकु भी अपने घर कापड बूनते है, बाजार में बेचते है, इसीलिए आर्थिक विपन्नावस्था देखने को नहीं मिलती । कर्जा लेना सूद देना फसल ही सूद में जाना ये यहाँ देखने को नहीं मिलता, जो हमारे दलितो की विडम्बना है यह आर्थिक प्रश्न श्री मेकवान ने प्रकाशित नहीं किया ।कपडे बूनने का व्यवसाय नहीं करते वह पटेलो के खेतो में मजदूरी करते है, ठाकुर भी आर्थिक रुप से पटेलो के आश्रित है वह बंधुआ के रुप में काम करते है ।

टीहा-मेठी के कारण शीलापर में पटेलो के साथ संघर्ष करता है, तो वे दलितो को मजदूरी पर नहीं बूलाते । आर्थिक रुप से पटेलो पर निर्भर दलित कहाँ जाए ?

डेलेवाले के साथ रामला की पत्नी का अनैतिक संबंध होने के कारण मजदूरी पर जाने के लिए पंच मना करता है । आर्थिक कारण ही महत्त्वपूर्ण है, आर्थिक परिस्थिति दयनीय होने के कारण दलित स्त्री का पटेल लोग दुरुपोग करते है पृ.५८

चूंथिया शराबी, जुआरी होने के कारण घर में फूटी कौडी भी नहीं है, बरतन भी नहीं है । मेठी मायके में से सब मंगवाती है ।

जमीन में से नहर निकलती है तो जमीनवाले क्या खायें, सरकार दूसरी जमीन तो नहीं देती, और उस जमीन की किंमत (मूल्य) भी कम करते है । जमीन पर निर्भर लोगों की स्थिति आर्थिक रुप से दयनीय बनती है ।

'झीनी झीनी बीनी चदरियाँ' के बूनकरो की तरह वे कर्जा नहीं करते, वह तो स्वतंत्र रुप से धंधा करते है । दलितों के पास जो गहने है (कंकु के पास) वह बताते है कि इनकी आर्थिक स्थिति कितनी अच्छी है ।

'आंगलियात की मर्यादा के बारे में अणसार (श्री. मोहन परमार) में लिखा है । आंगलियात उपन्यास में विषयवस्तु के नावीन्य की और उसके अनुरुप वातावरण की प्रसंशा के सिवा भी उपन्यास में भाषा का उपयोग अच्छी तरह से नहीं हो सका । जो वास्तविकता लेखक के सामने है उन्हें नये स्वरुप में प्रकट करने की उपेक्षावृत्ति ही यह उपन्यास को उत्तम बनाने से रोकती है ।'

'ग्रामजीवन नी साठोत्तरी गुजराती नवलकथा' संशोधनग्रंथ में श्री डॉ.के.एम. मकवाणा ने लिखा है- भाषा का सूक्ष्म अभ्यास करनेवालों ने आंगलियात के सर्जक पक्ष में भाषा दोष का आक्षेप भी किया है । मोहन परमार कहते है श्री जोसेफ मेकवान के पास भरपूर भाषा वैविध्य है । किन्तु कृति की संरचना में भाषा को लेखक ने बराबर प्रयोजित नहीं की । पात्र के मुख से बोलनेवाली भाषा जब कथन-वर्णन में भी आती है तब अनुचित लगता है । श्रीबाबू दावलपुरा भी कथन वर्णन में स्थानिक लोकबोली के प्रयोजन संदर्भ में प्रश्न करते है और कोई शब्दो की अराजकता दर्शाकर लेखक की अभिव्यक्तिगत असावधता दिखाते है ।

कई विद्वान आंगलियात की कथा संरचना या वस्तुसंकलना संदर्भ में भी मर्यादा देखते है । जयंत गाडित कहते है- पूर्वाध में रोमांचक घटनाओं से आकर्षक बनी कथा उत्तरार्ध में टीहा, कंकु, दाना, मेठीके

विवाह की दखल में (आंटी घूटीमें) गूंठित हो (गूंचवाई) जाती है । और वर्ग संघर्ष की कथा दब जाती है । प्रमोदकुमार पटेल भी नवलकथा की कलात्मक रचना की दृष्टि से उसमें गंभीर मर्यादा देखते है । नरेश वेद भी कला प्रत्ये की वफादारी में यह कथा थोडी सी निम्न लगती है । उसके सिवा भी कथा के उत्तरार्ध को माय डियर जयु शिथिलबंध और भरत महेता केवल फिल्मी गिनाते है ।

उसके सिवा आंगलियात में कला और वास्तविकता का समन्वय हुआ है कि ये सभी मर्यादाएँ उनकी साहित्यिक सिद्धि के आगे फीकी हो जाती है । लेखक का ग्रामजीवन का और दलित समाज का प्रत्यक्ष अनुभव और अभिगम एवम् उनका ताटस्थ्य पूर्ण का आलेखन आंगलियात को कलात्मक कृति बनाते है । प्रत्यक्ष अनुभव की कडुआहट को पचाकर जो स्वस्थता लेखक दिखाते है वह अकल्पनीय है । तो प्रतिबद्धता के नीचे प्रचारलक्षी हुए बिना सामाजिक वास्तव को कलारुप देने के प्रयत्न में लेखक सफल रहे है । इसीलिए बाबू दावलपुरा कहते है इस तरह कृति विभावन, चरित्र निर्माण और भाषा संविधान में ऐसी कई मर्यादा होने पर भी यह (जनपदी) आंचलिक उपन्यास में सामाजिक वास्तविकता को आकार देने में लेखक की सफलता अवर्णनीय है । कृतिगत ऐसी कई मर्यादाएँ होने पर भी आंगलियात राष्ट्रीय स्तर से पुरस्कृत हुआ उसमें कुछ सत्व-तत्त्व की मावजत हुई है उसकी साबिती है । यह सत्व तत्व को दर्शित माय डियर जयु का विधान है- उच्चवर्ग के सामने संघर्ष मे से जन्म हुआ उपेक्षित वर्ग का जीवनह्रास आंगलियात में गेहरे (घट्ट) रंगो से चित्रित हो सका है । वर्ग-विग्रह ही नहीं, किन्तु वर्गविग्रह के परिणाम स्वरुप प्राप्त होती करुणता यह कथा का आकर्षक और चिरंजीव तत्त्व है । श्री मोहन परमार भी कहते है- जिस समाज में जन्म लेकर उन्होंने असह्य अपमान सेहने पडे वह समाज का दस्तावेजी चित्रण यह कृति में उफसा है । वही देखते हुए इतना तो चोक्कस कह सकते है कि भले ही यह कृति में कला के मापदंडो में कमी हो फिर भी अपनी अंदर विह्वल वेदना का विश्वउफसाने में लेखक सफल रहे है । आंगलियात में इस तरह वर्षो से सामाजिक-आर्थिक रुप से

कूचले दलित समाज की अस्मिता को उजागर (समृद्ध) करते लेखक का स्वस्थ और तटस्थ आलेखन गुजराती साहित्य के लिए आह्लादक है और इसीलिए आंगलियात और उनके सर्जक कई विद्वानों की प्रसन्नताभरी प्रशंसा प्राप्त कर चूके है । ऐसी प्रसन्नताभरे एके-दो मत देखिए ।

श्री भगवतीकुमार शर्मा कहते है- श्री जोसेफ मेकवान की अब तक की साहित्यिक सिद्धिओ का यह सर्वोच्च शिखर है । कोई लेखक का पहला ही उपन्यास ऐसा सर्वोच्च सन्मान मिलने का यह संभवतः प्रथम प्रसंग होगा । 'आंगलियात' संदर्भ में गुजराती भाषा का एक निःशक सशक्त उन्यास है । श्री जोसेफ मेकवान हमारे भाषा साहित्य की एक धन्यता है ।[३]

दरिया (उपन्यास) विवेचन :

'दरिया' एक ऐसी नारी की कथा है, जिसके भाग्य में जिंदगीभर वेदना ही निर्मित हुई थी, उसका नाम दरिया क्यों रखा यह तो समझ में नहीं आता । ऐसा लगता है कि नाम रखते समय ही विधाताने उस स्त्री के भाग्य में दुःख का (दरिया) सागर लिख दिया होगा ।

उसका जन्म वाल्मिकी समाज में हुआ, पिछडे वर्गमें भी वह अंत में रहनेवाले । गाँव की गंदकी और पशु के मल-मूत्र की सफाई उस समाज के सिर पर । आरोग्य के रक्षक डॉक्टर इस देश में मान-प्रतिष्ठा और समृद्धि में नहाते है, यह डॉक्टर की कमी थी और देशी उपचार पद्धति पर ही देश की प्रजा जिंदगी का कश खींचती थी, तब भी मृत पशु को गाँव के बाहर ले जाना, मानव-मल-मूत्र को सिर पर चढाकर, सफाई करके पूरे गाँव को नर्क में से बचानेवाले यह वर्गने उच्चवर्ग की सच्ची सहानुभूति नहीं पाई । किन्तु उपेक्षित और तिरस्कृत ही रहा है । इस देश की जाति व्यवस्था सहस्त्राब्दियों से घोर पाप करके आती है, उसका अफसोस उस जाति को नहीं है, कथा का यह मुख्य विषय नहीं है, किन्तु जिसको इन्सान की पंक्ति में गिनती न करके लातें मारकर उसकी बूरी हालत करके, उसके दुःख को समाज की बूरी आदतें प्रथा उनकी कैसी बूरी हालत करते है उसका ब्योरा यह कथा में दिया है ।[४]

दलित माता की वेदना-लड़की दलित समाज में जन्म लेकर कौन सा सुख प्राप्त करेगी ? यह व्यथा दलित जीवन के श्वास की, लाचारी की, गुलामी की है । यह उपन्यास में दलित समाज की संवेदना व्यक्त होती है । जिसमें दलित प्रजा जीवन के करुण और पीडाकारक अद्‌भूत वर्णन है । भूख, दुःख और अत्याचार के दावानल में शोषित, दलित प्रजा के (दर्द) के आलेखन में लेखक की कलम सक्षम और सफल ही नहीं सर्वोत्तम है । दलित समाज जीवन की करुण व्यथा-कथा व्यक्त करते हुए उपन्यास में विषाद और वेदना है । उपेक्षा और अभाव है, गरीबी और गुलामी है । अपमानो के बीच में भी अरमान और यातानाओं से भरी चीस दलित प्रजा की यह कमनसीब जिंदगी है ।

दलित जीवन की करुणता, कमनसीब जिंदगी का हृदयगम आलेखन है । गुजरात में दलितों के प्रति सवर्ण प्रजा द्वारा होते अत्याचार के हृदयद्रावक दृश्य, क्रूर घटनाएँ, दलितों को मिलते अपमान, यातनाओं का आलेखन है । संक्षेप में उपन्यास में दलित समाज जीवन की यातना और उसके द्वारा चेतना प्रकट होती है । दलित समाजजीवन की संवेदना की अनुभूति है । दलित जगत का यथार्थ चितार उपन्यास में है जो असाधारण है ।

लेखक के चित्त में दलित समाज की कमनसीब और करुण स्मृतियाँ जूडी है । उनके हृदय में दलित मनोदशा का, उनकी वेदना, और व्यथा का चित्कार गूँज रहा है ।

प्रथम अध्याय में १९४२ स्वतंत्रता आंदोलन का अंश दिया है । मिशनरी प्रभाव में ख्रिस्ती धर्मांतरित मानसिकता की मात्र झलक है । शांतुचाचा पटेल दलित मुहल्ले में आते थे, पानी, चाय पीते और चाय, खांड, गुड, आदि महँगे हुए, सभी दुःखों का कारण अंग्रेज सरकार है, यह समजाते थे । अंग्रेज सरकार गलत है, ऐसा बैठे हुए इन्सानो में से कोई नहीं कहता, उसका कारण आर्मीफोज के मेजर डेविडभाई थे, वह कहते थे, अंग्रेजो की सरकार अच्छी है, एक समय यह उच्चवर्ग के लोग हमारी

परछाई को भी छूते नहीं थे, यह कम हुआ उनके प्रभाव से हमको थोडी मुक्ति मिली है । एकबार भजन के बाद पटेल के लडके अस्पताल की दिवार पर लिख रहे थे, अंग्रेजो भाग जाओ... लिखनेवाले दलितों को देखकर उनके पास गये, धर्मशाला की दिवार पर डेविडभाई ने लिखने नहीं दिया । पूरे गाँव में लिखा और अछूतों के सामने हार जाय ! एक ने कहा ढेड को मारो, बहुत फट गये है, नालायकों के राज में मेजरने भी युवानो को हथियार, डंडे ले आने को कहा, सब तैयार हो गये, मेजर को कलक्टर का साथ था, फिर भी लिखनेवालो को शांति से चले जाने का कहते थे । दलितों को क्रोध था, कईबार बिना कारण पिटाई, बहू बेटी की छेडती सहन की थी, आज मौका मिल गया था, पर डेविडभाई मेजरने चले जाओ कहकर हाथ बाँध दिये थे ।

शांतुचाचा दोनो पक्ष को समजाते है, स्वतंत्रा में साथ मिलकर रहना है । लिखनेवाले को भी कहा- क्यों लिखते हो ? मुहल्लेवाले को भी समजाया की कब तक हमारे से दूर रहोंगे ? तुम्हारे पास जमीन, जायदाद, शिक्षा नहीं है । मजदुरी कहाँ करोगे ? मुसलमान की तरह देश तो अलग नहीं होगा । मेजर साहब तुम्हें सच्ची बात समजानी चाहिए, मेरे सिवा कोई उनका पक्ष नहीं लेगा, मेजर को सब पूछते है तो कहते हैं कि एक दिन अंग्रेज सरकार को जाना ही पडेगा । दलितों ने रात में सोचकर लिख दिया- अंग्रेजो भाग जाओ- सुबह में गाँव में बात फैली ख्रिस्तीभाई समझ गये ।

कानजी वाल्मिकी की पत्नी कसना मुखिया की खिडकी में झाडु लगा रही थी, धूल उड़ती है उस वक्त रतना मुखिया की हजामत कर रहा था, आँख में धूल गिरी हो ऐसा बहाना करता है, और मुखिया को भी उड रही धूल बिगाड़ती हो ऐसा दिखावा करता है, मुखिया सेह नहीं सका और सास कहते हुए गालियाँ देता है, कसना घूँघट निकालकर सफाई कर रही थी, उसके मनमें यह था कि मुखिया अच्छी तरह से सफाई करने को कहता है, अतः झडप करती है, मुखिया तेरी लड़की को

रखूँ ऐसी गाली देते ही कसना क्रोध में आ जाती है, मुखिया भी मारने आ जाता है, रतना उसको समजाता है, कसना घर आकर दरिया को तैयार करके आसपास की स्त्रीयाँ के साथ गाना गाते हुए मुखिया के घर जातेहै । कसना का पति सबको कहता है -हमारी बेटी को गाली दी इसीलिए हम मुखिया की पत्नी को हमारे घर कैसे रख सकते है ?

रास्ते में पूरी आवाज में शादी के गीत गाती है, और मुखिया के बुरे कर्म का वर्णन करती है । शांतुचाचा और देसाई चतुरादा के कारण मामला शांत होता है । पाँचसो रुपये का दंड और ये दोनो गवाह रहते है ।

मुखिया के घर कचरे का ढग होता है, तो देसाई के पास जाकर भंगीयो को मारने की बात करता है, देसाई कहते है- पूरे गाँव में कचरे का ढग होगा, मुखिया का पद छोड दो- हमें यह पद नहीं चाहिए, तुम्हारे वंशज को हीयह पद मिलेगा । मुखिया क्रोध में जाता है और दश मिनट में ही अपने पद का इस्तीफा मामदमियाँ के साथ भिजवाता है । देसाई ने मामद को ही भगत के पास भेजा, महिने में पंद्रह रुपये में पशु के मल-मूत्र को साफ करने का तय किया, तारा मामद के विश्वास पर काम करने तैयार होती है वह यह भी कहता है- मुखिया के आदमी दरिया को उठाकर ले जायेगें यह जानकर कसना दु:खी होती है ।

किन्तु आधी रात में सब आये तो क्या करना, फिर भी पक्की दिवार बनवाई, मुखिया ने बारोट को तैयार किया, क्योंकि भंगी मुहल्ले पर हमला करने से उनकी इज्जत कम होती थी । मुखिया हरीजन मुहल्ले के वातावरण के कारण गाँव छोड़कर भाग जाता है ।

दरिया की शादी लखमन के साथ होती है । कसना को निर्विघ्न काम पूरा हुआ उसका संतोष होता है ।

कसना के मनमें यह था कि दरिया की शादी के बाद सभी कठिनाईयाँ समाप्त होगी, पाँच-छे वर्ष निकल जाये यही इच्छा थी । मुखिया ननिहाल में चला गया था । मामा की जायदाद का यह वारिस बन गया था । देसाई धारासभ्य बन गये थे । बारडोली सत्याग्रह में भाग लेने से

स्वतंत्रता आंदोलन में सामान्य तिनके तोड़नेवाले भी कैसे स्थान पर बैठ गये थे, उसके बारे में सोचते है । मुखिया के मित्रो को ठीक कर दिया था । कसना देसाई को मिलकर आई थी कि उसकी बेटी का बाल भी बाँका न हो ।

कानजी भगत की मृत्यु- मंगाजी समधि का बैठने आना-दरिया को देखना- गौना के बारे में कसना का स्पष्ट विचार और समधि का यह कहना कि मैं ही स्वयं गौना का मुहुर्त लेकर आँऊगा ।

एक वर्ष पूरा होने पर भी मुहुर्त भेजा नहीं, अतः कसना अपने भाई को बम्बई भेजती है फिर भी गौना तय नहीं हुआ, समधि का ससूर मर गया, उसके यहाँ सब जाते है किन्तु गौना तय नहीं हुआ ।

गाँव में मुखिया वापस आ गया था, मुखिया के काले कर्म वहाँ भी थे, मामी के साथ आडे संबंध थे, गर्भ रह गया और उसने आत्महत्या कर ली । मुखिया नेसब शांत किया, पैसा लेकर जमीन दे दी, पुलिस थाने में भी वह छा गया ।

दूसरी ओर देसाई की मृत्यु हुई, गाँव में राष्ट्रीय सन्मान के साथ अग्नि संस्कार हुए, उस वक्त मुखिया ने नेताओं के साथ अच्छे संबंध स्थापित किये । वारिस के रुप में मुखिया ही इलेक्शन में खडा रहा और नम्रता से जीत भी गया । विजय जूलुस निकला, हरीजन मुहल्ले की ओर आया तब रात हो चूकी थी, पेट्रोमेक्स बंद कर दी, तारा के साथ दरिया थी, पर कहाँ गई उसकी समाज तारा को भी नहीं पडी, चार पाँच डाकू जैसे कसना के घर में घूसे और कुछ ढूँढते हुए बाहर निकल गये । सब शांत होता है तब कसना कूए में से दरिया को ले आती है इस प्रकार दरिया बच जाती है, रात में पत्र लिखने का सोचकर पत्र लिखनेवाले की शोध में लग जाती है ।

कसनाने सुबह में करशन, मंगल और जूजा भगत को कहा कि मुखिया अभी अच्छा नहीं है, मैं मायके में चली जाऊँ , पर करसनने मना किय कि वहाँ भी कौअे काले ही है । और यहाँ शातुचाचा से बातचीत हुई है । मंगल पशु के मल-मूत्र के उठाना ही मना करता है,

किन्तु जूजा भगत ने सोचा कि यह राक्षस का ही कुछ सोचो । मिट्टी का तैल डालकर दियासलाई फेंकना, कसना के मनमें मुखिया सिगारेट पीता है ।

मिट्टी का तैल इकट्ठा करके मुखिया के कमरे में कसना ने डाल दिया, मुखिया जल गया साथ में एक स्त्री भी थी, पुलिस जाँच हुई, हरीजनों का काम नहीं है, बडे लोगों का ही यह काम है, शोकसभा में शांतुचाचा कहते है "जैसी करनी वैसी भरनी ।"

सतिया दरिया की बात कहता है कि दरिया को मुखिया उठाकर ले जाना चाहता था जसु को यह बात नहीं समज में आती कि पटेल दलितो से छूआछूत रखते है और दलित स्त्रीयों से क्यों नही ?

दरिया की माँ बम्बई समधि पर पत्र लिखवाती है कि दरिया के गौने के लिए ही जीवित हूँ, एक महिने के अंदर गौना तय नहीं किया तो कूए में गिर कर दोनों मर जायेगें । दरिया भी पत्र लिखवाती है कि-एक बार तुम्हारी दरिया को नयन से देख लो- पसंद न आये तो दरिया में फेंक देना ।

बीस दिन में गौना तय होता है, तीन दिन तक गरबा, गीत गाकर दरिया को विदाई देते है । सब भूल जाते है तब आठ महिने के बाद वापस आती है, दरिया का पति पुरुष में नहीं है, दरिया-दवाई करने को कहती है जब कि लखमन किन्नर बन जाना चाहता है । दरिया दूसरी शादी करना नहीं चाहती थी, चार महिने के बाद पत्र आता है कि लखमन अकस्मात में मर गया ।

दरियाने जेठ पर पत्र लिखवाया कि लखमन का पता दे, नहीं तो हम कोर्ट में जायेगे । मुझे तो मेरा पति चाहिए ये जैसा हो वैसा ।

दरिया दुःख भूलाने के कारण पशु के मल-मूत्र साफ करने का काम करती है, यह काम करनेवाले का दुश्मन रुप होता है, और दरीया बहुत ही रुपवान थी, इसीलिए उसकी छेडती अवश्य होगी, उसने हंसिया बनावाय, एक दिन चौक में बैठे एक लडके ने उसकी छेड़ती की, तब गोबर उसके पर फेंककर हँसिया निकालकर गला पकड लिया था, ताराने

उसे छूडवाया था, उसके बाद दरिया के सामने कोई देखता नहीं था । एकदिन दरिया पर पत्र आता है 'मैं जिंदा हूँ, मेरी राह देखना ।'

दरिया उस शब्दो से उड रही थी, जसुने तारा को कहा था कि दरिया किसी का हाथ पकडकर सुखी हो जाय, ऐसा विधवारुप या अपने पति की आशा में जीवन व्यतीत करने पर उसे कोई सति नहीं कहेगा । किन्तु दरिया को कोई एक शब्द नहीं कह सकता था और कहे तो उसका अपमान कर देती थी ।

जसु तंबाखू के कारखाने में काम करने जाता था, शाम को वापस आते समय उसको अपने घर ले जाकर कहती है- 'ये छाती में लिखा हुआ शब्द 'लखमन' कैसे मिटाऊँ ?' और खुली छाती से ही जसु को बथ भर लेती है, दलपत आने पर दोनों अलग होते हैं, किन्तु दोनों में से किसी को भी क्षोभ नहीं हुआ, क्योंकि भाई-बहन का प्यार था । नडियाद जाता है तो शहर में ढूँढते रहना, फोटू दिखाकर कहती है कि लखमन अवश्य मिलेगा ! अस्पताल के पास दलपत मिलता है तो तिरस्कार से देखकर अंधेरे में पिघल जाता है ।

नडियाद में जशु की पढाई की प्रसंशा होती थी, किन्नरो में लखमन को ढूँढते वक्त हाँसी के पात्र भी बने थे ।

मेरे (लेखक) पुत्र के नामकरण प्रसंग पर किन्नर आए ओर लोरी गाने लगे । पाँच रुपये दिये तो लडके के सिर पर घुमाता था, उसके हाथ पर दरियाराम लिखा था मैंने पूछा तू लखमन तो नहीं ?

लखमन तो चला गया, किन्तु मेरे हृदय में दरिया जागृत हो गई ।

थोडी देर बाद लखमन आया । मैं दरिया के पास जाने के लिए उसको स्कूटर पे ले जाता था, किन्तु वह हाथ जोड़ने लगा । यह रुप में इस जीवन में उसे नहीं मिल सकता । स्त्री के कपडे पहन ने से मर्दानगी मर नहीं जाती, उसी कारण मेरी छाती में अग्नि जलता है, उसको कहना कि लखमन इस संसार में नहीं है और उसकी आशा ही छोड दे !

मैने कहा बस । ये शब्द कहने बम्बई से तू यहाँ तक आया था । उसने किन्नर क्यों बना ? किन्नर के नियम और अब मैं उसे नहीं मिल सकता मुझे मौत की सजा हो सकती है ऐसा कहा तो मैंने पुलिस रक्षा की बात कहीं, किन्तु वह नहीं माना, क्योकि बिना पुरुषत्ववाला आदमी औरत के लिए जोखिम है । उससे मिलने की आशा जरुर होती है लेकिन उसको अब दु:खी करना नहीं चाहता । दु:ख सेहने की आदत हो गई होगी ।

हाथ में दरियाराम लिखा था, उसे मिटाने का प्रयत्न बहुत किया, कोई राम मिले तो पत्थर बनने की इच्छा थी । उसको छोटा समजने में दरिया मुझे उलाहना देती हो, ऐसा लगता था । दरिया किसी मर्द को पाकर भी जिंदगी उतनी अच्छी नहीं जी सकती थी, उसको शाबाशी देना चाहता था, पर उसने मना किया क्योंकि मेरे स्पर्श से तुम को पाप लगेगा । मैं लायक नहीं हूँ, मेरे पैरो की धूल उसने सिर पर लगाई, और बोला युवान लड़की तुमको अपनी छाती पर लिखा हुआ दिखा े, उतने ही तुम उनके विश्वासपात्र आदमी है, तुम्हारे खत से मेरे जैसा पति मिला ।

कई साल बाद एक शादी के प्रसंग में दरिया मिल गई, ५८ वर्ष दरिया के हुए थे, फिर भी संयम की जिन्दगी का जयजयकार थी, भाई मेरे लखमन की शोध की थी ? तुम तो बहुत घूमते हो कहीं तो मिल जाय, अब तो मेरा रास्ता ही भूल गये ? मुझे उलाहना देती थी । जिसकी आशा ही न हो वहाँ देखने से अंधेरा ही दिखता है, सूर्य नहीं निकलता, भाई निकल सकता है ? किन्तु मेरे में ही कोई कमी होगी । अपने बिगडे हुए स्वभाव, व्यवहार के कारण दरिया माफी माँगती है ।

दरिया को कहा कि तूने जिसे चाहा है, वह व्यर्थ नहीं है, उसने साठ साल बिता दिये थे, जरुर कह देती कि व्यर्थ उनके पीछे समय गँवाया है, किन्तु उसने कहा, जरुर तुमने मेरा काम पूरा किया होगा ? लखमन मिला था, दरियाने मेरे हाथ का स्पर्श किया, मेरे हाथों मे से उसके प्रियतम के स्पर्श को ढूँढने का प्रयत्न करती थी, किन कारणों से

उसे यह रुप लेना पडा और कितनी मर्यादा में कैद है उसने यह पुण्य कथा भीगे नयनों से सूनी किन्तु अभी भी उसे एक ही बात थी कि हम दोनों को मिलाओ ! मैंने कहा प्रयत्न करुँगा ।

नडियाद किन्नर की मुलाकात की, तो कहा कि बाई को कहना पेटलाद बडी बहन को मिलकर जो कहना हो वह कह दे, उनको जो योग्य लगेगा वह करेंगे । रविवार के दिन दरिया को केहने गया, तब दलपत निराश होकर बैठा था, धीरे से सवाल किया फिर से वापस क्यों आये ? ये तो गये । चले-गये इतने वर्षो बाद उन्होने कहा मैं मेरे पति के पास जाती हूँ, समाचार न भेजु तो दुःखी मत होना, मान लेना की सखी हो गई, बस चले गये- दलपत ने कहा... तुम उस दिन न आये तो इस तरह निराधार न हो जाते, अब दरिया का सच्चा समाचार मिले तो ही वापस आना, नहीं तो नहीं ! मेरे पैरो में से धरती खिसक गई । जाते समय भी दरिया मुझे दलपत का दोषित बनाकर गई । आज भी अनजान दूर प्रदेश में जाता हूँ तो दरिया को ढूँढता हूँ ।

भारतीय स्त्री धर्म एक ही जिन्दगी में एक ही पति के साथ जिन्दगी पूरी करना, उसको वफादार रहना ।

दरिया उपन्यास दलित नारी का उच्चवर्ग के साथ संघर्ष की कथा है । अपने जीवन के संघर्ष की कथा भी है । लेखक ने जो देखा है, परखा है, सोचा है उन सबको पाठक के समक्ष पहुँचाने का प्रयत्न किया है । एक तरफ लखमन दरिया को यह जिन्दगी तपश्चर्या करने को कहता है यह जानकर पाठक को लखमन की गलती है, ऐसा लगत ाहै पर दरिया भी दूसरी शादी करना चाहती नहीं थी, वह तो लखमन किन्नर की भूमिका में आये तो भी उसके साथ जिन्दगी पूरी करना चाहती थी । दोनों का सोचना एक ही है । दोनों पूरी जिन्दगी तपश्चर्या करते है, एक दूसरे के प्रति अपार प्रेम है । (छाती में नाम लिखना, हाथ पर नाम लिखना ये तो गलत बात है ।) हृदय में नाम रखना ही सही बात है ।

अंत में स्पष्ट करते है कि दरियाने जो पूरी जिन्दगी लखमन के बारे में तपश्चर्या की वह सही है, मर्द को पाकर भी वह जिन्दगी का

रस नहीं पी सकती, उतना रस लखमन की याद में पी सकती है । लखमन का पूरा जीवन तपश्चर्या ही है ।

'दरिया' उपन्यास में पात्रालेखन उत्कृष्ट है नायिका प्रधान उपन्यास है । दरिया का पात्र मुख्य भूमिका में है । पूरे उपन्यास में दरिया का चरित्र उभरकर आया है । आज तक यही बात थी कि ऊँचे लोग, देवी-देवताएँ, राजा-महाराजा ही साहित्य के पात्र बन सकते है । लेकिन अब साहित्य में सामान्य व्यक्ति भी स्थान बना चुका है, दरिया के सिवा, महत्त्वपूर्ण पात्र की गिनती में जस्या (लेखकश्री), लखमन, कसना, कानजी, तारा-करशन, डेविडभाई मेजर आदि दलितपात्र है । तो मुखिया शांतुचाचा, देसाई चतुरदा आदि पटेल (उच्चवर्ग के) पात्र भी है ।

'दरिया' वाल्मिकी समाज का पात्र है, लेखक और दरिया के बीच सत्य घटनाओं का संबंध है, उपन्यास में यथार्थ का महत्त्व ज्यादातर दिखाई देता है, दरिया के गवाह है और हर घटना में लेखक का स्थान है । दरिया नाम क्यों रखा गया । ये मालूम नहीं किन्तु नाम देते समय ही विधाताने उसके ऊपर दुःख का दरिया लिख दिया है, ऐसा लगता है ।

मुखिया दरिया को उठाकर ले जाना चाहता था, दलित समाज की यह विडम्बना है कि रुपवान लडकी होने पर डर लगता है कि उसकी छेडती होगी, उठाकर ले जायेगा । यह सब करने पर उच्चवर्ग का कुछ नहीं होता सेहना सिर्फ दलित वर्ग को है ।

दरिया की शादी छोटी उम्र में होती है, पर वह अपने पति को ही शादी के फेरे में विजय देती है अपने पतिकी हार हो यह उसे स्वीकार नहीं था । गौना नहीं हुआ था तब तक उसकी रक्षा करना कसना के लिए कठिन था, दरिया भी पूछती थी कि मेरा गौना कब होगा ? मुखिया के विजय जूलुस को देखने दरिया जाती है, तो उसको उठाकर ले जाने का प्रबंध तय करते है, किन्तु कसना की बुद्धि के कारण वह बच जाती है । दरिया को जुजाचाचा जोगमाया कहते थे । क्योंकि वह इतनी रुपवान थी, विज्ञापनवाली लड़कियों तो उसके आगे बंदरिया जैसे लगती । खेत में या तम्बाखू के कारखाने में दलित औरतों की छेडती करते उसका

दुरुपयोग करते लेकिन दरिया का कोई नाम नहीं लेता, क्योकि हँसिया अपने पास रखती, एकदिन लडकेने छेडती की थी, तो गोबर उसके ऊ ा र फैंकर गला पकड लिया था ।

गौना के बारे में पत्र लिखा था, उसमें गौना नहीं हुआ तो कूए में गिरने की बात भी कसना लिखवाती है, उसके बारे में दरिया जसु को कहती है कि भाई अपनी जाति में कूए के सिवा अच्छा दूसरा कोई उपाय भी नहीं है, पंद्रह, सोलह साल की आयु में वह सारी स्थिति समझ चूकी थी ।

उसका पति नामर्द था, छ:महिने तक पति के साथ रहती है, ये रातों में दोनों छाती भिडकर सोते है, पर लखमन में कोई अंतर नहीं आया, फिर भी दरिया ने किन्नर बनने की अनुमति नहीं दी । दरिया का जेठ राक्षस जैसा था, लखमन को सदा डराता था, फिर भी दोनों ऐसी परिस्थिति में भी साथ रहना चाहते थे । पर ये तय नहीं हुआ, दरियाने अपनी छाती पर लखमन का नाम लिखवाया था, ये तो हृदय पर भी लखमन को कहती थी कि वहाँ भी नाम लिख दे तो तुम्हारा विश्वास ओर बढेगा ।

आठ महिने के बाद दरिया को वापस आना पडता है । शरीर पीला हो गया था, आँखे सूझ गई थी हताश और भय से त्रस्त हो गई थी । उसके जेठ और सास राक्षस जैसे थे, किन्तु जिठानी अच्छी थी इसीलिए दरिया आजतक निश्चित थी ।

लखमन को किन्नर बनने के बजाय दवाई का महत्त्व पत्र के द्वारा समजाती है । तो लखमन को प्राप्त करने के लिए कोर्ट में जाने के लिए भी तैयार है । लखमन की मृत्यु हो गई ऐसा समाचार मिलता है तो भी वह रोती नहीं है, उसे तो विश्वास है कि वह जिंदा है । वह तो जेठ पर भी पत्र लिखवाती है कि तुमने मौत का समाचार गलत फैलाया है, उसका पता (Adds) दो नहीं तो हम कोर्ट में जायेंगे !

जसु कहते है कि वह ५८ साल की हुई थी तब मुझे मिली थी, मैने कहा- लखमन मिला था तब वह मेरा हाथ पकड लेती है, और

उन हाथों मे से उसके प्रियतम के स्पर्श को ढूँढती है । भीगे नयनों से लखमन की पुण्यकथा सूनती है ।

अंत तक उसको मिलने के लिए प्रयत्न करती है, कीन्तु एक दिन भाई-भाभी के सिर पर हाथ रखकर कहती है- मैं तुम्हारे जिजाजी के पास जाती हूँ, जीती रहूँगी तो समाचार भेजूँगी, न भेजू तो दुःखी मत होना, स्वीकार कर लेना कि तुम्हारी बहन सखी हो गई, और चले गये ।

दरिया का पात्र यशस्वी है, वह पूरी जिन्दगी तपश्चर्या हीकरती है, दूसरी और लखमन भी तपश्चर्या करता है, पेहले तो लगता है कि दरियाने गलत ही कदम रखा है, पति नामर्द हो तो दूसरी शादी करके मौज से फिरे, पर ये ऐसा नही करती । एक जिंदगी में एकबार ही शादी करके अपने पति को ईश्वर मानकर, उनकी ही बनी रहना भारतीय संस्कृति का स्वीकार करती है । लखमन स्त्री या पुरुष नहीं है, फिर भी उनसे बढकर महान है, दरिया ऐसे पति को प्राप्त करके महान बनती है। श्री जोसेफ मेकवान के पात्रों में बहुत ही अच्छा पात्र 'दरिया' अमर बन गया है ।

लखमन 'दरिया' उपन्यास का सशक्त पात्र है । सारी कथा इनके आसपास घूमती है । किन्नर के बारे में बहुत कम लिखा गया है, श्री जोसेफ मेकवान ने प्रयास किया है । आजतक जिसके बारे में कम लिखा है, उनके बारे में, सत्य बातों का परिचय करवाया है । उनके हावभाव, हठसभी को पसंद नहीं है । फिर भी किन्नरों में इन्सानियत विद्यमान है, वह स्त्री या पुरुष नहीं है लेकिन उन दोनों से भी बढकर है । दरिया जैसी पत्नी के साथ उसकी शादी होती है । दलित समाज की गलत परंपरा के कारण छोटी सी उम्र में शादी और बीस साल में गौना होता है, वह नामर्द है, किन्तु अपने पिता को यह कह नहीं सकता कि तुम दरिया का गौना मत करो, किन्तु वह गौना तो करवाता है पर बाद में आठ महिने तक दरिया के साथ रहता है । दरिया की छाती में लखमन नाम लिखता है, और अपने हाथ में दरिया का नाम लिखता है। दवाई का महत्त्व वह समझता नहीं और किन्नर बनना चाहता है । किन्नर

बनने के पीछे यह अंधश्रद्धा भी है कि दूसरे जन्म में माताजी उन दोनों को पति-पत्नी के रुप में साथ रहने देंगे । यदि लखमन ने सोचा होता तो दरिया की जिंदगी बचा सकता था, गौना न करवा के दूसरे के साथ शादी करवा देता तो सचमुच यह कथा अलग होती ।

नामर्द आदमी स्त्री का पति बनकर रहे यह उसे पसंद नहीं था, पूरी जिंदगी बिगाड दी, उसका भार अब सहन नहीं होता था, मानव हूँ और मानव की पंक्ति में से बिलकुल निकल नहीं सकता !

दरियाराम के अक्षरों को निकालने के लिए ब्लेड का उपयोग किया था, लहूँ की गाँठे हो गई थी, फिर भी वह नाम दिखाई देता था । उसकी छाती के बीचोबीच मेरा नाम और मेरे हाथ में उसका नाम हम स्त्री का नाम नहीं लिख सकते । चूँदडी ओढने के बाद उसके नाम के पीछे 'राम' लिख दिया । किन्तु मेरे में 'राम' नहीं आया, सूना था कि उनके पैर के अंगूठे के स्पर्श से शल्या-अहल्या बन गई थी । किन्तु मेरे में न तो नर प्रकट हुआ न नारी ! मुझे ऐसा कोई 'राम' दिखाओ जिनको बथ भरके मैं ही पूरी पत्थर बन जाऊ। दरिया को ऐसा पति मिला था, एक मैं भी नहीं था, किन्तु दोनों से बढकर था, यह ईन्सान के लिए पूरी जिदगी दे देना सार्थक है ।

उपन्यास में धारासभ्य है, मुखिया है, हजाम, सफाई करनेवाले हरिजन लोग है, लेखक स्वयं भी है, हरेक पात्र अपने आप में पूर्ण है। स्त्री या पुरुष अपने आप से विशिष्ट है लखमन किन्नर है, वह तो महामानव स्पष्ट होता है ।

कसना का चरित्र दरिया उपन्यास में श्रेष्ठहै, नारी होने के बावजूद संघर्ष करती ही रहती है, दलित समाज में जन्म लेने के कारण गंदे काम करने के बावजूद कटु वचन सेहना, गालियाँ सेहना आदत बन गई है । फिर भी जब अतिशयोक्ति होती है तो घायल शेरनी की तरह दहाडती है । सचमुच कसना का चरित्र दलित स्त्री के रुप में, दरिया की माँ के रुप में, कानजी की पत्नी के रुप में, समाज में प्रतिष्ठित है । सभी रुप में वह श्रेष्ठ है, संघर्ष में उसका निखार और बढ गया है ।

दलित उपन्यासो में दरिया का स्थान महत्त्वपूर्ण है । और इस उपन्यास की श्रेष्ठता उसकी यथार्थता है, लेखक स्वयं एक पात्र है, और सभी क्रिया में उनका महत्त्व है ।

कसना कानजी मेहतर की पत्नी है, दलितों में भी अंतिम स्थान में रहनेवाले हरिजन जाति की है । उनका काम गाँव को साफ रखना, पटेल या उच्चजाति के यहाँ सफाई करने का काम करती है । कसना मुखिया के यहाँ पशु के मल-मूत्र साफ करना, चौक साफ रखने का काम करती है । दोनो सुखी थे, संतान में एक लडका दलपत और लडकी दरिया थी वह रुपवान थी, अतः उनकी देखभाल ज्यादा करनी पड़ती थी ।

कसना स्वमानी थी, काम भले दुसरों का करती थी, लेकिन किसी का शब्द सून लेना, गालियाँ सून लेना स्वभाव में नहीं था । मुखिया की गालियाँ सूनकर झाडु से पिटाई करने, तैयार हो जाती है । सास कहकर गालियाँ देता है तो दरिया को लेकर गौना के गीत गाते हुए उसके घर जाती है । मुखिया स्वीकार नहीं करेगा तो, दरिया को यहाँ ही खत्म कर देंगे, और हम भी मर जायेगे । किन्तु शातुचाचा के कारण समझौता करती है ।

कसना दरिया की शादी जल्दी से करवा देती है, उसको संतोष था, अच्छा घर, अच्छा वर मिला था, सबसे बडा संतोष था निर्विघ्न सब काम पूरा हुआ था । शादी के बाद कसना को सब दुःख पूरे हो गये, ऐसा लगता था, पाँच छः साल कैसे बीत जाय यही झंखना थी बाद में तो गौना कर देंगे ।

मुखिया धारासभ्य बन जाता है, विजय जूलुस में रात के समय मुखिया के डाकू दरिया को उठाकर ले जाना चाहते है तब कसना अपनी बुद्धि के मुताबिक दरिया को वाव (कूए) में रख देती है, और इस प्रकार दरिया उस दिन बच जाती है ।

मुखिया को ही खत्म करने की बुद्धि भी दौडाती है, और उसमें भी सफल होती है, इस प्रकार कसना हिंमतवान, बुद्धिवान है ।

गौना तय करने में भी कई मुश्केलियाँ आती है, अंत में गौना करवा के खुश होती है लेकिन दरिया वापस आती है । उसके रुप को देखकर दु:खी होती है । तारा के द्वारा मालुम होता है कि लखमन नामर्द था, तब बहुत दु:ख होता है दरिया ने अपनी माँ से भी छिपाया कि पति नामर्द था, उसके दु:ख में ही उसकी मृत्यु होती है । दलित नारी में कसना जैसी नारी का चरित्र सदा ही अमर रहेगा ।

अन्य पात्रों में जस्या (जसु) का महत्त्व उपन्यास में ज्यादा है, जो लेखक श्री है । दरिया उपन्यास का महत्त्व उसकी यथार्थता भी है ।जस्या दरिया का गवाह है, पत्र लिखने जाता है, तब दरिया को देखता है, गौने के दिन दरिया को स्टेशन तक पहूँचाने जाता है । तारा के साथ संवाद उसकी बौद्धिकता की पेहचान है । दरिया का हमदर्द है । दरिया का पति नामर्द है ऐसा जानता है तो दूसरी शादी करके सुखी जीवन, सही उपाय कहता है । दरिया घर से निकाल देती है तो भी अपमान सेह लेता है । दरिया जब खूली छाती में लिखा हुआ लखमन शब्द पढाती है, छाती से बथ भर लेती है तब जसु की सही कसौटी होती है । वह भाई-बहन का प्यार अमर हो जाता है । दरिया- लखमन को मिलाने के लिए कई प्रयत्न करता है । हास्य का पात्र बनता है, फिर भी किन्नरों में लखमन को ढूँढता है । कईबार सफल भी होता है, किन्तु दोनों का मिलन नहीं करवा सकता ।

जसु समाज में हुए झघडे को सुलेह करवा देता है, उसके कार्य से दरिया और समाज भी खुश होता है ।

अन्य पात्रो में कानजी भगत है, जो संघर्ष करता है अपने अस्तित्व के लिए कार्य करता है । मुखिया विलन (खलनायक) है जो दरिया को उठाकर ले जाना चाहता है । किन्तु 'जैसी करनी वैसी भरनी' के अनुसार कसना के हाथों ही मृत्यु होती है ।

शांतुचाचा गांधीवादी है, काम करना जानते है, दलितों का हमदर्द है, सत्ता में रस नहीं है । देसाई चतुरदा धारासभ्य बन जाते है, गाँवो में शांति रखते है । तारा दरिया को साथ देती है, हर प्रसंग में

दरिया को सही उपाय तारिका बताती है । मुखिया के कारनामे को प्रकट करती है । दरिया को उसके पास ही प्रेम मिलता है । मंगल-करशन भी दलित संघर्ष में साथ देते है ।

इस प्रकार दरिया उपन्यास के पात्र सचमुच मानव है, केवल हाड-माँस के कठपुतले नहीं, समाज में चलते-फिरते इन्सान है । जो दुःख में रोते है, संघर्ष करते है, लेकिन आत्महत्या नहीं करते, जिन्दगी जीने के लिए कटिबद्ध है ।

संवाद का महत्त्व नाटक में ज्यादा है, फिर भी उपन्यास में संवाद होता ही है, क्योंकि उसमें कथा का वर्णन होता है और यह वर्णन में बातचीत होती है । संवाद के द्वारा कथा आगे बढती है, चरित्रो का निर्माण होता है, चरित्रो के बारे में पता चलता है कि कौन सा चरित्र कैसा है ? ये क्या केहना चाहता है संवाद न हो तो कथा में रुकावट आ जाती है ।

दरिया उपन्यास में गाँवो के लोग है, इसीलिए आंचलिक बोली है, जो कहना चाहते है, वह समझ में आ जाता है । उपन्यास में संवाद के कुछ नमूने है जो इस प्रकार है ।

शांतुचाचा - चाय पीलाओगे या नहीं ? (हँसकर)

वृद्ध - चाचा, गुडकी चाय तुम को कैसे दे सकते है ?

शांतुचाचा- गुड से भी मीठा तुम्हारा स्वभाव है नरसीभाई चाय तो मुझे चाहिए ! (पृ.१)

मोती - मेजर साहब ! अंग्रेज सरकार को जाना ही पडेगा ?

मेजर साहब- हाँ, एक दिन तो जाना ही पडेगा !

मोती - तो फिर हमें क्यूं बदनाम करते है ? हम को सच्ची बात समजाओ न ..! हमें तो पूरा जन्म ये गये उनके आधार पर ही बिताना है ।

मेजर साहब- (बोले बिना ही चले गये) (पृ.७)

मुखिया और हजाम के संवाद से मुखिया की जाति प्रकट हो जाती है कि मुखिया कितना खराब होगा,

रतना हजाम- कुछ नहीं मुखियाजी, तुमको नहाना तो है न ! तुम्हारी आवाज (गला साफ करने की) ये नहीं सूनेगी ।

मुखिया -सुनती नहीं है सास ! अंधी हे ? पूरा घर धूल से भर दिया.. यहाँ बैठा हूँ यह दिखता नहीं (पृ.१०)

कसना गाँव छोड़कर जाना चाहती थी, लेकिन करशन कहता है, वहाँ या कोई भी जगह हमारे लिए दलित लोगो के लिए तो ये लोग बूरे ही है । यह संवाद से पता चलता है-

करशन- कहाँ जाओगे ? चाची

कसना - सिर छूपाने की जगह मिले वहाँ भाई !

करशन -तुम्हारे माय के में (काहोर)

कसना - दूसरी जगह पर कहाँ जाऊँ ?

करशन- वहाँ कौए काले नहीं है, यह भ्रम तो नहीं है न ? (पृ.४०)

जसु और लखमन के संवाद उल्लेखनीय है यह संवाद से लखमन की मानसिक अवस्था का परिचय मिलता है ।

जसु - इतना केहने के लिए बम्बई से यहाँ लंबा हुआ ?

लखमन- मेरे कर्म में लिखे जन्म के फेरे को पूरा करने !

जसु- अर्थात !

लखमन - हृदय के कोई कोने में मन की माया अभी तक तो नहीं रही न उसकी जाँच करने-कराने !

जसु - अर्थात्

लखमन- मैं तुमको कैसे समझाऊँ ? किन्तु माताजी की चूंदडी ओढने के बाद इस प्रकार व्यवहार करना पड़ता है । (पृ.९०)

दरियां उपन्यास में ज्यादातर दलित समाज का वातावरण है । चरोतर प्रदेश जीवंत दिखता है । अंग्रेज लोग भारत छोड़कर जानेवाले था, उसी समय में कथा की शुरुआत होती है । दलितो में होनेवाले बालविवाह, संप की भावना, पटेलो की गुंडागीरी, दलित-उच्चवर्ग के बीच संघर्ष, ख्रिस्ती (ईसाई) धर्म स्वीकार, दलित वर्ग के द्वारा दलितो में भी छूत-अछूत परंपरा आदि का वर्णन है ।

लेखक सामाजिक प्राणी है, समाज में जो रीतिरिवाज है, उसीका वर्णन करता है । जो दृश्य दिखता है, वह लिखता है, श्री जोसेफ मेकवान उत्कृष्ट कलाकार है, भारत के श्रेष्ठ उपन्यासकार के रुप में उनकी गिनती करते है, इसीलिए दरिया उपन्यास में उनकी उत्कृष्टता का परिचय अवश्य मिलता है ।

प्रथम अध्याय में आजादी पूर्व के गाँव का वर्णन है । अंग्रेजो चले जाओ के सूत्र तथा जूलुस निकलाते थे, शांतुचाचा पटेल जैसे गांधीवादी लोग दलित मुहल्ले में आते थे, चाय पीते थे, छूताछूत में मानते नहीं थे । दलित मुहल्ले की सफाई अच्छी देखकर खुश होते थे । पेड बडे बडे थे ।

दलितों में इसाई धर्म के प्रति रुचि हुई थी । कई दलित इसाई बन चूके थे, क्योकि राजाशाही में उनका कोई महत्त्व नहीं था, पशु से बदतर हालत थी । उनको अंग्रेज सरकार अच्छी लगती थी, क्योंकि ये सरकार छूताछूत में नहीं मानती थी । दलित मुहल्ले में खाना खाने के बाद रात में (रविवार) भजन होता था । मेजर जैसे दलित मुहल्ले में रहते थे और अंग्रेजो के कारण हमारी स्थिति में सुधार आया है, ये समजाते थे ।

दिवार पर अंग्रेजो के विरोध में सूत्र लिखते थे, दलित और उच्चवर्ग के बीच संघर्ष होता था, दलित स्त्रीयों का शोषण होता था, दलित लोग ये जानते थे फिर भी कुछ करने की शक्ति नहीं थी उनमें। कभी कभी ऐसे प्रसंग मिल जाते तो सभी दलित इकट्ठे होकर उच्चवर्ग के सामने क्रोध प्रगट करते थे । फिर भी दलितों के हाथ नीचे ही रहते थे, क्योंकि उच्चवर्ग के यहाँ सब दलित काम करते थे, पढे-लिखे नहीं थे, अतः उनके यहाँ काम करना ही पड़ता था और गुलाम की तरह जिन्दगी बिताते थे ।

मुखिया जैसे लोग दलितों पर कुद्रष्टि रखते थे । अपने पद का दुरुपयोग करते थे, सफाई करनेवाले हरिजन जाति की स्त्री को सास कहकर गालियाँ देता है, यह उस समय के समाज का यथार्थ वर्णन है ।

हजाम भी जैसा है वैसा कर्म करता है, दोनो पक्षो को झघडा कराने में उसको मजा आती है ।

दलित वर्ग और उच्चवर्ग के संघर्ष का वर्णन है । साठ साल पहले गाँवों में दलितों की असहाय स्थिति, दलित स्त्रीयाँ की स्थिति का वर्णन है । शांतुचाचा, देसाई चतुरदा जैसे सुलेह करनेवाले इन्सान भी है । चौक में निठल्ले पुरुष बैठे रहते, और आने-जानेवाली औरतों की छेडती करते थे । मामदमीयाँ जैसे अल्लाह के आदमी भी है जो सराहनीय काम करते है ।

शादी छोटी-सी उम्र में करते थे, ज्यादातर लोग अनपढ थे । भ्रष्टाचार का राक्षस तब भी जीवित था, स्त्री-पुरुष के बीच आडे संबंध भी कुछ मात्रा में थे, और स्त्री में गर्भ रह जाता तो आत्महत्या करती थी, दवाएँ उपलब्ध नहीं थी ।

चुनाव में शत्रुता होती थी, जीतने के बाद शराब की पार्टियाँ होती थी, और स्त्रीयों का भी दुरुपयोग करते थे । खेतो में, तंबाखू के कारखाने में दलित स्त्रीयाँ का शारीरिक शोषण होता था और यह करने में छूताछूत नहीं रखते थे । दलितों के लिए शाला में ग्लास में पानी पीने की मनाई थी, मंदिर में जाने की भी मनाई थी ।

बूनकर लोग हरीजनों से छूताछूत रखते थे, छोटी उम्र में शादी और बीस की उम्र में गौना करते थे । लडका लडकी स्वयं पसंदगी नहीं कर सकते थ, और कभी कभी कजोडा समाज में उत्पन्न होता था । कोर्ट, पुलिस से लोग अनजान थे । उनसे दुर रहना चाहते थे ।

दलितो में भी आंतरिक द्वेषभावना रहती थी । लडका-लडकी कभी कभी प्रेम कर बैठते- कोर्ट मेरज भी कर लेते थे । झघडा का स्वरुप बढ जाता था, जोसेफ मेकवान जैसे बीच में आकर सुलेह करवाते थे । आधुनिक समय में लडका-लडकी स्वयं जीवनसाथी पसंद करते है । नववधूना चेहरा खूला, दुल्हा, दुल्हन अंगूठी पहनाता है ये आधुनिकता अब सभी धर्म में देखने को मिलती है ।

पात्रावर्णन भी उत्कृष्ट है । घटनाओं का वर्णन, प्रसंग का वर्णन भी उल्लेखनीय है ।

जोसेफ मेकवान के उपन्यास की भाषा में आंचलिक बोली का मुधर गेहका होने के साथ यह बोली उसके सारे नाद, ध्वनि, अर्थ, शक्ति के साथ प्रयुक्त हुई है । निरुपित वस्तु उसके वास्तविक बोली-बानी के रुप में यहाँ प्रस्तुत है ।

भाषा पर पकड है । दरिया उनका नवाँ उपन्यास है, इसीलिए निखार अवश्य बढ गया है । मध्यगुजरात, (खेडा, आनंद जिल्ले) के गाँव की भाषा है, दलित लोगो की आँचलिक भाषा भी है । मुहावरें, लोकक्तियाँ से भाषा समृध्द है । अंग्रेजी, हिन्दी शब्दो का प्रयोग भी विद्यमान है ।

मुहावरें

- हम तो तीनके की तुलना में
- लहूँ ठंडा हो गया
- दु:ख के डुंगर दरिया में डूबो देना
- मगज खिसक जायेगा
- माथे पर आकाश टूटपडना, पत्थर बन जाना
- आँखे फट जाना, हवाने बात फैलाई
- अंधेरे में पिघल जाना, दिल दे बैठना
- टस से मस नहीं होना

कहावतें

- टूटे फूटे भरुच को गालियाँ दी- पृ.११
- नाक कट गई, पर होठ तो बच गया । पृ.१५
- हवा आने पर पेड झुक जाता है, इसीलिए बच जाता है । पृ.१८
- पटेल, पाडा और पारधी एकसरीखे नहीं होते - पृ.२३
- बम्बई में रोटी मिले किन्तु मकान नहीं मिलता -पृ.२३
- जैसी करनी वैसी भरनी - पृ.४२
- खुदा के घर देर नहीं है, अंधेर भी नहीं है । पृ.४२
- दिवार को भी कान होते है ।
- सिर पर कौआ बैठे और दु:ख के समाचार पत्र लिखने से मौत टल जाय । पृ.६०

- छोटी उम्र में जितना होंशियार, उतनी ही उम्र कम पृ.६६

- पानी हिलाने से मख्खन नहीं मिलता - पृ.९८

अंग्रेजी शब्द

- मिटिंग, हार्टअेटेक, मेम्बर, पी.एम.रीपोर्ट, टी-पार्टी, गॉड फाधर, कलर

उर्दू शब्द

- फरिश्तो, दुआ, महेफिल, खुदा, दातार

Myth

अश्वत्थामा उल्लु को ही गुरु मानता है, उसी तरह कसना भी रात में उल्लू को ही गुरु मानकर अपना कार्य सफल करती है ।

व्यंग्यात्मक शब्द, वाक्य- महत्त्वपूर्ण वाक्य

हमारे देश की स्वतंत्रता अब ये सामने रही दिवार पर लिखे सूत्र जितनी ही दूर है ।

- खाइए ऐनु गाईए - पृ.७ - रीहेय नई न रोदोय नई - पृ.८
- कसनानी दाढ में से छूटा यह बोलका सच्चा अर्थ
- दो रस इकट्ठे हुए तो टक्कर नहीं हुई, किन्तु आँख मिलते ही एकाकार हो गये । पृ.३५
- कौए वहाँ काले नहीं- ऐसा भ्रम तो नहीं है । पृ.४०
- अे दिवसे विधवानां वस्त्रोमां सजावाती जडवत् जे दरियाने आ आँखोअे नीरखेली अेनी अे छबी शूल बनीने कालजे अेवी कोतराई गयेली के एना व्रण वरसो लगी दुजता रहेला ।
- बात बहती हुई पूरे गाँव में फैल गई - पृ.६३
- आदमी की जाति से तो पत्थर अच्छे, लगे तो लहूँ निकाले
- संस्कृत से सभर वाक्य रचना -

प्रशस्त वक्षस्थल अनावरित थई गयुं । अजवालेला फानसना आछा उजेतमांय ऐना रक्तिम श्वेत स्तनद्धद्धनी सुडोलता अने संधिरेखानुं परम सौन्दर्य अछतुं न रह्युं ने अनायासे ज मारी पलको नमी गई - पृ.६९

- छाती में आज भी मुझे उसकी हूँफ मेहसूस होती है- ६९

-	उस समय चार रास्ता का ये चौक जनरव बिना था ।

-	अश्रुपरिप्लावित अे चेहरो लूछाया पछी रतुमडी आभा धारी रह्यो- ९२

-	घूघवाटा लेता दरिया करतांय झाझेरी लागणी थी- पृ.९३

गौना गीत

कानजी भगत रुडा मोटेरा माणह

कसना माडीनी लाडी दरियानां आणां- पृ.१२

-	मखईनी छोकरी बेठी बजारे

पेलो घराक मेतर मूलजी मातेलो

हट्ट करु भई पट्ट करु, तारा नाडा उपर वट्ट करुं

बेठी बजारे मखईनी लाडी । पृ.१३

भजन

करमनां अंधारां को दि नथी फिटतां राम

अलंकार

अतिशयोक्ति अलंकार- रतना के पैरो में पवनपावडी आ गई -पृ.१९

उपमा- उसके वचन घी के मिष्टान (शीरा) की तरह गले से उतर गये । पृ.३४

-	आम पक्का न हो तब तक रक्षा करते है, उसी तरह मेरी बात की रक्षा करना । पृ.४७

-	दो छोटे बेर से मोतीबूँद वहाँ घूस आये । पृ.५२

-	परी पाछी पडे ऐवी रुप रुपना अंबार समी दरियाने- पृ.५४

-	गुड्डे जैसा रुप था । पृ.-५५

रुपक - दरिया का मामा बिलकुल केस है । पृ.५८

विरोधाभास अलंकार

-	दरिया के जेटला उमंगे आणाना अलंकार सजेला अेटली ज उलट थी गजराने फूलमाला सजाववा दीधा -पृ.५९

रस-दरिया उपन्यास में करुण, हास्य, शांत, श्रृंगार रस विद्यमान है । करुण रस की मात्रा ज्यादा है, क्योंकि दरिया का जीवन ही करुणा के सागर से भरा हुआ है ।

क -र (१) कानजी भगत की मृत्यु, कसना के शब्द, रोना

(२) दरिया का गौना, विदाय पृ.५१

(३) दरिया का विधवा स्वरुप,

दरिया का जीवन करुण रस से भरा हुआ है । पूरी जिदगी पति के वियोग में आंसू बहाती है ।

सांभृ १मुखिया और मामी के संबंध- श्रृंगार रस से भरपूर है । दो रस मिलते ही टकराये नहीं, किन्तु आँख मिलते ही एकाकार हो गये । पृ.३५

उपन्यास लिखनेवाला अपने समय के मानवजीवन की बात लिखता है । समाज के सामने यह दर्पण रखता है, उनका लेखन उनके समय का आलेख और प्रतिकृति फोटोग्राफी होती है ॉ

श्री जोसेफ मेकवान के पात्र प्रतिकूल परिस्थिति में विवश होकर परिस्थिति की झाल में फँसते नहीं, किन्तु अन्त तक प्रतिकूल परिस्थिति के सामने मुकाबला करते है ।

उपन्यास जीवन का अर्थ करता है । और सही जीवन की ओर अंगूलिनिर्देश करके उसके रहस्यो को स्फूट करता है । ये आनंद देने के सिवा जिज्ञासावृत्ति और साहसवृत्ति को संतोष देता है । विवेक की सीख मिलती है । जीवन का मूल्यांकन करने की दृष्टि देता है । जीवन प्रश्नो का श्रद्धापूर्ण उत्तर देता है । वर्डसवर्थ कहता है कि दु:खी को ये दिला (सांत्वना) देता है । सुखी के ज्यादा सुखी बनाता है । क्रान्तिदृष्टा सर्जन उपन्यास में जीवनमीमांसा करता है । जीवन और उसके सुख दु:ख के निमित्त बनाकर उपन्यासकारने उस समय गुजरात में जीते गाँव में रहनेवाले दलितो के जीवन को वाणी दी है । दरिया ग्रामीणजीवन की कथा है । गाँव में सशक्त, श्रमिक सच्चाई से पूर्ण प्रजा में दु:ख को पी जाने का संकल्पबल है, ये उपन्यास प्रकट करता है । लोग, उनकी बोली, उनके वट, खानदानी, ईर्ष्या, वेर-झेर, भलाई उनकी हर रोज की सम-विषम अवस्थाएँ समय का व्यक्तिजीवन, और संघजीवन उनके सामाजिक रीति-रिवाज उनके जीवन में रस को विविधता देते प्रसंग ये सभी को विवरण के साथ यह

कथा-पाठको के आगे मध्यगुजरात के गाँव को खडा करता है । लेखक ने उनके मनःमंथन, समस्या, आघात-प्रत्याघात सभी का मनोवेज्ञानिक चित्रण से वर्णित किया है । आँचलिक भाषा, पात्र उनका रहन-सहन, अच्छे-बूरे व्यवहार, मान्यताएँ सभी का उपन्यास में सही लगे इस प्रकार गुजरात के इसी प्रदेश का वर्णन किया है ।

लेखक का भाषा सामर्थ्य, सर्जक, कल्पनाशक्ति, और उपमा, रुपक आदि का अलंकारो से जाना जाता है । हर पन्ने पर सच्चाई, हृदय विदारक बाते पाठक को जकड रखती है । लेखक के शब्द साहित्योचित्त, शिष्ट और कटाक्षमय है । उन्होंने जिस आंचलिक भाषा का उपयोग किया है, यह किसी से कम नहीं है, भाषा के उस शिखर की ँऊचाई तक दूसरा कोई नहीं जा सकता ।

दरिया उपन्यास निम्न उद्देश्य लेकर आया है ।

(१) **दलित और उच्चवर्ग के बीच संघर्ष**

समाज में दो जाति के बीच संघर्ष होता ही है, और यह यथार्थ भी है । दलित लेखक ने जो देखा है, उसीका चित्रण करते है । उपन्यास में अंग्रेजो चलो जाओ के सूत्र दिवार पर लिखने के बारे में पटेल और दलितो के बीच संघर्ष होता है । किन्तु शांतुचचा जैसे गांधीवादी व्यक्ति के कारण मामला शांत होता है ।

मुखिया के स्वभाव के कारण कसना और मुखिया के बीच भी संघर्ष होता है । जो कथा का केन्द्र बिन्दु है । दरिया की इज्जत लूटने के लिए सदा ही तत्पर रहता हे, उसको उठाकर ले जाने का प्रबंध और अंत में कसना के ही हाथो उसकी मृत्यु होती है । इस प्रकार संघर्ष की चरमसीमा है ।

(२) **आजादी से पहले और आजादी के बाद दलितों की स्थिति**

दरिया उपन्यास का उद्देश्य यह भी है क्योंकि आजादी से पहले दलितों को कुत्ते की तरह ही देखते थे, प्रथम प्रकरण में मेजर नेकहा है कि अंग्रेज छूआछूत में नहीं मानते और आज हमें यह सरकार

अच्छी लगती है, हमारी सरकार है । अंग्रेजो के समय में भी उच्चवर्ग के लोग बिना कारण पिटाई करते थे, काम करने के बाद पैसे कम मिलते थे, स्त्रियाँ की छेड़ती करते थे ।

आजादी के बाद गाँधीजी के कारण दलितों को हमदर्द समझते थे, मानव की तरह देखते थे, पर ये देखनेवाले केवल दो प्रतिशत लोग ही थे, अतः आज भी दलितों से छूआछूत अवश्य रखते है, पर ५० साल पहले से आज का समय दलितों के लिए जरुर ठीक है, अभी भी सुधार होना जरुरी है ।

(३) स्वमान के लिए दलितों की मर मिटने की तैयारी और एकता

मुखिया का गाली देना- सास, औरतीरी लड़की को रखूँ ऐसी गाली ये सह नहीं पाई और पूरे गाँव में मुखिया को फजीहत करती है । आज तक तुच्छकार के शब्द बहुत सुने थे, पर यह गाली से स्वमान टूट जाता है और अपनी कोई किंमत नहीं है, क्या हम इन्सान नह है ? स्त्री की यही किंमत है ?

गाँव में दस-पंद्रह घर होने के कारण अपूर्ण एकता होती है, एक होकर मुश्केलियाँ का डटकर मुकाबला करते है ।

(४) दलित नारीयों की छेडती और विद्रोह

दलितों से छूआछूत लेकिन दलित नारी के साथ शारीरिक संबंध- लेखक का यह उद्देश्य भी है कि उच्चवर्ग के लोग दलितो से छूआछूत रखते है, लेकिन दलित स्त्रीयों से छूआछूत नहीं रखते । खेतो में, तम्बाकू कारखाने में दलित स्त्रीयों का दुरुपयोग करते थे । दलित पुरुष उच्चवर्ग का सामना नहीं कर सकता था, तो बेचारी दलित स्त्रीयों तो विरोध भी कैसे कर सकती है ।

फिर भी दरिया जैसी स्त्री चौक में ही एक युवान पर पशु का गोबर फेंककर गले को पकड लेती है । अपनी छेड़ती का बदला लेती है । छेडती करनेवाले को मूँहतोड उत्तर देना ही श्रेयकर मानती दरिया दलित नारी की प्रतिनिधि है ।

(५) दलितों का बुद्धिचातुर्य

दलितों में भी बुद्धि होती है, यह दरिया के द्वारा संदेश मिलता है । दूध में शक्कर की तरह हिन्दु धर्म में रहते हैं, काम करते है, सफाई करते है । गाँव को स्वच्छ रखते है । फिर भी उनके साथ पशु जैसा व्यवहार किया जाता है ।

अपनी लड़की को उठाकर ले जाने का प्रबंध करनवाले को खत्म करने के लिए अपना जीवन जोखिम में रखकर भी वह यह कार्य करती है । मिट्टी का तैल मुखिया के कमरे में डाल देती है, सिगरेट के शौख के कारण मुखिया जल जाता है । यहाँ कसना के बुद्धिचातुर्य की कसौटी होती है ।

(६) दलितो में छूआछूत

दलितो में छूआछूत है , उसको मिटाना चाहिए वरना यह क्रम आगे ही बढेगा । जसु बूनकर खिस्ती है, तो तारा हरीजन है । दो जाति में भी छूआछूत है । जो दलित ही है । जसु कूए से तारा को पानी भरने देता है, तो समाज के लोग दंड करते है ।

(७) दलितो में खिस्ती धर्म का प्रभाव

प्रथम प्रकरण में ही अंग्रेजो के विरुद्ध सूत्र लिखनेवालो के सामने खिस्ती लोग मोरचा करते हैं, क्योंकि अंग्रेज खिस्ती है और हम भी खिस्ती है । दूसरा अंग्रेजो के कारण हम छूआछूत से थोडे बहुत दूर निकले है, अंग्रेज छूआछूत रखते नहीं है । खिस्ती धर्म के कारण बडी उम्र में शादी होती है । पति-पत्नी का चयन कर सकते है । पढाई का महत्त्व जानते है । इस प्रकार खिस्ती धर्म के कारण दलितों के जीवन में सुधार हुआ है ।

(८) उच्चवर्ग में गांधीजी का प्रभाव

गांधीजी के कारण उच्चवर्ग के दो प्रतिशत लोग दलितों से छूआछूत कम रखते थे । गांधीजी का उद्देश्य अंग्रेजो को हटाना था, उसके सिवा समाजसुधार करने का उद्देश्य भी था । गांधीजी के प्रभाव से शांतुचाचा

आदि दलितो के मुहल्ले में आते थे, चाय पीते थे, दलितो से छूआछूत नहीं रखते थे । शाला में महीजीभाई अध्यापक भी दलितो से छूआछूत नहीं रखते थे ।

(९) अंधश्रद्धा दूर करने का प्रयास

शारीरिक बिमारी के कारण दरिया का पति लखमन किन्नर बनना चाहता है, दरिया उसे दवाई का महत्त्व समजाकर शारीरिक कमजोरी को दूर करने को कहती है, यह दरिया की अपनी इच्छा है, लेखक यहाँ पुरुष वर्ग को संदेश देते है कि शारीरिक कमी है, तो दुःखी होने की जरुरत नहीं है, दवाई से आपकी कमी दूर हो सकती है ।

(१०) नेताओं के रुप

उपन्यास में लेखक ने नेताओं के रुप स्पष्ट किये है, हिन्द छोडो आंदोलन में तिनके तोड़नेवाले व्यक्ति भी आजादी के बाद नेता बन गये है । मुखिया जैसे व्यक्ति भी गाँव में कोहराम मचाते है, लेकिन चुनाव में खडे रहने के बाद हाथ जोडकर वोट माँगते है, खद्दर पहनते है, और अच्छे काम की सुधार की आवश्यकता पर बल देते है ।

लेकिन चुनाव जितने के बाद गूंडाराज ही जमाते है । स्वयं ही दागी है, डाकू है, दलित स्त्रीयों को हैरान करते है । चतुरदा जैसे अच्छे नेता भी है उनके कारण रामराज्य आता है, किन्तु कितने दिन ?

(११) शिक्षा की कमी

अनपढ पशु के बराबर है, उपन्यास में दलित लोग अनपढ है, आजादी से पहले उच्चवर्ग के लोग ही पढाई कर सकते थे । उच्चवर्ग की सेवा सफाई काम धर्म समझकर करते थे, शादी, गौना, के बारे में गलत विचार रखते थे । दवाई का महत्त्व, पुलिस का महत्त्व जानते नही थे, कूए के बाहर की दुनिया देखी नहीं थी ।

(१२) शादी और गौना के बारे में दलितों के विचार

दलित लोग अनपढ थे, इसीलिए पंरपरागत विचार ही करते थे, छोटी सी उम्र में शादी, दुल्हा-दुल्हन की पसंदगी उनके माता-पिता द्वारा करना, दोनों के बीच उम्र का ज्यादा अंतर, जैसे विचार गलत थे ।

अंत में एक शादी भी की है, जो समाज के लिए उदाहरण है ।

(१३) भ्रष्टाचार

आजादी के बाद भ्रष्टाचार की शुरुआत हो गई थी । मुखिया पैसा देकर कोर्ट में, पुलिस में काम करवाता है । आजादी के बाद बी.एड. करने के बाद डॉनेशन देना पड़ता है । ये उदाहरण भी दिया है और यह यथार्थ भी है ।

(१५) पुलिस कोर्ट का महत्त्व

दरिया बम्बई जाती है तो पुलिस, कोर्ट का महत्त्व जानती है । कोर्ट में न्याय मिलता है । अन्याय हुआ है तो कोर्ट का सहारा लेना ही चाहिए ये दरिया के द्वारा लेखक ने स्पष्ट किया है ।

(१६) दलितो में आंतरिक संघर्ष

दलितो में एकता कम होती है । उपन्यास के अंत में खूलकर ब्योरा दिया है कि एकदूसरे के मनःदुःख के कारण लड़की को फँसाकर प्रेम का बहाना बनाकर ले जाते है, जाति में बदनाम करते है । पुलिस में जाते है, मरने-मारने के लिए तैयार होते है, यह सब गलत है । लेखक ने स्वयं ही समाज सुधार के लिए प्रयत्न किये है और आज भी ये काम कर रहे है ।

(१७) दलितो में रोजगार की समस्या

उपन्यास के प्रथम प्रकरण में ही शांतुचाचा के द्वारा निर्देश किया है कि तुम काम पर कहाँ जाओगे ? तुम्हारे पास शिक्षा नहीं है, जमीन, जागीर नहीं है, तुम्हें तो यहाँ ही रहना है, हमारे खेतो में काम करना है....

हरीजन भी गाँव की सफाई करते है पटेलो के पशु के मल-मूत्र की सफाई करते है, वह भी पटेलो के आश्रित है ।

आज कई दलित लोग पढे लिखे है, बी.एड्. करने के बाद या डिग्री प्राप्त करने के बाद नौकरी में डोनेशन माँगते है, पैसे न होने के कारण बेरोजगार रहना पडता है ।

(१८) **सत्य हकीकत**

दलित उपन्यास का महत्त्व सत्यघटना के कारण बढ जाता है । लेखक ने जो देखा है, अनुभव किया है उसको लिखने का प्रयास किया है । दु:ख भुगतना ही दलितों का धर्म बन गया है । लेखक स्वयं दलित है, दु:ख सेहने की आदत है कहीं विद्रोह करते है, फल प्राप्त करते है।

लेखक स्वयं एक पात्र है । बचपन में जसु (जस्या) नाम था । दरिया उनके गाँव की हरिजन लड़की थी, आजादी से पहले दलितों की स्थिति कैसी थी । लेखक ने ये सब देखा है । क्योंकि उनकी उम्र ७० साल के आसपास है । मुखिया जैसे दलित नारी का दुरुपयोग करते थे, उठाकर ले जाते थे, पर दलितों से कुछ नहीं होता था, खेत में, तंबाखू कारखाने में भी शारीरिक संबंध की अपेक्षा के कारण उच्चवर्ग के लोग दलित स्त्रीयों को बुलाते थे, काम करवाते थे, शोषण करते थे । दलितो में कुछ करने की शक्ति नहीं थी, शादी, गौना की बात भी सही है । दरिया- लखमन जैसे पात्र आज भी जीवंत है, दोनों व्यक्ति अपने आप में पूर्ण है । दरिया के द्वारा दलितों की कई समस्याएँ और उनका समाधान करने का प्रयास किया है ।

दरिया दलित जीवन सागर के दर्द की कथा है । दरिया-लखमन की तपश्चर्या है । आजकल पति-पत्नी पूर्ण होने के बावजूद दोनों किसी ओर के सामने यौन संबंधो के लिए देखते रहते है । लेखक यह स्पष्ट करना चाहते है कि यदि प्रेम है तो शारीरिक सुख के बिना भी आप जी सकते है, अन्य के प्रति आकर्षण तो कुलक्षण है । भारतीय स्त्री के पास यही संकल्प होना चाहिए । परिवार और समाज अवश्य आगे बढेगा । छोटी उम्र में शादी करने से कैसा परिणाम भुगतना पडता है, यह दरिया-लखमन द्वारा दिखाकर लेखक ने समाज के प्रति लाल आँख दिखाई है ।

दरिया उपन्यास चरित्र प्रधान उपन्यास है । सारी कथा में दरिया का पात्र छाया हुआ है । इसीलिए दरिया शीर्षक यथायोग्य है । दरिया नौ साल की थी, तब से कथा की शुरुआत होती है, प्रथम प्रकरण

में दलितों की स्थिति का वर्णन है । आजादी पूर्व दलितों की मानसिकता का वर्णन है । दूसरे प्रकरण से ही दरिया पर ध्यान केन्द्रित किया है । मुखिया का गालियाँ देना, कसना को सास कहना, दरिया का गौना लेकर जाना, मुखिया को फजीहत करना, कसना का दरिया की रक्षा के लिए गाँव छोड़ने का संकल्प, दरिया की शादी, गौना, दरिया को उठा के ले जाने का मुखिया द्वारा प्रयास, मुखिया को खत्म करना ये सारी बातों का केन्द्र दरिया है । दरिया का गौना, पति नपुसंक, किन्नर बन जाना, दरिया द्वारा दवाई का महत्त्व समजाना, लखमन की मौत का समाचार, दरिया का विधवा के रुप में रहना, सफाई काम करना, छेडती, मुहतोड उत्तर देना, उसकी जीवन नौका टेढी मेढी चलती है ।

लखमन का पत्र आना । मैं जिन्दा हूँ उसकी याद में दिन काटना, लखमन का पता लगाने का प्रयत्न, किन्नरों में ढूँढने का प्रयास, जसु द्वारा प्रयत्न । लखमन, जसु का मिलन, किन्नर बनने की कथा, दरिया और लखमन दोनो का प्रेम, विरह अतुलनीय । दोनों एकदूसरे को वफादार, दरिया का लखमन को मिलने का हसंभव प्रयास, जसु द्वारा सारे प्रयत्न अंत में लखमन के पीछे ही, लखमन के मिलन के लिए उसके पीछे घर छोड़कर चले जाना । ये दरिया का जीवन है ।

इस प्रकार सारी कथा दरिया के इर्द गिर्द घुमती है। शीर्षक सहीं है, दरिया कारुण्यमूर्ति है । जीवन की विषमताएँ, समस्याएँ, द्विधाएँ और मनोमंथन दरिया में है ।'एको रसः करुण' एवं यही उसके जीवन का प्रधानरस बन जाता है । विधाता ने कोमल पुष्प पर भी कम घाव नहीं किया, यह नारी को शब्दों से सजाया नहीं जा सकता और मन में से निकाल नहीं सकते ऐसी नारी है । इस प्रकार 'दरिया' शीर्षक यथायोग्य है ।

संदर्भ

आंगलियात

१. शब्दसृष्टि अंक -११, नवम्बर- २००३, पृ.१९२

२. वही- पृ.१५७

३. वही- पृ.२०७

४. साठोत्तरी गुजराती नवलकथा- पृ.१४३

५. मंजु झवेरी, निरखने पृ.५२

६. आंगलियात (जो.मे.) दूसरी आवृत्ति -पृ.१२

७. हरिन्द्र दवे- जन्मभूमि (आंगलियात, भ.शर्मा के लेख में से) पृ.३२

८. अनुसंधान -पृ.११९ (भी.न.वणकर)

९. आंगलियात- पृ.४९

१०. वही - पृ.५५

११. गु.सा. में दलित कलम पृ.९

१२. जानपदी नवलकथा- पृ.५६ प्रमोदकुमार पटेल

१३. अनुसंधान- पृ.१८० भी.न.वणकर

१४. प्रत्यायन- पृ.७४, भी.न.वणकर

१५. हयाती- जून-२००० पृ.११८ मंजु झवेरी

१६. चाकडो- पृ.४८१ आग्नेस रमेश वाघेला

१७. हिन्दी उपन्यासकार -सं.सुषमा प्रियदर्शिनी- पृ.८५

१८. हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में शिल्प विधि- जवाहरसिंह- पृ.२८

१९. आंगलियात- पृ.९८

२०. ग्रामजीवनी साठोत्तरी गुजराती नवलकथा- पृ.१४७

२१. दलित कलम- पृ.२४७

२२. हयाती पृ.१५९ मोहन परमार

२३. ग्रामजीवन नी साठोत्तरी गुजराती नवलकथा- पृ.१४८ (केसर मकवाणा)

२४. दरिया- पृ.प्रस्तावना -५ जो.मे.

२५. चाकडो- पृ.XVI

अध्याय-७

हरीश मंगलम् व्यक्तित्व एवं कृतित्व

नाम : हरीश मंगलम्

जन्म स्थल: फलु (जि.महेसाना)

अभ्यास : बी.ए. (गुजराती) एल.एल.बी.

व्यवसाय : अधिक कलेक्टर

प्रकाशित पुस्तके : काव्य संग्रह (प्रकंप)

उपन्यास - तिराड, चोकी

- तिराड का हिन्दी अनुवाद दरार (अनु.प्रा.हसमुख बारोट)
- चोकी का हिन्दी अनुवाद चौकी (अनु.श्री सुरेन्द्र दोषी-राणा)
- नवलिका संग्रह
- તલપ का हिन्दी अनुवाद तलब (अनु.फूलचन्द गुप्ता)
- विवेचन
- संवित्ति (मोहन परमार के साथ)
- विदित, एक वचन

-आस्वाद

- पणछ (दलित कविता आस्वाद्य)
- संपादन
- घर (कहानी संग्रह)
- मफत ओझानी श्रेष्ठवार्ताओ
- गुजराती दलित वार्ता (मोहन परमार के साथ)
- प्रतिनिधि दलित वार्ता
- दुंदुभि (प्रविण गढवी- दलपत चौहाण के साथ)
- बूगियो वागे (शंकर पेन्टरना काव्यो)

ईनाम : गुजराती दलित वार्ता के लिए गुजराती साहित्य अकादमी गांधीनगर का ईनाम ।

તલપ के लिए गुजराती साहित्य अकादमी का ईनाम ।

‘तालप’ के लिए गुजरात साहित्य परिषद का दो वर्ष का (२००१,२००२) सर्वश्रेष्ठ नवलिका संग्रह का ईनाम ।

- गुजराती दलित साहित्य के प्रदान के लिए गुजरात सरकार, सामाजिक न्याय और अधिकारीता विभाग की ओर से सर्वोच्च सन्मान संत श्री कबीर दलित साहित्य एवोर्ड (वर्ष-२००२-०३ के लिए)

हयाती के तंत्री की ‘फरज’ के लिए गुजराती साहित्यसंगम की ओर से धनवंत ओझा एवोर्ड ।

किसी भी प्रकार के साहित्यिक वारस के बिना र.व.देसाई क.मा.मुनशी, पन्नालाल पटेल, उमाशंकर जोषी जैसे सर्जकों ने पुस्तक पढने के शौक से हरीश मंगलम् की सर्जनयात्रा का प्रारंभ इ.स.१९६७ में 'किसान' नामक एक हिन्दी रचना से हुआ था । मणिलाल न. पटेल जगतमित्र और हसमुख रावल 'नायान' के साथ साहित्य सर्जन प्रवृत्ति में गहन रस जागा । सौ जितनी छांदस रचनाओं से कई छंदो की कवायत हुई उसके बाद आ गये आरक्षण आदोलन से एक नया मोड आया । ललित साहित्य सर्जन में कमी आई, ये पानी सुख गया । साहित्य के बारे में कई विचारो का खंडन हो गया । ये बात हुई १९८१-८५ की । ये पहेले भी उनके विचारों में कई परिवर्तन हुआ था । १९६७-६८ में उन्होंने रमणलालजी पंड्या और शिवा देवा चमार के साथ स्वयं ने बनाये पंचामृत से शीख धर्म का अंगिकार किया था । 'शीख' धर्म अपनाने के पीछे अपनी तथा समाज की रक्षा हो यह ख्याल था । 'शीख' जाति प्रभावक एवं बहादूर लगी थी । ये दोनों दोस्त के साथ चित्रकला एवं नाट्यकला में अकल्पनीय आकर्षण जमाया था । यहं समय मुहल्ले के अन्य बच्चों, विद्यार्थीओं के लिए घर के छोटे कोने में लायब्रेरी का प्रयोग किया था ।

हरीश मंगलम् दलित साहित्य और दलित, शोषित, पीडित समाज के प्रति प्रतिबद्ध है । वे दलित साहित्य की परिभाषा करने में संकुचित मानस नहीं रखते । वह कहतेहै- जाति-ज्ञाति भेद के सिवा जिनका दलन-शोषण हुआ है, वह पूरा मानव समूह दलित है । और वह समाजोत्थान के ललिए रचित साहित्य वह दलित साहित्य ।

हरीश मंगलम ने दलित साहित्य के सभी स्वरुपों में सृजन किया है । कविता, कहानी, उपन्यास, विवेचन, काव्यस्वाद और अनुवाद आदि उनकी कविता के बारे में डॉ.पथिक परमारने कहा है कि 'प्राकंप' (१९९१) के कवि श्री हरीश मंगलम् दलित साहित्य के एक उमदा सर्जक है । गीत, गजल और अछांदस रचनाएँ दी है । उसमें महेसाना की ग्रामबोली का लय, लहेका, स्टाई के साथ का ध्यानाकर्षक विनियोग हुआ है । 'भा ` र

भूंडीना, एक गॉमेती गीत से ज्यादा डूले अजवालु, गुलम्होर, जैसे गीत भाषाशैली की दृष्टि से अलग है । गीत कवि के रुप में यह कवि जानपदी (आंचलिक) शैली के गीतो में ज्यादा खिले है । उनकी अछांदस रचनाओं में शांति की नहीं, क्रांति की बात है, इसीलिए कवि की भाषा भी विद्रोही दिखाई देती है । (शब्दसृष्टि नवे.-२००३) पृ.१७३

उनकी दलित कहानियों के बारे में कई भावक और विवेचकों ने अपने तटस्थ अभिप्राय व्यक्त किये है । जैसे कि शिरीष पंचाल, राधेश्याम शर्मा, प्रवीण गढवी, प्रवीण दरजी, डॉ. सिलास पटेलिया, चंदु महेरिया, अजित ठाकोर, जोसेफ मेकवान, पथिक परमार, जयंत गाडित, अरविंद वेगडा, हास्यदा पंडया, दर्शना त्रिवेदी, रुपाली बर्क, डॉ.केशुभाई देसाई, अंजली महेता, हरेश खत्री, बाबु दावलपुरा, व्रजालाल दवे, मोहन परमार, किशोर जादव, आम्रपाली देसाई, के.एम. शेरीफ और मणीलाल ह. पटेल, चिनुमोदी, बिपीन पटेल, भरत महेता, मणीलाल न. पटेल (जगतमित्र)

उनके मुताबिक तलप, दलो उर्फे दलसिंह, उटांटियो, दायन, श्रद्धा, पगदंडी, वरपडुं और झोल कहानियाँ उत्तम है ।

बाबु दावलपुरा अपने तलप :कदीय न छीपे तेवी तलपनी मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति शीर्षक नामक लेख में लिखते है कि विषयवस्तु के अनुरुप वस्तु संयोजन और चरित्र संविधान एवम् अभिव्यक्तिगत सज्जता में उभर आती कर्ता की प्रतिभा विशेषता यह कहानी में प्रकट होती है ।

"दायन" कहानी को जयंत परमार "गुजराती साहित्य नी अभिनव दणागी" के रुप में रखते है । तो गुजराती साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार जोसेफ मेकवान "दायन" कहानी को समाज की उच्चतम नृशंसता को खूली करने का एक थीसीस गिनते है । यह कहानी के बारे में लिखते है- बेनीमा अर्थात् बहन और माँ, एवम् दोनों का ऐसा कहानी की नायिका का अर्थसंकुल नाम ध्वनायात्मक बना रहता है । ऐसा प्रतिपादित करके डॉ.पथिक परमार "दायन" कहानी के मुख्य चरित्र "बेनीमा" को उच्चासन पर बिठाते है । कहानीयों को पाने तलप कहानीसंग्रह के समीक्षात्मक कई लेख भी यह संदर्भ में देख लेना चाहिए ।

(१) दलित चेतना ने उजागर करती वार्ताओ (उद्देश- ऑगस्ट-०३) लेखक हरीश खत्री) (२) दलित वार्तानी मोसम उघली छे (तादृर्थ्य- अेप्रिल-२००२) ले. दलपत चौहान और (३) सर्जकता से छलोछल केटलीक दलित वार्ताओ (नया मार्ग- १६/२/०२ लेखक मंदुमहेरिया) आदि है ।

हरीश मंगलम् की कहानियों का अंग्रेजी, हिन्दी, बंगाली, उडिया, उर्दु आदि भाषाओं में अनुवाद हुआ है । यहाँ खास ध्यान देना चाहिए की हरीश मंगलम् की कहानियोंने एक अलग राह बनाई है । आरक्षण विरोधी आंदोलनो के बाद जो गेहरा आघात पहुँचा, तब से लेकर आज त्क नई ही परंपरा खडी करके अपने मौलिक प्रदान की झाँखी करवाई है । गुजराती दलित साहित्य के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में ‘चाँदनी’ के २१ डीसे. ८५ के अंक में प्रकट हुई उनकी दायण कहानी उसका तादृश्य उदाहरण है । इस समय से पहले जितनी दलित कहानियाँ लिखी गई थी वो सामाजिक आंदोलन के भागरुप में नहीं लिखी गई । लेकिन वैयक्तिक सर्जन प्रवृत्ति केरुप में लिखी गई थी । सामाजिक आंदोलन के भागरुप सजे गये, दलित सहित्य का मूल्य अनेक गुना ज्यादा है । ‘तलप’ कहानीसंग्रह का हिन्दी अनुवाद ‘तलब’ की प्रस्तावना में अनुवादक डॉ. फूलचन्द गुप्ता ने निरिक्षणों में नोंध की है कि हरीश मंगलम् के पास कहने को बहुत कुछ है । उनकी कहानियाँ हमसे बहुत कुछ कहना चाहती है । उनके पास अनुभवो के अपार भंडार है । वे अपने निजी अनुभवों को कलात्मकता में ढालते है और उन्हें सामाजिक बना देते है । रचना में अवतरित होते ही उनके अनुभव वैयक्तिक अनुभव नहीं रह जाते, वे समस्त पाठक के हो जाते है । यही मंगलम् की सफलता है । विशेषता भी यही है । वे सवर्णो-असवर्णो की सामाजिक विसंगतियों का रेसा-रेसा उघेडते है और ऐसा करने में वे कोई जल्दबाजी नहीं करते । उन्हें किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की जल्दी नहीं होती, यही कारण है कि वे बारीक से बारीक बातों को भी इस तरह अपनी कहानियाँ में बूनते है कि उनके संदर्भ बृहत्तर हो जाते है । सवर्णो द्वारा असवर्ण स्त्रीयों का यौन शोषण उनके यहाँ संपूर्ण

असवर्ण जन समुदाय का मानमर्दन है । उनकी कहानियाँ में यह सारी प्रक्रिया शासक समाज द्वारा शासित समाज को चिरन्तन काल तक दलित बनाए रखने का सोचा समझा षडयंत्र है । इसीलिए उनकी कहानियाँ असवर्ण समाज के अपने हितों के प्रति जागरुक हो जाने का संकेत देती है । इतना ही नहीं वे एक जनआन्दोलन की पूर्व भूमिका की और भी इशारा करती है ।

उनके 'तिराड और चौकी' उपन्यास के बारे में आगे विस्तृत चर्चा की है । इसीलिए यहाँ लिखना जरुरी नहीं है । तिराड का हिन्दी अनुवाद दरार की प्रस्तावना में विद्वान विवेचक डॉ. महावीर चौहानने लिखा है कि दरार गुजराती दलित रचनाशीलता का एक ऐसा उदाहरण है -"जो प्रवाह में होकर भी प्रवाह से कुछ अलग है ।"

डॉ.के.एम.मकवाना अपने संशोधन ग्रंथ में लिखते है- ये दोनों कृति उनके लाघव के गुण के कारण प्रख्यात है । सर्जक के रुप में हरीश मंगलम् ने वस्तु की कलात्मकता पर विशेषतः ध्यान दिया है । दलित उपन्यास की परंपरा में रहकर जीवन को जरा अलग ढंग से देखने का परखने का आग्रह रखा है । इसीलिए दलित उपन्यास प्रतिबद्ध सर्जक से थोडे ऊँचे उठकर यहाँ प्रवृत्त हुए है । ऊपर ऊपर के शोषण आदि से उत्पन्न वर्गसंघर्ष वर्गविग्रह के बहाने यहाँ वस्तु की भीतर में रखकर व्यक्ति जीवन के पीछे समाजजीवन प्रस्तुत करने का यहाँ उपक्रम रखा है । जिसमें हरीश मंगलम् का सर्जक विशेष प्रगट कर रहता है । (ग्रामजीवन नी साठोत्तरी गुजराती नवलकथा -पृ.१७२)

हरीश मंगलम् के विवेचनग्रंथ 'विदित' और 'एकवचन' के बारे में डॉ. अक्षरकुमार र.देसाई और तुलसीभाई पटेल के लेख अवश्य पढ लेना चाहिए । उनकी साहित्य मुलाकातें भी उतनी ही विशिष्ट और बृहद दिखती है । इन मुलाकातों में इन्डीयन लिटरेचर के के.एम.शरीफ, साक्षरनो साक्षात्कार के राधेश्याम शर्मा और झलक रमेश देवमणी वेस्टर्न टाईम्स (१०,८,९४) ली गई मुलाकातें मुख्य है । राधेश्याम शर्मा का निरीक्षण देखिए- हरीश मंगलम्-

''वैंदनाना कंपथी दिवालो सघली ध्रुजती शक्य छे. इंटो महीं फूफाडा सर्पना हशे ।'' गानेवाले कवि को प्रत्यक्ष देखते ही दूर से कबीरबेदी की दलित आवृत्ति लगे । कबीर बेदी में उसके व्यवहार में सवर्णो की अंग्रेजियत टपकती है । जबकि हरेश मंगलम् में दलितों की कुंदन ज्योति चमकती है । महेश भट्ट ने सारांश देकर उसके पहले कबीर को लेकर मंझिले और भी है नाम की विद्रोही फिल्म की थी । हरीश के साथ कबीर की याद यह रीत से जूडी है, मंझिले और भी है ।

हरीश मंगलम् पहले दलित साहित्य संघ, संघर्ष साहित्य संघ, लिटरेचर स्टडी फोरम, गीतांजली काव्यगोष्ठि, फाउन्टेन पोएटस् आदि संस्थाओ में कार्यरत थे । दलित साहित्य सर्जन के सिवा हरीश मंगलम् उसके प्रकाशन प्रसारण और बेचने में महत्त्व की भूमिका अदा कर रहे है ।

गुजराती दलित साहित्य अकादमी के स्थापक सभ्य और महामंत्री एवम् प्रकाशक के रुप में दलित साहित्य के बीसेक प्रकाशन प्रकट किए है । गु.द.सा. अकादमी के मुखपत्र हयाती के तंत्री एवम् उसके समाजन और संवर्धन की कठीन जिम्मेदारी निभा रहे है । आगे अक्षय का भी संपादन कार्य किया था । पुस्तक प्रकाशन की कामगीरी में प्रुफरीडींग से लेकर यह प्रोडक्शन सस्ता और सुंदर बने इसकी देखभाल रखते है । इतने छोटे समय में उसके सस्ते और सुंदर प्रोडक्शन की सुंदर नोंध दिनांक-२३/४/०४ के विश्व पुस्तक दिन के अवसर पर लिखे गये लेख में श्री संजय श्रिपाद भावे ने ली है- स्व सर्जन के भाग से भी दलित साहित्य के प्रसार, प्रचार के लिए हरीश मंगलम् अन्य दलित साहित्यकारों की पुस्तक प्रकाशन की जिम्मेदारी निभाकर दलित साहित्य के लिए एक परब की भूमिका निभा रहे है ।

ऐसे दलित साहित्य की शुरुआत करनेवालों में से मुख्य दलित साहित्यकार ऐसे श्री दलपत चौहान ने अमरेली कार्यक्रम में अपने वक्तव्य में कहा था- और इसीलिए ही श्री हरीश मंगलम् को सन-२००२-०३ के वर्ष का गुजरात सरकार का संत श्री कबीर दलित साहित्य का एवोर्ड प्राप्त

हुआ है । सदैव मेहनत और प्रतिबद्धता को चिपके रहे हरीश मंगलम् को मिला यह बहुमान सार्थक है । मानवीनी भवाई गीत को अंतिम दस साल से नवीं कक्षा के पाठ्यपुस्तक में स्थान मिला है । यह गीत पाठ्यपुस्तक मंडल द्वारा कुल ३०० पाठ्यपुस्तको में से तैयार करने में आते संदर्भ पुस्तक प्रकाशन श्रेणी के पुस्तक में पसंद हुआ है । पुना हायर सेकन्डरी के गुजराती पाठ्यपुस्तक कुमार भारती नवीं कक्षा में 'दायर्न' कहानी पढाते है । और इसीलिए ही श्री महावीरसिंह चौहान लिखते है कि-

"हरीश मंगलम् गुजराती दलित साहित्य के एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर है । उल्लेखनीय है कि जहाँ एक ओर उन्होंने एक सर्जक के रुप में गुजराती दलित साहित्य को एक निश्चित दिशा देने के लिए संघर्ष किया है, वहीं दूसरी ओर गुजरात में दलित लेखन के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करने की दिशा में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । (दरार : प्रस्तावना में से)"

दरार में निम्नलिखित पात्र है

(दलित पात्र)	सवर्ण पात्र
सोमा- नायक (प्रथम पति)	भगा पटेल
जोईती - नायिका	बलदेव पटेल (भाई)
धनजी- दूसरा पति	रुखी- बलदेव की पत्नी
मथुर - (धनजी के पिता)	
मगन - जोईती के पिता	
पशा पंडया	
वलम - जोईती की जिठानी (दूसरा घर)	

'दरार' गुजरात के दलितों के जीवन को उपस्थित कर दलित ग्रामीण स्थिति का उद्घाटन करके उनके विविध पक्षों को उपस्थित करने का सफल प्रयास किया है ।

'दरार' की मूल समस्या- शोषित तथा दलित मजदूर के आर्थिक, सामाजिक, विडंबना की समस्या है ।

दलित लोगों के अंदर अंदर के द्वेष, पटेल-दलितो के बीच का संबंध और शोषण, आर्थिक अभाव, मजदूरी और नारी पर शारीरिक त्रास, संघर्ष को निरुपित किया है । ‘दरार’ दु:खी और शोषित दलित मानवात्मा का करुण क्रन्दन है । ‘कृति का मूल स्वर यथार्थवादी है । पात्रों को नीतिवान चित्रित किये है । पीछड नीतिवान समाज के लोग नीतिवान होते है, उनको कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है ।

‘दरार’ में जीवन की वास्तविकता को दृढता से वर्णित । करके (गुजराती) ग्रामीण दलित मजदूरों की करुणता का यथार्थपूर्ण चित्रण किया है, आदर्श का नहीं ।’

७१ पृष्ठ में दरार की कथावस्तु विभाजित है । इसका मूल कथानक गुजरात की दलित मजदूरिन और उसके परिवार के सदस्यों सोमा, धनजी, मथुर आदि से संबंधित है । किन्तु साथ ही वह गाँव के पटेल बलदेव, तथा पशा पंडया, दलित मुहल्ले के लोग, पंच से भी जुडा हुआ है ।

दरार में प्रत्येक घटना ही नहीं, अत्यंत सामान्य प्रसंग भी निखर उठे है । यह उपन्यासकार का कौशल है कि रोचकता, उत्सुकता, सरसता एवं सुस्पष्टता अन्त तक बनी रहती है ।

‘श्री हरीश मंगलम् के प्रस्तुत उपन्यास दरार पर चर्चा करने के पूर्व ही एक स्पष्टता कर देना जरुरी है कि यहाँ दलित संवेदना को कुछ अलग ढंग से प्रस्तुत किया गया है । इसमें दलित समाज की पीडा और उसके संघर्ष को किसी फार्मूले में ढालकर प्रस्तुत नहीं किया गया । लेखक ने अपना ध्यान जितना दलित जीवन की विषमताओं पर केन्द्रित किया है, उतना उसके सामाजिक संघर्ष पर नहीं । लेखक में आत्मालोचन का भाव अपेक्षाकृत अधिक है, वह दलित समाज की आंतरिक कमजोरियों पर टीका-टिप्पणी करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करता ।’

‘दरार’ का कथानक गुजरात दलित नारी के प्रतिक जोईती और उसके परिवार के सदस्य सोमा, पुन:विवाह के बाद धनजी, वलम,

मथुर से संबंधित है । किन्तु साथ ही वह गाँव के दलित मुहल्ले के लोग तथा पशा पंडया, कचरा, बलदेव पटेल आदि से भी जुडा है ।

र्द रा रेकी कथा का प्रारंभ ग्रामीण जीवन के संघर्षमय वातावरण से होता है । जोईती-सोमा, बलदेव के यहाँ खेत में मजदूरी करने के लिए गये है, मेड के कारण दोनों भाई बलदेव भगा के बीच हाथा पाई हुई, उस हाथापाई में भगा बलदेव को फावडा मारने के लिए उठाता है, वही बीच में सोमा आ जाता है ओर भगा के हाथ से फावडा छूट जाता है, भगा क्रोध में फावडा उठाकर सोमा को ही मार देता है साला ढेढ ! सोमा वहाँ गिर जाता है । जोईती सोमा को गोद में लेकर बुजुर्गो के सामने घूँघट खींचकर देर तक रोती है, दूसरे दलित मजदूर भगा को गालियाँ देते है, औरतें भी भगा को खरी खोटी सुनाती है । कनबी की जाति ससुरी कुजात और बूनकर मुहल्ले में थोडी देर हो हल्ला हुआ पर डर के मारे अंगारे की तरह सब ठंडा हो जाता है ।

यहाँ से कथानक और साथ ही सोमा तथा जोईती का जीवन भी एक नया और अप्रत्याशित मोड लेता है । जोईती लाख प्रयत्न करके भी अपनी महेतन-मजदूरी से इतना नहीं कमा पाती कि सोमा का इलाज कर पाती । यूँ शुरुआत में भगा के पिता सोमा के इलाज के लिए जोईती को कुछ आर्थिक सहायता करते है और भविष्य में सहायता देने के लिए आश्वासन भी देते है, लेकिन जोईती जिस प्रकार के आर्थिक अभावो के बीच से गुजर रही है, उसे देखकर ऐसा नहीं लगता कि उसे किसी से किसी प्रकार की सहायता मिली हो ।

सोमा को विजापुर अस्पताल में ले जाते है, दवाईयाँ का कोई असर नहीं हुआ, घर ले आते है, देशी उपचार करते है, लेकिन सोमा की स्थिति में कोई सुधार नहीं होता । मुहल्ले के लोग सोमा की हालत पूछ लेते है । यह सारे दिनों में जोईती की स्थिति गंभीर होती है, वह एक ओर से मजदूरी और दूसरी और सोमा की सेवा करने में कोई कसर नहीं रखती ।

जोईती मजदूरी करके आती, खाना पकाती और सोचती पैसे नहीं है, बलदेव के पास से लूँ तो सहीं पर... !

रामदेवपीर का फोटु फट जाता है, सोमा को जल्दी से अच्छा हो जाय, इसीलिए जोईती नियमित प्रार्थना करती थी, वह आधाररुप तस्वीर भी टूट जाती है । सोमा की हालत और गंभीर हो जाती है । अंत में सोमा की मृत्यु होती है ।

स्मशान में खुशाल, शंकर आदि तत्त्वज्ञान की बातें करते है । भाई खाली हाथ जाना है, सोमा को याद करके उनकी बातें याद करते है, एकाद बच्चा भी भगवानने दिया होता तो...

सोमा को मरे हुए अभी बीस दिन भी नहीं हुए थे, और बलदेव मजदुरी के लिए जोईती के घर आता है, घराक काम में जोईती के मजबूरी से जाना पडता है । बलदेव जोईती को दूरसे खेत में गड्डर चढाने के बहाने बुलवाता है, तब कोहनी लगाकर जोईती को स्पर्शानाभुव करता है, यह पशा पंडया देख लेता है । यहाँ से कथा में जोईती की हालत ओर बिगडती है ।

बलदेव की शादी रुखी के साथ होती है, गृहसंसार सुखचैन से बितता है । उधर जोईती की बातें लोग करते है, पशा ने ही तिल का ताड बनाकर हजामत करते वक्त मंगा को, धरमादादा को बलदेव-जोईती से रपटी है, ऐसा कहता है । जोईती को उसके मायकेवाले सवा महिना हुआ, अत: अपने घर ले जाते है । जोईती के जाने के बाद पशा की कही हुई बात ज्वालामुखी की तरह भभक उठती है । किन्तु ये भी स्पष्ट है कि बलदेव के पटेल होने के कारण बात मुहल्ले तक की सीमित रही, गाँव के पटेल की ऐसी बात करके कहाँ जाए ? किसी में हिम्मत नहीं थी, कितने तो मन ही मन काँप उठते थे ।

जोईती का पुन:विवाह धनजी के साथ होता है, धनजी को तीन बच्चे थे, पाँच बीघा जमीन, यहाँ जोईती सुखी थी । जोईती अपनी जिठानी को कहती है कि मुझे पहलेवाले घर से उनका गर्भ रहा है, अब तीसरा बैठेगा जिठानी भी कहती है कि तूने छूपा क्यों रखा ? फिर

भी धनजी, मथुर (ससुर) वलम (जिठानी) जोईती पर शक नहीं करते और सांत्वना देते है स्वीकार भी करे है ।

जोईती को अब शांति थी खुद का काम, पटेल की बेगार नहीं थी, हस्नापुर गाँव में लोग उसकी प्रशंसा करते थे । छः महिने में तो जोईती ने पुत्र को जन्म दिया । परिवार के सदस्य खुश होते है, किन्तु मुहल्ले के अन्य लोग उल्टी सीधी बातें करते है । पहले पति का गर्भ ले आई है, ऐसी बातें सुनकर जोईती आत्महत्या करने के लिए सोचती। मुहल्ले के लोग जोईती का तिरस्कार करते, ऐसी-तैसी बातें करते, लेकिन जोईती को परिवार के सदस्यों ने उष्मा दी ।

यह बात परगने में (गाँवो का सीमित समूह) भी फैल गई । पंच बैठा, पंच करे वह सही-ऐसा मानकर अन्य लोग चूपचाप बैठते और जै बोलते । पंचने मगन और मथुर पर एक-एक हजार रुपये का जुर्माना किया, जुर्माना नहि भरे तब तक जाति से बाहर रखने का भी तय किया । मगन झूंझला उठता है, गरीब गाय जैसी अपनी बेटी पर फिरती कसाई की छूरी को वे किसी भी प्रकार नहीं सह सका । पिताम्बर की लड़की गरोडा के साथ गयी थी, ये पँच भूल गया ? औरो को ही नीचा दिखाते हो, पहले उन्हें जाति से खारिज करो । मगन की बात का दूसरों ने भी समर्थन किया । सबके लिए समान न्याय होना चाहिए । पंचायत को थप्पड मारनेवाला मगन पहला था । जोईती की बात जहाँ की तहाँ पडी रही, पंचायत वाले भी चले जाते है ।

धनजी के घर जोईती सुखी है, किकल भी तीन साल का हो जाता है । उधर बलदेव के साथ जिन लोगों के ब्याह हुए थे, सबके घर में पालने झूल रहे थे, पर रुखी को संतान नहीं हुआ था ।

बलदेव के घर पशा आता है, बलदेव धीरे धीरे जोईती के बारे में सबकुछ कहता है, कि वह तो उछल कूद में दो घडी मजाक, उमर की मस्ती बाकी कुछ नहींथा । अपनी नपुंसकता के बारे में भी सबकुछ कहता है । पशा को अपनी गलती पर अफसोस होता है । पशा हस्नापुर जाता है, और मथुर को मिलता है, परगने की बात करते है ।

बच्चे को देखकर सोमा के चेहरे को याद करता है । पशा अंदर सेबैचेन हो उठता है, मन ही मन सोमा की माफी माँगता है । भीतर से रो पडता है.. मथुर भगत ! साली अपनी जात ही निकम्मी है, तुमने सारी बात साफ साफ कह दी, फिर भी झूठी बात उछालकर आबरु की धज्जियाँ उडायी । जिसकी बात साले. करते थे, वह आज ही मुझे मिला, डॉक्टरने उसे कहा है कि शरीर में जन्मजात कमी होने के कारण उसके बच्चे नहीं होंगे ।

जोईती दरवाजे की आड में बैठी बैठी सून रही थी, बलदेव का नाम कानों में पडते ही थूँ करके थूँका और बडबडाई नासपीटे, लूच्चे ने मेरे जिवतर में आग लगाई । उसने दिया जलाया, नरसिंह भगवान की छवि को नमन किया, आनंदित हो उठी... हलकी फूल जैसी हवा के स्पर्श का अनुभव हुआ, लोग अब शंका मुक्त होगे । मेरे बाप को मैं मूँह दिखा सकूँगी ।

परगने में भी यह बात फैल गई । बलदेव पुरुष में ही नहीं है, अब बच्चा नहीं होगा, इससे पंचो की दशा तो चुल्लुभर पानी में डूब मरने जैसी हो गई, सबको हो गया बच्चा तो सोमा का ही है ।

जोईती की डाँवाडोल परिस्थिति अपने अंग सकुचाकर (दरार) तरेड में से धीरे से बाहर निकलकर भाप के रुप में मौन अवकाश में मिल गई । बलदेव पानी के बीच और एक तरह से देखो तो वह रेगिस्तान में खडा रह गया । रुखी भी गड्डर के छोर मिला पायेगी या नहीं । पशा हजामत करने लगा गया अपने आपसे नफरत करता रहा और बलदेव दिशा शून्य बन गया ।

उपन्यास में पात्रों का चरित्र-चित्रण दो प्रकार से होता है-

(१) लेखक स्वयं वर्णन द्वारा पात्रों का चरित्र-चित्रण करता है ।

(२) लेखक स्वयं पात्रों के विषय में कुछ विभिन्न पात्रो के कथोपकथन द्वारा तथा प्रसंग चित्रण द्वारा ही पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डलवाता ैह । इस प्रणाली का अधिक प्रयोग होता है । घटनाप्रधान उपन्यासों में पात्रो

के चारित्रियक गुण-दोष घटनाओं द्वारा उजागर होते है । चरित्र दो प्रकार के होते है- (१) वर्गविशेष के प्रतिनिधि और (२) विशिष्ट

दै रारैं में जोईती पहले प्रकार का पात्र है जो तत्कालीन दलित नारी का प्रतिनिधित्व करती है । मगन का पात्र विशिष्ट है । पात्रों के और भी दो प्रकार है- आदर्शवादी और यथार्थवादी । जोईती, सोमा, धनजी, रेवली, वलम, मथुर, आदि आदर्शवादी अधिक है, पर बलदेव, पशा पंडया मुहल्ले के लोग आदि यथार्थवादी है । वही उपन्यास श्रेष्ठ समझे जाते है, जिनमें आदर्श और यथार्थ का संमिश्रण होता है ।दै रारैं के कई पात्रों में इन दोनों का मिश्रण है ।

दै रारैं में विभिन्न वर्गो के अनेक पात्र है । लेखक ने सभी प्रणालियों से पात्रो का चरित्रचित्रण किया है । पुरुष भी है, स्त्रीयाँ भी है, मजदुर, पटेल (जमींदार) पंचायतवाले, दोनों तरफ बोलनेवाले भी है और श्री हरीश मंगलमने बडे कौशल से सभी पात्रों की विशेषताएँ एवं चरित्र सजीवता से प्रस्तुत किये है ।

वर्तमानयुग अर्थप्रधान है । आज की अन्य सभी समस्याओं का मूलाधार अर्थ ही है, जिससे सभी वर्ग पीडित है । इसीलिए सभी वर्गो के प्रति साहित्य में सहानुभूति का चित्रण मिलता है । उनके पात्रों में अनपढ, दु:खी, एवम् दरिद्र भोले-भाले, मजदूर तथा वर्ण-व्यवस्था के शिकार निम्नवर्गीय प्राणी तथा पटेल (जमींदार) मिलते है । श्री मंगलम् के उपन्यास में गुजरात समाज के दो वर्ग स्पष्ट नजर आते है- एक शोषक जो अपने स्वार्थ के लिए असहायों व निर्बलो का शोषण करते है, और दूसरी ओर वे शोषित है, जिनका शोषण होता है ।

श्री मंगलम् ने अपनी जाति को सच्चे रुप में अंकित किया है, जो ग्रंथकार किसी जाति को सच्चे रुप में उपस्थित करता है, उसके गुण-दोषों को ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त कर सकता है- वह संसार की सबसे बडी सेवा करता है । झोंपडीयों से लेकर महलों तक पटेलों से लेकर मजदुर तक उनकी खूबी- बखूबी को सच्चे रुप में प्रकट किया है ।

लेखक के सभी श्रेष्ठ चरित्र उनके इस वक्तव्य के श्रेष्ठ प्रमाण है । श्री मंगलम् के चरित्रों की सफलता का कारण यह है कि उन्होंने इन चरित्रों के सामाजिक जीवन का निकटता एवं सूक्ष्मता से अध्ययन किया है । केवल उनके नाम कल्पित है बाकी सब पथार्थ है ।

जोईती, सोमा, मगन के चरित्र में अन्तद्वन्द्ध रहता है । प्रतिकार का मार्ग न रहने पर ही जोईती, सोमा भाग्यवादी बन गये है ।

'दरार' के पात्रों के चरित्र-चित्रण केद्वारा श्री मंगलम् ने अनेक ज्वलंत समस्याओं को प्रदर्शित किया है, जैसे कि दलितों की स्थिति, दलितों के आपस-आपस के मनमैल, दलित-पटेल जातिगत भेदभाव, पंचायतो द्वारा शोषण दलित नारी की स्थिति आदि द्वारा समग्र समाज के चरित्र का उद्घाटन होता है ।

श्री भी.न.वणकर ने शब्दसृष्टि में लिखा है- हरीश मंगलम् की तीराड और चोकी लघुनवलकथा है । तीराड में दलित स्त्री का शोषण और जमींदार की मनोवृत्ति की कथा है । उसमें दलित समाज का आंतरजगत प्रगट होता है । जीते जीवन की यह कथा जनपद के पात्रो का सूक्ष्म चित्रण मिलता है । मानवसंबंधो और मानव स्वभाव में से खडी होती इन्सानों की मर्यादाओं की क्रिया-प्रक्रिया में दोनों कृतियों का अंत मिलता है । इस तरह लघुउपन्यासों में ग्रामजीवन की गेहरी वास्तविकता का स्पर्श हुए बिना रहता नहीं यह दोनों कृतियाँ कलात्मक है, एवम् आस्वाद्य भी है ।[1]

दरार में श्री मंगलम् द्वारा निर्मित जोईती दलित उपन्यास के अमर पात्रों में सर्वोच्चपद की अधिकारीणी है । जोईती दलित नारी की प्रतिनिधि है । क्योंकि गुजरात के लगभग सभी दलित मजदूर की नारी को उन्हीं समस्याओं का सामना करना पडता है, जो जोईती के जीवन को निरन्तर, संघर्षमय बना रहे है ।

जोईती दलित मजदूर (सोमा) की पत्नी है । कम आय और सोमा की दवा का खर्च जटिल समस्या है । अर्धागिनी के रुप में सोमा के साथ अकेले संघर्ष झेले है । इस जीवन व्यापी संघर्षो ने उसे कम उम्र में ही समजदार बना दिया है । विषम परिस्थितियों में न झूकने

वाली जोईती का यह भावुक्तापूर्ण एवं सजीव चित्रण है । उसके जीवन की विशेषता जीवन्त पर्यन्त परिश्रम से मूँह नहीं मोडना ही रही है । निरंतर शोषण की चक्की में पिसकर भी अपनी मानवता नहीं खोती । बलदेव उसका शोषण करता है, निर्धनता उससे अनैतिक कर्म के लिए बाध्य नहीं करते और उसकी अंतरात्मा सदैव ऐसे कर्मो का विरोध करती रहती है । विषम परिस्थितियाँ उसे चारों और से कसती है, पर उसकी मानवता डिंगा नहीं पाती, अतः जोईती का चरित्र साधारण होते हुए भी अत्यन्त आकर्षक एवं श्री हरीश मंगलम् के पात्रों में सर्वोच्च स्थान पर स्थित है ।

जोईती एक अत्यंत साधारण, अनपढ, दरिद्र, धर्मभीरु, रुढिग्रस्त, सहृदय, भोली, सीधी-सादी, एक व्यवहार कुशल मजदूरिन है । उसकी कथनी करनी में प्रायः एकता रहती है । यों देखा जाए तो जोईती का संपूर्ण जीवन आर्थिक अभाव की एक करुण कहानी है । भरपेट अन्न के लाले, फिर घी-दूध की बात ही क्या ? समाज के शोषक प्राणी उसे चुस रहे है, वे सदैव उसे निगलना चाहते है । वह सदैव पति के सुख दुःख में संगिनी रही है । उसके बराबर न कोई परिश्रम करनेवाली है । वही साध्वी जिसने सोमा के सिवा किसी पुरुष को आँख भरकर देखा भी न था । जोईती का संपूर्ण जीवन संघर्षमय रहा है । ब्याह के बाद उसकी जवानी मजदूरी और सोमा की देखरेख में गई । संकट आये पर वे इस वीरांगना व कर्मठ नारी को झुका नहीं पाये ।

श्री हरीश मंगलम् की सबसे बडी उपलब्धि संभवतः यह है कि प्रत्यक्ष रुप से सामाजिक समस्या से अधिक चरित्र (जोईती) पर बल देकर भी वह सामाजिक वैषम्य और वर्ग संघर्ष को अपने पूरे भयावह और नग्न रुप में उभारकर पाठकों को सम्मुख प्रस्तुत करने में सफल हो सका है । दरार में उपन्यासकार स्वयं कुछ न कहकर अपने चरित्रों और कथा विकास के माध्यम से कहता है, इससे यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि साहित्यकार शुद्ध समाजसुधारक तथा प्रचारक बने बिना भी शोषण पर आधृत वर्तमान वर्ग विभाजित समाज व्यवस्था का सही चित्र प्रस्तुत कर सकता है । और अपने पाठकों के हृदय में इस व्यवस्था के प्रति तीव्र

आक्रोश की भावना उत्पन्न कर सकता है ।

ितराडै (दरार) के अनुवाद की प्रेरणा मुझे जोईती ने दी, इतना जीवन्त पात्र की बरबस मुझे अपने बचपन के पात्रों से रु-ब-रु कर गया [3]।

हिन्दी दलित साहित्यकार श्री ओमप्रकाश वाल्मिकी ने जोईती के बारे में लिखा है- "स्वभाव से सरल जोईती के जीवन में सोमा की बिमारी के बाद संघर्ष की शुरुआत होती है । पति के साथ प्रसन्न वह उसकी लाचार दशा में थी, उसकी मानवीय संवेदना को परितृप्त करती है । बलदेव पटेल की मशखरी उसके शान्त जीवन में विष घोलने का काम करती है, लेकिन वह श्रद्धा के साथ अपनी बात पर दृढ रहती है , और अन्त में वह अपने जीवन संघर्ष में सफल रहती है । गाँव के यथार्थचित्र इस उपन्यास की एक और विशेषता है । अपने ही वर्ग समाज द्वारा शोषित पीडित स्त्री के संघर्ष की यह विशिष्ट कृति है । यहाँ दलित जीवन का यथार्थवादी चित्रण यथार्थ की मात्र नकल नहीं है । बल्कि साधारण परिस्थितियों में साधारण चरित्रों का वास्तविक पुनःसृजन है [4]।

भगा पटेल फावडा मार देता है, सोमा गिर जाता है, तो जोईती सोमा को अपनी गोद में ले लेती है, घूँघट में रोती है, पर एक शब्द बुजुर्गो के सामने बोल नहीं पाती । अस्पताल में सोमा की तबियत ठीक नहीं हुई तो घर ले आये, दवाईयाँ चालु रखी, पूंजा पटेल तबीयत देखने के बहाने दवाईयों के पैसे देते है । जोईती को कहते है.... जोईती सोमा की दवा जारी रखना और ज्याद । पैसे की जरुरत पडे तो ले जाना । लेकिन जोईती जिस आर्थिक संकट से गुजर रही उसे ध्यान में रखकर देखा जाएँ तो पूँजा पटेल ने पैसे की सहायता दी हो ऐसा नहीं लगता ।

एक तरफ सोमा की सेवा, दूसरी तरफ मजदूरी करती थी, और इस दौडधूप के कारण वह सुख गई थी फिर भी सोमा की देखभाल में उसने जरा भी कसर नहीं छोडी थी ।

सोमा भी जोईती की सराहना करता है, वह कहता है, मेरी

सेवा तन मन से करती है, और कोई कसर नहीं छोडती । बेचारी थोडी देर भी चैन से बैठती नहीं और मैंने भी कहाँ सुख दिया ? शादी के करीब सात महिने हुए होगे और जग जुत गई है मेरे पीछे बेचारी की जिंदगी धुलधानी हो गई.. बिलकुल भोलीभाली है । मेरे जाने के बाद उस. किसी प्रकार की कमी महसूस नहीं करनी पडेगी ।

श्री महावीरसिंह चौहान लिखते है- जोईती का चरित्र एक भिन्न धरातल पर उभरकर सामने आता है, शुरु से अंत तक उसका समग्र जीवन आंतरिक और बाह्य संघर्षो की एक अटूट श्रृंखला है । जोईती अपने जीवन की विडंबनाओं को इतने सहज भाव से लेती है, कि जैसे वह जीवन में आनेवाली सारी स्थितियों का सामना करने के लिए पहले से ही तैयार है । जोईती के जीवन की विडंबना यह है कि वह एक ओर भगा और बलदेव जैसे सवर्णो द्वारा सताई जाती है, तो दूसरी ओर उसके अपने समाज के सन्मानीय लोग भी उसे काँटों में घसीटने के प्रयत्न में लगे है । इन सबके प्रति जोईती का उपेक्षाभाव उसके गहरे आत्मविश्वास और उसकी आंतरिक शक्ति का परिचायक है । उल्लेखनीय है कि जोईती के शील और गरिमा की रक्षा के लिए लेखक ने रचनात्मक उक्ति का भी सहारा लिया है । लेकिन वह जोईती की आंतरिक शक्ति को अच्छादित नहीं करती जिसके रहते वह अपने सामने आनेवाली हर विपरित स्थिति को पार करती हुई आगे बढ जाती है ।

सोमा की मृत्यु को बीस दिन हुए थे, फिर भी जोईती को पटेल मजदूरी करने के लिए बुलाता है । बलदेव की बदनियत से जोईती अनजान नहीं थी, किन्तु दूसरे मजदूर साथ में है ऐसा सोचती है । खेत में, और एकबार रात के समय खाना लेने जाने वक्त बलदेव जोईती की छेडती करता है, पर गाँव के बीचोबीच वह दु:साहस नहीं कर सका ।

गठ्ठर उठाने के लिए बलदेव दूसरे खेत में जोईती को बुलाता है, और गठ्ठर उठाते समय कोहनी लगाकर छाती स्पर्श करता है । पशा पंडया यह दृश्य देखता है । जोईती को नफरत तो हुई, किन्तु दलित स्त्री

क्या कर सकती है ? मौन .... और पशा ये समझे बिना मुहल्ले में इस बात को बढाकर पर्वत जैसी बना देता है ।

सवा महिने के बाद अपने मायके में चली जाती है, तो मुहल्ले में जोईती-बलदेव से रपटी है ये बात फैल जाती है । उधर जोईती के मन में दूसरी बात है -कि सोमा का बीज अपने पेट में है वह औरतो को बताया होता तो अच्छी बात होती अब क्या होगा ?

थोडे समय बाद जोईती का पुन:विवाह धनजी के साथ होता है । तीन बच्चे होने के बावजूद जोईती जैसी औरत मिली ये सोचकर सब खुश होते है, सोमा का गर्भ पेट में है ये, बात का भी सभी ने स्वीकार किया, इसलिए जोईती ने नयी जिन्दगी की कोंपलो के स्पर्श का अनुभव किया । जोईती को यहाँ शांति थी, खुद की खेती और खुद का काम । पटेल की बेगार नहीं, हस्नापुर गाँव में लोग उसकी प्रसंशा करते है ।

छः महिने में तो जोईती ने पुत्र को जन्म दिया । निठल्ली औरते उल्टी सीधी बिना आधारों की बातें फैलाने लगी । जोईती का तिरस्कार होने लगा, किन्तु घर के सदस्यों ने उष्मा दी । औरतों से त्रस्त हो जाती तब शेरनी की तरह दहाडती.. सबकी सब मेरे पीछे पड गई हो और में खुलखुल्ला कह रही हूँ, कि यह तो मेरे पहले पति का है.. ऐसा करारा उत्तर ऐसी विषम दशा में जोईती जैसी तेजस्विनी एवं दृढ चरित्रवान नारी ही दे सकती है ।

पंच के न्याय से नाराज होती है, किन्तु अपने कारण पिता की पंच में हालत सोचकर आँखें बंद हो जाती है । बलदेव को जन्मजात कमी है, उसके बच्चे नहीं होंगे, ये डॉक्टर रीपोर्ट लोग जानते है तो सारे लोगों की हालत चूल्लुभर पानी में डूब मरने जैसी होती है ।

इस प्रकार जोईती पतिव्रता है, कर्म को ही महत्त्व देती है, हिंमतवान है, स्पष्ट वक्ता है, संतोषी आदर्श दलित नारी है । संयुक्त परिवार का माननेवाली, मर्यादा और आस्था रखनेवाली दलित नारी है ।

उपन्यास के चरित्र दीन-हीन और बेचारे नजर आते है । दूसरे वर्ग ने उन पर कितने अत्याचार किये होंगे, उनका कितना शोषण किया होगा, जिससे पूरा समाज अपाहिज हो गया है, यह उन चरित्रों को देखकर पता चलता है । सोमा का चरित्र एक सामान्य दलित व्यक्ति का एहसास करवाता है । सोमा के जीवन से दलित समाज के दलित व्यक्ति की दलित होने की वेदना इस उपन्यास में उभरकर आती है ।

भगा पटेल और बलदेव दोनों भाईयों के बीच मेडे के झगडे में सोमा बीच में आता है और भगा उसको फावडा मारता है । वह मर जाता है, किन्तु पटेल के सामने या पटेल की अनउपस्थिति में भगा केबारे में एक भी शब्द विरोध का नहीं कहता ।

बिमारी के कारण सोमा बैठ नहीं सकता था । फिर भी उसके पास इस जनम में बैठ सकूँ, उतना तो बैठ लू..... उसे कमी महसूस न होने दूँ, कहाँ दूसरे जनम में उसके साथ बैठना होगा, बैठा नहीं जाता था, फिर भी जोईती की बैल जैसी काया को सहलाने के लिए बैठता, जिससे जोईती को सहारा मिलता रहे ।

सोमा की मृत्यु होती है, तो सारा मुहल्ला गमगीन हो जाता है । कचरा भी सोमा के बारे मे कहता है कि सोमला तो था लाखों में एक । बेचारे ने जिंदगी में कुछ नहीं भोगा । छोटी उम्र में चल बसा, एकाद बच्चा भी भगवानने दिया होता ता !

बलदेव एक खलनायक है । उसके यहाँ कोई भी स्त्री, लडकी, मजदूरी के लिए आए तो जरुर वह नजर बिगाडता, वह छेडखानी किये बिना नहीं रहता ।

जोईती विधवा होती है, उसके बीसवें दिन ही मजदूरी के लिए बुलाने आता है, और अपनी रखात हो इस प्रकार बोलता है, खेत में काम करने आती है तो कोहनी लगाकर छाती का स्पर्श करता है ।

दलितों से छूआछूत रखनेवाला बलदेव पटेल दलित स्त्री को छूने में हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करता ।

बलदेव की शादी रुखी के साथ होती है, किन्तु शुक्राणु की

कमी होने के कारण बच्चा नहीं होता था । अपनी बिमारी के कारण व्यथित होता है । बलदेव का पात्र सोमा और जोयती के जीवन को बरबाद करने में महत्त्व की भूमिका निभाता है ।

पशा पंडया का पात्र उपन्यास में महत्त्व की भूमिका अदा करता है । जो ब्राह्मण जाति का है, फिर भी नाई का काम, जादू दिखाने का काम करता है । यह ब्राह्मण दलित समाज में ब्राह्मण का काम करते है ।

बलदेव गठर चढाने के लिए जोईती को दूसरे खेतो में बूलाता है, उस वक्त कोहनी लगाकर जोईती की छाती का स्पर्श करता है, ये दृश्य पशा पंडया देख लेता है । जोईती दलित होने के कारण प्रतिकार नहीं कर सकती थी, किन्तु पशा पंडया समझ लेता है कि जोईती बलदेव पटेल से रपटी है, और ये बात मुहल्ले में फैला देता है और जोईती की जिंदगी नर्क जैसी बना देता है ।

किन्तु बलदेव में शुक्राणु की कमी है, ऐसा जानता है तो, अपनी गलती स्वीकार करता है और जोईती की मन ही मन माफी माँगता है ।भीख माँगने के बजाय कोई भी धंधा करना श्रेयकर मानता है ।

मगन जोईती के पिताजी है । पिताजी की भूमिका निभाने में वह सफल है । जोईती की शादी सोमा के साथ करवाता है, विधवा होती है तो अपने घर पे ले जाता है । बाद में पुनः विवाह भी करवाता है । आधुनिक विचारवाला है ।पंचायतवाले जोईती के कारण दंड करते है तो वह झूँझला उठता है और पंचायतवालों को सत्य की पेहचान करवा देता है । दूसरे लोग भी मगन को साथ देते है । पंचायतवाले भी चले जाते है, इस प्रकार किसी भी व्यक्ति को खरी खोटी सूनानेवाला स्पष्ट वक्ता है ।

दरार उपन्यास की पात्रसृष्टि वैविध्यसभर है । जो साहित्य में अपना स्थान बना चूके हैं ।

नाटक में कथोपकथन (संवाद) तत्व का एकाधिकार होता है,

किन्तु उपन्यास में आवश्यकता अनुसार ही इसका प्रयोग किया जाता है । यह कथावस्तु के विकास तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायक होता है । इस कथानक में नाटकीयता, संक्षिप्तता, सरसता एवं सजीवता आ जाती है । इसके द्वारा प्रासंगिक घटनाओं, पात्रो, चरित्रचित्रण आदि में संकेतात्मक सहयोग मिलता है । इससे पात्र यथार्थ लगते है । पात्रो की आंतरिक मनोवृत्तियों के स्पष्टीकरण में भी यह सहायक होता है । इसका विधान पात्रों के चरित्र, स्वभाव, देश, काल, स्थिति, शिक्षा, अशिक्षा, संस्कार, संगत आदि के अनुसार होना चाहिए ।

इस तत्त्व की दृष्टि से देखा जाय तो 'दरार' में आवश्यक, संक्षिप्त, प्रसंगानुरुप, पात्रानुरुप, नाटकीय, यथार्थ एवं बडे ही चोटदार कथोपकथन है । सोमा- जोईती की करुण दशा पर उनके कथोपकथन से पाठक को अधिक जानकारी प्राप्त होती है । उसी प्रकार समाज शोषक भगा, तथा बलदेव पटेल का जीवन दर्पण की तरह दोष-गुणमय स्पष्ट निखर उठता है । जोईती, सोमा, मगन, धनजी, मथुर, वलम, पशा पंडया, दलित समाज के अन्य लोग, पंचायतवाले आदि के चरित्र भी गुण-दोषो के साथ कथोपकथनो से ही जाने जा सकते है । कथावस्तु के विकास पात्रो के चरित्रचित्रण में सहायक एवं उद्देश्य के लिए संवाद महत्त्वपूर्ण है ।

- सोमा और जोईती के बीच का संवाद देखिए- दोनों के बीच कितना प्रेम होगा- एक आदर्श नारी अपने बिमार पति को किस प्रकार से बुलाती है । "आज तो कुछ पहले ही आ गये, क्यों ? भूख से विहवल सोमा बोला -

नहीं....नहीं.... पहले कहाँ है ? समय से आये है !"

- बलदेव पटेल के कठोर संवाद देखिए- जोईती को किस प्रकार से देखता है.... जैसे अपनी रखैल हो !

- "जोईती ए जोईती ! क्यों गुमसुम बैठी है ? और सूनती क्यों नही ?" (बलदेव पटेल ने दो-तीन बार जोर से आवाज दी, जब की चौथी बार ससुरी ! कब से बहरापन आया तुझे ! डपटकर बोला तब

उसे भान हुआ कि यह तो मुआ .... पलभर उसकी देह में उत्कंप मच गया ।)

'दरार' वर्णनात्मक शैली का एवं पात्रानुरुप, प्रसंगानुकल, सरल, सुबोघ, सरस, बोधगम्य, बोलचाल की मुहावरेदार भाषा से समृद्ध उपन्यास है । शैली का मुल आधार भाषा और भाषा का आधार शब्द है लेखकों को अपनी शैली की देख-रेख के लिए शब्दों पर ध्यान देना चाहिए । शब्दों को ही साहित्य का आधार मानना चाहिए और इस आधार के भन्डार को ज्यादा से ज्यादा समृद्ध और शक्ति सम्पन्न बनाते रहना चाहिए ।

श्री हरीश मंगलम् ने 'दरार' उपन्यास में गुजरात के महेसाना, साबरकांठा जिल्ले के गाँव की गुजराती भाषा का प्रयोगकिया है । जो दलित लोग अपने साहजिक रुप में बोलते है, वही भाषा का उपयोग किया है । मुहावरें, कहावतें, व्यंग्यात्मक शब्द, संगीतात्मक शब्द का प्रयोग अधिक किया है ।

'मथुर' सत्संग करते समय कभी कभी टूटी-फूटी हिन्दी बोलते थे । पंच में भी हिन्दी के कुछ शब्द बोलने में आ गये थे, इसीलिए कुछ युवक तालियाँ पीटकर मथुर भगत की हिन्दी पर हँसते है । वहाँ हास्यरस है ।

डॉक्टर की भाषा में अंग्रेजी का प्रयोग है, साहित्यकार को पात्र के अनुसार भाषा का प्रयोग करना ही चाहिए ऐसा नहीं होता, फिर भी श्री हरीश मंगलम् ने हिन्दी, अंग्रेजी का प्रयोग बहुत ही अच्छी तरह से किया है ।

ट्रीटमेन्ट, टेस्टोस्टीरोन, इन्जेक्शन, बीकोस्युल्स की केप्सुल्स, इट वील बी ओल राईट ।

श्री महावीर सिंह चौहानने 'दरार' के बारे में लिखा है- कि हमने अभी साहित्य जगत में प्रवर्तमान उस कलाभिरुचि की बात की है जो जाने-अनजाने एक युग के प्रायः सभी रचनाकारों को प्रभावित करती

है, यू कलारुप की अवधारणाएँ स्थिर न होकर गतिशील होती है । जिनमें युगानुरुप परिवर्तन और संशोधन होता रहता है । लेकिन फिलहाल सीधी-सादी बात को घुमा-फिराकर कहते उसे सांकेतिक व्यंजना में ढालकर कहने को विशेष तौर से कलात्मक माना जाता है । उपन्यास में पात्रों के यौन सम्बन्धों के चित्रण या उनकी कुंठाओं के लेखा जोखा प्रस्तुत करने में यह सांकेतिक व्यंजना जितनी कारगर साबित होती है, उतनी कारगर बाह्य संघर्ष के निरुपण में नहीं होती । वहाँ या तो संघर्ष छोडना होगा या फिर तथाकथित कलात्मकता छोडनी होगी । श्री हरीश मंगलम् ने दोनों में से किसी को भी नहीं छोडा । लेकिन ऐसे में दोनों के बीच एक दरार रह गई है, जिसे वे नहीं पार कर सके । शायद वह चाटी भी नहीं जा सकती थी ।

रचना को कलात्मक बनाने के आशय से ही दरार में प्रतीकों से बहुत काम लिया गया है, कौए की हरकतों का एक शब्दचित्र निम्न प्रकार से है.... वह मानो आँखों से डाँटता हो, इस प्रकार नीम पर आ बैठा । तेजी से आँखें घुमाकर देख लिया । फिर काँव-काँव कर नीम की ताजी कोंपलो पर अपनी धारदार चोंच निर्दयता से उलट-पुलट करने लगा ।

उसके (जोईती) अलावा घर में कोई नहीं था । चूहे का मनपसंद शिकार हाथ लगते बिल्ली कोने में बैठी बैठी मजे से खा रही थी । कोठी के पीछे के अंधेरे में उसकी आँखें जगमगा रही थी । वह होंठ पर जीभ फेरकर म्याऊँ - म्याऊँ कर शून्यावकाश को दूर ढकेलती और दूसरे शिकार की तत्परता में ढोंग रचकर पैतरेबाजी करती । पैंतरा खुल न जाए इसीलिए निर्दोषता का नकाब ओढकर वह जमीन से चिपक गई ।

कहना न होगा कि कौआ और बिल्ली दोनों प्रतिक है । उस सामाजिक आक्रमकता के जिसके सामने दलित समाज अपने आपको बेबस पाता है । शायद वह बात स्पष्ट भी न होती अगर लेखक शिकारी बिल्ली का वर्णन करने के बाद "जोईती की मन:स्थिति की ओर निर्देष न कर देता - जोईती कुछ भयावह परिस्थिति में आ गई, क्या पता कि उसे कोई वक्त बेवक्त मारकर घर से बाहर न निकाल दे ।

श्री हरीश मंगलम् ने बोलचाल के शब्द बहुत ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किये है, जैसे थू...ऊ.....ऊ....,ख्ँू.... ऊँ.....ख्ँू....ऊँ.., का...का....का..., चटचट-म्याऊँ.... म्याऊँ...हाँह... हाँ...ह. ठूक....ठूक..., धम...धम....खडडड.... चूँ.....चूँ.....चूँ.....ए.....ए...... अररर.......,छि.....छि....

संगीतात्मक शब्द

- खपचियाँ खपचियाँ खननन् करती बिखार गई ।

  झनझनाहट, जीभ लपलपा रही थी । फडफडा रही थी
- कीडो की तड...तड.... आवाज से - कैंची की कच कच
- उस्तरा उलट... सुलट.. सट् सट् घिसा
- गुडगुडाहट, लहलहाती फसलें,

बेनमून वाक्य

- पर समय ने मूँह तोड थप्पड मारा था ।
- ठूक...ठूक की आवाज लहलहाते खेतो को बींध रही थी ।
- ललचाई नजरों से मुस्कराया
- गूँगे पेड-पौधो ने मानो श्रवणशक्ति गंवा दी थी ।
- गूजो से वातावरण आलोडित हो उठा था ।
- धबराहट के मारे बगुले फडफडाकर उडे ।
- सीता पहाडी की सफेद ध्वजा काँप उठी ।
- समय चहचहाहट करता था ।
- देर तक और दूर तक उसी की चर्चा ।
- जवानी का उमडता खून नसों में बहने लगा ।
- दिये की मद्धिम रोशनी में समय सरकता रहा ।
- नयी जिंदगी की कोंपलो के स्पर्श का अनुभव किया ।

कहावतें (लोकोक्तियाँ)

- बात का बतंगड हो गया ।
- पाप का घडा फूटे बिना रहता होगा ?
- सोलह आना सच

- तेरी भी चूप, मेरी भी चूप
- भूख उठाए पर भूखा सुलाए नहीं
- बेचारी क्या करे ! यह तो साँप-छछूंदर की दशा हुई । निगलने पर जहर चढता है, और उगलने पर अंधापन मिलता है ।
- बँद मूठी लाख की ।

मुहावरा

- लोहा लेना - गपसप लगा रहो थे ।
- गुड सा मीठा जवाब - आकाश-पाताल एक कर दिया था
- उदास चेहरे स्तब्ध हो गये थे - खुशी से पागल हो रहा था ।
- इशारे करने लगे - कानाफूसी करने लगे ।
- फूटफूटकर रो पडी - नोंद हराम हो गई ।
- चिता में डूब गया - मूक बन गई
- पीठ पसीने से लथबथ हो गई थी - कुहराम मचा दिया
- अंतिम इच्छा पूरी हुई - कलेजे पर पत्थर रखना
- हलाल कर देता था - आसमान फटने का वह क्षण
- खोद खोदकर पूरी बात जान लेना- सन्नाटा छा गया
- खुसर-फुसर होने लगी - दुम दबाकर भाग खडे हुए
- जलते में घी डालना - नरक भोगना पडा
- जिवतर में आग लगाई - धान की तरह कूटकर रख दिया
- चुल्लुभर पानी में डूब मरना - दाँतो तले ँऊगली दबाना
- मूँह में मूँग भरना

अलंकार- उपमा अलंकार

- रामपुरिया का स्मशान जंगली फूलो की पीली चादर ओढे बेपरवाह सो रहा था ।
- खरबूज की फाँक जैसे
- तुम्हारे गाल तो मानो बरफ के गोले देख लो
- माथा पर है तो दो बाल और बीच में है, रेगिस्तान जैसा चाँद
- अपनी घरवाली को धान की तरह कूटकर रख दिया ।

- माली की छोटी सी बाडी में खडे नारियल के पत्ते चुडैल के कंगनो की तरह चिल्ला उठे ।
- पर उसकी आँखें सपोले बनकर उसके वक्षस्थल पर लौट रही थी ।
- नदी की रेत में कालू को तरबूज की तरह रोंदता
- आसपास की पहाडियों, वन्यसृष्टि और आकाश चक्कर चक्कर घुमते थे ।
- आम के गोदाम में छटनी कर फैंके सडे आम जैसी स्थिति थी उसकी
- मूँछ जस की तस रहने दी थी, जो चूहे की पूँछ जैसी लगती थी
- हिरनी सी उछल पडी
- तनावयुक्त शरीर हल्के फूल जैसे लगने लगा ।
- मक्खियों की भिनभिनाहट की तरह लोग बातें करने लगे ।
- समय भी नाली में बहते पानी की तरह बहता जाता है ।
- हल्की फूल जैसी हवा के स्पर्श का अनुभव हुआ

रस

- दरार में करुण, हास्य, शांत, श्रृंगार रस विद्यमान है । सोमा की स्थिति, सोमा की मृत्यु, जोईती की विधवा रुप में स्थिति करुण रस से भरपूर है । उपन्यास में करुणरस ज्यादा है ।

हास्यरस पशा पंडया की बातचीत, हावभाव में है । हजामत करते वक्त एक ओर की मूछ ही काटता है तो बच्चे, हँसते है ।

- शांतरस, सोमा की मृत्यु स्मशान में कचरा, बूढे लोग बातें करते है उसमें शांतरस है ।
- श्रृंगार रस सोमा-जोईती की बातें उपन्यास में है, उसमेंबहुत कम श्रृंगार रस दिखाई देता है । चूहे की संवनन क्रिया, बलदेव-रुखी की बातचीत में भी श्रृंगाररस है ।

गीत

उपन्यास में शादी का गीत है, जो सुंदरता से बढावा करता ैह ।

उडन चिरैया उड जाएगी रे....

उडन चिरैया उड जाएगी रे...

पकी फसल के खेत से....

बिम्ब

'तिराड' की शुरुआत ही ध्वनि बिम्ब से हुई है.. 'जंगल शांत हो गया था । झींगुर की टररर टररर आवाज, क्षणिक टूटी टूटी आ रही फट्टफटनी की पैनी आवाज और मरेमवेशी के मांस से ठूस-ठूस कर भरा घर के पिछवाडे आधे सूखे-आधे हरे आम के पेड पर आँखे मूंद कर बैठी हुई चीलों की पंखो का फफडाट रात की कलूटी छाती को चीर रही थी ।'

प्रतिक

- कसाई की छूरी
- कंकरी सीधी हृदय में चुभती
- पेड धना हो जाए और उसकी शाखाएँ फैल जाये तो समझ लेना चाहिए, कि उसमें कुछ दम नहीं । (बलदेव के बारे में)
- साँड जैसे और बकरे जितना भी जोर नहीं ।
- मैं तो छोटी उम्र में ही पिला पात हो गया ।
- बिल्ली और चूहे का शिकार
- अजगर (बलदेव की बूरी नजर)

श्री हरीश मंगलम् ने 'तिराड' उपन्यास में मुहावरें, लोकोक्तियाँ, अलंकार, संगीतात्मक शब्द, हिन्दी शब्द, अंग्रेजी शब्द, प्रतिक, बिम्ब से ज्यादातर काम लिया है ।

'तिराड' में जहाँ एक और भगा पटेल की वाणी में कठोरता, सामंती गंध आती है, वहीं जोईती की वाणी में याचकता, अपनी विवशता पर पैदा हुई करुणा का स्वर- 'मेरा कौन-सा गुनाह था, भगवान कि मुजे और सोमा को इसका बदला इस तरह दिया ?' इस लघु उपन्यास में लेखक की भाषा काफी सांकेतिक व चित्रात्मक है, जैसे-

'भीतर उतरी हुई सोमा की आँखे कौवे की निरंतर प्रक्रिया को सतत देखा करती ।' याद आते ही पोतडी की तरह पहना हाथकरधे

से बने रुमाल से होठ के कोने से लार साफ करता । मैल से खुरदरे बने हुए रुमाल के कारण फटे होठ में से खून निकलता । सोमा खून के दाग को देखा करता कई देर तक देखा करता । सोमा के मनमें विचार घूमने लगे । मैं तो छोटी उम्र में ही पीला पात हो गया । काफी वर्ष पुराना नीम का पेड हिल गया । बडा बवंडर खडा हुआ । कड्ड आवाज के साथ एक बडा तना टूटा साथ ही घर की कगार के भी दो टुकडे हो गये । यहाँ लेखक ने सोमा की मृत्यु को बडे सांकेतिक ढंग से उजागर किया है, जो काफी कलात्मक भी है [1]

श्री हरीश मंगलम् के उपन्यास में पिछडे हुए इन्सान की व्यथा-पीडा, अन्याय, असमानता, विद्रोह, आक्रोश, छूआछूत, डरावनापन आदि दलित समस्याएँ देखने को मिलती है ।

दलित समस्याओं के निरुपण के समय दलित वातावरण, रचते है, इसीलिए संवेदन ज्यादा तीव्र होता है । पात्रो के आंतरबाह्य परिवेश को तादृश्य करने के लिए प्रादेशिक (आंचलिक)बोली का भी उपयोग किया है ।

बारिस होती है, तब किसान को जो आनंद होता है वह, दलित को नहीं होता, क्योंकि उन्हें तो अपनी झोंपडी की चिंता होती है ।शोषित समाज तो उनकी गरीबी को ही खुजाता है । फूल खिले या सुबह या शाम का आनंद शोषित के मन में अलग भाव पैदा करता है । दलित के पास तो वेदना के सिवा कुछ नहीं है । सुबह देखकर यह खुश नहीं होता, क्योंकि उसे तो रीटी कहाँ से मिलेगी उसकी चिंता है [1]

दरार देशकाल वातावरण के चित्रण की दृष्टि से हमारे गाँव का यथार्थ चित्रण करता है । उसमें भी दलित समाज का चित्रण बहुत ही यथार्थ है ।

'दरार'देशकाल वातावरण के चित्रण की दृष्टि से हमारे गाँव का यथार्थ चित्रण करता है । उसमें भी दलित समाज का चित्रण बहुत ही यथार्थ है । वहाँ की दुर्दशा, पटेलों का शोषण, शादी, मरण, रीतिरिवाज, दलित नारी एवं पटेल नारी, शिक्षा-दीक्षा, पहनावा, प्रेमव्यवहार, आदि का

श्री हरीश मंगलम् ने बडा ही स्वाभाविक एवं वातावरण के अनुकूल चित्रण किया है । इसीसे उपन्यास में यथार्थता की ध्वनि अधिक मुखर उठी है ।

दरार के पात्र एवं घटना को सूक्ष्मता से देखने पर हम कह सकते है, कि श्री हरीश मंगलम् ने अपने युग की दलित समाज की वास्तविक दशा को बडी गहराई से समझकर 'दरार' के रुप में उसका सच्चा चित्र प्रस्तुत किया है । पटेल लोग घराक को मजदूरी कराके कितना शोषण करते है, यह बलदेव के पात्र को देखने से पता चलता है कि उसके खेत में कोई भी बहू या कँवारी लडकी मजदुरी करने जाए तो छेडखानी किये बिना नहीं रहता ।

एक तरफ सोमा बिमार है, तो भी आर्थिक कारण के लिए जोईती को मजदूरी करनी पड़ती है । सोमा को मरे हुए बीस दिन हुए थे, फिर भी मजदूरी करने के लिए जाना पड़ता है । दलित समाज के सभी लोगो को मजदूरी करने के सिवा कोई चारा नहीं है ।

भगा पटेल सोमा को फावडा मारता है, तब सारे दलित थोडी देर हो-हल्ला करते है, पर डर के मारे सब शांत हो जाते है । सारे दलितों की यह विडम्बना है ।

वर्णन-पात्र का वर्णन, घटनावर्णन, प्रकृति वर्णन, पटेल समाज, दलित समाज, आर्थिक समस्या, शारीरिक समस्या, गलत परम्पराएँ अंधश्रद्धा को चित्रित किया है । पटेल द्वारा बार-बार दलित होने का एहसास करवाना जो समाज में चलता है वही ही यथार्थ चित्रण उपन्यास में है ।

सोमा को फावडा मारना, सोमा की बिमार हालत, विजापुर अस्पताल में ले जाना, दवाई की असर न होने से घर वापस ले आना, आर्थिक सहायता पटेल द्वारा न देना, सोमा को मुहल्ले के लोग सलाह देते है वह भी यथार्थ है- "कोई कहता है- थोडा घूमता-फिरता हो तो कुछ अच्छा लगे । कोई कहता विजापुर की दवा रहने दे, देशी उपचार कर ।" परिवेशगत जीवन का यथार्थ दस्तावेज है ।

दलित मुहल्ले का वर्णन भी यथार्थ है- "यहाँ सूरज मानो

कभी झांकता ही नहीं । इसीलिए उजाला कहीं छिप गया है झाडी में रुठकर । इस तरह गाँव का पूर्व भाग हंमेशा अंधकार में डूबा रहता । गाँव के इस हिस्से में बसे लोगों के चेहरे पर चमक दिखाई ही नहीं देती थी । जरा सी चमक उठे भी तो इस उपहासी अंधकार में तेज लकीर अंकित कर दे ! लेकिन्... !'

नीम के पेड के नीचे सोमा की खटिया रहती- हाथ पैर सिकोडने नहीं पडते, अपने आप सिमट जाते । बिमार व्यक्ति का यथार्थ वर्णन है । मजदूरी करके आती जोईती, रोटी बनाने की क्रिया, घर का वर्णन, बिल्ली, चूहे आदि का वर्णन भी यथार्थ है ।

रामदेवपीर को प्रार्थना करना, तस्वीर टूट जाना, सोमा की मृत्यु के समय का वर्णन, जोईती की स्थिति, मुहल्ले के लोग द्वारा जोईती को सांत्वना देना, शोकाकुल माहौल, स्त्रीयो द्वारा छाती पीटना, हाथबूनाई के सफेद तौलिये द्वारा पुरुषों के सर ढँके हुए थे । स्मशान का वर्णन, सभी लोगो द्वारा तत्त्वज्ञान की बातें करना ।

मंदिर के आसपास निठल्ले लोगों का बैठना, इधर-उधर की बातें करना, स्त्रीयों की मश्करी करना, मुहल्ले के लोग आलसी क्यों है ? यह बात भी सही है ।

जोईती का गट्ठर लेकर घर आना, आते समय का वातावरण, कीडों की तड...तड... आवाज, धूल भरी डगर में पाँव फस्स से उतर जाना, भैसो की रंभाने की आवाज, गट्ठर फैंकना, बहुत भारी वजन के कारण सिरमे धम्म धम होना.. ग्राम्य परिवेश है ।

केशला रावल को माता-पिता के मर जाने से आर्थिक अभाव के कारण स्कूल छोडना, शादी का माहौल, ढोल बजाना, दाल-भात लड्डू बनाना, मेहमान स्वागत, दलित लोगो का बताशें लेने जाना, शादी का माहौल जीवंत लगता है ।

सोमा के मृत्यु के बाद सवा महिना हुआ, जोईती को लेने के लिए मेहमान आए । महेमान आये है इसलिए पूरे मुहल्ले में चहल-पहल, लोग चाय की केतलियाँ और कप प्लेट लेकर चाय देने जाते थे ।

औरतो की घूँघट खींचने की और चलने की रीत में मर्यादाने सहज ही प्रवेश कर लिया था । जोईती को मायके में भेजना, ये सब दलित मुहल्ले का वर्णन है । गुजरात में कोई भी जगह देखो, तुमको ये बात सच्ची दिखाई देगी । लेखक की वर्णनकला दर्शनीय है । छोटी-छोटी बात पर भी उनकी दृष्टि गई है ।

जोईती की विदाय, वातावरण, जोईती के जाने के बाद जोईती बलदेव की बातें करना, सारे लोगो द्वारा एक ही चर्चा, देर तक दूर तक वही चर्चा, जोईती का पुन:विवाह, धनजी का घर, जोईती की स्थिति, जोईती को सोमा का गर्भ होना, पुत्र को जन्म देना, जोईती और बच्चे का स्वीकार धनजी के द्वारा, मुहल्ले के लोगो द्वारा जोईती की बदनामी की चर्चा, पंचायत का बैठना, न्याय, पंच की बोलती बंद करनेवाला मगन । पंच का वर्णन सचमुच लेखक ने बहुत ही सफल पेश किया है, सिद्धहस्त कलाकार का यह वर्णन है ।

बलदेव- रुखी का दाम्पत्यजीवन, बलदेव में शुक्राणुओ की कमी, डॉक्टर द्वारा दवाई- बलदेव का स्वभाव, दवाई द्वारा कोई फर्क नहीं , बलदेव का निराश होना, पशा पंडया द्वारा पंच तक यह बात फैलाना, जोईती के आरोप का पर्दाफाश, जोईती का निष्कलंक रुप में खरा उतरना, पंचो की स्थिति, ये सब यथार्थ वर्णन है ।

मजदूर पर शोषण जारी है पर शोषण का प्रकार बदल चुका है, अब डन्डे के बल से न दबाकर छल द्वारा दबाया जाता है । अशिक्षित होने के कारण प्राचीन सामाजिक मान्यताओं को वेदवाक्य समझकर स्वीकार कर लेते है । ग्रामीण समाज में पटेलों का प्रभुत्व है । जीवनभर आर्थिक अभावों की भयंकर चक्की में पिसकर दलित के प्राण निकल जाते है ।

गुजराती साहित्य में दलित कलम में रमणीका गुप्ता ने लिखा है- नवें दशक में आंगलियात से गतिमान दलित उपन्यास की धारा में श्री हरीश मंगलम् रचित तिराड लेखक की उपन्यास कला के प्रति प्रकट होती प्रतिबद्धता के कारण अलग उभर आता है (पृ.२५३)

कृतिगत, सामाजिक, प्राकृतिक परिवेश के उपरांत पात्रो के परिवेश का और उनके लाक्षणिक व्यक्तित्व का चित्रण करने के लिए आंचलिक लोकबोली का विनियोग, लेखक की भाषिक क्षमता की प्रमाण-कथा जगह जगह मिल जाती है । तत्पश्चात उपर्युक्त उदाहरण में देखा जा सकता है कि अनपढ दलित ग्रामीण समाज में साँस लेती अंतर्मुखी जोईती अपनी नहीं बल्कि लेखक की शिष्ट भद्रभाषा में ही अतीत व वर्तमान के पलों के बीच सेतुबंद रचने को मथती रहती है । आंगलियात की तरह ही इस कथा के आंचलिक पात्रों की वाणी में भी मै-ऊँ / हूँ के उपरांत साला-साली हारु/हारी/ हाली जैसे वैकल्पिक शब्द रुप सुनने को मिलते है । दलित उपन्यास की यह परंपरागत खूबी तिराड के संवाद गद्य में शायद ही कहीं देखने को मिलती है, यह एक अच्छा चिन्ह है ।[१]

दरार लेखक की सबसे बडी उपलब्धि संभवत: यह है कि प्रत्यक्ष रुप से सामाजिक संघर्ष से अधिक दलित समाज के आंतरविग्रह, जोईती के चरित्र पर बल देकर भी वह सामाजिक वैषम्य और वर्गसंघर्ष को अपने पूरे भयावह और नग्नरुप में उभारकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में सफल हो सका है । इससे यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है, कि साहित्यकार शुद्ध समाजसुधारक तथा राजनैतिक प्रचारक बने बिना भी शोषण पर आधृत वर्तमान वर्ग विभाजित समाज व्यवस्था का सही चित्र प्रस्तुत कर सकता है । और अपने पाठकों के हृदय में इस व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश की भावना उत्पन्न कर सकता है । गुजरात के दलित मजदूर की औरत के समूचे जीवन और उसके दु:ख दर्द को वाणीप्रदान करने का प्रयास किया है ।

दरार का उद्देश्य निम्नलिखित है ।

१. दो भाईयों के बीच खेत की मेड के कारण जघडा, जो समाज में प्रवर्तित है, उसका यथार्थचित्रण ।

२. दो सवर्ण भाईयो के झघडे में नीच जाति का व्यक्ति छूडाने आता है तो उसकी ही पीटाई करना ।

३. अपने पति की मृत्यु के बीस दिन में ही मजदूरी के लिए जाना पडा यह विवशता ।

४. मजदूरी के लिए जाना और पटेल द्वारा छेडती का भोग बनना ।

५. समाज में छोटी सी बात का बतंगड (राई का पर्वत) बना देना । (पशा पंडया के द्वारा और औरत ही औरत की दूश्मन होती है, समझे बिना ही क्या सच है, या झूठ यह जाने बिना जोईती जैसी निर्दोष को दोषित ठहराना ।

६. विधवा विवाह- जोईती का पुन:विवाह, आधुनिक विचार है ।

७. निरक्षरता - केशला रावल आर्थिक स्थिति के कारण पढ नहीं सका

८. पंच का न्याय, मगन द्वारा पंच की ही पोल खोलना

९. पशा पंडया के द्वारा, हजामत, जादू का खेल दिखाना, आदि में भीख माँगने के बजाय काम करने का संदेश शिक्षा प्रणाली पर व्यंग्य किया है ।

१०. शुक्राणुओं की कमी होने के कारण अंधश्रद्धा पर विश्वास न देकर डॉक्टरी उपाय (सही उपाय)

११. गलत परंपरा (कुरिवाज) साँप काटने से अस्पताल ले जाने के बजाय मंदिर में दो दिन तक रखा ।

१२. संयुक्त परिवार एक सफल परिवार ।

आज के उपन्यासों का मुख्य उद्देश्य मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और उसके द्वारा मानव मन के गहनतम स्तरों की व्याख्या करना है । समाज का परम्परागत ढाँचा, जातिप्रथा, वर्गभेद, शादी, मृत्यु, पंच, आदि में धार्मिक परंपराएँ एवं सामाजिक खोखलापन प्रकट करके नये समाज का संकेत भी किया है । मजदूर का भरपूर शोषण, मजदूरिन का शारीरिक शोषण । शिक्षा का अभाव, गलत परम्पराएँ आदि अनेक उद्देश्य भी लेखक ने दर्शाये है ।

दरार उपन्यास की विशेषताओ में १. दलित कथावस्तु किन्तु मार्ग भिन्न दो वर्ग सवर्ण समाज-दलित समाज के बीच संघर्ष है, लेखक ने इस संघर्ष को अलग ढंग से प्रस्तुत किया है ।

२. दलित की पिटाई की है, उसकी मृत्यु निश्चित है, फिर भी दलित लोगों में इतनी शक्ति नहीं है, कि खुलकर सामना कर सके, पुलिस में फरियाद कर सके । दलित समाज इतना दबा हुआ है कि उच्चवर्ण के लोगो को कुछ नहीं कर सकते, इस विवशता को सही प्रस्तुत किया है, आज भी कई जगह यह बात सौ प्रतिशत सही है ।

३. सोमा बिमार है, लोग ऊपर ऊपर से हाल पूछ लेते है, देशी दवाएँ, घूमना फिरना कहते हैं, वास्तविक दृश्य उभारने में लेखक सफल हुए है ।

४. जोईती मजदूरी करके सोमा की देखभाल करती है, आदर्श नारी का चरित्र

दरार शिर्षक यथायोग्य है । जोईती की डाँवाडोल परिस्थिति, लोगों के दिल में दरार थी कि वह बलदेव के साथ रपटी है, लेखक ने बहुत सावधानी से बलदेव को नपुंसक दिखाकर जोईती की दरार को पूरा करने में सफलता प्राप्त की है । जबकि अब बलदेव को यह कमी पूरी नहीं होगी, अतः उसके दिल में दरार हो गई ।

श्री मफत ओझा ने दरार शिर्षक की यथार्थता स्पष्ट की है । इस उपन्यास में दरारों का मिलाप होता है । शुरु में भगा और बलदेव के बीच खेत की मेड के कारण दरार है । जोईती ओर सोमा के बीच बीमारी के कारण दरार है । बलदेव की जन्मजात कमी के कारण बलदेव और रुखी के बीच दरार है । आडे संबंध की शंका के कारण बलदेव और जोईती के बीच सूक्ष्म दरार है । तो पंचायतवालों की नीति रीति के कारण दलित समाज में दरार है । तो स्वयं जोईती तो अपने जीवन में पूरी दरारो में ही रहती है । ये दरारे गेहरी ही गेहरी होती जाती है और जीवन को झहर बनाती है [1]

दरार में दलित समाज का चित्रण है । उसमें भी मुख्यतः दलित नारी पर होनेवाला दमन उल्लेखनीय है । उपन्यास में किसी हेतु, आदर्श, भावना, नीतिमत्ता, प्रमाणिकता, जीवन के मूल्यो की बात होती है ।

श्री प्रवीण गढवी ने दरार के बारे में लिखा है- तिराड को

लंबी छोटी कहानी या लघुउपन्यास कहे, उसमें दलित समाज का एक चित्र प्रकट होता है । यहाँ कोई लाउड संघर्ष नहीं है, जीते जीवन की छोटी सी बात है, फिर भी जोईती, सोमा, बलदेव, मथुर भगत, पशा पंडया जैसे विविध पात्रों का सूक्ष्म चरित्र चित्रण हुआ है । 'आंगलियात' या दलपत के 'झलक' जैसा यहाँ कहानी का धोध नहीं, झरना है और इसीलिए भावक को सह्य है ।[2]

हिन्दु समाजव्यवस्था में दलित पीडित का अस्तित्व तिनके की तरह भयावह है । त्रस्त होकर दूर भागने का प्रयत्न किया किन्तु हिन्दुत्व ने पीछा नहीं छोडा ।

चौकी उपन्यास विवेचन :

हरीश मंगलम्

'चौकी' उपन्यास की कथावस्तु नवीन है । दलित मुहल्ले की चौकी करनेवाला व्यक्ति जो ठाकुर है, वही चोरी भी करता है । चोरी करने का ईरादा यह था कि चोरी चालू रहेगी तो चौकी करने के लिए मुझे बुलायेंगे, वरना चौकी बंद कर देंगे । लेकिन उसका गणित यहाँ कामयाब नहीं होता ।

चोरी होती है तो मुहल्लेवाले चौकी ही बंद करवा देते है, बेरोजगार अखुसिंह बाद में खेतों की चौकी करता है, वहाँ भी स्त्रियों के साथ आडे संबंध रखता है, गाँव के पटेल की लडकी के साथ भाग जाता है, बाद में साधु बन जाता है, वापस गाँव में आता है, चोरी करते समय दलित मुहल्ले में ही पकडा जाता है, यहाँ पर यह उपन्यास पूर्ण होता है ।

अखुसिंह दलित मुहल्ले की चौकी करता है, फिर भी चोरी चालु ही रहती है । शिवा की बहु के कान के कुंडल (काप) दला की लडकी का पैर, चोर सेहलता है, किसी का बकरा, तो किसी की खटिया, तो शनिया का मूर्गा आदि की चोरी होती है, तो युवान लडकी की इज्जत पर कोई हाथ डालता है, लेकिन चोर नहीं पकडा जाता ! अमथी बुढिया मोतीचाचा को ईशारा करती है कि मुझे तो अखुसिंह पर वहम

होता है । मुहल्लेवाले चौकी बंद करवा देते है तो अखुसिंह दलितों पर क्रोधित होता है ।

बेरोजगार अखुसिंह पटेलों के खेतों की चौकी करता है, पटेल स्त्रीयों, लडकियों के साथ आडे संबंध रखता है । बातो में माहिर होने के कारण स्त्रीयाँ वश हो जाती है ।

शांति जो स्कूल की मित्र थी । बंदर की रति क्रिडा दिखाकर शांति को उदीप्त करता है, फिर अपनी ईच्छा को तृप्त करता है । अखुसिंह की शादी जल्दी होनेवाली नहीं थी, अभी तो बडे भाई की शादी नहीं हुई थी, शांति को बदला पद्धति के कारण अच्छा घर मिलनेवाला नहीं था । अतः दोनों कहीं भाग जाते है ।

यह घटना के कारण पटेल और ठाकुर के बीच हंगामा हो जाता है, ठाकुर पटेलों को हानि पहुँचाते है । अखुसिंह- शांति को पुलिस पकड लेती है । शांति पेट में हंसिया मारकर मर जाती है, तब पुलिस को चक्मा देकर अखुसिंह भाग जाता है । ठाकुर खुश होते है कि अखुसिंह तो बच गया । दलित खुश होते है कि ये दोनों जाति भले ही झघडा करे, दोनो ही हमें तो अछूत ही रखते है । शोषण करते है ।

अखुसिंह रेल द्वारा ईडर जाता है, पैदल डुंगर पे जाते वक्त रास्ते में कचरे के ढग में एक गरीब लडका चवाणा (सेव) खा रहा था, मृत कुत्ता पास में था । अखुसिंह को गरीबी याद आती है । डुंगर पर चढकर तेजवीर आश्रम में जाता है ।

आश्रम में वीराभगत भक्तजनों के साथ सत्संग कर रहे थे, तब गौतम भगत और छे-सात इन्सान वीरा भगत पर हमला करते है, यहाँ शिव का मंदिर था, तुम यहाँ से भाग जाओ । किन्तु वीराभगत कहते है कि ये मंदिर वर्षो से रामदेवपीर का है, हम यात्रा में गये तब तुमने घूसपैठ की थी ।मार-पीट होती है अखुसिंह और वीराभगत के दो युवान साधु सब को भगा देते है । अखुसिंह की वीरता की प्रसंशा करते है और अखाभगत नाम रखते है । अखाभगत सचमुच भगत हो जाता है, सेवा

को प्रायश्चित समजकर, आश्रम की देखभाल भी उतनी ही वफादारी से करता है । फिर भी गाँव याद आता है । आश्रम में जोगी-सोही भी थे ।जो अनाथाश्रम में से आये थे । निराधार बच्चे आश्रम में रहते हे, भीख मांगते है और उसका मेनेजर ऐश करता है ।

अखुसिंह साधुवेश में ही गाँव जाकर परिस्थिति देखता है । ठाकुर-पटेल के बीच तालमेल हो गया था, पुलिस केस भी समाप्त हो गया था । वीराभगत की समाधि के बाद अखाभगत गाँव में जाना चाहता है ।

गौतममुनिने जब से अलग मंदिर बनवाय, तब से दलितों में दो भाग हो गये है । इस तरह पूरा दलित समाज तूट जायेगा । आश्रम की जिम्मेदारी अखाभगत को सोंपते है । तब अखाभगत का मन गाँव की सफर करता है, शांति, कमु याद आती है । मुझे लोग अखुभा कहते थे यहाँ तो कुछ नहीं, कब माला तोड दूँ !

वीराभगत समाधि लेते है । अखाभगत गाँव जाकर चौकी रखना चाहता है, किन्तु मित्रोने कहा कि अभी कोई तैयार नहीं है, लेकिन चोरी का भय पैदा करके हम ही तुम्हें संदेशा भिजवायेंगे । अखाभगत आश्रम में जाता है तो वहाँ परिवर्तन हो गया था । गौतम मुनिने कब्जा कर लिया था, जोगी-सोही भी चले गये थे । अखाभगत यहाँ से गाँव वापस आ जाता है ।

गाँव में लोग तिरस्कार करते है, थोडे दिन बाद लोग ये भूलने लगे । अखुभा के रुप में अब आ गया, मुहल्ले में चौकी रखना चाहता था मोतीचाचाने मना कर दिया । एक रात चोरी करते वक्त अखुसिह को पकड लेते है, पिटाई करते है । मोतीचाचा उसे गाँव के वरिष्ठ व्यक्तियों को सोंप देते है । अखाभगत के रुप में आँख खोलने की अखुसिंह में शक्ति नहीं थी, वृत्ति भी नहीं थी । यहाँ उपन्यास समाप्त होता है ।

चौकी में पात्रालेखन उत्कृष्ट है । मुख्य पात्र अखुसिंह (अखाभगत) का है जो ठाकुर है । अन्य पात्रों में शांतु, कमु, डई पटेल स्त्रीयाँ है । दलित पात्रो में मोतीचाचा, अमथी बुढिया, मफला, शिवा-

अंबा, दला, है । साधु-वीराभगत गौतममुनि, जोगी-सोही और दलित जाति के बुनकर, चमार है, आदिवासी भी है । ठाकुर मुहल्ले के पटेल मुहल्ले के अन्य लोग भी है ।

श्री हरीश मंगलम् ने पात्रों के मानसिक ख्याल का ध्यान रखा है । पात्र एक से बढकर एक है । ईडर प्रदेश के वास्तविक पात्र है । उच्चवर्ग के पात्र है तो दलित, आदिवासी पात्र भी है । खेतो में काम करनेवाले पात्र है तो चौकी करनेवाले पात्र भी है । साधु पात्र है ताे भक्त भी है । चारित्र्य के दोनों छोर पर खडे रहे ऐसे पात्र भी है। शहर के पात्र भी है, जो ऐश भी करते है, कोई सच्चा ज्ञान देनेवाला पात्र भी है । यौन समस्याओ से त्रस्त पात्र भी है । गादी पर बैठने के लिए संघर्ष करनेवाले है, तो साधु बनकर भी हैवानियत मनमें रखनेवाले पात्र भी है ।

अखुसिंह के आसपास (इर्दगिर्द) कथा घूमती है । वह दलित मुहल्ले की चौकी करता है, रोजगार प्राप्त करता है । लेकिन चौकी किस तरह चालू रहे उसका ख्याल रखकर चोरी भी करता है, क्योंकि चोरी होगी तो चौकीदार रखेंगे ।

शिवा की बहु अंबा के कान के कुंडल की चोरी होती है, लोग इकट्ठे हो जाते है तब कहता है- मैं उस ओर घूमता था, यह आवाज सूनी इसीलिए यहाँ आया । अखुसिंह ने मूछो को ताव देते हुए कहा- मुझे तो साले ! कमालपुर वाले ही लगते है । ये मेरे ध्यान में ही है!

सफल चोरी करनेवाला ही चौकीदार बन सकता है । उसका यह उदाहरण है । चोरी तो ठीक है लेकिन युवान स्त्रीयाँ, लडकीयाँ की छेडती भीकर लेता है और पकडा भी नहीं जाता । बकरे, खटिया, मुर्गा की चोरी होती है तो मुहल्लेवाले चौकी ही बंद करवा देते है । अमथी बुढिया को अखुसिंह पर ही वहम होता है ।

अखुसिंह चौकी बंद होने के कारण खेतो की चौकी रखता है ।मुहल्ले की चोकी बंद करनेवालों पर क्रोधित होता है । खेतो की चौकी करता है तो स्कूल में पढी लडकियों (जो घास लेने आती है)

के साथ आडे संबंध बाँधता है । डई को पाडे और भैंस की बात व्यंग्य में करता हे, तो कमु को गड्ढ के छोर की बात करता है । शांति को बंदर की रतिक्रिडा दिखाकर उद्दीप्त करके उनके साथ कामाग्नि तृप्त करता है । यौन की समस्याओं का कहीं भी समाधान कर लेता है ।स्वयं को कन्या नहीं मिलेगी यह जानता है, इसीलिए शांति के साथ नया संसार शुरु करने के लिए भाग जाना श्रेयकर समजता है । ये आधुनिक विचार ते है, साथ ही साथ कहीं भी जाकर रोटी कमायेंगे, इतनी ताकत भी है । समाज के बारे में शांति को कहता है-

शांति, जल्दी कर, सोचने का टाईम नहीं है । तू ही बोल टाईम है... ? तेरा समाज और मेरा समाज जिंदा ही मार डालेगे । पृ.३२

पुलिस के हाथों पकडे जाते है, शांति पेट में हंसिया लगाकर मर जाती है, तब पुलिस को धोखा देकर भाग जाता है ।

तेजवीर आश्रम में झघडा होता है, तो गौतममुनि को त्रिशुल लेकर भगा देता है । वीरता का कारण उसकी प्रसंशा करते है और अखाभगत नाम रखते है । अखाभगत समचुच भगत बन जाता है ।

कभी कभी उसे शांति खेत याद आते थे, लेकिन लंबे बाल, दाढी देखकर भगत होते की शंका दूर हो जाती थी । शराब पीनेवाला अखुसिंह, खंभे पे धारीया, बडी मूंछे, लालघूम आँखो में घगघगता नशा का कैफ । पूरा गाँव फफडता.. सभी लोग अखुभा कहकर बुलाते । घास लेने आती स्त्रीयाँ के साथ मस्ती सब याद आते थे ।

अखुसिंह की जिंदगी पुरानी हवेली की टूटी हुई दिवार जैसी थी । वीराभगत की समाधि के बाद गाँव में वापस आता है । चौकी रखना चाहता है, मोतीचाचा मना करते है । रात में चोर के रुप में वह पकडा जाता है और शर्मिन्दा होता है ।

इस प्रकार चौकी का अखुसिंह एक सच्चा इन्सान है । जो चोरी करता है चौकी करता है, छेडती करता है तो भगत भी बन जाता है ।

दलित पात्रों में मोतीचाचा का पात्र सशक्त है । मुहल्लेवाले उनकी इज्जत करते है, चौकी बंद कराने में भी महत्त्व की भूमिका अदा करता है, अखुसिंह से डरता नहीं है । चोर के रुप में ही अखुसिंह को पकडकर अखुसिह की बोलती बंद करनेवाला मोतीचाचा सचमुच दलितों का वीरपुरुष है । अमथी बुढियाँ भी ऐसी ही होंशियार है । जमाने को देखा है, परखा है, इसीलिए अखुसिंह चोर है यह अनुमान सत्य साबित होता है ।

शिवा और अंबा में दलित दम्पति का यथार्थ दर्शन होता है । दलित एकता का परिचय देनेवाले पात्र है- धरमो, आँबो, कुशो, शिवो, मफलो, खेमो । चुगली करनेवाला पात्र है- दुला ।

अपने मुहल्ले की चौकी स्वयं कर लेंगे उतनी हिंमत भी रखते है । तो अंबा तो कहती है- "तुम चुपचाप बैठो... ! तुम्हारे कारण भूल हो गई वरना.. चोर को पकडकर नीचे फैंक दूँ और लात मारु तो जाय सोलह के मूल्य में ..." यह स्त्री ताकत की बात है । ये दलित नारी का चरित्र है ।

कमु, डई, शांति जैसी पटेल स्त्रीयाँ भी है, जो परपुरुष के साथ आडे संबंध रखती है । शांति तो अखुसिंह के साथ भाग जाती है । शांति का चरित्र समाज को लाल आँख दिखाता है । समाज के जड नियमों को तोडने के लिए बाध्य करती है । बीस, पचीस साल की लडकी की शादी नहीं होती तब वह क्या करेगी ? शांति निर्दोष है पर नियम बनानेवाले दोषित है । अपनी इज्जत के कारण आत्महत्या करनी पडती है । ऐसी अनगिनत पढी लिखी स्त्रियों का समाज के नियमों के कारण करुण अंत होता है ।

रघु लुहार जैसा पात्र बातों में मिर्चमसाला लगाकर एक दूसरे को कहता फिरता है, पटेल-ठाकुर को इधर से उधर घुमाता है, और दोनों जाति के बीच संघर्ष, झघडा करवाता है । खुश होता है, कलियुग का नारदमुनि है ।

वीराभगत और गौतममुनि का पात्र भी उपन्यास में महत्त्व की भूमिका निभाता है । वीराभगत का पात्र आदर्श साधु का है । सत्संग करता है, सच्चा ज्ञान देता है, रामदेवपीर की सेवा करता है । गौतममुनि का पात्र अहंकार से भरा हुआ है । वीराभगत को परेशान करता है, मंदिर की जगह हडप लेना चाहता है, आजकल मंदिरो में जो गादी के लिए झघडे हो रहे है, उसके लिए लाल आँख है ।

जोगी-सोही का पात्र भी उपन्यास में महत्त्वपूर्ण है । चौकी उपन्यास के पात्र कई प्रतिभाओं से विभूषित है । लेखक के कठपुतले नहीं है, लेकिन स्वयं बोलते है । मानसिक संतुलन रखते है, अपने आप निर्णय लेते है । अखुसिंह, शांति उसका उदाहरण है । ये पात्र आदर्श कम, यथार्थ के पूजक है । ये सभी पात्र कायमी याद छोड जाते है ।

डॉ.के.एम. मकवाना अपने संशोधन ग्रंथ में लिखते है "लेखक की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति के दर्शन बार बार होते है । पात्रों के आंतरिक मनोव्यापार, स्थल, पात्रो के बाह्य आकर्षक वर्णन लिखने में लेखक मेदान मार गये है । पुष्कर चंदरवाकर के विधान को समर्थन देते हुए कहते है, सचमुच तो यह कृति से गुजरात को आनंद होना चाहिए । क्योंकि प्रथमबार एक दलित सर्जक की ओर से कलात्मक कृति कथासाहित्य में मिलती है । आज तक पढने में आई कृतियों में दलित लेखक और सर्जक विशेषत: झनून सर्जन करते रहे है। उसके बदले में यह लेखकने मुखौटे को अलग करके साद्यंत कलाकृति दी है ।"[3]

संवाद या कथोपकथन का महत्त्व उपन्यास में कम है, फिर भी श्री हरीश मंगलम् ने पात्रों के द्वारा जो बात कहीं है, वह प्रसंशनीय है, छोटे छोटे शब्दो से, कभी कभी तो एक अक्षर से भी काम लिया है । छोटे छोटे वाक्यों से भी अर्थपूर्ण होता है ।

संवाद से कथा आगे बढती है, पात्रो का परिचय, कृति का उद्देश्य भी संवाद के द्वारा ही प्राप्त होता है । चौकी उपन्यास में संवाद स्वाभाविक, सचोट और तार्किक है । यथार्थ जीवन में जैसी शब्दावली

बोलते है, उसे ज्यों का त्यों उतारकर रख दिया है । इसीलिए संवाद रसप्रद है बातचीत स्वाभाविक परिस्थिति के अनुकूल, सरल और सूक्ष्म होना जरुरी है । चौकी में उनका बराबर ख्याल रखा है । संवाद पात्रों के स्वभाव के अनुकूल है । छोटे-छोटे संवादो से हमें परिस्थिति का सहज और उपयुक्त ज्ञान होता है । पात्रों के मनोभाव, विचार, मान्यताएँ सभी संवाद के द्वारा प्रकट किया है ।

शिवा-अंबा के संवाद माधुर्य कटाक्ष से भरपुर है, उसी तरह अखुसिंह, शांति, कमु, डई के संवाद भी कटाक्ष से भरपूर है । गौतम मुनि के संवाद हिन्दी में है, एवं वीररस से भरपूर है ।

अखुसिंह-शांति के संवाद (पुलिस के सामने) चोर के बारेमें दलित पुरुषों के संवाद, जोगी-सोही संवाद, अनाथाश्रम के संचालक के बारे में जोगी-सोही के संवाद तार्किक, चोटदार है ।

- अखुसिंह और डई के संवाद कटाक्ष से भरपुर है, अखुसिंह भैंस और पाडे के बारे में से बात बदलकर लाक्षणिक ढंग से डई को उत्तेजित करता है (पृ.२१)

- क्रोध से भरपूर संवाद

गौतम मुनि और शांत वीरा भगत (पृ.४६)

ये मंदिर शिव भगवान का है

हाँ इधर शिवलिंग था,

और इधर पोठिया था । खाली कर दो, आने की बात छोडिए, रामापीर का मंदिर कभी न था और कभी न होगा ।

स्त्री शक्ति, हिंमत, अंबा के शब्दों में खाने की समस्या (पृ.१५)

में कहता था कि सोने के जेवर पहनकर बाहर नहीं सोना चाहिए... किन्तु मेरा कौन सूनता है ।

(अंबा समझ गई कि ये सब मुझे सुनाने के लिए बोलता है, तिरछी आँखें से देखती है)

तू क्यों तिरछी नजर से देखती है ? तू मानती ही नहीं सोने के जेवर खोये ! एक तो खाने के लाले और ऊपर से ! फिर.....

(छे-सात स्त्रीयाँ बैठी थी, इसीलिए रुआब में ....)

तुम चुपचाप बैठो...! तुम्हारे कारण भूल हो गई... नहीं तो ?

क्या नहीं तो ? (शिवाने बीच में ही बात काट दी)

चोर पकडकर नीचे पटक दूँ... और लात मार दूँ, तो जाये सोलह के मूल्य में...

तूं तो बडी बहादूर... सही ...मैं

- (शांति आत्महत्या करती है, अखुसिंह भाग जाता है, उसके बारे में संवाद- पृ.३७)

उसका नाम ही साटा पद्धति...

(कोई मजाक में ही बीच में बोला)

किन्तु वे मजनु तो चला गया ?

जान बचाकर भागा... रफू चक्कर !

लैला को ऊपर भेजकर... ! मेरा साला, ये मजनु जबरा, होंशियार!

अपने मुहल्ले में वही होशियारी करता था, ऐसा न ?

संवाद स्वाभाविक है । इन्सान स्वाभाविक क्रम में जो बोलता है, व्यवहार, वर्तन करता है ऐसा ही संवाद चौकी में है । उपन्यास के संवादो के बारे में श्री हडसनने कहा है-

"Dialogue well managed ia one of the most delightful elements of a novel"

'चौकी' के संवाद कथावस्तु को आगे बढाते है, पात्रों के व्यक्तित्व को निखार देते है, गति देते है, हृदय को स्पर्श करते है ।

भाषा के बारे में श्री हरीश मंगलम् का मौखिक कथन है कि भाषा शुद्ध, सरल होनी चाहिए । गलतियाँ नहीं होनी चाहिए ।

'चौकी' में उन्होंने यह ख्याल बराबर रखा है । गद्य मनोहर है । मात्र शब्दों के गुच्छ ही नहीं रचते, जो शब्द रखते है, वह देख देख के तोलमोल के रखते हे । शब्दों के पास काम कराने की होशियारी अजीब है । सरल, भाषा में अपने विचार अभिव्यक्त करते है । बानी का

गलत विलास उनको पसंद नहीं है । अपरिचित कठीन शब्द का उपयोग करने का शौक नहीं है ।

श्री मंगलम की गद्यशैली में प्रसंगोपात काव्यमयता होती है । काव्यरस का आस्वाद भी कराते है । सुंदर और रसावह है । प्राणवान कथनकला, चित्रात्मक वर्णन, सूत्रात्मक बानी, तैरते संवाद ये सभी से ओतप्रोत उनकी गद्यशैली अपनी एक विशिष्ट मुद्रा उफसाते है ।

“कृति की वर्णनकला और भाषा की सभानता के कारण कृति में साहित्यिक कलात्मकता सिद्ध हुई है ” -मोहन परमार

“ग्रामजीवन का आकर्षक चित्रण भी कृति में दिखाई देता है, ईडर (उत्तर गुजरात) प्रदेश की बोली, रीतिरिवाज, सभी से लेखक परिचित होने के कारण कृति में कृतकता के प्रवेश का अवकाश नहीं है ।

- मोहन परमार

श्री पुष्कर चंदरवारकर ने चौकी के बारे में लिखा है- श्री हरीश मंगलम उनकी कृतियों के द्वारा सर्जक के रुप में सिर उठा रहे है- और केवल ६४ पृष्ठ की तिराड (दरार) द्वारा एक उत्तम सर्जक- कलाकार के रुप में गुजरात समक्ष प्रकट हुए है । कहानी का सर्जक मानव स्वभाव के गहनतम प्रगटीकरण के लिए मोती ढूँढनेवाले (मरजीवा) की तरह डूबना पडता है । चौकी में श्री हरीश मंगलम् यह कला में सफल (मरजीवा) ही दिखाई देते है । अंबा के कान में से कुंडल की चोरी प्रसंग पढकर देखिए । वही पे यह सर्जक में नया देखने को मिलेगा । खटिया में सोई अंबा की मानसिकता देखिए “रात के समय में पति सहशयन के लिए हररोज चेष्टाएँ ही करता हो, ऐसा उसका मानसमात्र दो ही सशक्त उक्तियाँ द्वारा प्रकट किया है । जब कुंडल की अखुसिंह चोरी करता है तब लोकमानस Colective Consciousness का सर्जक ने जो चित्र दिया है यह पढकर अंग्रेज समर्थ उपन्यासकार टोम्स हार्डीका स्मरण होता है ”

चौकी में आंचलिक भाषा का प्रयोग किया है । गाँव के पटेल, ठाकुर, हरिजनों की बोली का समावेश है । दलितों की भी अपनी

विशिष्ट बोली होती है । लेखक स्वयं दलित होने के कारण शब्दो को बखूबी से पकडे है । निरीक्षण शक्ति प्रसंशनीय है । एक उदाहरण-

"लि, हुं थ्युं ? च्यों बूम पडी ? हाय ! हाय ! भोपलाना बापा अनं ढुबलीनी मा, जागो सो ?..... आ च्योक बूम पडी नअ....! उठ तो खरी, हुं ढोरनी जेम घोर्य घोर्य करअ सअ " पृ.१२

हिन्दी भाषा का प्रयोग गौतममुनि ने किया है...

ये मंदिर शिव भगवान का है.. (पृ.४६,४७) (पृ.४०) वीररस से ओतप्रोत भाषा है । वीर भगत के शब्द सूनकर गौतम मुनि और क्रोध करता है । उर्दू शब्द- शेतानियत

- अंग्रेजी शब्द- हॉस्पिटल, कम्पाउन्ड, स्वीच, कोलबेल, पेश्यल, स्वीच

गाँव के निरक्षर (अशिक्षित) दलितों की बोली में उनके लाक्षणिक शब्द आते है, वह स्वाभाविक है । आंट, बांठी, काठी (मजबूत) खोली (गधेडी) कायो (गुस्सा), कतरजोड, तंतूंबी रह्यो, वलूरियां आदि ।

- तत्सम शब्द- देहयष्टि, त्वचा, कुच, स्निग्ध, विश्लिष्ट, विवधा, अतीत, आत्मा

- चौकी में संगीतात्मक शब्द, वाक्य मिलते है । टरर... टरर..., घरर... घरर... अरर.... हूप्प....हूप्प..., खीं....खीं....., खें.... खें.... अें.., चररर, पवन सर् सर् सर् सर्

ठीसूक.... ठीसूक... ठीसू.. का.... ठी... सू...क...

सट्टाक... सट् ....सट्.... सट्टाक... भू....भू....ऊँ

सूउउ.....सूउउ, धक्....धक्

झणझणाटी, ,भो....भो.. पी...पी.....

ढुमु....ढुमुं....ढुमुं.... हं....हं...

- **चौकी में अलंकार, चमकते रत्न**

- अंधारपछेडो ओढीने वृक्षो पण ऋषिनी मुद्रामां स्थितप्रज्ञ उभां हतां ।
- घच्च करीने आंगली घोंचीये तो पण घोंची ना शकाय तेवुं घसमस अंधारु हतुं.
- ढोरनी जेम धोर्यधोर्य करअ सअ. !....

- छनियानो तो टेटी जेवो मरघोय उपडी गयो !
- ऊँदरीनी पूँछडी जेवी मूछो ज खेंची नाखुं ।
- अेनी खारा टोपरा जेवी दानत
- एना हसवाथी एना गाल करेणनी केरी जेवा तगतगी रह्या
- छातीनो भाग तंतूंबी रह्यो
- कंचनवरणी काया सूमसाम वगडामां चत्तीपाट पडी हती
- वीज चमकारा जेवुं हास्य
- जूनी हवेलीना खखडी गयेला कठेरा जेवी एमनी जिदगी एमने सतावी रही ।
- दूर से दरिया में तैरते महल जैसा दृश्य सुंदर लगता था
- यौवनना ऊँबरा खखडावती छोकरीओनां लुमखां पसार थई रह्या.
- ऐनी आँखोमां अग्निनी ज्वालाओ लबूक लबूक थवा लागी

मुहावरें

- मेलु पाटु ते जाय होलना भावे ...!
- इनी खेर काढी नाखुं
- वातना ताणावाणा गूँथी रह्यां
- रजेरज वात छती करी दिधी
- लाल पीलो थई ययो
- फाटफाट थतुं यौवन
- रफेदफे थई रह्युं
- कालजां थथरी उठ्यां
- होबालो मची गयो ।

कहावत

- डोशी मरी जाय तो वांधो नई पण जमडा पैंधा पडी जाय इनो भो सअ !
- जोईतुं तुं ने वैद्ये कीधुं !

गुजराती दलित उपन्यासों में 'धौ की' उपन्यास में रस की मात्रा ज्यादा है । वीररस, हास्यरस, श्रृंगार, करुण, बिभत्स, शांत (भक्ति) सभी रस देखने को मिलते है । सर्जक की कलम सभी रसो में घूमती दिखाई देती है । भूखा लडका, मृत कूत्ता, कीडे, भूँड, गंध, ये वातावरण से बिभत्सरस की अनुभूति होती है ।

- अंबा कहती है कि मनअ इंम कअ तमे हली करता अशो ! ये शब्द सूनकर स्त्रीयाँ घूँघट में हसती है ।

- शिवा भी कहता है चोर और मेरे हाथ में अभी तक फर्क ही नहीं लगा । दोनों वाक्यो में हास्यरस है ।

- चौकी बंद कर देने से अखुसिंह, क्रोधित होता है-

लाल पीला होना, गंदी गालियाँ, दाँत पीसना, बैर की भावना, आँखों में अग्नि, वीररस का उदाहरण है ।

- बंदर की रतिक्रीडा, अखुसिंह, कमु, शांति के बीच बातचीत में श्रृंगार रस है ।

- पटेल और ठाकुर के बीच संघर्ष में वीररस है ।

- वीराभगत की बानी में भक्तिरस है । (भजन-अखा भगत)

- वीराभगत और गौतममुनि के संघर्ष में वीररस

- अनाथाश्रम के बच्चे और उनका जीवन -करुणरस

- अंबा के कुंडल चोर ले गया, कान टूट गया- करुण रस

इस प्रकार इस उपन्यास में सभी रस मौजूद है । श्री पुष्कर चंदरवाकर ने भाषाशैली के बारे में लिखा है "श्री हरीश मंगलम् की यह कृति पढते सहज ही यह विचार मेरे चित्त में घूमने लगा । महाजन कलाकार अपनी ही केडी पर चलता है, शैली के बारे में पुरोगामीओं का अभ्यास करता है, किन्तु उनका अनुकरण नहीं करता । श्री मंगलम ने अपनी ही शैली गद्यशैली पद्य की बुनाई में से उपजाई है । गद्यशैली में जो संक्षेप में छोटे वाक्य है, उसके द्वारा वह तीर ताक सकते है । फिर भी उसमें अलंकार और रस से भरपूर वाक्य भी देखने को मिलते है । उनका यद्य संगीत से ओतप्रोत, तालमय और लययुक्त भी है ।"

उपन्यास में नाट्यात्मक वक्रोक्ति देखने को मिलती है । उनसे कृति का सौदर्य ओर बढ जाता है ।

- भैंस के बारे में अखुसिंह का कथन

- गट्टर के छोर के बारे में कमु और अखुसिंह के संवाद

- कल जगमाँ तो हाहरा पेटाँय हवई ज्यों ।
- अंबा के कुंडल चोर ले गया, उसके बारे में अखुसिंह का कथन
- मनअ तो पेला हाला कमालपुरवाला ज लागअ सअ्

चौकी में प्रतिकों से ज्यादा काम लिया है ।

- शांति की उपस्थिति में अखुसिंह बारबार धारिया को (तलवार जैसा शस्त्र) धारवाला बनाता है, अपनी कामाग्नि को उद्दीप्त करता है ।
- बंदर की रतिक्रीडा
- भूँड के बच्चे की लाईन
- गरीब भूखा लडका
- घास के गठ्ठर के छोर की गाँठ

"लेखक अपने दलित समाज की भाषा, मुहावरे, आँचलिक शब्द द्वारा एक अलग भाषाबल प्रकट करके साहित्यकृति रचते है । कुछ समय बाद दलित शब्दावली शब्दकोश बनेगा उसमें कोई नई बात नहीं होगी "[1]

अछूत के रुप में आये दर्दनाक अनुभवों की अभिव्यक्ति ही सजीव और उत्कृष्ट साहित्य बन सकता है ।[6]

देशकाल और वातावरण की दृष्टि से चौकी उपन्यास उत्तर गुजरात (विजापुर, ईडर) को रुबरु कर देता है । वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति, रीतिरिवाज, (सामाजिक व्यवहार), गहनें, वहम (अंधश्रद्धा) का परिचय दिया है । गाँव का यथार्थ चित्रण है । ईडर का डुंगर, मंदिर का संघर्ष खेतो का चित्रण है । वहाँ की दुर्दशा, शोषण, शाला, घास काटने आती स्त्रीयाँ, चौकीदार, प्रेम व्यवहार आदि का श्री हरीश मंगलम् ने बडा ही स्वाभाविक एवं वातावरण के अनुकूल चित्रण किया है ।

चौकीदार ही चोरी करता है । दलितों को दबाव में रखता है । दलित तो मजदूर ही है, खाने के भी लाले है, फिर भी चौकी के लिए पैसे देते है । शायद रात में तो शांति मिले !

आर्थिक अभाव शिवा के शब्दों में प्रकट होता है.. तू क्यों तिरछी नजर से देखती है ? मानती ही नहीं. और सोने के कुंडल खोये ।

... एक तो खाने के लाले और उपर से.. । (पृ.१५)

प्रथम परिच्छेद में ही प्रकृतिवर्णन सुंदर है, दलित कृति का एहसास भी प्रथम परिच्छेद में ही मिल जाता है । (पृ.११)

चोर शब्द की ध्वनि सूनकर लोग हाथ में जो शस्त्र आया वह लेकर दौडता है, फानस, डंडा, धारीयुं, पटकुन्ना ।

दलित दाम्पत्यजीवन के खट्टे-मीठे शब्द (पृ.१५) अंबा-शिवा के द्वारा व्यक्त किये है ।

स्त्रीयाँ गहने पहनती है, बकरे, मुर्घे रखते है । बाजरा काटने या दूसरे काम के लिए दूसरों के खेतो में जाना पडता है, क्योंकि अपने खेत दलितों के पास नहीं है । पुरुष शराब पीते थे । पटेल लोग भैंस रखते थे, घास लेने स्त्रीयाँ, लडकियाँ जाती थी, अतृप्त कामवासना खेतो में पूर्ण करते थे ।

स्कूल, स्कूल में लडके-लडकियाँ का साथ-साथ खेलना, शिक्षक, खेल का मैदान, नीम का पैड, थंभ, आंबली-पीपली, खो-खो का खेल... स्कूल जीवन का यथार्थ वर्णन है ।

प्रेमी युगल गाँव छोडकर चला जाय तो पूरे गाँव में, आसपास के गाँवो में हर जगह उसकी ही चर्चा, उनको ढूँढने का प्रयत्न दोनों पक्ष में झघडा, संघर्ष का वर्णन यथार्थ है । दोनो पक्षों का समाधान करनेवाले भी होते है, तो रघु लुहार जैसे चमचे भी होते है ।

इज्जत के कारण पुलिस केस नहीं करते, समाचारपत्र में नाम फजीहत होने का डर लगता है ।

पेट की समस्या के लिए गरीब लडका कचरे के ढग में कुछ ढूँढता है, पास में मृत कुत्ता, कीडे यथार्थ वर्णन है । गरीबी आज भी वही की वही है । सरकार के पैसे ऊँचे लोग, अधिकारी खा जाते है । गरीब गरीब ही बनता जा रहा है । रिश्वत की बोलबाला बढती ही जा रही है । भूँड के बच्चे की लाईन की तरह बस्ती बढती जा रही है ।

मंदिर मेरा, तेरा का प्रश्न संघर्ष वही का वही है । चौकी

का यह संघर्ष उसकी ख्याति में चार चाँद लगा देता है । अखुसिंह के शब्दों में घर, खेत, मन्दिर सभी जगह झघडा । तीर्थस्थान में लोग पैदल भी जाते थे, साधु लोग चूँगी पीते थे । आदिवासी लोग धनुष-बाण का उपयोग करते थे । पूरे दिन मेहनत करके लोग थक जाते थे, रात में भजन करते थे । वीराभगत का आश्रम सत्संग के लिए विख्यात था । गूनाह करनेवाले भगत बन जाते थे, कभी कभी असली स्वरुप में वापस आ जाते थे ।

शहर का वातावरण डामर के रोड, सिमेन्ट क्रोन्किट की ऊँची-ऊँची इमारतें, झोंपडपट्टी में ज्यादा बस्ती, गलियाँ, बदबू भरे ऐसा वातावरण। अनाथाश्रम, अनाथाश्रम के बच्चे, हररोज भीख मांगने जाना, लोगों का तिरस्कार, बच्चे आश्रम में कैसे आते है ? कोई होस्पिटल के संडास में से, कोई फूटपाथ पर से, तो कोई भटकता हुआ आता था ।

जातियों में अंदर अंदर विग्रह होता था, बुनकर, चमार जैसी जातियाँ में भी आंतरविग्रह चलता ही रहता था ।

इस प्रकार देशकाल वातावरण की दृष्टि से चौकी सफल उपन्यास है । गाँव की स्थिति, (सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक) को उजागर करता है । गाँव रमणीय है या कूटनीति से भरा है, ये उपन्यास कहता है । उपन्यास में दलित मुहल्ले का वर्णन है इसीलिए दलितों की जीवनरीति का परिचय मिलता है ।

श्री भी.न.वणकर 'चौकी' के बारे में लिखते है- चौकी में ग्रामजीवन का आकर्षक चित्रण मिलता है । तलप्रदेश के रीतिरिवाज और सबंध सही रुप में आलेखित किया है । मानवसंबंधो और मानव स्वभाव में से खडी होती इन्सान की मर्यादाओं की क्रिया प्रक्रिया में दोनों कृतियों का अंत मिलता हुआ लगता है ।

इस प्रकार दोनों लघु उपन्यास में (दरार, चौकी) ग्रामजीवन की तल वास्तविकता का स्पर्श हुए बिना रहता नहीं, यह दोनों कृतियाँ कलात्मक है, एवं आस्वाद्य भी है ।[9]

चौकी उपन्यास का उद्देश्य महान है । छोटी छोटी बातों पर

ध्यान देकर उसका हल भी निर्देश किया है । साहित्यकार एक समाज सुधारक होता है । यथार्थ में से अच्छी बातें लेकर आदर्श की ओर उसकी गति होती है और श्री मंगलम् के दोनों उपन्यास सचमुच श्रेष्ठ है ।

उपन्यास में जीवन चित्रण होता है । सभी उपन्यासों में कुछ विशेष विचार और सिद्धांत स्वतः ही आ जाते है । श्री मंगलम् अनुभवी एवं विचारशील लेखक है । लोगो के भावों, विचारो, व्यवहारों आदि का भलीभाँति निरीक्षण कर उनके सबंध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया है । और उस ज्ञान की सहायता से नैतिक महत्त्व का ऐसा चित्र अंकित किया है कि उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । श्री मंगलम् कला जीवन के लिए मानते है ।

जातिविहीन समाज की कल्पना करते है । उच्चजातियों में भी आंतरविग्रह है, दलित जाति में भी आंतरविग्रह है, तो सवर्ण और दलित जाति के बीच संघर्ष है, उसकी तो कोई सीमा नही । भारत में जैसे झघडने के लिए दूसरा कोई प्रश्न ही नहीं होता । बस जाति के कारण ही लडिए और मरीए । मैं सवर्ण हूँ, तू दलित है यही सूत्र है और इसीलिए हम दूसरे देशो से पीछे जा रहे है । चौकी में यह संघर्ष अंत तक रहता है । लेखक का उद्देश्य है कि जाति के कारण झघडा नहीं होना चाहिए, सब ईश्वर की संतान है ।

चौकी के उद्देश्य निम्न लिखित है ।

(१) **दलितों में आंतरविग्रह**

दरार की तरह चौकी में भी घर फूटे घर जाय जैसी बात होती है । चौकी बंद करवा देते है तो मुहल्ले का एक व्यक्ति चौकीदार को कह देता है कि चौकी किसने बंद करवाई । दलितों की एक गंभीर समस्या है कि दलितों में भी अनेक जातियाँ है, जो एक दूसरे को अलग मानती है । उससे संघर्ष बढता है । उपन्यास में वीराभगत के शब्दो में कि ईडर प्रदेश में दो जाति के बीच बैर के बीज बो दिये है । सामाजिक एकता, में यह कृति विशेष महत्त्व रखती है ।

(२) **सामाजिक सुधार**

पटेल जाति में शादी बदला पद्धति के अनुसार होती है । एक पक्ष का लडका-लडकी दूसरे पक्ष के लडकी-लडके के साथ शादी करता है । यह पद्धति के कारण कई लडके-लडकियों को अच्छा घर वर नहीं मिलता, कोई शादी के बिना भी रह जाता है ।

ठाकुर में लडकियाँ की कमी होने के कारण कई लडके अविवाहित रहते है । यह समस्या आज के दस, पंद्रह साल बाद विराट स्वरुप धारण करेगी ।

शादी न होने के कारण बलात्कार, लडकियों को उठाकर ले जाने की समस्या भी खडी हो सकती है । समाज की व्यवस्था टूट जायेगी, लेखक यहाँ भविष्य की चिंता करते है और लडका-लडकी के प्रमाण पर संतुलन रखने के बारे में राय देते है ।

(३) गरीबी - गरीबी दिन-प्रतिदिन बढती जाती है । गरीब लडका कचरे के ढेर में खाना ढूँढता है.. !

(४) स्वच्छता - यह लडके के पास मृत कुत्ता है, कीडे, गंध, भूँड २० से २५ प्रतिशत लोग गंदकी के कारण बिमार होते है ।

(५) बढती जनसंख्या - भूँड के बच्चे की लाईन, के द्वारा लेखक बढती हुई जनसंख्या के बारे में सोचते है ।

(६) अनाथाश्रम में भ्रष्टाचार- अनाथ आश्रम में बच्चे कहाँ से, किस प्रकार आते है । कोई होस्पिटल के संडास, बाथरुम से तो कोई कम्पाउन्ड से कोई भटकता हुआ, तो कोई रास्ते में से मिलता है । बच्चे समाज में भीख माँगते है, ये पैसों से मेनेजर ऐश करता है, रखात रखता है ।

(७) **अनाथ बालकों के लिए समाज**

बच्चे भीख माँगने आते है, तो कोई देता है, कोई घर बंद कर देता है, कोई दूर से ही गालियाँ, अपशब्द, बोलता है, तो कोई कहता है, यहाँ जमा रखके गये है ? कोई अच्छा आदमी सच्चा ज्ञान भी देता है ।

(८) मंदिर के लिए झगड़ा

चौकी में गौतममुनि तेजवीर आश्रम हडप करना चाहते है । गादी के लिए झघडा होता है, यह समाचारपत्रों में भी देखते है । साधु बनकर भी स्वार्थ नहीं जाता ।

(९) साधु बनते है, लेकिन भ्रष्ट साधु क्यों ?

आजकल ये समस्या जोरों पर है, आज राजकोट तो कल अहमदाबाद तो तीसरे दीन कहीं ओर ये प्रश्न बढता जा रहा है, साधु समाज के अलंकार है, लेकिन भ्रष्ट साधु समाज का रोग (शत्रु) है । भ्रष्टा साधु का स्वीकार करना नहीं चाहिए, उनको शिक्षा करनी चाहिए ।

(१०) यौन समस्या

यौन समस्या को लेकर कई उपन्यास लिखे गये है, लेकिन श्री मंगलम् का कदम बिलकुल अलग है ।

अखुसिंह चोर है, व्याभिचारी पुरुष भी है । शांता के साथ स्कुल के प्रसंग रखकर फ्लेश बेक शैली में कहा है, वह आज भी है, शहर या गाँव सभी में प्रश्न है । शिक्षित हो या निरक्षर इन्सान है तो हाड-चाम का पिंड, सामान्य आदमी में जो है, वह शिक्षित, संस्कारी आदमी में भी होता है । पन्नालाल, प्रेमचन्द सभी ने यौन समस्या चित्रित की है । इन्सान की कसौटी ही उसमें होती है । श्री मंगलम् ने दोनों उपन्यास में आंचलिक वास्तविकता प्रकट की है । सभी जगह यौन प्रश्न भरपूर है । दोनों कृतियों में यौन जीवन साहजिक रुप में है ।

(११) गाँव की यथार्थ बातें

श्री मंगलम् ने गाँव का सच्चा चित्रण किया है । ठाकुर पटेल जाती के बीच झघडा होता है तो रघु लुहार जैसे चमचा बनते है । तो तिसरी जातिवाले ये दोनों जाति को देखकर हँसते है । खुश होते है ।

(१२) सार्वजनिक वस्तु का दुरुपयोग

उपन्यास में ये भी उभरकर आया है, सार्वजनिक मार्ग, स्कूल, सरकारी कार्यालय, रेल, बस का लोग बहुत ही दुरुपयोग करते है । रेल

का वर्णन उपन्यास में है कचरे का ढग, लाईट के वायर बाहर थे । भारत की यह परंपरा हो गई है और प्रामाणिकता का स्तर नीचे जा रहा है ।

(१३) झोंपडपट्टी बढ़ती जाती है ।

शहर में झोंपडपट्टी बढ़ती जा रही है, खाने की समस्या, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य की चिंता कोई करता नहीं है । निरक्षर होने के कारण गलत रिवाजों से ग्रस्त है । कचरे का ढेर उनके नजदीक होता है, टी.वी होता है, पर विज्ञापन की सुंदरियाँ, सिनेमा की सुंदरियाँ को देखकर अपनी दुर्गंध भूल जाते है । वो वहीं के वही रहते है, सुंदरियाँ आगे निकल जाती है । बूरी बातें पकड लेते है, अच्छी बातें छोड देते है । यही समस्या हमारे समाज की हो रही है । रोकनेवाला कोई नहीं है, नेता चुनाव में शराब पिलाकर बडे बडे प्रलोभन देकर वॉट ले जाते है, पाँच साल बाद आते है, तब तो युवान वृद्ध हो जाता है ? शिक्षित व्यक्ति अपना घर संभालकर बैठता है । कई लोग सुधार करना चाहते है, तो उसका कोई सुनता नहीं, क्योंकि उसकी ताकत चिंटी के बराबर, और दुर्गुणवालों की ताकत हाथी जैसी होती है । हमारी समाजनौका उसमे से निकल रही है । बस्ती बढती जा रही है, और झोंपडपट्टी में सबकुछ मिलता है, लेखक का यह व्यंग्य कितना चोटदार है ।

चौकी शिर्षक योग्य है, क्योंकि सारा उपन्यास चौकी के कारण ही आगे बढता है । विस्तार होता है, अंत भी चौकी के कारण होता है ।

उपन्यास का प्रारंभ ही चौकी से होता है । दलित मुहल्ले की चौकी अखुसिंह करता है । चौकी चालु रहे, इसीलिए चोरी भी वही करता है । मुहल्लेवाले चौकी बंद करते है, तो वह खेतो की चौकी करता है ।

खेतो की चौकी के समय शांति के साथ भाग जाता है, शांति मर जाती है तो वह भगत बन जाता है । भगत बनने के बाद उसे चौकी, स्त्रीयाँ याद आती है । उसका मन चौकी में घूमता है । गाँव में वापस आता है ।

मुहल्लेवाले चौकी की मनाई करते है, तो वह चोरी करने आता है, क्योंकि चोरी का डर पैदा हो जाए, और चौकी की हाँ कह दे ! पर उसका गणित यहाँ गलत साबित होता है, और वह पकडा जाता है । इस प्रकार सारी कथा चौकी के कारण ही चलती है, इसीलिए शिर्षक उपयुक्त है, यथार्थ है ।

"वास्तविकता प्रकट कराने में उन्होंने नये नये प्रसंग जो शिक्षित जगत की बाहर है, ऐसे प्रसंग चौकी में दिये है ।" देखिए-पृ.२२ पर की घटना ।

अखुसिंह डई के बीच की दो लाईन, बीच में चुपचाप घटना और यह पन्ने पर का प्रारंभ का संवाद ! सर्जकने गाँवो के गोलकर यहाँ प्रकट किया है । ग्रामसमाज के कई शिक्षित सर्जक गुजराती भाषा में लिखते है, किन्तु ग्रामसमाज की गेहराई तक जानेवाले कितने ? जानते है उसमें से घटना को प्रकट करनेवाले कितने ? क्योंकि उसके लिए भी हिम्मत, ताकत और बे-शर्म चाहिए । श्री मंगलम् ने ये तीनों शस्त्रो को बराबर म्यान करके यहाँ प्रस्तुत किया है । शाबाश, युवान शाबाश ! यश अपयश की परवा (चिंता) के बिना तुने गाँव को उनके पूरे स्वरुप में चित्रित किया है ।

यह सर्जक के पास सव्यसाची की ताकत है । एक तो वह दलित जाति के है । उन्होंने जाति का बहुत सूक्ष्म और गहन अध्ययन करके सर्जकता को सुशोभित किया है । दूसरी शक्ति अभ्यासबल की है । और उसमें उन्होंने कथा स्वरुप का अभ्यास करके कथा को आकृति दी है । यह लंबी-छोटी कहानी र.व.देसाई की झपट में आ गई हो तो (बढीया) उपन्यास ही रख देते ।

सर्जक के मौखिक कथन के मुताबिक यह कथा का उन्होंने समार्जन चार चार बार करके, बहुत ही पेक, सुशिष्ट Compact और Tight बनाई है । उनके कारण वह बहुत ही कलात्मक और रसात्मक है ।"

अंतिम दो दशक में हरिजन लेखक उनका दलित जीवन का विषय साहित्य में लेकर आ रहे है, इसीलिए विषय की दृष्टि से इस

प्रकार का साहित्य पाठक को नया जीवनप्रदेश का परिचय करवाता है ।

गांधीयुग में ग्रामजीवन साहित्य का विषय बनने लगा तब नवीन लगता था । आज नवीनता व्यापक बन गई, इसीलिए उसमें से नवीनता चली गई, और आज दलित साहित्य एक नवीन बन रहा है ।

श्री मफत ओझा चौकी के बारे में लिखते है “यह लघु उपन्यास में दलित पीडित वर्ग की चौकी के पीछे उच्चवर्ग की जोहुकमी, त्रास केन्द्र में रखकर, दलित वर्ग उनके सामने सतर्क होकर मोतीचाचा जैसे समर्थ चरित्र द्वारा लेखक ने दलित वर्ग को उफसाने का प्रयत्न कर दिया है, तो दूसरी और सवर्ण जाति के प्रतिनिधि अखुसिंह और साधु परिवार के छिद्रो के सामने ँऊगली निर्देश करके समाज, व्यक्ति और वृत्ति के बीच हुई दरारें दर्शाकर सर्जक अत में समाज दरारों से ग्रस्त है यह सूचित किया है । यह कथनकेन्द्र को साकार करने के लिए सर्जक सर्जन की जो प्रयुक्तियाँ प्रयोजन करता है उसमें उनकी सर्जक प्रतिभा को देख सकेगें । चौकी में आते संकेतात्मक वर्णन, बोली की विविधता और काव्यमय अभिव्यक्तियाँ अलग ही लगती है । हम सब चौकी के सर्जक को अभिनंदन देकर उनकी सर्जकता ज्यादा और ज्यादा आगे बढे ऐसी शुभेच्छा देते हैं”

-मफत ओझा

संदर्भ

१. दरार, प्रस्तावना - श्री महावीर चौहान

२. शब्दसृष्टि अंक-११, नवम्बर-२००३ (पृ.१५७)

३. दरार (अनुवादक) श्री हसमुख बारोट

४. दरार-प्रस्तावना .. ओमप्रकाश वाल्मिकी

५. वही प्रस्तावना, महावीर चौहान

६. दरार-प्रस्तावना, महावीरसिंह चौहान

७. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी- गुजराती उपन्यास - पृ.३२९

८. वही- पृ.३२१

९. शब्दसृष्टि- अंक-११, नवम्बर-०३, पृ.१८७

१०. गुजराती साहित्य में दलित कलम-पृ.२५६

११. दरार मुखपृष्ठ लेख

१२. हयाती अंक- ९,१० मार्च, जून -२०००, पृ.१२५

१३. शब्दसृष्टि- पृ.२१०, अंक-११, नवम्बर-२००३

१४. चौकी- पृ.७४

१५. वही- पृ.

१६. विदित -पृ.१४ (हरीश मंगलम्)

१७. शब्दसृष्टि- पृ.१५७ अंक -११, नवम्बर-२००३

१८. हयाती- पृ.१२७ (मार्च, जून-२०००, अंक-९,१०)

अध्याय-८

मोहन परमार व्यक्तित्व एव् कृतित्व

(प्रियतमा, नेलियु उपन्यास का विवेचन)

नाम : मोहन अंबालाल परमार

जन्म स्थल: भासरिया, ता.जि. महेसाना

व्यवसाय : नोटीफाईड एरिया ऑफिस

अलंग, प्रसाशनिक अधिकारी (हाल में निवृत्त)

अभ्यास : एम.ए., पीएच.डी.

प्राकाशित कृतियाँ :उपन्यास : (१) भेखड-१९८२ (२) विक्रिया-१९९० (३) कालग्रस्त-१९९० (४) प्राप्ति-१९९० (५) नेलियु-१९९२ (६) प्रियतमा-१९९५ (७) आस्थाफल-२००० (८) डायापशानी वाडी-२००२

कहानी संग्रह : (१) कोलाहल-१९८० (२) नकलंक-१९९१ (३) कुंभी-१९९६ (४) पोठ-२००१

एकांकी संग्रह : (१) बहिष्कार -२००२

विवेचन : (१) संवित्ति-१९८४ (हरीश मंगलम् के साथ)

(२) अणसार -१९८९ (३) वार्तारोहण- प्रकाश्य

संशोधन : (१) सुरेश जोषी पछीनी वार्तानां विशेष परिमाणो

संपादन : (१) गुजराती दलित वार्ता-१९८९ (हरीश मंगलम् के साथ)

(२) १९९४ नी श्रेष्ठ वार्ताओ-१९९५

(३) १९९५ नी श्रेष्ठ जार्ताओ-१९९६

(४) विश्वकक्षानी गुजराती वार्ताओ-१९९९ (अन्य के साथ)

(५) गुजराती दलित साहित्य : स्वाध्याय अने समीक्षा-२००१ (हरीश मंगलम् के साथ)

मेरी पचीस साल की कहानीयात्रा में मुझे कहानी लेखन भावन में जो मजा आई है, उसके वर्णन के लिए मेरे पास शब्द नहीं है । जीवन में शायद दूसरा सब छूट जायेगा, किन्तु कहानी की नजदीक से खिसना मुझे पसंद नहीं है । कहानी लेखन-भावन ने मुझे तृप्त किया है। अनुभव से इतना तो जाना है कि लेखक और भावक के बीच प्रत्यापन साधने का कोई साहित्य स्वरुप के पास ताकत हो तो वह कहानी के पास है ।

आज की कहानी में मुझे तो यह ताकत दिखती है । गुजराती कहानी की बदलाती हुई परिस्थिति को लक्ष्य में लेकर कहानीकार में किसी को जो रस हुआ हो वह विशेषताएँ और जिस कारण के मुताबिक किसी को रस न मिला हो वह मर्यादाएँ चून चूनकर कहानीकार नये रंगरुप में प्रकट करे तो ही लिखना सार्थक वरना....”

मोहन परमार के कहानी के बारे में यह विचार उनकी कहानियों में से पार होने के बाद किसी भी भावक को सच्चे और बिनंगत लगते है । मोहन परमार गुजराती साहित्य में कहानीकार, उपन्यासकार, नाट्यकार, विवेचक और संपादक के रुप में कई प्रतिभा से उल्लेखनीय और प्रथम पंक्ति के लेखक के रुप में उभर रहे है । मोहन परमार का विपुल सर्जन उनका द्योतक बन रहा है । दलित साहित्य में भी उनका प्रदान रहा है । 'प्रियतमा,' 'डाया पशानी वाडी', 'ा ेिलायाु' उपन्यास उनकी गवाही है । 'डाया पशानी वाडी' दलित उपन्यास के बारे में डॉ. पथिक परमार प्रस्तावना में लिखते हे कि ‘आज जब देश में सामाजिक, राजकीय, धार्मिक अन्याय ने हद कर दी है, जाहिर जीवन के मूल्य कम होते जाते है । व्यक्तिगत आचरण में प्रमाणिकता घटती जाती है । प्रांतवाद, भाषावाद, वर्गवाद, पक्षवाद, जातिवाद, धर्मवाद बढता जाता है । सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता के सामने पडकार खडे होते जाते है । पूरेदेश को अप्रिय ऐसा भ्रष्टाचार उभरता जाता है, तब केवल दलित साहित्य का नहि, किन्तु साहित्य मात्र के सिद्धहस्त सर्जक मोहन परमार उनकी कलम द्वारा 'डाया

पशानी वाडी जैसी सामाजिक समरसता की कथासृष्टि वाला उपन्यास लेकर आते है यह घटना नोंधपात्र है ।

प्रियतमा उपन्यास के बारे में श्री बाबू दावलपुरा का मंतव्य उपन्यास पढने के बाद सच्चे अर्थ में सही है । वे कहते है प्रियतमा दो खंड में रचित श्री मोहन परमार का उत्तर गुजरात के उनके प्रदेश आंचलिक बूनकर समाज के छठ्ठे-सातवें दशक के सामाजिक, पारिवारिक जीवन की विषमताएँ विपत्तियों और तत्कालिन परिस्थितिजन्य चरित्रगत मनःस्थितियों को स्पर्शता एक प्राणवान उपन्यास है । दलित उपन्यास के समूह में भिन्न लेखक का यह छठ्ठा उपन्यास ग्राम समाज की सवर्ण/पछात जाति के साथ दलित जाति के जनसमूह के संबंध-संघर्ष नहि किन्तु बूनकरों के अपने जाति-समाज के आंतरिक प्रश्न कुसंप के कारण होती विसंवादिता और पारिवारीक विडम्बनाओं का आलेखन कलाकीय सभानता से हुआ है । श्री. के.एम. मकवाना प्रियतमा उपन्यास को सामाजिक वास्तव के साथ मनुष्य के भीतर में प्रवेश कराते उपन्यास कहकर नवाजते है । श्री रमणलाल जोशी भी उपन्यास में हुई मनुष्य की वेदना के चित्रण और उनकी सच्चाई को नवाजते है । नेलियु उपन्यास अस्पृश्यता की समस्या पर आधारित उपन्यास है । इन्सान को लगता जाति का लेबल उनका लेवल बन जाता है । और यह बदलाते लेवल के कारण जातिवादी मान्यतावाले इन्सान के मनमें होती हलचल का वर्णन यह वर्णन में सही रुप में प्रकट हुआ है । तोरल के शब्द है- 'रंग उजला दीखा और मूँह थोडा सा रुपवान दिखा इसीलिए बनिया, ब्राह्मण होगा ऐसा मानकर यहाँ लाये, जो पहले से मालूम हो जाता कि ढेड है तो अस्पताल में ही भेज देते.... ।' पशाभाई भी कहते है क्या हुआ ? उसे मूँह से ही कह दो, और घर में से निकालो.. ढेड को घर में कैसे रखे ? संबंधो के ताने-बाने कडडभूस.. एक मात्र दलित जाति के कारण होना कितनी अच्छी तरह से निरुपित किया है, यहाँ । ये सिवा भेखड, विक्रिया, कालग्रस्त, प्राप्ति, आस्थाफल, उपन्यास भी गुजराती साहित्य में प्रसंशा के पात्र बने है । ये सब उपन्यास को साहित्य विवेचकों ने

अपने अपने तरीके से मूल्यांकन किया है । उसमें श्री रघुवीर चौधरी, विजय शास्त्री, मधुसूदन पारेख्र, भरत महेता, माय डीयर जयु, सतिष व्यास, हरीश मंगलम्, विनोद अध्वर्यु, चंद्रकान्त शाह, केसरभाई मकवाना, रमणलाल जोशी और बाबू दावलपुरा मुख्य है । छोटी कहानी का क्षेत्र मोहन परमार का एक विशिष्ट और फलदायी क्षेत्र है । छोटी कहानी में मोहन परमार का प्रदान उनको विशिष्ट रुप में उफसा देता है । उनके पुरस्कृत छोटी कहानी संग्रह में कोलाहल, नकलंक, कुंभी और पोठ है उनकी कहानियों में कहानी का किस तरीके से घाट हुआ है, वह ध्यानपात्र है । कहानी किस तरीके से उफसाती है उसका दर्शन उनकी कहानियाँ है ।

श्री जोसेफ मेकवान कहते है कि डॉ. मोहनभाई, सुरेश जोषी के बाद की कहानी के विशेष परिमाणो को संशोधनार्थ दर्शाये और तात्पर्य अलग दर्शाये । इसके बाद केहना हो तो सरलता से कह सकते है कि सुरेश जोषी की कहानी विभावना के बाद १९८०-८५ के बाद कहानी के जो स्थिति अंतर बदलाये उनमें मोहन परमार का योगदान श्रेष्ठ है । और उसमें स्वयं की मौलिक सूज एवम् होंशियारी का विनियोग करके स्थूल का सूक्ष्म में रुपांतर करके सामान्य विषय को कथावस्तु बनाकर कला निर्मित, मन को भाये ऐसा घाट बना देते है । संक्षेप में ऐसा भी कह सकते हैं । मोहन परमार घटनाह्रास या घटनालोप नहीं, किन्तु तलजीवन के धडकते वातावरण के सूक्ष्म संचालन द्वारा मूर्तिमंत करते है । और उन्में भी सरलीकरण द्वारा प्रभावक कहानीक्षण बनाने में उनका कला कौशल्य दिख्राई देता है । (हयाती- २००२, पेज.१६) यह सभी कहानी संग्रह की दलित कहानी भी ध्यानाकर्षक और दलित लेख्रक के रुप में मोहन परमार को कहानीकार के रुप में ऊँचाई देते है । उनकी कई दलित कहानियों का उल्लेख्र और उनके बारे में अन्य दलित विवेचक- भावक के विचार देख्रना पडे, तो ही मोहन परमार में रहे एक दलित कहानीकार को पा सके, इसका एहसास हो सके । यह चार संग्रह की तिहत्तर (७३) जितनी ग्रंथस्थ कहानियों में नकलंक, आंधु, कोह, वेठिया, थली, तेतर, लूगडां, हरियालु, कलण, छींडु, भागोल, रढ आदि दलित कहानी गिन सकते है । उनकी नकलंक कहानी

को कई विवेचकों ने प्रसंशा की है । श्री हरीश मंगलम् यह कहानी के बारे में कहते है कि नकलंक कहानी के केन्द्र में मिल का बंद होना और उसके कारण कहानी के नायक कांति का बेरोजगार होना है । अपने बाप-दादाओं का धंधा बूनने का है । किन्तु शहर में जाने के बाद फिर से बूनने में उसका मन नहीं लगता । ग्रामजीवन में से शहरी जीवन में जाने के बाद इन्सान जिस तरह से बदल जाता है और शहर में बेरोजगारी का भोग बनने के बाद अपने मूल गाँव में वापस आना पडता है, उसका निरुपण लेखकने कांति के पात्र की मनःस्थिति द्वारा व्यक्तकिया है । और 'भीरु तो डगे पण जेना मन ना डगे रे' पानबाई की पंक्ति के साथ कहानी का TurigPoit आता है । कांति वादे के मुताबिक दीवा के पास नहीं जाता, और सुबह में गाम में बात बहती हुई कि सेंघाने मुखी की बहु की इज्जत लूँटी... यहाँ कहानी पूर्ण होती है । विस्मय के साथ क्रांति नकलंक रहता है । (गुजराती दलित वार्ता)

मोहन परमार के अन्य दलित कहानी संग्रह भी उल्लेखनीय और ध्यानाकर्षक है । विवेचनक्षेत्र में भी मोहन परमार ने 'अणसार' लेखसंग्रह दिया है ।

'बहिष्कार' नामक एकांकी संग्रह देकर नाट्यलेखक के रुप में प्रकट हुए है । पूर्णतः स्टेज लायकवाले यह एकांकी है ।

इस प्रकार मोहन परमार के सर्जनविशेष के उपर एक या कई मंतव्यो (विचारों) की आवाज मोहन परमार को अच्छे सर्जक के रुप में गिनते है । साहित्य साधना में प्रवृत्त इस सर्जक के पास से अभी दलित साहित्य की उत्तम रचनाएँ मिलती रहेगी ।

प्रियतमा उपन्यास विवेचन :

प्रियतमा उपन्यास में निम्नलिखित पात्र है ।

मनहर - नायक

जसुमती -नायिका

सूरज- मनहर की माँ

मंगल - मनहर का छोटा भाई

करशनभाई - मनहर का बडा भाई

गणपत - मनहर का मित्र

फूसाभाई - मनहर के पिता मुहल्ले के अन्य पात्र - चंदु, खना, वीहा

‘प्रियतमा’ दो भाग में विभाजित श्री मोहन परमार का छठ्ठा उपन्यास है । उनके प्रदेश उत्तर गुजरात को रुबरु कर देता है । सामाजिक-धार्मिक, पारिवारिक जीवन की विषमताओं, विपदाओं के पात्र की मानसिक स्थितियों को उभारने में सक्षम उपन्यास है । सभी उपन्यासो में से यह अलग उपन्यास है । गाँवो में बसते बूनकर समाज के आंतरिक संघर्ष को निरुपित करने का यथार्थवादी प्रयत्न यहाँ सफल हुआ है । यह उपन्यास में दलित जाति का सवर्ण जाति के साथ संघर्ष नहीं है, बल्कि अपनी ही जाति का आंतरिक संघर्ष चरमसीमा पर है ।

प्रियतमा दो भाग में विभाजित है । प्रथम भाग में आणु (गौना) और खोलाभरणुं (गोदभराई) तथा दूसरे भाग में झियाणु (प्रथम बचचे के जन्म के बाद औरत के माता-पिता द्वारा दी जानेवाली भेट का प्रसंग) निरुपित है ।

गौना

‘मनहर’ की पत्नी का गौना जल्दी से करते नहीं है, इसलिए मनहर का मन बूनने में लगता नहीं है । आर्थिक प्रश्न के कारण कॉलेज में भी नहीं जा सका । बूनेगा नहीं तो खाना क्या ? इसलिए बूनने का काम करना ही पडता है । गौना करने से पहले दामाद ससुराल में नहीं जा सकता था, किन्तु मनहर जाता है ।

गौना होता है, मनहर की माता सूरज, मंगल, बबी बहन और मुहल्ले के लोग जसुमती से खुश होते है । जसुमती- मनहर के बीच अनन्य प्रेम है । जसुमती मनहर को एक साहब के रुप में देखना चाहती है, और पढने के लिए विवश करती है ।

गोद भराई

जसुमती को चार गौने होते है, फिर भी बच्चे न होने पर उसके सास-ससुर चिंता करते है कि उन्के साथ आई औरतों को तो बच्चे है, उसे कब होगा ? मनहर के पिताजी बिमार होते है, महेसाना बडे

अस्तपाल में भर्ती करवाते है, फिर भी कोई फर्क नहीं होता अतः घर वापस ले आते है, शरीर कमजोर (अशक्त) हो जाता है थोडे ही दिनो में उनकी मृत्यु होती है । मुहल्ला करुणमय हो जाता है, औरतें छाती पिटती है, शोकगीत गाती है, जसुमती जो सगर्भा (प्रेगनेट) है उसे दूसरी औरते व्यंग्य करके छाती पिटवाती है तो थोडी देर के लिए मूर्छित हो जाती है ? जसुमती मृत्यु के बाद का जातिभोजन प्रथा बंद करवाती है। मनहर और करशन दोनो भाई के बीच भी कहासूनी हो जाती है । जातिवाले कुछ दिन बातें करते है, फिर सब शांत हो जाता है ।

जसुमती को बच्चा गिर जाता है (कच्चे बालक की मृत्यु) मनहर टूट जाता है । आर्थिक चिंता चारो ओर से घेर लेती है । ५०० रुपये मित्र से लिये थे, पिता की मृत्यु के बाद खर्च हुआ, जसुमती की दवाई का खर्च, दुकान के पैसे सब मिलकर सारा कर्जा हो चुका था । बूनने का काम बंद था, इसीलिए मानसिक रुप से बेचैन हो जाता है । दो मुहल्ले के बीच जन्माष्टमी के त्योहार पर आंतरिक संघर्ष होता है, दोनो मुहल्ले में अलग अलग गरबा होता है । रामापीर की ग्यारहवी भी संघर्ष में चली जाती है । जसुमती का गोदभराई का प्रसंग शांति से पूरा होता है और वह अपने मायके में जाती है ।

नौरात्री, दिवाली हर बार उत्साह से मनाते थे । दिवाली के दिन चौक में गरबा रखते थे, किन्तु इस बार दोनों मुहल्ले में संघर्ष था, फिर भी गरबा ले जाते है । दो-तीन युवान झघडा करते है । मनहर को सिर में चोट लगने से थोडी देर के लिए मूर्छित हो जाता है । दोनों मुहल्ले के बीच बैर बढता है । मनहर अपनी बहन का झियाणु करता है । कर्जा बढता जा रहा है । बूनने का काम ज्यादा करके कर्जा पूरा करने का प्रयत्न करता है ।

जसुमती को पुत्री होती है, जिसकी मृत्यु हो जाती है । जसुमती को घर ले आते है । मंगल मेट्रीक में नापास होता है, मनहर उसकी पिटाई करता है, अतः कहीं भाग जाता है । सूरज मनहर को खरी खोटी

सूनाती है, जब मंगल वापस आता है, तब सबको शांति होती है । जसुमती मनहर को आगे पढने को कहती है ।

झियाणुं (झियाणुं अर्थात् प्रथम बच्चे के जन्म के बाद और के माता-पिता द्वारा दी जानेवाली भेंट)

झियाणु के लिए सूरज जसुमती को व्यंग्यबाण कहती फिरती है । मनहर यह सूनकर क्रोधित होता है । जसुमती को भी कहता है, तू क्यों ये सब सूनती है ! सूरज को मनहर खरीखोटी सूनाता है, तो जसुमती कहती है, मुझे जिन्दा देखना चाहते है तो उनको कुछ नहीं केहना ।

मंगल कोई काम करता नहीं है, मेट्रीक में फैल होकर घूमता फिरता है । इसीलिए मनहर उसकी पिटाई करता है । सूरज चिल्लाकर मुहल्लेवालों को इकट्टा कर देती है । मंगल और सूरज करशनभाई के घर चले जाते है । सूरज जसुमती को बदनाम करती है, ये आई तब से ही मनहर हमको शांति से रहने नहीं देता ।

जसुमती-मनहर सूरज को ले आने के लिए जाते है, किन्तु वे नही लौटते । अंत में दोनों घर छोड़कर शहर में भागजाते है, क्योंकि फिर तो (सूरज) और मंगल वापस आ जायेंगे बाद में हम भी वापस आ जायेंगे ।

दोनों कलोल जा पहूँचते है । जसुमती के जिजाजी मिल में काम करते है, वे छे महिने के बाद मनहर को काम पे रखवाने का तय करते है, तब तक कारखाने में काम करने का फैंसला सही रहता है । शुरुआत में मनहर खुश होकर काम करता है । शहर से गाँव आते लोग देखकर चकमा खानेवाला मनहर थोडे ही दिनों में महेनत से टूट जाता है। साहब साहब करना पडता है । घर पे तो छाँव में शांति से काम, किसी की रोकटोक नहीं, कारखाने मे तो मजदूरी जब कि यह तो धंधा कहलवाता है, उसका ख्याल आता है ।

नटवरलाल को (जसुमती के जिजाजी) मालूम होता है कि मनहर घर छोड़कर आया है । सूरज विरह में विलाप करती है, मनहर का

इंतजार करती है । मनहर भी घर लौटने तैयार हो जाता है । शहर का वातावरण, गंदकीवाला संडास पसंद नहीं है, घर जाता है ।

पहले तो सूरज खरी खोटी सूनाती है, बाद में मनहर को आश्रय देती है । अपने हथकरधे को देखकर खुश हो जाता है । थोडे ही दिनों में सूरज ऊब जाती है । जसुमती से झियाणु चाहती है । झघडा करके घर में ही अलग खाना पकाती है । दो बार बच्चा गिर जाता है, तीसरी बार लडकी का जन्म होता है, पर पाँच ही दिन में मर जाती है, अतः झियाणा कैसे हो सकता है ! फिर भी सूरज खलनायिका का पात्र पूर्णरुप से अदा करती है ।

जाति में कन्या देखने का मना होने पर भी मंगल की सगाई कन्या देखकर ही जसुमती करवाती है । शादी में धोनी-कूर्ता छोडकर मंगल को शूट पहनाकर नियम तोड़ती है । जाति का दंड या मूँह नीचा रखने का बडे लोगो का डर थोडे ही दिनो में टूट जाता है । डिस्को, हींच, गरबा के साथ आनंद से शादी हो जाती है ।

मंगल की शादी के बाद सूरजने वचन दिया था, कि मनहर कॉलेज में जायेगा, किन्तु पैसा नहीं देती । मंगल पैसे देकर मनहर को कॉलेज प्रवेश में मदद करता है । सुबह में कॉलेज, शाम को बूनाई का काम, जसुमती भी बुनाई का काम करती है, घर शांति से चलता है । कुबेर के घर पे चोरी होती है तो पुलिस का डर या माताजी की मनौती के कारण चीजवस्तुएँ वापस आ जाती है । मुहल्ले की चौकी युवान करते है । मनहर पढता है और अच्छे प्रतिशत से ग्रेज्युएट होता है, सब खुश होते है ।

मंगल की पत्नी को पुत्र होता है, झियाणु ले आती है, फिर तो सूरज व्यंग्यबाण जसुमती को सुनाती है । मनहर जी.पी.एस.सी. कि परीक्षा में पास होकर विक्रय अधिकारी हो जाता है ।

भरुच जाते समय हथकरधे का प्रेम उभर आता है, जसुमति प्रेमिका थी, किन्तु हथकरधे में बैठता तो सब भूल जाता है । ये मेरी पत्नी है, तो ये मेरी कौन ?....

जसुमती झियाणु नहीं दे सकती, किन्तु अपने पति को अधिकारी के रुप में देखकर समाज में सबसे बढिया झियाणा देती है ।

श्री बाबू दावलपुरा ने प्रियतमा के आंतरिक संघर्ष के बारे में कहा है कि गड्डेवाला और टीलेवाला मोहल्ला के दो भागो में बसे बुनकरों के बीच के प्रासंगिक घर्षण के कारण जन्माष्टमी, नवरात्रि, दीपावली जैसे त्योंहारो को मनाने के प्रसंगो में इन दो दलो के बीच हुए दंगल के परिणाम स्वरुप उपजी बैर-द्वैष की घटनाओं से पार्श्वभूमिका पर मनहर-जसुमती के सुसंवादित दाम्पत्य के कथाचित्र में भी यथार्थवादी दृष्टिकोण चित्रित किया गया है । दो दलों में बंटकर लडते-झगडते बिरादरी के लोगो और संयुक्त परिवार में अपनी ही बात मनवाने की बुजुर्गो की जिद के कारण मलिन, दूषित वातावरण में इन संवेदनशील युगल की यातनाएँ उतरोत्तर बढ जाती है । गौना, गोद भराई, शादी जैसे शुभ अवसरों या मृत्यु जैसे प्रसंगो में पुराने समय से चली आ रही रुढियो-रिवाजो की लीक की तरह जडतापूर्वक चिपके रहकर, आर्थिक रुप से मुसीबत उठाकर मायके में पहला बच्चा होने के बाद, ससुराल आते समय लडकी को माता-पिता की ओर से मिलनेवाली भेंट जैसे सामाजिक रिवाज को कायम रखने की बुजुर्गो की जडमनोवृत्ति के कारण, पारिवारिक जीवन में असमंजस, बेचैनी, विवशता व प्रेमिका-पत्नी जसुमती की असाधारण बेचैनी आदि का चित्रण लेखक ने सशक्त ढंग से किया है ।[1]

अपने ही परिवार में भी द्वन्द्ध है, पति-पत्नी को शांति से रहने नहीं देते, दहेज की समस्या उभरकर आई है । शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा आदि प्रसंगो में औरत के माता-पिता कपडे, गहने और कई चीजवस्तुएँ देते है । ये समाज का कलंक है । जसुमती के द्वारा लेखक ने इन प्रश्नो को बराबर उफसाया है । सवर्ण समाज की तरह दलित समाज में भी यह समस्या आज भी विद्यमान है ।

प्रियतमा उपन्यास में जसुमती का पात्र मुख्य है । मनहर जो जसुमती का पति है, सदैव अपनी पत्नी को सुखी देखना चाहता है । सूरज जो अडचने पैदा करने में, जसुमती को व्यंग्य बाण सुनाने में माहिर

है । मंगल मनहर का छोटा भाई है जो पढने में रस नहीं रखता, मेट्रिक में फैल होता है, फिर भी काम-धंधा नहीं करता जिसकी वजह से मनहर उसकी पिटाई करता है । उसके कारण माँ-बेटे के बीच संघर्ष, घर छोडने की नौबत आती है, फिर भी एक दिन अपनी बचत में से पैसे देकर मनहर को कॉलेज प्रवेश में मदद करता है ।

करशनभाई, झवेर, पुष्पा कभी कभी इस दंपति को सहारा देते है, तो कभी डाँटते भी है । गणपत मित्र के सुख दु:ख में साथ देता है, आर्थिक, मानसिक रुप से सदैव मनहर को साथ देकर एक आदर्श मित्र की भूमिका अदा करता है । परिवार को आर्थिक रुप से बचाने के हरसंभव प्रयास करनेवाले मनहर के पिताजी, पुरुष के साथ देहसंबंध रखनेवाला खना, उनसे एक कदम आगे बढे ऐसी उसकी बहु जीवत, स्त्रीयों के साथ संबंध रखनेवाला चंदू, जिसका पति सदैव शंका ही करता है ऐसी रुरकी, वीहा जो उपन्यास का नारदमुनि ही है, चमत्कार में श्रद्धा रखनेवाले बूनकर लोग आपस आपस में लडकर अपनी युवानी का पर्चा देनेवाले शराबी पुरुष जसुमती को छाती पीटने के लिए विवश करती हुई रुढिवादी, इर्षालु स्त्रीयाँ आदि पात्रसृष्टि प्रियतमा उपन्यास में विद्यमान है ।

प्रियतमा के पात्र समाज में चलते फिरते इन्सान है, इसीलिए हमारे मन पर ज्यादा असर करते है । एक एक पात्र में जो गुण है, दोष है उसका यथार्थवादी चित्रण देखने को मिलता है । ये पात्र कभी हँसते है तो कभी रोते है, कभी क्रोधित होते है तो कभी जान देने के लिए तैयार रहते है । उत्तर गुजरात के दलित मुहल्ले के बूनकर लोग सचमुच उपन्यास में घूमते फिरते दिखाई देते है ।

जसुमती का पात्र नायिका के रुप में उभर आया है, वह हर संभव मनहर की छाँव बनकर रहना चाहती है ।श्री बाबू दावलपुराने जसुमती के बारे में लिखा है- अल्पशिक्षित जसुमती ऐसी उदार, परिवार वत्सल, सहनशील भावुक, विवेक, सम्पन्न स्त्री है, कि उसकी स्वस्थ गहरी सूझ और धैर्य के कारण सांसारिक जीवन की जटिल समस्याएँ भी हल हो जाती । मनहर विषम परिस्थितियों में ग्रेज्युएट होकर विक्रयकर अधिकारी

के स्थान तक पहूँच सका, इसमें मनहर के पुरुषार्थ के अतिरिक्त जसुमती का आधार और प्रोत्साहन निर्णायक भूमिका अदा करता है । अपने प्रियतम पति को बेरिस्टर के रुप में देखने की आकांक्षा रखनेवाली इस जसुमती का संकल्प परिपूर्ण हुआ, इस प्रसंग पर उसकी स्नेहभरी आँखों में सागर छलक रहा था । प्रियजन से बिछुडने के अवसर पर जसुमती व्यग्र व्याकुल बन जाती है । करधे को सुना कर नौकरी के लिए दूसरे स्थान की ओर प्रयाण के अवसर पर लगभग टूट जानेवाला मनहर वस्तुतः उर्मिमांध से पीड़ित है ।

जसुमती नि:संतान होने की वेदना को भीतर ही दबाकर प्रियतम पति को गुड की डलियाँ देकर सगुन करने से भी न चुकनेवाली गौरवशील गृहिणी है । लेखक की चरित्र निर्माण शक्ति का उत्तम उदाहरण जसुमती के चरित्र विधान में संयोजित है ।

आदर्श पत्नी के रुप में, ससुर सास की देखरेख रखनेवाली, सामाजिक समस्या का हल निकालनेवाली जसुमती सचमुच दलित नारी के गौरव को बढाती है ।

अपने ससुर की देखभाल करती है, एक पुत्री से ज्यादा ध्यान रखती है और ससुर की दुआएँ ही उसके भविष्य को बदल देती है । मनौती के सिवा डॉक्टर पर ध्यान देने का महत्त्व सबको समजाती है । मनुष्य की सेवा को ही प्रभु की सेवा मानती है ।

मनहर बेचैन होता है, तब अडचने दुर करती है । अच्छी सलाह देने में जसुमती माहिर है, चाहे ससुर को अस्पताल ले जाना हो, मृत्यु के बाद जाति भोजन न करने का फैसला हो, मंगल की सगाई, या शादी में शूट पेहनाना हो, चाहे कोई भी प्रसंग हो जसुमती की सलाह मनहर उसके घरवालों के लिए महत्त्व की बनी रहती है । सचमुच आदर्श गृहिणी, पतिव्रता, व्यवहार कुशल, विनम्र बडो के साथ बडी छोटों के साथ छोटी, सबकी प्रिय जसुमती प्रियतमा उपन्यास की नायिका है जो परंपरागत गलत रुढियो को तोडना चाहती है ।

दलित समाज में स्त्री का स्थान महत्त्वपूर्ण है, उनके शब्दो को मान देते है, घर में, समाज में, स्त्री का स्थान महत्त्वपूर्ण है । दूसरे समाज में, साहित्य में मैंने ऐसा स्त्री का स्थान आज तक नहीं देखा ।

जसुमती अपनी ननद, देवर, जेठ, जिठानी, एवम् मुहल्ले के अन्य व्यक्तियों के साथ भी अच्छा व्यवहार रखती है । घर में शांति कैसे बनी रहे, उसका ध्यान रखती है, इसीलिए तो मनहर सूरज को या मंगल को एक शब्द कहे तो भी मनहर को कहती है-

मंगलभाई को अब कुछ बोलना नहीं (पृ.-८,भाग-२)

मुझे जिंदा देखना चाहते हो तो उनका मूँहमत खूलवाना (पृ.४, भाग-२)

सूरज जब करशनभाई के घर चली जाती है, तो दो-तीन बार बुलाने जाती है, सचमुच जसुमती बेचैन हो जाती है । मनहर शहर जाता है तो भी, शहर से घर वापस लौटना हो तो भी साथ में ही रहती है ।

जसुमती सामाजिक बातो में भी होंशियार है । उसका पता मंगल की सगाई, शादी में हो जाता है । उसके कारण ही गाँव मे, समाज में मनहर का घर आगे बढता है । स्वच्छता भी उसके घर की देखने लायक है । वह शांत है उतनी ही क्रोधित भी है । चंदु जब रुखी के पीछे घूमता है, तो रणचंडी बनकर उसकी हैवानियत को पडकारती है, तब से चंदु स्त्रीयों के साथ ऐसा व्यवहार करना भूल जाता है ।

मनहर को पढाने में आर्थिक, मानसिक रुप से सहायता करती है, घर का काम निपटाकर बुनने का काम करती है, ये पत्नी नहीं बल्कि अर्धागना है, जो पति की प्रगति में हरसंभव प्रयास करती है । और ये चरितार्थ करती है कि हर सफल महान पुरुष के पीछे स्त्री का हाथ होता है । मनहर भी कहता है- उसने मुझे प्रोत्साहन न दिया होता तो मैं कुछ नहीं बन सकता । (पृ.२८७)

मनहर प्रियतमा उपन्यास का नायक है । एक अच्छे इन्सान

में छोटे-मोटे अवगुण होते है, उसका सही दस्तावेज प्रियतमा में मनहर द्वारा प्रकट होता है । वह बुनकर दलित जाति का है । कपडे बूनने का काम करता है । मेट्रिक में कम प्रतिशत होने के कारण नौकरी मिल नहीं पाती, आर्थिक परिस्थिति कमजोर होने के कारण कॉलेज में नहीं जा सकता और अपने व्यवसाय में रत होता है ।

शादी हो चुकी है, गौना नहीं हुआ था, इसीलिए मानसिक रुप से पत्नी (जसुमती) की ओर झुका हुआ है । काम में मन नहीं लगता, इसीलिए माँ-बेटे के बीच संघर्ष होता रहता है । वह जमीन पर जसुमती लिखता है तो सूरज कहती है-

बस तू लिखता ही रहेगा... तुम्हें तो दूसरा कुछ दिखाई नहीं देता । (पृ.३ भाग-१)

मनहर माँ के साथ अच्छा व्यवहार रखना चाहता है, लेकिन उसकी माँ का स्वभाव ही झगडालु है, क्रोध में मनहर को डाँटती है, लेकिन थोडी देर बाद पछतावा करती है । सूरज जसुमती के बीच झगडा चालु ही रहता है, बीच में मनहर पिसाता जाता है । माँ जब बडे भाई (करशन) के घर चली जाती है तो स्वयं शहर चला जाता है और माँ अपने घर वापस आती है तब वह भी गाँव वापस आ जाता है । छोटे भाई को पढाकर साहब के रुप में देखना चाहता है, किन्तु वह नही पढता तो पिटाई करता है । उसकी शादी, गौना, गोदभराई का प्रसंग अच्छी तरह से करता है । पिता के साथ मनहर एक आदर्श पुत्र बना रहता है । उसके अधूरे काम पूर्ण करता है । पत्नी के साथ मनहर एक आदर्श पति बनकर रहता है, पत्नी को अर्धांगिनी समजकर उसके विचारों को समर्थन देता है । पत्नी के कारण तो सब जगह अपना स्थान बना चुका है । (पृ.१५५, भाग-२)

पत्नी को बच्चे नहीं होते तो भी निराश नहीं होता, डॉक्टर के पास जाकर उसका हल निकालना चाहता है । पत्नी के कारण ही वह कॉलेज कर सकता है, और अच्छे पद पर बिराजमान होता है ।

हरकरधे के प्रति ज्याद प्यार है । नौकरी जाने वक्त उर्मिमांध हो जाता है । हथकरधे को छोडना नहीं चाहता था, दुनिया में, सबसे ज्यादा प्यार जसुमती को करता था, किन्तु हथकरधे में बैठता तो सब भूल जाता ।

ये मेरी बहु तो यह मेरी कौन ? (हथकरधे को)

गणपत जैसा मित्र उसे मिला जो, सुख दु:ख में साथ देता है । समाज में मनहर कम ध्यान देता था, किन्तु जब से दो मुहल्ले के बीच संघर्ष होता है, तब महत्त्व की भूमिका अदा करता है । मार खाने की नौबत भी आ जाती है । पंच में भी रस लेता है, तो सबको मनहर की उपस्थिति का ख्याल रखना पडता है ।

फिर भी जसुमती के आगे वह फिक्का लगता है, बी.ए. फर्स्टक्लास व्यक्ति का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं दिखाई देता ।

सूरज का पात्र उपन्यास में ज्यादा उभरकर आया है, जो आज की असली सास की भूमिका अदा करती है । सचमुच उपन्यास की खलनायिका है । मनहर, जसुमती को व्यंग्यबाण सुनाकर मानसिक रुप से तोड देती है, मनहर पढता चाहता है तो भी आर्थिक रुप से मदद नहीं करती । अपनी गलती होने पर भी ऐसा व्यवहार करती है, कि जसुमती का ही दोष है । मुहल्ले में शरीफ बनकर रहती है । फिर भी कई लोग उसको अच्छी तरह से पेहचानते है । फिर भी एक इन्सान है, मनहर, जसुमती के साथ क्रोध में बोलती है, उसका पछतावा करती है । शहर में चले जाने पर विलाप करती है । मनहर को नौकरी मिलती है तो खुश हो जाती है ।

इस प्रकार उपन्यास की पात्रसृष्टि वैविध्य से भरपूर है- श्री रमणलाल जोशी ने प्रियतमा की पात्रसृष्टि के बारे में लिखा है-इ.एम. फोर्स्टर ने कहा है कि सर्जक की शक्ति का नॉप भी वह जो (People Words) प्रस्तुत करता है, उसमें रहा है । प्रियतमा में भी ऐसे शब्दसमूह है । सभी पात्र का अपना अलग निराला व्यक्तित्व है, मनहर,

गणपत, नटवरलाल, मंगल, सूरजबा, सीता, बबी, कुबेर, मनोरकाका, चंदु, खना सब निराले चित्रित हुए है । पात्रो के व्यक्तित्व बंधे हुए है, अलग अलग परिस्थिति में उनकी बोली, व्यवहार से उनका व्यक्तित्व प्रकट होता है ।

प्रियतमा उपन्यास के संवाद चोटदार है । सूरज के संवाद तीखे है, मनहर के संवाद कभी तीखे तो कभी मीठे है । जबकि जसुमती के संवाद सबको प्रिय लगे ऐसे है । मनहर के पिता के संवाद तो दिल में स्पर्श करे ऐसे है । संवाद का महत्त्व उपन्यास में कम है, फिर भी प्रियतमा के कुछ संवाद तो याद रह जाये ऐसे है ।

- (मेट्रिक पास व्यक्ति को नौकरी मिलती नहीं है, आगे पढने का कहते है, उसका संवाद (पृ.९,भाग-१)

- मनहर (पत्र) लिखा है, हम कहाँ अनपढ है । मेट्रिक पास है !

गणपत - पास होकर क्या किया ? नौकरी तो मिलती नहीं है, कॉलेज में जाना था न !

- अस्पताल में सफाई का महत्त्व समझाती हुई- जसुमती,
  बाजरे की रोटी तोडती हुई सूरज को देखकर

- जसुमती -पूरे दिन अस्पताल में थे, तो हाथ धोये की नहीं ?

- सूरज- तू ज्यादा बोलती है !

-जसुमती- ज्यादा कैसे ! अस्पताल में सफाई नहीं रखेगे तो बिमार हो जायेगे । (पृ.१७१, भाग-१)

नटवरलाल और मनहर के बीच मिल में काम करने के बारे में संवाद (पृ.७४,भाग-२)

- मनहर- आपकी मिल में मजदूर की जरुरत होगी ?

- नटवरलाल- अभी तो बदलीवाले वापस जाते है !

- मनहर- लागवग जैसा कुछ होगा ?

- नटवरलाल -तुम्हें किसको मिल में लगाना है ?

मनहर - मैं आना चाहता हूँ ।

- नटवरलाल - तुम काम नहीं कर सकोगे । मिल से अच्छा बूनने में है ।
- मनहर -बूनने में अब मन नहीं लगता ।
- नटवरलाल - किन्तु आपको अभी नहीं तो एक दिन तो नौकरी मिलेगी न !
- मनहर- किसको मालुम नौकरी मिलेगी ।

(घूँघट के प्रति विरोध और पढाई के प्रति प्रेम-रुखी और जसुमती के बीच संवाद (पृ.२४०, भाग-२)

रुखी - ये घूँघट में तो त्रस्त हो गई (पसीना हो रहा है)

(जसुमती ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की) इसलिए

रुखी - आज क्यों उदास दिखाई देते है ?

जसुमती - उदास न रहूँ तो क्या करुं ?

रुखी - फिर एकाएक क्या हुआ ?

जसुमती - हमें तो कहाँ शांति है ! तुम्हारे जेठ को आगे पढने के लिए माँ (सास) मना करते है ।

डॉ. श्री गीरीशकुमार एन.रोहितने अपने संशोधनग्रंथ में प्रियतमा के संवाद के बारे में लिखा है ।

प्रियतमा में मोहन परमार ने दलित बुनकर जाति के अन्तविरोंध, रुढियाँ, आर्थिक, सामाजिक स्थिति नारीकी दशा-दिशा को बडे रोचक व अर्थबोधवाले संवादो में अभिव्यक्त किया है । पढना चाहने के बावजूद भी आर्थिक अभाव के चलते न पढ पानेवाला नायक मनहर कहता है.. माँ बीन-बीनकर तो मर गया । अब तो पीछा छोड । मुझे बीनने की लालसा में पढने नहीं दिया । पृ.१४

तो बूढी औरत सूरज अपनी व्यथा का यथार्थ बयान कर कहती है - इस के पिता तो उसे पढालिखाकर बडा साहब बनाना चाहते थे ।

मनहर के पिता की असाध्य बिमारी पर घर की टूट रही आर्थिक स्थिति पर लेखक का बडा अर्थसभर स्वगत है कि थोडे दिन इस तरह बीते कौन जाने बूढे के बिगडे स्वास्थ्य के साथ घर की स्थिति भी बिगड गयी हो ऐसा लगता था । (पृ.१७९)

इधर दो-बार मनहर की पत्नी जसुमती का पेट गिर जाता है, जिसके चलते सामाजिक रिवाज के चलते गोदभरनी, व झियाणा के रुप में मिलनेवाले सोना-चांदी के गहने, कपडे व बर्तन न मिलने की आशा पर उसकी सास का कथन है कि -मूहल्ले की हर औरतें गाडियाँ भर-भरकर झियाणा ले आई, तुम तो वह भी कहाँ से (पृ.३०८)

इन संवादो से औरत ही औरत का कर रही शोषण खुला पड जाता है ।[1]

श्री रमणलाल जोशी ने प्रियतमा की भाषाशैली के बारे में कहा है- यह कथा में लेखक ने उत्तर गुजरात और बुनकर समाज का निरुपण किया, इसलिए स्वाभाविक रुप से ही उत्तर गुजरात की बोली का उपयोग उन्होने किया है । यह बोली पन्नालाल पटेल जैसे साहित्य सर्जकों की कृतियो में भी है । चुनीलाल मडीया ने भी अपनी कृतियों में सौराष्ट्र बोली का उपयोग किया है । पुष्कर चंदरवाकर ने भी भालकांठा की बोली का उपयोग किया है । किन्तु प्रियतमा में उसका जो साहजिक और क्षमतापूर्व का विनियोग हमें देखने को मिलता है । उनसे पात्रमानस और वातावरण प्रगट होने में मददरुप दिखाई देती है । मुझे आंतरिक रुप से तो उसकी कई पंक्तियाँ (लढण, ल्हेंका) मेरे भूतकाल को स्पर्श कर गई... समग्र(सारी) किशोरावस्था जीवंत हो चूकी । सामाजिक परिवर्तन में आज गाँवो की स्थिति बदल गई है । अब गाँव कविता और साहित्य में ही रहेंगे क्या ऐसा प्रश्न होता है । फिर भी मनुष्य समाज के सौदर्य को पुनर्जीवित कराने में ऐसी कृतियाँ मददरुप होगी ।[1]

डॉ.श्री गिरीशकुमार रोहितने प्रियतमा की भाषा के बारे में लिखा है- प्रियतमा उपन्यास में मोहन परमारने उत्तर गुजरात के बुनकर समाज में बोली जानेवाली बोली का सार्थक प्रयोग किया है । आधोपांत उपन्यास आंचलिक बोली के सहज प्रयोग से आस्वाद्य बनी रही है । बुनकर लोगों के पेशे से जुडे, शब्दो का भी समुचित प्रयोग हुआ है । लेखक की भाषा इतनी सहज और सरल है कि वातावरण व परिवेश को जीवंत बना देती है । दलपत चौहान का कहना है कि लेखक का भाषा कर्म सुरेख

है । यहाँ समग्र उपन्यास में पात्रो की बोलचाल की भाषा में उत्तर गुजरात के कलोल-आंबलियासन के आसपास के गाँवो में प्रयुक्त बुनकर समाज की लोकबोली का उपयोग किया गया है । जिसमें उनके कहावतें- मुहावरें, व्यंग्य और श्लेष सुंदर ढंग से पकडे हुए है । बुनकरी साधनों का भाषा में प्रयोग कर गुजराती भाषा के शब्दकोश बृहद करने में लेखक ने पुरुषार्थ किया है ।

पात्रों की मनःस्थितियों, आंचलिक परिवेश, व्यथा, पीडा, उग्रता, करुणा, आनंद, वगैरह भावो को भाषा के माध्यम से सफलतापूर्वक ढंग से चित्रित किया गया है ।

प्रियतमा उपन्यास की भाषा पात्रों के अनुरुप है । सूरज की भाषा व्यंग्यात्मक है, सास का प्रतिनिधित्व करती है ऐसी ही उसकी भाषा है । जसुमती और मनहर के बीच जिस भाषा का प्रयोग हुआ है उनसे सफल दाम्पत्यजीवन का पता लग जाता है । वैसे तो संकेतो से भी लेखक ने ज्यादा काम लिया है जैसे-

जसुमती कुछ समझे उससे पहले गाल पर एक चुंबन करके उसको छोड दिया... तब घर के दरवाजे और खिडकी में से आती हुई हवा स्तब्ध हो गई (पृ.४२, भाग-१)

श्री मोहन परमार ने तत्कालीन समाज के दृष्टिकोण से भाषा का प्रयोग किया है । उसमें लोगभोग्य सरलता एवं सरसता है । रचनाशैली सजीव एवं प्रभावोत्पादक है । भाषा में गूढता कम सरलता है ।

प्रियतमा वर्णनात्मक शैली का एवं पात्रानुरुप, प्रसंगानुकूल, सरल, बोलचाल की मुहावरेदार भाषा से समृद्ध उपन्यास है ।

प्रियतमा उपन्यास की शुरुआत में ही लेखक ने कथानायक मनहर की मनःस्थिति का दृश्य -स्पर्श बिम्ब के सहारे बडा मार्मिक वर्णन किया है ।

मनहर नीम के पेड के नीचे खटिया पर सो गया । ऐसा करते करते नीम की एक लकडी लेकर वह जमीन पर उलटी- सुलटी

तकीरें खींचने लगा । जमीन पर बनाई रेखाओं में वह कुछ खोजने लगा । एक रेखाने उसकी नजर को बंदी बना लिया । उसने नीम की लकडी को रेखा की और लम्बाकर फिर जमीं पर जसुमती लिख दिया । (पृ.१, भाग-१)

प्रतीक

प्रियतमा में परंपरा से हटकर लेखक ने एक पूरे परिवेश तथा नौकरी को प्रियतमा के रुप में उजागर किया है । एक सामान्य अर्थ से हटकर विशेष अर्थ के रुप में यहाँ प्रयोग हुआ है । प्रियतमा- जसुमती है, उसके सिवा हथकरघे को भी वह प्रियतमा ही मानता है, ग्रामपरिवेश भी प्रियतम है ।[9]

प्रतीकात्मक भाषा

प्रियतमा में नायक मनहर तथा नायिका जसुमती द्वारा अपने पिता की मृत्यु पर प्रेत भोज का विरोध, छोटे-भाई के विवाह पर लडकी देखने जाना, शादी में धोती की जगह पेन्ट-शर्ट पहनावा लाना वगैरह घटनाएँ भी प्रतिकात्मक है, जो दलितो में आ रहे परिवर्तन की ओर संकेत करती है । इसके अलावा उपन्यास में दलित बुनकर दो हिस्सो में विभाजित है, एक टीलेवाले तथा दूसरे गड्डेवाले । टीलेवाले नौकरी के चलते विकास की ओर अग्रसर है, जबकि गड्डेवाले आज भी आर्थिक विपन्नता, सामाजिक विषमता, अंधश्रद्धा, रुढियाँ व जन्मजात संस्कारो के गड्डे में डूबे हुए है । इस प्रकार दोंनो शब्द गड्डवाले और टीलेवाले भी प्रतीकात्मक ही है ।[10]

इस उपन्यास में स्थानीय लोकबोली के लाक्षणिक रुढ शब्द प्रयोग स्वरुप कथा गद्य के स्वरुप में गूंथे गए है । करधे के व्यवसाय की परिभाषा और स्वानुभवमूलक जानकारी का भी उसमें यथास्थान विनियोग हुआ है ।

प्रतीकात्मक परिवेश निर्माण के लिए सक्षम बिम्बों का विनियोग करने की सक्षमता सर्जक में हो तो पात्र प्रसंग का चित्रण कैसा सांकेतिक और कलात्मक बन सकता है, उसके उल्लेखनीय दृष्टांत तिराड और प्रियतमा जैसे दलित उपन्यासों में प्राप्त होते है । इन उपन्यासों को देखने पर पता चलता है कि लेखकों की गति सही दिशा में है ।[11]

संगीतात्मक शब्द

खटापट.... खटापट, खडखडाट, फटाफट, धडक..धडक,

तड...तड.., चररचट, टपोटप, हड्डूडू, झटपट, चकमक

मुहावरें

मन चगडोले. चडयु छअ प्.५२- सात जनमना वायरा वायो ता-९९

धूल ज काढी नाँखअ -१४५- जुटु वाजु वगाडअ छअ -२४६

झलझलिया आववां- १८ (भाग-२)- आशा पर पानी फेरना -५८

दुःखनां वादल उमटी पड्यां- १०५, आभ ना तारा देखाडु-११६

पडता पर पाटु मारअ छअ- १९४- पेटमां बिलाडां बोलतां हतां-२३७

कहावतें

जेवा साथे तेवा- ३७- धीरजनां फल मीठां-५२

राम राखअ इनअ कुणअ चाखअ -१४४-बोले तेनां बोर वेचाय-१६९

भूख तो भेंस जेटली लागअ छअ-५- पत्थर पर पानी-५

चोर कोटवालनअ दंडे एवु थयुं -१२- धरमीना घेर धाड पडी- ६५

संग ऐवा रंग -८९- खाटले ज मोटी खोट छनअ- ९७

चमत्कार त्यां नमस्कार- ११६ - पाणी पहेलां पाल बांधवी- १९८

वो दिन कहाँ के मियाँ के पाँव में जूती- २८५

बेनमून वाक्य

लिपाई में हुई दरारें काँपने लगी- ६५

अंधेरा आँगन में इधर-उधर होता था-६९

खटिया में कोई चमत्कार हुआ और खडखडाट हास्य पूरे घर में बिखर गया-११३

हालक-डोलक थतो प्रकाश कोक कोकवार वाडाना पथरा पर पडी जतो हतो-१२८

दवाखानानी बारीयो पर अंधकार बाझवा लाग्यो हतो -१६८

वास आखो रडतो हतो-१८५

आंगणु ँऊचुं नीचुं थतुं जाणे ँऊहकार भरतुं हतुं- १८५

राते मंडपनी नीचे पेट्रोमेक्ष भरावीने फलियु झगारा मारतुं हतुं-२३६

विरह की वेदना में तडपते दो आत्मा के मिलन जितनी शांति अंधेरे में अस्तव्यस्त होती थी-७३

मनहर नी कोणीनो स्पर्श ऐने शाता आपतो हतो-२३३

अंग्रेजी शब्द

- इन्टरव्यू, फोर्म, मेट्रिक, केवन्डर, डॉक्टर, ओपरेशन, ब्लीडिंग, डी.डी.टी.दवा, बी.ए., एम.ए.चान्स, ग्रेज्युएट।

अलंकार

उपमा आकाश वरसीने शांत थई जाय तेम मनहर खानाथी वछुटीने स्थिर पड्यो रह्यो -७२

जाणे बधे अंधारां उतरी आव्यां होय तेवुं ऐने लाग्युं-२९९

ससलानी जेम फफडती जसुमतीनी हालत

वांकीचूकी डालीयो में ये गूंचवाई गई हती जाणे-३२

होलानी माफक फफडी रह्यो हतो-८४

बोर जेवडां आसुडां-२४५

ए हलवीफूल जेवी जणाती हती-२५२

रुपक

(मनहर) ठंडो हिम थई गयो-२०५

एना गाल पर गुलाबी सुरखी आवीने बेसी गई -६७

उदासीनी रेखाओ दोटमदोट करती हती-१८१

अतिशयोक्ति

मारु चालअ तो तनअ शणगार हजाइनअ कबाटमां मूची राखुं-१२१

जाणे दुनिया एना कदमोमां आलोटती होय तेम-२८५

रस

हास्य - गणपत की बहु का हाथ जसुमती ने पकडा था, छूडवाने केलिए कई प्रयत्न किया, ताकात की इसीलिए जसुमतीने धीरे से हाथ छोड दिया-गणपत की बहु लिपाई में उलट सूलट हो गई सब हँसने लगे, जसुमती घूँघट में खडखडाट हँसने लगी । (पृ.१०३)

ब्राह्मण गोदभराई के प्रसंग पर भीखाभाई के बदले भीचाभाई बोलता है (जीभ की खामी के कारण) ये सुनकर युवान हँसते है सारे लोग हंसते है- २४२

करुण- फूसाचाचा (मनहर के पिता) की मृत्यु होने पर सारा मुहल्ला कल्पांत करता है । सूरज का विलाप-१८६

हाये.....हाये... हाय...हाय.... करुण रस से भरपूर वातावरण

मनहर की बेटी की मृत्यु का प्रसंग-२९९

वीर - चीया दियोरनी हेंमत छअ कअ मनअ मारी जोय ! वाढी नाखुं !

टीलेवाले लोगो का मुहल्ले में पालखी फिराना और गड्डुवाले लोगो के बारे में बोलना ये सब मनहर के उत्तेजित करता है । २३१

जो मुहल्लेवालो के बीच संघर्ष-२८०

श्रृंगार- (रोटी बनाते वक्त) करघे में बैठे बैठे मनहर जसुमती के मूँह को देखता है, और खुश हो जाता है-६

गीत : (भजन) सुदामाजी दुवारिकामां आव्या रे,

दर्शन कीधां नाथनां रे- पृ.१२५

शेरी वलावीन सेज करुं,

पीर ढोलिया ढाल्या रे... पृ.२२२

गोदभराई के प्रसंग पर गीत

मोटाना मामेरां आयं चालो जोवा जइए रे,

मामेरामां साखड सुखड शुं जोवा जइए रे,

मामेरामां छगन नाचे चालो जोवा जइए रे...२४०

शादी का गीत - (हल्दी लगाने के समय पर)

पीठी पीठी चोलो रे पीठी राणी-२२१

वक्रोक्ति

मनअ हवअ गोमडा बोमडामां ना फावअ ।

न आपणे तो हवअ शेरमां ज रेवाना । आंय फेशन बेशन मां रेवानुं, पिक्चर जोवानां अनअ बजारमां फरवानुं-९३

श्री मोहन परमारने नये नये प्रतिक व उपमानों को चुना है, जो उनकी अनुभूति को अभिव्यक्ति करने में काफी सक्षम है ।

इस प्रकार प्रियतमा उपन्यास रचनात्मकता एवं शिल्प की दृष्टि से समृद्ध है । रस की दृष्टि से सभी रस में कृति सफर करवाती है । कहावतें और मुहावरों से भी भरपूर है । शादी-मृत्यु, फिल्मीगीत, और भजन का प्रयोग श्रेयकर है । अलंकार और बेनमून वाक्य से कृति में ओर निखार आया है । सचमुच प्रियतमा समृद्ध व कलात्मक दलित उपन्यास है ।

प्रियतमा उपन्यास में उत्तर गुजरात का दलित मुहल्ला जीवंत होता है । दलितों की रहन-सहन, रीतिरिवाज, जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई (खोलाभरणुं) मृत्यु, आदि सामाजिक रिवाज, घर का वातावरण, पैसे से जुडे व्यवसाय का दृश्य, हथकरधा और उनसे जूडी सभी क्रियाएँ व्यापार, सामाजिक दावपेच का चित्र स्पष्ट किया है । लेखक की निरीक्षण शक्ति अजीब है । छोटी -छोटी बातें पर भी ध्यान दिया है ।

दलितो में आंतरिक संघर्ष को रुबरु करना प्रियतमा उपन्यास की विशेषता है । अंधश्रद्धा, पंच, गलत परम्पराएँ, शिक्षा का महत्त्व, स्त्री का समाज में स्थान प्रकट करना उपन्यास की विशेषता है । दलितों (बूनकर) का व्यवसाय का वर्णन यथार्थ है । सामाजिक व्यवहार पूरा करने में व्यथित आम आदमी की हालत प्रकट करने में यह उपन्यास सक्षम है । दलित मुहल्ला, घर, सामाजिक प्रसंग, त्योहार का यथार्थ निरुपण प्रियतमा में मिलता है । दलित समाज की वास्तविक स्थिति प्रियतमा मे चित्रित की है । दलित समाज की आंतरिक कमजोरियों का निरुपण यथार्थ है ।

श्री रमणलाल जोशी ने लिखा है - लेखक ने जो परिवेश लिया है- ग्रामसमाज के प्रश्न, विशेषत: गरीबी- उनके रीतिरिवाज, तरह तरह के काम का अनुभव, उनका जीवन के प्रति अभिगम, संजोगो (परिस्थिति) का सामना करने में घूंटाता उनका जीवन सत्व और सबसे विशेष प्रकट होता है ये तो मनुष्य है, यह मनुष्य में आदर्श भावनाएँ, समन्वयवृत्ति, हररोज के जीवन में प्रकट होती जीवन की समज, समाधान मानस तो

है, कई सदगुण तो है किन्तु मनुष्य में केवल सद्तत्त्व ही नहीं है, उनमें असद् (असत्य) भी है, लेखक ने सर्जक की तटस्थता से मनुष्य के दोनों रंग प्रकट किये है ।

दलितों में शादी करने के बाद एक दो साल बाद गौना करते है, तब तक पति-पत्नी दोनों विरह में झुरते है । रामायण, महाभारत, सरस्वतीचंद्र की सब प्रसंशा करते है, जिसमें हवाई किल्ले जैसी बातें है । जिसके पात्र राजा, महाराजा, दैवीपात्र है, ऐसी कृतियों में से ज्यादा जिंदगी जीने का तरीका नहीं मिलता ! सामान्य व्यक्ति के लिए प्रियतमा जैसी कृतियों जुगनु से भी बढकर है । पत्नी, पति, देवर, सास, ससुर, भाई, भाभी के चरित्र समजने लायक (प्रेरणारुप) है । आदर्श और यथार्थ के पूजक है ।

दलित लोग पूरे दिन बुनाई का काम करने के बाद कभी कभी रात में भजन भी करते है । पुरुष बुनाई का काम, और बूढे व्यापार करते है, स्त्रीयाँ बुनाई काम के सहयोगी काम, रसोई, रसोई पकाने के इन्धन लाने का काम करती है । त्योहार पर सभी खुश दिखाई देते है, गरबा रखते है । मेले में जाते है, खाना अच्छा बनाकर खाते है । शहर में गये लोग गाँव में रोफ जमाने अच्छे कपडे, चीजवस्तुएँ ले आते है । शराब पीकर तूफान करते है । शांति भंग करते है ।

शादी में अच्छे कपडे पहनते है, लडका नयी पद्धति के मुताबिक लडकी स्वयं चूनता है, कपडे इच्छा के अनुसार पहनता है । बूढे लोग निंदा करते है । भाई अपनी बहन को भानजे की शादी में (मामेरा) आर्थिक रुप से भेंट, कपडे, गहने आदि देते है । ढोल के साथ स्त्रीयाँ अनेक प्रकार के डान्स करती है, आनंद व्यक्त करने की भी एक मौसम होती है, सारे दिन काम करते है, आर्थिक रुप से बेचैन होने के बावजूद शादी, त्योहार पर खुश दिखाई देते है । दिवार पर गणेश स्थापना, शादी की तिथि, दिनांक, वार लिखते है ।

शादी, मृत्यु जैसे प्रसंग के कारण आर्थिक कर्जा हो जाता है। जिसमें सारी जिन्दगी घिसटते दिखाई देते है । मनहर की स्थिति गोदान

के होरी जैसी है, सारी जिन्दगी कमाने के बाद कर्जा बढता ही जाता है, फर्क इतना है की मनहर पढा लिखा है, और व्यवस्थित आर्थिक आयोजन करता है । पत्नी भी आयोजन में साथ देती है, इसीलिए होरी जितना लाचार नहीं बन पाता ।

(पात्र वर्णन) मुहल्ले में चंदु की छाप ठीक नहीं थी । चंदु माथाभारे व्यक्ति था, शराब पीता, मुहल्ले में तूफान करता, चूपके से लडकीयाँ को हैरान करता था, सभी जगह बदनाम हो चुका था । मुहल्ले के अच्छे लोग उससे डरते थे । (पृ.९१)

सुबह में बूढे लोग मूँह धोकर सूर्य को नमस्कार करते है, प्रभु का जोर से नाम बोलते है, दीप जलाते है (पृ.९५)

अस्पताल में नर्स मरीज का कम ख्याल रखती है, देखा-अनदेखा करती है- (पृ.१७७)

बूढे व्यक्ति की मृत्यु होने पर उनके पुत्र, पुत्रवधु, बच्चे रोते है, मुहल्ला का दृश्य करुणमय बन जाता है । कोई सांत्वना देते है, तो कोई संबंधीओ को बुलाने जाते है, मुहल्ले के लोग इकट्ठे होकर स्मशान की विधिपूर्ण करते है, स्त्रीयाँ छाती पिटती है, शोकगीत गाती है, छाती पिटने के कारण स्त्रीयाँ बिमा भी हो जाती है, नजदीकी संबंधवाली स्त्रीयाँ यदि नहीं पीटती तो व्यंग्यबाण सुनाकर भी ये काम करवाती है ।(पृ.१८७)

मुहल्ले के लोग मृत्यु हुई हो उसके घर खाना लेकर जाते है । खाना खिलाते है । बाद में मृत्यु के पश्चात क्रिया करने का तय करते है, बारहवे दिन सारी जाति को खाना खिलाना पडता है, कर्जा करना पडता है, समाज में स्थान रखने के लिए पैसे नहीं होते तो, कर्जा करके भी काम करना पडता है । मनहर-जसुमती जैसे व्यक्ति उसका विरोध भी करते है, थोडे दिन घुसपुस बातें होती है, बाद में सब शांत हो जाता है ।

गोदभराई का प्रसंग स्त्री के लिए महत्त्वपूर्ण होता है, उस दिन स्त्री के संबंधी सोना, चांदी के गहने, कपडे, बरतन आदि भेंट देते है । स्त्री के घर पर ये प्रसंग होता है । स्त्री के पति, सास, ससुर,

जेठ, देवर, ननद आदि भी खुश होकर ज्यादा भेंट आये ऐसी आशा रखते है । मेहमानो को अच्छा खाना बनाकर खिलाते है । प्रसूति के लिए स्त्री को उनके माता-पिता के घर भेजते है । बच्चा होने के बाद अपने घर ले आते है, तब भी बच्चे के कपडे, गहने आदि देते है । कभी कभी ये प्रसंग में झघडा भी होता है । सूरज जैसी सास जसुमती को व्यंग्यबाण सूनाती है ।

शहर में बाजार में फिरना, पिक्चर देखना, होटेल में खाना, तीन कपडे पहनकर घूमना सभी को अच्छा लगता है । शहर में गंदकीवाले संडास होते है, गाँवो खूली जगह में संडास जाते है ।

स्त्रीयाँ सोने की चेईन, बुट्टी, लोकीट, अंगूठी, चाँदी का कमरपट्टा (केडकंदोरा), झांझर (नृपुर) पहनती है ।

पाँच पचीस गाँव का जाति के मुताबिक पंच होता है , जो शादी, गौना, गोदभराई, खोलाभरणु, मृत्यु जैसे प्रसंगो के नियम बनाकर देखरेख रखता है । नियम तोडनेवाले को दंड करता है ।

प्रियतमा उपन्यास का विषय गृहसंसार, परिवार, समाज है, इसीलिए उपन्यास में सामाजिकता उभरकर आई है । काम करना और साथ साथ पढना कितना दुष्कर कार्य है, ये मनहर के द्वारा पेश किया है । कॉलेज में अच्छे प्रतिशत ले आना, नौकरी प्राप्त करने में कितनी कठीनाईयों का अनुभव करना पड़ता है, और साथ साथ समाज में स्थान भी रखना पडता है । सामाजिक प्रसंग व्यक्ति की कमर तोड देता है, चाटामारकर भी मूँह लाल रखना पड़ता है ।

सास बहु का झघडा उपन्यास का एक और विषय है, बहु चाहे जितनी भी अच्छी हो, लेकिन सास अपनी भूमिका निभाकर ही रहती है । काम चाहे जितना भी करे, फिर भी दोष निकालना सास का धर्म है । ज्यादा दहेज लाये गोदभराई या खोलाभरणु जैसे प्रसंग जल्दी से आये और ज्यादा गहने लाये ऐसी अपेक्षा रखती है ।

लग्नेतर संबंध उपन्यास में दिखाये है । चंदु, खना की बहू जैसे पात्र समाज में विद्यमान है । चंदु का चरित्र उपन्यास की विशेषता

है, जसुमती ही उसका सामना करती है, वरना लडकियों, स्त्रीयों को पटाना ही उसका काम है ।

खना का पात्र गुजराती साहित्य में सजातीय संबंध के कारण अमर रहेगा, आजकल- (२००६-०७) समाचारपत्र में भी इसकी हवा चल रही है । बडे शहर में सजातीय शादी होने लगी है, या संबंध मान्य हो रहे है । पाश्चात्य हवा अब भारत में देखने को मिलती है ।

प्रियतमा उपन्यास का उद्देश्य उत्तर गुजरात के दलितों का समाजवर्णन, गृहसंसार व्यक्त करना है । आंतरिक संघर्ष, एक ही जाति के दो समुदाय के बीच संघर्ष व्यक्त करने का उद्देश्य भी है । दलित नारी का समाज में कैसा स्थान है, ये भी व्यक्त होता है, एक नारी अपने पति को कैसे स्थान पर पहूँचाती है, ये भी देखने लायक है, उसमें मनहर का गुण भी है, फिर भी स्त्री किसी से कम नहीं है, ये दिखाना उपन्यास का उद्देश्य है । सामाजिक व्यवहारों में जसुमती का स्थान सचमुच महत्त्व का है, चाहे कोई भी प्रसंग हो या, विवाद जसुमती उसका हल निकालती है, और ये तो मनहर, करशन भी उसका स्वीकार करते है । (पृ.२६१)

गुजरात के दलित गृहसंसार और उनकी समस्याओं को प्रस्तुत करना प्रियतमा का विषय है । विविध प्रश्नों को बडी सूक्ष्मता से वर्णित किया है । मनहर का पात्र कभी-कभी कठपुतली जैसा लगता है । फिर भी आंतरिक संघर्ष में वीरनायक की भूमिका अदा करता है ।

लेखक समाजसुधारक बनना नहीं चाहते, फिर भी दलित समाज के नियम जो गलत है, उनको तोडने का प्रयत्न किया है, अच्छी बातों की प्रसंशा की है, कमीयों की आलोचना की है । विभाजित दलित समाज व्यवस्था का सही चित्र प्रस्तुत किया है । और अपने पाठकों के हृदय में इस व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश की भावना उत्पन्न करने में सक्षम है । उद्देश्य निम्नलिखित भी है ।

(१) सामाजिक प्रसंग और दलित इन्सान

शादी, गौना, गोदभराई, झियाणु, मृत्यु जैसे सामाजिक प्रसंगो में दलित लोग क्या करते है, क्या खाना बनाते है, अपने संबंधीयों की

भूमिका कैसे होती है, प्रसंग में कितना खर्चा होता है, ये पैसे कहाँ से, किस प्रकार से इकट्ठे करते है, ये व्यक्त करने का उद्देश्य है । पंच के नियम कैसे होते है, आधुनिक स्त्री पुरुष नियमों के बारे में कैसे विचार व्यक्त करते है, नियम तोडने पर लोग कैसी बाते करते है, ये व्यक्त करने का भी उद्देश्य है ।

ये प्रसंग पूर्ण करने में दलित इन्सान कर्जा में डूबा रहता हे, दूसरा कोई विकास नहीं होता, बुजुर्ग अपने नियम पर तटस्थ रहते है ।

मृत्यु के बाद प्रेतभोजन के बारे में भी बुजुर्ग कर्जा करने के लिए तेयार है, सब मजदुरी का छोटा धंधा ही करते है, फिर भी समाज में अपना नाम बदनाम न हो ये ख्याल रखते है । जसुमती-मनहर प्रेतभोजन नहीं करते और नियम का विरोध करके नई परम्परा करते है ।

शिक्षा का महत्व

उपन्यास में शिक्षा का महत्त्व ज्यादा दिखाया है । मनहर स्वयं पढता है, गरीबी है फिर भी अपने भाई को पढाना चाहता है, वह नापास होता है, तो स्वयं कॉलेज शुरु करता है, और ग्रेज्युएट होकर अच्छा पद प्राप्त करता है । मनोर जैसे बूढे लोग भी अपने बेटे को लश्कर में भेजना चाहते है । (पृ.२०७) शिक्षा से मनुष्य में बौद्धिक विकास होता है, कोई मुर्ख नहीं बना सकता, अंधविश्वास से दूर रहता है । समाज, घर, देश को ँऊच ा े स्थान पर ले जाने के लिए शिक्षा का महत्तव जरुरी है । प्रियतमा में सचमुच शिक्षा पर बल दिया है ।

अपने व्यवसाय पर गर्व

मनहर कपडा बूनने का धंधा करता है, उससे खुश है, क्योंकि नौकरी में साहब साहब करना पडता है, छूट्टी मिल नहीं पाती, शारीरिक श्रम भी करना पडता है, जबकि बूनने में ऐसा कुछ नहीं, अपनी इच्छा के अनुसार छाँव में बैठकर काम करना होता है, किसी की कोई हरकत नहीं ।

शहर और गाँव का भेद

शहर में गंदकी होती है, छोटे छोटे कमरोमें रहना पडता है । कई बिमारीयों का भोग बनना पडता है । तीन कपडों से टाईट होकर व्यसन, पिक्चर, होटेल का खर्च व्यक्ति को कम उम्र में बूढापे का जन्म देता है । फैक्टरीयों में इन्सान इन्सान को चूसता है, शोषक-शोषित का जन्म होता है । गाँव में स्वतंत्र धंधा होता है, बुनकर लोग बूनने का काम करते है, कोई मजदूरी करता है । वातावरण स्वच्छ होता है । बिमारी कम होती है । लेखक ने छूआछूत भेद को वर्णित नहीं किया है, संघर्ष भी नहीं है ।

स्त्री का महत्त्व

उपन्यास में स्त्री का महत्त्व वर्णित किया है, अच्छी स्त्री अपने पति को समाज में महत्त्व का स्थान दे सकती है । सामाजिक व्यवहार में, प्रसंग में दलित स्त्री अपनी भूमिका अदा कर सकती है । पति का खिलौना नहीं, किन्तु जीवनसाथी बनकर रहती है । झियाणा नहीं दे सकती, किन्तु अपने पति को अच्छे पद पर बिठाती है । जब पति पढता है, तब स्वयं बूनने का काम करती है । व्यंग्यबाण सुनती है, फिर भी सास को एक शब्द नहीं कहती और घर में अच्छा वातावरण बना रहे ऐसी ही कामना करती है । इस प्रकार जसुमती के द्वारा प्रियतमा में स्त्री का महत्त्व स्थापित किया है । अपने ससुर की सेवा करती है, मर्यादा का पालन करती है । संयुक्त परिवार में रहना चाहती है । जिस समाज में स्त्री का स्थान महत्त्वपूर्ण होगा वह समाज सचमुच आगे बढेगा ।

शराब निषेध

उपन्यास में शराब निषेध का प्रश्न उठाया है । जसुमती के जीजाजी शराब पीने जाते है, तो जसुमती और उसके जेठ उसका विरोध करते है ।

जनसंख्या में वृद्धि

परिवार में कम बच्चे हो तो परिवार सुखी रहता है, अच्छा आरोग्य, शिक्षा, खाना, सभी प्राप्त करने के लिए बच्चे कम होने चाहिए,

उपन्यास में पृ.१४६ पर यह ध्यान केन्द्रित किया है ।

आंतरिक संघर्ष

सामाजिक प्रसंग, त्यौहार में दलित आंतरिक संघर्ष देखने में आता है । जन्माष्टमी, रामापीर की ग्यारहवी, दिवाली, नौरात्री के त्योहार में दो मुहल्लेवाले झघडा करते है, शराब पीते है, एकदूसरे को मरने-मारने तैयार होते है, सहकार संप की भावना कम है, किन्तु उपन्यास के अंत में संप दिखाकर सुखांत में कृति विहरती है ।

बेरोजगार की समस्या भी उपन्यास में है, मिल में नौकरी नही मिल पाती, इसीलिए मनहर फैक्टरी में काम करने जाता है, वहाँ शारीरिक श्रम कम पैसो में करवाते है ।

‘प्रियतमा’ शिर्षक उपन्यास में प्रतिक बनकर आया है । प्रियतमा जसुमती है जो मनहर की पत्नी है, मनहर उसे चाहता है, दोनों एकदूसरे के लिए मर-मिटते है, जसुमती अपने पति के लिए सास के व्यंग्यबाण सुतनी है, फिर भी मनहर को एक शब्द नहीं कहती, पति को पढाने के लिए स्वयं बूनने का काम करती है । इसीलिए प्रियतमा शिर्षक योग्य है ।

हथकरधे को भी इतना ही प्यार मनहर करता है । उपन्यास में कई वाक्य ऐसे है, जिसमें हरकरधे के प्रति प्रेम प्रकट होता है, जैसे की वह भी प्रियतमा ही है । भरुच जाते वक्त तो सचमुच हथकरधे को बथ भर लेता है ।

श्री बाबू दावलपुरा ने शिर्षक के बारे में लिखा है- कथानक मनहर की करधे के प्रति आत्यांतिक कोटि की आसक्ति का संकेत शीर्षक प्रियतमा में मिलता है । भरुच जाने के लिए घर से निकलते समय मनहर की दृष्टि पूरे मोहल्ले की ओर घूम गई, नीम, तुलसी, खूंटियाँ, दिवार पर टंगी भगवान की तस्वीरें, दीपक से दीवार पर लगे काले धब्बे, खूंटी में लटकाया हुआ डिब्बा सब कुछ उसकी आँखों में समाया और जैसे उसके पैर रुक गए, करधे की ओर उसका आकर्षण बढता गया । मुझे मंगल की भाभी से भी अधिक इन सबकी माया क्यों घेरती है ?

ऐस क्यों हो रहा है ? वह आगे बढा.... वह मेरी पत्नी है तो ये कौन है ? उसके मनमें तूफान उठने लगा... उसके हृदय में कुछ न कुछ का निर्माण होने लगा । तभी एकाएक उसके मूँह से सिसकी निकलने लगी.. मनहर ने जसुमती की ओर एक नजर डाली, मेरी पत्नी तो यह है.. उसके हृदय में तरंगे उठने लगी.. सूत का गोला, पटला (बैठने का लकडा का पटिया) झाड़ु, हत्था, ढरकी, सबकुछ उसके सम्मुख आने के लिए तत्पर दिखाई दे रहे थे ..." (प्रियतमा, भाग-२, पृ.३०६-३०७)

विदाई के समय व्यक्त जसुमती की भावना माँ सूरज, छोटे भाई मंगल के अतिरिक्त इस परिवार का सात पीढियों से अधिक का खर्च उठानेवाले उस करधे की अटूट माया, ममता, अत्यंत उत्कट व अदम्य है । मनहर के मनोनिर्माण में भावना-भावुकता- उर्मिलता के अंश अत्याधिक प्रमाण में होने के कारण करधे का लगाव उसे विचलित कर देता है, उसके चरित्र संविधान में रंगदर्शी अभिगम अनेक प्रसंगो में प्रकट है, दृश्यमान है । मनहर करधे पर बूनने लगता, तब उसमें तन्मय हो करधामयी हो जाता कि आसपास के सभी को, स्वयं जसुमती को भी एकदम भूल जाता है । अपनी इस उपेक्षा को सहन न कर जसुमती उसे कभी कभी प्रसंगोपात टोकती भी थी । यह सौतन तुम्हें मुझसे अधिक प्रिय लगती है । जसमुती की इस सौतन से मनहर का मानसिक लगाव, माया, दीवानगी, लेकर एकाधिक प्रसंग पर हुई रोक-टोक के कारण, प्रियतमा शीर्षक में लेखक का अभिप्रेत व्यंग्यार्थ प्रकट हो जाता है कि परंपरागत उपन्यास का सामान्य पाठक भी अनायास उसमें रहा भावार्थ प्राप्त कर लेता है ।[१]

प्रत्येक युग का सजग साहित्यकार अपने युग की परिस्थितियों, समस्याओं, मानव मनोभावों आदि को अभिव्यक्त करता है । स्पष्ट रुप से कहा गया है कि जिस रचनाकार की रचना में समकालीन संकट का बोध जिनता ही गहरा और व्यापक होता हे, वह अपने युग का उतना ही समर्थ प्रतिनिधि होता है । श्री मोहन परमार अपने युग के ऐसे ही समर्थ कलाकार है । अतः इन उपन्यासकारों की सामाजिक प्रतिबद्धता को उद्‌घाटित

करने के लिए हमें उस युग और समाजके बुनियादी सत्यों की ओर भी दृष्टिपात करना होगा ।

“उपन्यासों का समाज किसी इतिहासकार के समाजकी अपेक्षा अधिक विशद, विश्वसनीय और पूर्ण है । सभी उपन्यासकार व्यक्ति और समाज के महत्त्व का स्वीकार करते है ।”[१४]

नेलियु उपन्यास विवेचन :

‘नेलियुं’ उपन्यास में जीवनभाई, तोरल, गोपाल, पशाभाई, तोरल की भाभी, हेतल जैसे पटेल (सवर्ण) पात्र है । अभेसिंह, रुपबा, रायसंग आदि दरबार (सवर्ण) पात्र है । साहब, शिवाबापा, जेठा, मणीलाल, चंपा आदि दलित पात्र है ।

दलित परिवेश, दलित विषयवस्तु उसमें भी मुख्यतः दलित समस्या, दलित पात्र और दलित संवेदना एवम् दलित चेतना का प्रादुर्भाव ही दलित उपन्यास की पेहचान है ।

मोहन परमार के ‘नेलियुं’ उपन्यास का विषयवस्तु नया और आकर्षक है । कहानी एक ग्रामप्रदेश की है । स्मृतिलोप हो जाने के बाद की कथा है । किन्तु वास्तविक (यथार्थ) जानने के बाद व्यथा, झूँझलाहट पीडादायक है । ‘नेलियुं’ के प्रतिक द्वारा समग्र दलित समाज के सामने ऊँगली निर्देश करते है । घटनाओं की गूँछ, गाँव का जीवन और बोली के उपयोग के कारण सफल उपन्यास बना है ।[१५]

तो भरत महेता लिखते है ‘नेलियुं’ (मोहन परमार) का प्रारंभ स्फोटक है । दलित अेन्जिनियर होश खो बैठता है, उसे अनजान पटेल दम्पति अपने घर ले जाते है । स्मृतिभ्रंश के कारण नायक को सब नया लगता है । लेकिन स्मृतिभ्रंश पूर्ण रुप से नहीं हुआ । नायक को आश्रय में रखनेवाली पटेल की पत्नी, राजकन्या रुपा और एक हरीजन कन्या के साथ प्रणय संबंध के आस-पास आकाश कुसुमवत परिस्थितियाँ बनती रहती है । प्रणयकथा का Ossin दलित समाज को साक्षात होने नहीं देता । आंबेडकर के अर्पित यह उपन्यास दलित कथावस्तु को केवल स्पर्श करता

है ।प्लास्टिक के फूलें आंबेडकर को अर्पित कैसे किया जाय ? लेखक लोकप्रियता के 'नोलियो' में फँस गये है । दलित कथानक यहाँ बाजार जैसा लगता है । तूरी लोगो का नृत्यप्रवृत्ति में रस उपन्यास को जीवंत बनाता है । कमी महेसूस करनेवाले सामाज की मजाक रसप्रद है । तोरल, रुपा और चंपा का प्रणयसंबंध नायक दलित है, यह जानते ही फिक्का हो जाता है, ये बराबर है । आरंभ और अंत लेखक के पास थे, किन्तु कृति के मध्यभाग की कोई संगतता नहीं होने से एक प्रभावक कथावस्तु कृतक बन गया ।[३६]

'नोलियु' उपन्यास का नायक डेप्युटी एन्जिनियर कक्षा का एक दलित अधिकारी है । तोरल और जीवनभाई सवर्ण जाति के है, वह दोनों पति-पत्नी है । तोरल और साहब (दलित अधिकारी) के बीच प्रेमांकुर फूटता है । जीवनभाई को शहर में से माहिती मिलती है । कि यह साहब तो दलित में भी निम्न तुरी जाति के है, फिर क्या हुआ ? फिर तो जो होनेवाला है, वही बनकर रहता है । जातिवाद में पिसाते पाठक को ये कहने की जरुरत नहीं कि क्या हुआ होगा ? पाठक ऐसी बात तुरंत ही समज लेता हे । लेखक ने उस समय नायक के दिल में व्यक्त, घोडापुर और मनोजगत में हुआ झुँझलाहट तीव्र रुप से निरुपित किया है । भारतीय हिन्दु समाजव्यवस्था में प्रवर्तित छूआ-छूत के दुषण को कालेनाग की तरह फूँकार करते हुए दर्शाये है ।[३७]

उपन्यास २६ प्रकरण में विभाजित है, जो इस प्रकार है । "नोलियु" उपन्यास का नायक डेप्युटी एन्जिनीयर है, जिसे मुर्छित अवस्था में तोरल और जीवन पटेल रास्ते के नजदीक देखते है । घर ले आकर शहर के डॉक्टर के पास दवाई करवाते है, स्वयं देशी उपचार भी करते है । नायक को भूतकाल याद नहीं आता, यहाँ सब नया नया लगता है । मानसिक रुप से भी तूट जाता है । जेठा साहब की देखभाल रखता है ।साहब और जेठा बातें करते है, दलित इन्सान सवर्ण इन्सान को छूए तो छूआछूत कहते है, जाति के बारे में जानते है । साहब फिर से मूर्छित

हो जाते है, डॉक्टर दवाई करते है, घूमने-फिरने की छूट्टी देता है, साहब भी खुश होते है, क्योकि बेठे रहना अच्छा नही लगता ।

जेठा को घर में बुलाते है, पर अभेसिंह सरपंच आनेवाले है, इसीलिए नहीं आता, और दलित जाति के प्रति तिरस्कार करते लोग पर आक्रोश व्यक्त करता है कि ये सब सुखी है, इसीलिए छू-आछूत रखते है, वरना तो दलितों के साथ भी अच्छे संबंध रखते । अभेसिंह आता है, साहब का अंग्रेजी अच्छा है, इसीलिए गाँव में रखना चाहते है ।

तोरल और साहब एक-दूसरे को न मिले तो चैन नहीं होता । शिवाबापा और उनके चार मित्र साहब को मिलने आते है, वे दलित है, इसीलिए बरामदे में बैठते है । साहब को आश्चर्य होता है कि तुम इन्सान हो, फिर भी घर में क्यू नहीं आते ? साहब को उनके प्रति प्रेम उभर आता है, वर्षो से पेहचानते हो ऐसा लगता है । शिवाबापा का पुत्र परसोत्तम गाँव में शिक्षक है, गाँव को सुधारने का प्रयत्न करता है । बूनने का काम करके परसोतम को पढाया, ये सब व्यक्त करते है । शिवाबापा के जाने के बाद जीवनभाई के पडौशी साहब को बोलते है कि, ढेड को घर में क्यूँ घूसने दिया ? साहब क्रोधित होते है, इसीलिए पडौशी सब चले जाते है ।

साहब को जीवनभाई गाँव देखने ले जाते है । जेठा मिलता है, दलित मुहल्ले में ले जाने का कहता है, किन्तु जीवनभाई मना करते है, क्योंकि हरीजन के घर जाये तो पवित्र होना पडता है (पानी छिडकना पडता है) ये सूनकर साहब को होता है कि ऐसे गाँव में कैसे रहूँ ? दलित मुहल्ला, बूनने का काम देखकर खुश होते है । स्वच्छता देखकर लगता है कि उनसे छूआछूत रखने का प्रश्न ही नहीं है ! दलितों के घर में गरीबी स्पष्ट दिखाई देती थी, गाँव से अलग ही यह मुहल्ला था, और उन लोगों का अस्तित्व भी अलग था । अभेसिंह (सरपंच) के सामने कोई विरोध नहीं करता था । पहले जो सरपंच था, उनको भी उसने ही खत्म कर दिया था । लेकिन मणीलाल बुनकर विरोध करता है, क्योंकि

उसकी जमीन को अभेसिंह दूसरों के नाम पे कर देता है, इसीलिए अभेसिंह को जेल में डाल देता है, वहाँ से रीहा होकर मणीलाल को शिक्षा करना चाहता है, लेकिन मणीलाल भी कम नहीं था ।

साहब को अब अच्छा हो गया था, गाँव में सब बुलाते थे, प्रेम बढ गया था । तोरल ने बोलना कम कर दिया था, उसका कारण रुपबा थी । फिर भी तोरल और साहब के बीच संबंध बढ गया था ।

तोरल कॉलेज प्रथम वर्ष तक पढी थी, और जीवनभाई पाँचवी कक्षा तक, बदला पद्धति के कारण शादी हो गई थी । भाभी के साथ साहब और तोरल मायके में जाने का तय करते है । सुबह में तीनो भाभी के घर जाने के लिए निकलते है । सुबह का वातावरण पहली बार साहब देखते है और खुश हो जाते है । पानी भरनेवाली, गोबर लेकर जानेवाली स्त्रीयाँ, संडास जाते इन्सान फिर बस आते ही बस में बैठते है । मायके में तोरल खुश होकर घुमती है ।

शाम को सोमाभाई और साहब मंदिर जाते है । यहाँ दलित मंदिर प्रवेश कर नहीं सकते थे, दिनेश चौहान ये लोगों के प्रति आक्रोश व्यक्त करता है । धर्म की ये प्रथा उसे पसंद नहीं है । बिहार में दलितों को जिन्दा जला देते है । साहब उसके आक्रोश से खुश होते है । दिनेश साहब को तूरी लोगों का नृत्य (नाटक) देखने का आमंत्रण देता है । नृत्य (नाटक) में सोनकंसारी का खेल था । राजा का कुमार सोनकंसारी को प्रेम करता है, किन्तु वह कंसारी (निम्नजाति) होने के कारण शादी नहीं होती । लेकिन गले में ताविज था । उससे ख्याल आता है कि वह राजा की लडकी है, फिर शादी होती है । जाति के बारे में भ्रम और सर्वगुण संपन्न स्त्री राजपूत में ही होती है, यह राजपूत मानते है, दिनेश विरोध करे तो भी यह समाज रुढ हो गया है, उसे कैसे बदल दिया जाय ?

गाँव में साहब निकलते है तो स्त्रीयाँ हाँसी उडाती है, तोरल के बारेमें गलत भ्रम करती है । साहब स्त्रीयों की प्रगति के बारे में चर्चा करते है । सरपंच के खेत में रायसंग मजदूरों को मजदूरी कम देता है तो

चंपा विरोध करती है । और मजदूरी दिलवाती है ।

साहब सरपंच को मिलते है, पटेल और ठाकुरों के बीच संघर्ष है, ठाकुर खेतो में से फसल काटकर ले जाते है, फिर भी सरपंच कुछ नहीं करता । इसीलिए पटेल निराश है । जाति-जाति के बीच संघर्ष यहाँ पर है । साहब तूरी के घर देखते है, घर में केवल दो थाली है, मजदूरी करके ये लोग जीवन बिताते है ।

रायसंग द्वारा चंपा की इज्जत लूँटने का प्रयत्न, दलितों द्वारा प्रतिकार, पटेलों का साथ किन्तु मजदूरी के कारण विवश है । शिवाबापा और साहब सभी को शांत करते है, किन्तु रायसंग साहब को मारने डंडा लेकर जाता है, वहीं पर रुपबा गोलीबार करती है, रायसंग घर में घूस जाता है ।

तोरल साहब से नाराज है, क्योकि रुपबा के साथ स्कूटर में घूमते है । गाँव में फिर से संघर्ष होता है, हरीजन और दरबारों के बीच झघडा होता है, रायसंग दलित स्त्रीयाँ को गालियाँ देता है, इसीलिए मणीलाल रायसंग को कूए में लटकाता है, तो कहता है अब में कोई दलित का नाम नहीं लूंगा । लेकिन कूए में से बाहर निकलकर दरबारों को साथ लेकर हरीजन मुहल्ले पर हमला करता है । दलित भी स्वमान भी रक्षा के लिए शस्त्र हाथ में लेते है । साहब और शिवाबापा दरबार मुहल्ले में जाकर सभी को शांति रखने को कहते है । रायसंग और उसकेसमर्थक शस्त्र लेकर दलित मुहल्ले पर हमला करने दौडते है, गाँव में संघर्ष बढेगा, पुलिस आयेगी तो रायसंग को जेल होगी साहब कहते है, इसीलिए अभेसिंह दौडकर रोकना चाहते है, जेल का डर दिखाकर समर्थको को रोक देते है, साहब रायसंग को पकडते है, किन्तु वह तो साहब को ही मारने जाता है, तब रुपबा को देखकर शांत हो जाता है ।

शिवाबापा ने दलितो के अगुआ होकर सुलेह की और शर्त की- हमारी बहन लडकी की कोई सलामती नहीं है ! मजदूरी कम देते है, मंदिर के नजदीक से निकलते है तो भी ढेड कहकर अपमान करते है,

गाँव में हमारा भी हक है, साहब को भी होता है कि दलितों का आज तक हिन्दुओने दुरुपयोग किया है, कोमी-दंगो में, नेताएँ भी उसमें से पीछे नहीं है । यह देश में जातिवाद का अनिष्ट दूर होगा तो ही देश आगे बढेगा, सवर्ण आपस-आपस में झघडते है, तो फिर दलितों के सामने कौन देखेगा ?

जीवनभाई सिद्धपुर जाकर जानते है कि साहब तो दलित है, तब से दोनों तिरस्कार करते है । चंपा दलितों की भी अनेक जाति होती है ऐसा साहब को समजाती है । बुनकर, चमार, सेनमा, श्रीमाली, तूरी, भंगी । साहब अंधेरे में नेलिये में से जातेहै तब मणीलाल की लाश पैरो में टकाराती है ।

मणीलाल के बिना मुहल्ला अकेला हो जाता है । रायसंग को निर्दोष साबित करके अभेसिंह उसे छूडवाकर ले आते है । दलित मुहल्ला कुछ नहीं कर सका ।

पशाभाई और साहब खेत में जाते है तो तोरल और जीवनभाई साहब का तिरस्कार कहते है । पशाभाई भी कहते है- ढेड को घर में नहीं रख सकते ।

यह सुनकर साहब सोचते है, मैं दलित हूँ, इसलिए मेरी गुणवत्ता का मेरे पद का कोई महत्त्व नहीं ? ढेड कहकर मेरा अपमान करते है, तोरल मुझे शरीर देने तैयार थी, किन्तु मैने मर्यादा रखी, चंपा को मैने दूर ही रखी क्योंकि वह हरीजन थी, रुपबा का भी उपयोग किया होता, किन्तु मेरा बीज हरीजनों को हैरान न करे ऐसा कोई प्रश्न ! किन्तु मैं ऐसा क्यों सोचु ? सब मुझे मारने दौडते है, जीवनभाई, अभेसिंह, तोरल, रुपबा ढेड कहकर पत्थर, डंडे मारते है, रुपबा तो कहती है ये मेरा शिकार है, मैं शिक्षा करुँगी ? ऐसा सोचकर खेतो में से नेलिये की ओर जाते है वही चंपा बुलाती है ।

साहब मूँह छिपाकर कहाँ चले ? साहब तुम्हारे साथ किसीने झघडा किया ? साहब कहते है, जीवनभाई मेरी जाति जानकर आये, मैं

तूरी हूँ, इसीलिए ये लोग मेरा तिरस्कार करते है, चंपा खुश हो जाती है, मुहल्ले में ले जाना चाहती है, साहब मना करते है, क्योंकि मेरा और सभी का उसमें फायदा है, मैं एक दिन हरीजन बनकर आँऊगा । नोलियो में से जाते है-

थूँहर के काँटे, धूलवाला नेलिया मैं किस जन्म मैं पार करूँगा ? उपन्यास में सवर्ण और दलित पात्र है । पुरुष और स्त्री पात्र है । दरबार है तो पटेल भी है, बुनकर है तो चमार, सेनमा, तूरी पात्र भी है । कोई झघडा करना चाहता है, तो कोई शांति से रहना चाहता है, सेहकर भी जीनेवाले है । सेहते है, सेहते है मगर सेहने की भी हद होती है , तब संघर्ष करते है, भविष्य के बारे में सोचकर पीछे हट करते है । ये पात्र गाँवो में आज भी है, ढूँढनेवाले चाहिए ।

उपन्यास के पात्र वास्तविक है, यथार्थ है, वह अपने आप बोलते है । कबीर जैसे महान समाजसुधारक संतकवि, जैसा साहब का पात्र है । कबीर भी समाज को देखकर दु:खी होते थे । नामवरसिंहजी यथार्थ ही कहते है- सामाजिक दु:ख इतना उत्कट है कि कबीर जैसे संवेदनशील संत को आध्यात्मिक क्षण में भी उद्विग्न करता रहा है । एक तरह से यह भक्तिभाव के क्षेत्र में सामाजिक यथार्थ का हस्तक्षेप है । कबीर के दु:ख का एक निश्चित सामाजिक आधार है । कबीर की सामाजिक पीडा वास्तविक है, सामाजिक यथार्थ की है । जाति पाँति के भेदभाव का संपूर्णत: अस्वीकार करते है ।[१८]

जीवनभाई का पात्र उपन्यास में महत्त्व का स्थान रखता है । साहब को अकस्मात हुआ है, पेहचानते नहीं है फिर भी अपने घर ले आते है । डॉक्टर बुलवाकर दवाई करवाते है । अस्पताल के बदले घर रखकर देशी उपचार भी करते है और साहब को पूर्ण रुप से नई जिन्दगी देते है ।

पाँचवी कक्षा तक पढे है, लेकिन बदला पद्धति के कारण तोरल जैसी स्त्री जो कॉलेज तक पढी है वह मिल जाती है, दाम्पत्यजीवन सुखद है । साहब की सेवा करके, अपने खेतों में काम करके आनन्द से

जिन्दगी बिताते है । दुसरों की चापलूसी, बातें करने का समय उनके पास नहीं है । अभेसिंह दो साल से पैसे का हिसाब नहीं देता, फिर भी अन्याय सेह लेते है, क्योंकि अभेसिह के सामने संघर्ष करने की ताकत नहीं है । अपनी पत्नी पर पूर्ण विश्वास है, इसीलिए साहब के साथ भेजते है ।

जब तक साहब की जाति के बारे में अनजान थे, तब तक अच्छा व्यवहार करते है, किन्तु साहब दलित है, ये जानकर स्वभाव ही बदल जाता है, तिरस्कार करते है ? जीवनभाई गुजरात के एक पटेल है, जो जाति के विषचक्र में फँसे हुए है, मूर्छित आदमी सवर्ण जाति का ही होगा, ऐसा विश्वास है प्रेम करते है, मगर जाति जानने के बाद जाति का डँश अस्तव्यस्त कर देता है ।

तोरल का महत्त्व उपन्यास में ज्यादा है, सारी कथा के इर्द गिर्द तोरल लिपटी हुई है । अपने पति से प्यार करती है, लेकिन स्त्री की एक मर्यादा होती है, वह तोरल में भी है । पर पुरुष के संपर्क में आने से, वह फिसल जाती है । कॉलेज तक पढी है, पर जीवनभाई जैसे पाँच कक्षा तक पढे पति के साथ जिन्दगी बितानेमें कोई फरियाद नहीं है ।

साहब अभेसिंह के यहाँ जाते है, तो चेतावनी देती है कि रुपबा से सावध रहना, उसमें स्त्री इर्ष्या भी साथ साथ है । बसमें, बेर के खेत में, नदी में नहाते वक्त साहब के प्रति जो क्रियाए करती है वह स्त्रीसहज है । पराये पुरुष के साथ मित्रता से रहना एक कसौटी है । स्त्री हार जाती है और धीरे धीरे अपना सर्वस्व उसे देने तैयार हो जाती है । तोरल भी स्त्री है, और ऐसा व्यवहार करे उसमें उसका दोष नहीं, परिस्थिति का दोष है । लेकिन कोई स्त्री अपनी हल्की बात करें तो रणचन्डी बनकर सामना करने के लिए सक्षम है, इसीलिए साहब को कहती है, मैं हूँ न ! फिर तुम्हे किसका डर ? आपको हमारे घर पर ही रहना है !

किन्तु साहब की जाति जानने के बाद जितना प्यार करती थी, उतनी ही नफरत करती है । गोपाल पटेल एक वीर है, जो दरबार

के सामने संघर्ष करता है, दलितों को साथ देता है । वह कहता है कि स्त्रीयाँ के कारण दरबार मुसलमान और अंग्रेजो से हार गये थे । ब्राह्मणो ने उसे सिर पर चढाया है । इस प्रकार गोपाल का पात्र अन्याय के प्रति विरोध करनेवाला है।

अभेसिंह का पात्र आधुनिक जमाने के नेता जैसा है । जो दरबार है, दस साल से सरपंच है, उसके सामने कोई खडा ही नहीं रहता, क्योंकि विरोधपक्षवाले को कोई भी तरीके से खत्म कर देता है, या तो गाँव छूडवा देता है । साम, दाम, दंड और भेद की नीति अपनाकर गाँव पर राज करता है । बडीबडी मूँछ रखता है, व्यक्ति के पास काम करवाने की अजीब सी शक्ति है । गाँवकी प्रगति के बदले अधोगति करता है । वैभव, संपत्ति देखते ही ये आधुनिक नेता लगता है ।

पटेलों से नफरत है, अपनी कुर्शी टिकाने में माहिर है । मणीलाल का खून रायसंग द्वारा करवाकर खुश होता है- देखिए अभेसिंह के बारे में (पृ.३५२)

पुलिस को अभेसिंह ने खुश कर दी थी । हरीजन मुहल्ले मे से किसी ओर की मृत्यु इस तरीके से होती तो रायसंग को बचाने अभेसिंह ने प्रयत्न नहीं किया होता, किन्तु मणीलाल कंकर की भाँति चूँभता था । ये कुछ कर नहीं सका, इसीलिए रायसंग द्वारा निकाल करवाकर ये खुश थे । जाहिर में शोक प्रकट करते थे, लेकिन अंदर से बहुत ही खुश । अभेसिंह सचमुच आज के नेता का प्रतिनिधित्व करता हे ।

रुपबा अभेसिंह की पुत्री है, जो दशवीं कक्षा में पढती है, स्कूटर चलाती है, अपने रुप पर गर्व है, साहब के पास अंग्रेजी सीखती है । दरबार और दलितों के बीच झघडा होता है तो रायसंग को डराने रीवोल्वर से गोलीबार करती है । रुपबा को देखकर ही घर में घूस जाता है । साहब के प्रति प्यार है, इसीलिए तोरल की इर्ष्या करती है । रुपबा का चरित्र मुझे इसलिए पसंद है कि जो काम पुरुष नहीं करते, वह काम करती है । ये नारी शक्ति का प्रभाव है । आज की स्त्रीयाँ पुरुष से भी आगे बढ गई है ।

बडी-बडी आँखें, सहज बडा चेहरा, पतली कमर, शरीर का हर अंग बिना खामीवाले, कमरे में स्वर्ग उतर आये ऐसा रुपबा का रुप था । शब्द भी तोल तोलकर बोलनेवाली रुपबा को देखकर सचमुच साहब भी पिघल जाते हे ।

रायसंग का पात्र उपन्यास में ज्यादा महत्त्व रखता है । सरपंच के यहाँ मजदूरों की देखरेख रखता है, कम पैसे देकर मजदूरों का शोषण करता है । आज भी ऐसे दरबार गुजरात में मिल जाते है, जो रायसंग की तरह दलितो को एक पशु की तरह देखते है । दो टाईम खाना खाकर एक भी शब्द दलित को बोलने की इजाजत नहीं ऐसा वह मानता है । दलितों से छूआछूत रखता है, पर चंपा के खेत में अकेली बूलाकर उसकी इज्जत लूँटने की कोशिश करता है । कोई न कोई बहाना बनाकर दलितो को हैरान करता है, ढेड को गाँव में रहने का अधिकार नहीं है (पृ.३०८)

मणीलाल जो काँटे की तरह दरबारो को चुभता था, उसको खत्म कर देता है, सरपंच के साथ अच्छे संबंध रखता है और निर्दोष छूट जाता है । आजकल समाचार में भी दलितों पर अत्याचार के समाचार आते है, दलितों की रेली निकलती है, पर हमले करनेवाले सवर्ण पैसों से, राजकारण से निर्दोष छूट जाते है, बेचारे निर्दोष मारे जाते है, जिसको जिन्दा भी नहीं रहने देते, मानसिक रुप से तो तोड देते है, मगर जिन्दा जला भी देते है, दलित स्त्रीयों की तो क्या हालत होगी ?

दलित पात्रों में साहब, शिवाबापा, जेठा, मणीलाल, चंपा आदि मुख्य है । साहब नेलियु उपन्यास के नायक है । एक समाज सुधारक के रुप में उनका मूल्य बहुत बढ गया है । लेखक ने आजमायी वृत्ति सचमुच लाजवाब है, छूआछूत के भेद को मिटाने के लिए होश खोने की जरुरत है । नई जिन्दगी कब मिलेगी ? आज जरुरत है सभी होश खो बैठे तो नया समाज जातिविहीन होगा, धरती पर ही स्वर्ग होगा ।

साहब डे.एन्जिनियर, मूर्छित अवस्था, जीवनभाई तोरल द्वारा सेवा, डॉक्टर और देशी दवाए, संपूर्ण स्वस्थ होना किन्तु भूतकाल भूल जाना ।

तोरल के साथ संबंध बढना, जेठा द्वारा जानना कि दलित इन्सान सवर्ण इन्सान को छूए तो छूआछूत कहते है । पटेल के घर में रहते है, तो पटेल ही बन जाते है, फिर भी दलितों के प्रति प्रेम ज्यादा रहता है ।

तोरल, रुपबा और चंपा तीनों साहब के प्रति आकर्षित होतीहै मगर साहब मन से स्थिर है । गाँव खेत ज्यादा पसंद है । लेकिन गाँव के छूआछूत भेद से धृणा है । मंदिर के आगे खडे रहते दलितों को कहते है- सब ईन्सान एक ही है, सब मंदिर में जा सकते है, तुम क्यों मूर्दे की तरह जीते है ? हरीजनो को मान-अपमान जैसा कुछ नहीं ऐसा व्यवहार दूसरी प्रजा करती है, ये लोग इस देश के नागरिक नहीं है ? दलित भी हिन्दु है...। (पृ.१५७)

दलित और दरबारों के बीच संघर्ष होता है, तो सुलेह करवाने में साहब की भूमिका महत्त्वपूर्ण है । दरबारों को अपनी गलती का एहसास करवाते है । मेहनत को श्रेष्ठ मानते है । दलितों के बारेमें वह कहते है -दलितों को मंदिर में प्रवेश नहीं करने देते, तूफान में हिन्दु बनाकर उन्हें आगे बढाते है । राजकीय नेता धार्मिक, आर्थिक लाभ दिखाकर दलितो का दुरुपयोग करते है ये सब देखकर साहब दलितों का हमदर्द बनना चाहते है । कोई दलित विदेश में जाकर देश का नाम आगे बढाता है, उसे देश में सवर्ण लोग छूते भी नहीं है । यह देखकर बेचारा दलित माथा पटकाकर मरना पसंद करे ऐसा धर्म हमारा है ।

जीवनभाई शहर से पता लगाकर आते है कि साहब दलित है, इसीलिए व्यवहार बदल देते है । दुःख होता है कि मैं एन्जिनियर हूँ, किन्तु दलित होने के कारण मेरी ये हालत ! और गाँव छोडकर नेलिये के द्वारा जाते है । जातिगत मान्यताएँ इन्सान के हृदय में बैठ गई है, उसे कोई हटा नहीं सकता ।

नेलियुं उपन्यास के पात्र यौन संबंधो के बारे में मर्यादावाले है । अपनी रेखा का उल्लंघन किसीने नहीं किया और सामनेवाला व्यक्ति

यदि मर्यादाभंग करता हे तो कोई न कोई विघ्न जरुर आ जाता है, जिससे संबंध बरकरार रहता है । श्री मोहन परमार सचमुच बडा कलाकार है, जिसके पात्र भी कलाकार है ।

शिवाबापा का पात्र उपन्यास में एक माननीय व्यक्ति के रुप में है, एक दलित व्यक्ति की इतनी किंमत शायद कहीं नहीं है, क्योंकि दलित उम्र में बडा हो, बुद्धिवाला हो फिर भी सवर्ण अपने को ही बडा मानते है । इसीलिए यह पात्र आदर्श बन गया है । हाँ दलितों उनका सन्मान करे, नेता माने यह यथार्थ है, फिर भी दलितो में ऐसा इन्सान होना गौरवपूर्ण बात है । चद्दर बनाकर बेचते है, दलितों के मुखिया है । वो ऊँचे कद के, गोरे स्वरुपवान व्यक्ति है । धोती, कूर्ता और पघडी पहनते है । धुम्रपान करते है, बेटे को पढाकर शिक्षक बनाया है । शिक्षा का महत्त्व समजते है । दलित और ठाकुरो के बीच संघर्ष होता है तो सूलेह कराने में समजते है । कई अपमान सेहते है, हमारी लडकियों की सुरक्षा नहीं है, मजदुरी कम देते है । ढेढ कहकर हमारा अपमान करते है । अब तो हमारे युवान भी शहर में जाकर कायदे का ज्ञान जानकर आये है, और शोषण का सामना करेगे । इस प्रकार शिवाबापा स्पष्ट बोलनेवाले निर्भिक नेता है । ऐसे व्यक्ति का दलित के रुप में जन्म लेना एक स्वप्न है । किन्तु उपन्यास में दिखाकर उपन्यास की किंमत और बढ गई है ।

मणीलाल का पात्र उपन्यास में एक दलित वीर के रुप में है, अन्याय का डटकर मुकाबला करता है । दलित वीरों का प्रतिनिधि है, इसीलिए सवर्णो की आँखों में खटकता है । शहर का वातावरण देखकर गाँव की छूआछूत परंपरा पर विरोध प्रकट करता है । बंध मिल कामदार था, आज कपडे बूनने का काम या मजदुरी करके जीवन बिताता है । चंपा की छेडती पर वीरत्व जाग उठता है और दलितवीरों को आह्वान करता है ।

रायसंग जैसे ठाकुर को कूए में लटकाता है । तो सरपंच को भी जेल में धकेल सकता है । किन्तु उसकी हत्या करके सवर्ण जश्न

मनाते है और दलितों की करुणता को ज्यादा करुण बनाते है ।

दलित नारी की पेहचान चंपा है । युवान है, मजदूरी करती है, किन्तु इज्जत से जीना चाहती है । रायसंग इज्जत लूँटने का प्रयास करता है तो सारे मुहल्लेवाले को संघर्ष करने के लिए तैयार करती है । शिवाबापा को कहती है- ‘उसका खून कर दूंगी, बाद में मेरा जो होना होगा वह होगा । दूसरी बहन की इज्जत लूँटने से पहले सौ बार सोचेंगे ’। (पृ.३८)

संवाद या कथोपकथन की दृष्टि से भी ‘[illegible]’ उपन्यास श्रेष्ठ है, छोटे छोटे वाक्य, कही कहीं तो शब्दो से केवल काम लेकर अर्थपूर्ण किया है । एक अच्छे कलाकार की यह तो निशानी है । सचमुच हर रस में संवाद अपनी भूमिका निभाते है । भाषा के ज्ञानी है और नाँपकर शब्द रखे है । साहब भी गाँव की भाषा बोलते है, उनके संवाद सुनकर गाँववाले भी आश्चर्यचकित हो जाते है । जैसा पहनावा वैसी भाषाका सूत्र यहाँ यथार्थरुप में प्रकट किया है । सारे पात्रो के संवाद अपने अपने स्थान पर बहुत ही श्रेष्ठ है । मनमें प्रकट होते संवाद भी मानसिक स्थिति का दर्शन करवाते है ।

जेठा और साहब के बीच संवाद

‘यह जीवनभाई से तुम्हारा क्या नाता है ?

कुछ नहीं साहब, मैं उनके खेत में मजदुरी करता हूँ

तू कहाँ रहता है ? मुहल्ले में ! हरीजन हूँ साहब !

हरीजन अर्थात

ये जीवनभाई पटेल है और हम

उनसे छोटे, ये हमको छूए नहीं ’। (पृ.१८)

छूआछूत का ख्याल भी ये संवाद में प्रकट होता है ।

लडकीयों में भी शिक्षा का महत्त्व, लडके से ज्याद पढी लिखी लडकियाँ (पति-पत्नी के बारे में) पटेल जाति में बदला पद्धति को प्रकट क रनेवाला संवाद (पृ.१३५)

हरीजन मंदीर में प्रवेश नहीं करते है, ये संवाद (साहब और दलित लोगो के बीच) (पृ.१५३)

"तुम सब यहाँ क्यों खडे हो ? दर्शन करने नहीं जाना ?

नहीं, साहब , हम मंदिर में नहीं जा सकते ।

क्यों ?

हम हरीजन है.....

तुम्हें मंदिर में जाते कौन रोकता है ?

कोई नहीं, किन्तु हम रहे छोटी जाति के हम मंदिर में

जाये तो भगवान को छूआछूत लगे ।

(दलित को मंदिर में प्रवेश नहीं करने देते, और दलित भी डर से मंदिर में नहीं जाते)

मंदिर दलित ही बनाते है, फिर भी मंदीर में प्रवेश नहीं कर सकते । संवाद- (पृ.१५४)

- तोरल और साहब के बीच व्यंग्य से भरपूर संवाद-

पृ.१८२, १८५, २५५, २७१, २८४

- साहब और गोपाल के बीच संवाद- पृ.२३४

(दलित और दरबार के बीच संघर्ष होता है तो गोपाल कहता है - पृ.२३६- दलितों का संवाद, मणीलाल और साहब के बीच, मरने-मारने तैयार दलित, चंपा का संवाद- पृ. २३८

- रुपबा और साहब के बीच संवाद- पृ.२८१, २८२

- साहब और दरबारों के बीच संवाद (दलित और दरबार संघर्ष) (पृ.३०३)

तुम तैयार होकर क्यूं खडे हो ?

ढेड को मारने

उनका क्या गूनाह है ?

हमारे रायसंग को कूए में लटकाया ?

उसने कोई गूनाह किया होगा,

क्यूं, ढेड को ढेड कहना गूनाह है ?

कायदे की रीत ढेड कहना गुनाह है ।

उसमें कौन सा गूनाह ? हमारे पूर्वज भी ढेड कहते थे । एक तो मजदूरी करनी है, और उनको मान चाहिए ।

- तोरल, जीवनभाई, पशाभाई के संवाद (पृ.३७४)

(साहब दलित है ऐसा जानने के बाद व्यवहार में आमूल परिवर्तन हो जाता है ।)

भाषाशैली की दृष्टि से नेलियुं उपन्यास उत्तर गुजरात को रुबरु कर देता है । उपन्यासकार को अपने भाव एवं विचारो को व्यक्त करने के लिए सरस और सरल भाषा एवं शैली का प्रयोग करना पडता है । भाषा का प्रयोग तत्कालीन समाज के दृष्टिकोण से हो तो अधिक श्रेयकर होता है । किन्तु उसमें लोकभोग्य सरलता एवं सरसता का होना अत्यंत आवश्यक है । रचनाशैली सजीव एवं प्रभावोत्पादक होनी चाहिए । भाषा का शाब्दिक आडम्बर उपन्यास के लिए जोखिम है, क्योंकि जनता उन्हीं उपन्यासों को आदर का स्थान देती है, जिनकी विशेषता उनकी गूढता नहीं, उनकी सरलता होती है ।

नेलियुं उपन्यास वर्णनात्मक शैली का उपन्यास है । उपन्यास पढकर सचमुच सद्भाव जाग उठता है । श्री मोहन परमार गाँव में रहनेवाले है, दलित मुहल्ले में जन्म लेकर सारी कठीनाइयों का सामना किया है । गाँव के सवर्णो के साथ व्यवहार, छूआछूत, मंदीर, भवैया, (तूरी का नाटक) मजदूरी का भी अनुभव किया है । अपनी और अपनेवालों की हालत देखी है । इसीलिए उनका लिखा हुआ श्रेष्ठ है, हवाई किल्ले की बात यहाँ नहीं है, यहाँ तो सब यथार्थ है । भाषा भी अपनी है, जहाँ खेले-कूदे वहाँ की भाषा से लेखक धूलमिल गये है ।

नेलियुं वर्णनात्मक शैली का एवं पात्रानुरुप, प्रसंगानुकुल सरल, सुबोध, सरस, बोधगम्य, बोलचाल की मुहावरेदार भाषा से समृद्ध उपन्यास है ।

श्री मोहन परमार ने नेलियु उपन्यास में गुजरात के महेसाना जिल्ले के गाँवो की गुजराती भाषा का प्रयोग किया है, जो दलित लोग अपने साहजिक रुप में बोलते है, वही भाषा का उपयोग किया है । दरबारों की भाषा, पटेलों की भाषा, और दलितों की भाषा में भी थोडा

बहुत फर्क होता है और उपन्यास में भी यह स्पष्ट रुप में दिखाई देता है ।

मुहावरें, कहावतें, व्यंग्यात्मक शब्द, संगीतात्मक शब्द, गीत, अंग्रेजी शब्द, का प्रयोग उपन्यास में है । अलंकार, रस की दृष्टि से भी उपन्यास श्रेष्ठ है ।

भाषा के उत्तम नमूने

- धुम्रसेरो मैं मेरा अस्तित्व खो बैठा था । (३) पृ.
- हवा की लहर गाल पर लगकर चली गई । -(पृ.८)
- हवा की लहरों में मेरी आँखें टीमटीमाने लगी (पृ.२४)
- ये ऐसे हँसे कि जीवनभाई के घर के खपरैल खनकने लगे (पृ.४०)
- शाम सूखी लगती थी, मैदान में शाम उतर आई थी । (पृ.१३७)
- खेत अभी तक सोये थे । खेतो की सुगंध अब बस में महकने लगी थी । (पृ.१४६)
- शब्दों के प्रहार पीठ पर झेलता झेलता रसोई घर में गया । (पृ.२८६)
- धीरे धीरे अंधेरा खेतों की ओर से दौडता दौडता हमारी ओर आ रहा था ।
- हृदय के भाव सूख गये थे ।

अंग्रेजी शब्द

एक्सीडन्ट, हॉस्पिटल, मिक्सचर, बेग, डॉक्टर, ट्रीटमेन्ट, ओपरेशन, प्लीझ, ऑफिस, ओब्जेकशन, अेम्नेसिया, मेमरी, डिस्टर्ब, स्टेज, कॉमेडियन, ड्रेस, होर्न, स्टार्ट, प्लान, ट्रान्सफर, क्रेडिट

उर्दू शब्द- सलाम

संगीतात्मक शब्द

कडडभूस, खडखडाट, खिलखिलाट, खटाखट, डच...डच..., ले..ले..., छी...छी..., रुमझुम.... रुमझुम..., भो...भो... झट.... झट..., फररर.....फररर, सडसडाट...., चररर..... चररर... धडक....धडक...., गडगडाट... ही...ही...ही....ही..., सन्न्न्...... टच.... टच...

प्रतिक -सूखा पेड (साहब) का प्रतिक है (पृ.२१९)

नेलियुं -प्रतिक (शीर्षक)

कहावतें

- मूँग का नाम मरी देते नहीं- पृ.९४
- साँप के दर में हाथ कौन डाले - पृ.९६
- जैसा कर्म वैसा फल- पृ.२२७
- सोलह आना सच थी बात - पृ.३१८

मुहावरें

-	एक टक देखना	-	मंत्रमुग्ध हो जाना
-	देखने का झहर	-	लाल पीला होना
-	मूँछ में हँसना	-	जैसा संग वैसा रंग
-	मक्खीयाँ मारनी पडे	-	धूल चाटते कर देना
-	छाश-पानी बंद करना	-	छाती निकालकर घूमना
-	दंग रह जाना	-	स्तब्ध हो जाना
-	जाने तेल में मक्खी	-	समय समय बलवान
-	दाल में कुछ काला है	-	

अलंकार - उपमा

- तोरल तो नई बहु (दुल्हन) जैसी लगती है । पृ.४०
- कुमकुम जैसी पैर की उफसाती ँऊगलीयाँ - पृ.९१
- गुलाब के ताजे फूल की सुगंध जैसी सुगंध- पृ.११९
- रुपबा के मूँह में से मीठे झरने जैसे कलकल बहते शब्द- पृ.१२१
- चकमकते काँच जैसे इन्सान -पृ.१३९
- तोरल राजमार्ग पर चलती हो ऐसे चलती थी- पृ.१८५
- तोरलने बेर खिलाये वह मीठे शेहद जैसे लगे - पृ.१८६
- सोने जैसे धूप में उसका शरीर झगमगाने लगा - पृ.१८८
- रणचंडी जैसी लगती थी रुपबा अभी जाने गुलाब का फूल - (उपमा और विरोधाभास) पृ.२४६
- काँपते हिरन की तरह तोरल- पृ.२६३

- तुम्हारे में जो गुण है, ये देखते तो हमें लगता है, तुम देव जैसे लगते हो (अतिशयोक्ति और उपमा) पृ.३६२

रुपक

- शेहद नीतरती आँखें -पृ.६६
- अमीभरे नेत्र -पृ.१८७
- अमीनजर -पृ.३६०

अति- कमरे में स्वर्ग उतार आया था- पृ.१२०

- उसके (चंपा के) गाल तोरल और रुपबा से भी ज्यादा सुंदर लगते थे पृ.३४४

विरोधाभास-

- तुम डरते हो तब कितने अच्छे लगते हो- पृ.२४७

रस

- हास्यरस- तूरी का खेल (नाटक) कॉमेडियन द्वारा हास्य के प्रसंग, चुटकुले पृ.१७६, १७७

श्रृंगाररस

तोरल और साहब नदी में स्नान करते है, कपडे बदलकर दोनों एकदूसरे को देखते है, दोनों की आँखो में आँसू आने की तैयारी मे थे, तोरु साहब बोलते है, तोरल साहब का हाथ पकडकर अपनी आँखों पर लगा रही थी , उसकी आँखो की ठंडक साहब के हाथ में फैल गई, साहब की हथेली में चुंबन दिया, कुछ बोले बिना धूप में चमकते उसके बालों में साहब हाथ घुमाते रहे । पृ.१९३

बिभत्स रस

पूरा शरीर जल जाने से दुर्गध, लोग दुर्गंध से बचने के लिए नाक के पास हाथ रखे, (साहब के मन के विचार- पृ.२२७)

वीररस

दलितों, दरबारों के बीच संघर्ष में वीररस मणीलाल, गोपाल, रायसंग के वाक्य वीररस से ओतप्रोत पृ.२३८ से २४३/३०७ से ३०८

करुणरस

सोमाभाई की मृत्यु के कारण मुहल्ले में शोक का वातावरण, जेठा बात करता है, तो भी रोता है, सभी रोते है ।(२७४) मणीलाल की मृत्यु के बाद भी मुहल्ले में करुण रस दिखाई देता है ।

व्यंग्य

- मेरे हाथ का स्पर्श उसको जलाने लगा - पृ.५७
- तुम तो बिलकुल ठंडे हो - पृ.११०
- सरपंच की लडकी रुपबा से सावध रहना (बचके रहना) ११४
- कहाँ तक ऊंगलियाँ देखते रहोगे ? -पृ.१५०
- मुर्दे की तरह क्यूँ जीते हो - पृ.१५३
- सर्वगुण संपन्न और सुंदर कन्याएँ बडे कुल में ही जन्म लेती है ।
- ठंडे पानी से स्नान करवाकर ठंडे कर देना है -पृ.१८२
- मैं भी गाँव की हूँ, कांटा लगने दूँ, ऐसी भोली नहीं हूँ, पृ.१८५
- उसका शरीर मेरे शरीर से टकराया, और मुझे पृथ्वी हिली ऐसा लगा- पृ.१८८
- अकेले डूबने में मजा नही आयेगी, कोई साथ में चाहिए - पृ.१९१
- तोरल के स्पर्श मात्र से मेरे शरीर की ठंड पानी में चली गई - पृ.१९२
- तलवार को चारो ओर घूमाकर लल्लु गरीबी काटने मथ रहा था ।
- तुम इतने नरक हो ऐसा मालुम होता तो तुम्हारे साथ परिचय ही नहीं करती । पृ.२२३
- स्त्रीयों की तरह कोने में मत पडे रहना (गोपाल पटेल चंपा की इज्जत लूँटने पर जेठा को कहता है । पृ.२३४)

उपन्यास में गीत का प्रयोग भी किया है । तूरी नाटक खेलते है, गाँव के सभीलोग अपना काम, दुःख, दर्द, भूलकर रसमग्न होते है । लेखकने यह यथार्थ चित्र उपस्थित किया है । पुरुष ही नायिका का खेल

करता है, नायक-नायिका गीत गाते है-

उदाहरण- लोकगीत, फिल्मीगीत

(१) चाली चालीने थाकी हूँ तो चाली चालीने थाकी

मारु चालेलु मजरे ना आयु, रे ओ फकीराना नाथिया

(२) मणियारो आयो घरना आंगणे

(३) सोनकंसारी नाटक

कभी हास्य तो कभी करुण, वीर, शांत, श्रृंगार रस में ये नाटक, गीत लोगो को मग्न कर देता है ।

उपन्यास में चित्रित समस्याएँ जैसे सवर्णो द्वारा स्त्रियाँ एवं गरीब वर्गका शोषण एवं अत्याचार, गाँव के झगडे, मान्यताएँ, अंधश्रद्धाएँ, जनश्रृतियाँ, गाँव के लोगों के विश्वास, आदि के भाव के अनुरुप शब्दावली के प्रयोग द्वारा प्रस्तुत किया है ।

देशकाल, वातावरण की दृष्टि से नेलियुं उपन्यास हमारे गाँव का यथार्थ चित्रण करता है, दलित समाज, पटेल समाज, दरबार ठाकुर समाज उनका काम, आपसी व्यवहार छूआछूत, संघर्ष खेत का यथार्थ वर्णन किया है ।

दलितों की स्थिति, दरबारों का शोषण, रीतिरिवाज, दलित नारी, पटेल एवं दरबार नारी, शिक्षा-दीक्षा, पहनावा, प्रेम व्यवहार, नेता (सरपंच) का व्यवहार आदि का श्री मोहन परमार ने बडा ही स्वाभाविक एवं वातावरण अनुकूल चित्रण किया है । इसीसे उपन्यास में यथार्थता की ध्वनि अधिक मुखर उठी है ।

नेलियु के पात्र एवं घटना को देखकर लगता है कि समाज की वास्तविक दशा को चित्रित किया है । रायसंग दलितों को एक पशु से भी बदतर हालत में देखना चाहता है, और ऐसा व्यवहार करता है । दो वक्त खाना खाकर एक शब्द बोलने का अधिकार नहीं, ऐसा मानता है । स्त्रीयाँ की इज्जत लूँटने का प्रयत्न करता है, गालियाँ देता है । ये हमारा समाज है । मजदूरी पे बुलाकर कम पैसे देता है ।

नेलियु में चित्रित समाज की दुर्दशा के मूल में आर्थिक अभाव भी कारण है, आर्थिक कारण के लिये ही दलितों को मजदूरी करने के लिए दरबारों और पटेलो के यहाँ जाना पडता है । अपने पास कोई मिल्कत नहीं है (पृ.३५५) जिसमें वह अपना जीवन व्यवहार चला सके । मजदूरी करना ही उनके लिए श्रेष्ठ है । बुनाई के काम में भी थोडी बहुत आय होती है, पर ये धंधा भी वैसा ही है, कला भी चाहिए और काम करने पर भी आय कम ही होती है,

मिल बंद हो जाने के कारण मणीलाल जैसे कई दलितो को शहर छोडकर गाँव वापस आना पडता है । बुनाई का धंधा या तो मजदूरी ही करनी पडती है ।

पटेल भी दरबारो की जमीन जोतते है, अभेसिंह जैसे जीवनभाई पटेल को दो साल का हिसाब भी नहीं देते, पटेल भी पहले तो ठीक थे, अब सरकार लोन देती है तो बडाई करते है ।

वर्णन के तीन प्रकार है । पात्र का वर्णन, घटना वर्णन, प्रकृति वर्णन । गाँव में पुरुष धोती-शर्ट पहनते है, शहर में कोट पाटलून, कोई टाई भी बाँधते है । स्त्रीयाँ साडी, ब्लाऊज, घाघरा पहनती है, घूंघट निकालती है । गरीब स्त्रीयाँ की साडी फटी हुई होती है ।

पात्र वर्णन - एक ँऊचा गोरा और स्वरुपवान पुरुष धोती, कूर्ता और पघडी पहनकर शांति गंभीर) सेचलता था (पृ.६५) जो शिवाबापा थे । बडी बडी आँखों, भरापुरा चोहरा, पतली कमर, शरीर का हर अंग बीना खामी वाले (पृ.११९)

दलित सवर्ण के घर जाते थे, किन्तु आँगन में ही बैठते है । दलितों ने ये स्वीकार भी कर लिया है । चाय अपने बरतन में ही पीते है, सवर्ण दलितों को छूते नहीं है, लेकिन रायसंग जैसे चंपा (दलित) की इज्जत लूंटने का प्रयत्न करता है, वही छूआछूत भूल जाते है । आँगन में दलित बैठता है, तो भी पडौसी क्रोधित होते है, कि घर तक अब तो ढेड आ जाते है । (पृ.७९)

दलित मुहल्ले का वर्णन

मुहल्ले की शुरुआत में छोटा मंदीर था, मंदीर से आगे एक छोटा रास्ता था, रास्ते की दोनों और खपरैलवाले मकानो की दो लाईन थी । कोई भजन गा रहा था । एक दो घर में खटापट, खटापट आवाज आती थी । वातावरण स्वच्छ था, छूने का कोई प्रश्न ही नहीं था । धोती की जगह टुवाल एक आदमी ने पहना था, रस्सी का कंदोरा भी पेहना था । घर बहुत नीचे थे । माथे पे भी टकराये इतने नीचे थे । घर में गरीबी स्पष्ट दिखाई देती थी । (पृ.८० से ८२) यह मुहल्ला गाँव से बिलकुल अलग था, ये लोगो का अस्तित्व ही अलग दिखाई देता था । (पृ.८४)

लडकी को पढाने का शौक, ट्युशन करवाना, अंग्रेजी का अभ्यास करवाना सुखी लोग समजते है, दुःखी तो स्वयं मजदूरी करते है, लडकीयों के पास भी मजदूरी करवाते है । पटेलो में शादी बदला पद्धति के अनुसार होती है । त्योंहारो के दिन पवित्र स्थान पर मेला होता है, नदी में नहाने की महिमा है ।

दलित मंदिर बनाते है, लेकिन मंदीर प्रवेश कर नही सकते है, उन्होंने भी ये स्वीकार कर लिया है । कहीं कहीं सामूहिक अत्याचार भी दलितों पर होता है । तूरी (दलित जाति का एक प्रकार) रात में नाटक का खेल करते है, पूरे गाँववाले ये देखने आते है । पुरुष ही स्त्री का रोल करता है, गीत कट करवाना, नया गीत शुरु करने का एक आनंद होता है । राजाओं का नाटक, धार्मिक नाटक भी ये करते थे, गाँवो में फिल्म का प्रचार कम था, तब ये आनंद का एक मात्र साधन था ।

ठाकुर शराब बनाते है, शराब पीकर गालियाँ देते है, पटेलो की फसल रात में काट लेते है, सरपंच को पटेल फरीयाद करते है, किन्तु सरपंच भी ठाकुरो का है इसीलिए कुछ नहीं करता । इस प्रकार ठाकुर और पटेल के बीच जाति-भेद संघर्ष चलता ही रहता है । (पृ.२०५)

जातिभेद के कारण गाँवो में झघडा होता है, छोटी सी बात पर संप्रदाय दंगे हो जाते है, जो आज भी सही है, अब शहर में भी

ये दंगे चालु हो गये है, क्योंकि दलित बेचारे है, ताकत कम है इसीलिए उन पर पहले ही हमला करते है । दलित संघर्ष करे तो हिजरत करने का समय आ जाता है ।

हमारे नेता वहीं बनते है, जो गुनेहगार है, जिसकी लाठी उसकी भैंस यहाँ यथार्थ है । उपन्यास में यह स्पष्ट है । अभेसिंह सरपंच विरोध पक्ष के नेता को ही खत्म कर देता है । कोई सामने होता हे, तो दूसरों के द्वारा खत्म करवा देता है और उसे जेल में से भी छूडवा देता है (पृ.३५२)

इस प्रकार देशकाल और वातावरण की दृष्टि से नेलियु उपन्यास सफल है । सामाजिक प्रश्नो को उजागर किया है । गाँवो में स्वर्ग नहीं है, ये स्वर्ग तो सवर्णो के लिये है, दलितो के लिए गाँव नर्क से भी बदतर है । संघर्ष की चरमसीमा है । पात्रवर्णन, प्रकृति वर्णन, घटनाओं का वर्णन सही रुप में देखने को मिलता है ।

नेलियुं उपन्यास की भूमिका एक ग्रामप्रदेश की है । किन्तु लेखक की दृष्टि राष्टभर में गेहरे मुल गाडकर बैठी और महाअनर्थरुप हो चूकी अस्पृश्यता की समस्या ऊपर है ।

नेलियुं का उद्देश्य समाज में दलितों का स्थान कैसा है, ये प्रकट करने का है । उच्चशिक्षा प्राप्त डे.एन्जिनियर व्यक्ति यदि मात्र दलित हो, ऐसा जानकर सवर्ण समाज उसके सामने भी देखना नहीं चाहता, उसके साथ साथ दलित जाति-उच्चजाति का संघर्ष, शादी, प्रेम, व्यवहार, शोषण-शोषित समस्या, मेला, नदी, खेत, नेता, सांप्रदायिक दंगे (उच्चजातियो के बीच भी) विद्यमान है ये दिखाना है ।

(१) दलितों की स्थिति का यथार्थ चित्रण करना

उपन्यास में दलितों की स्थिति को यथार्थ रुप में चित्रित किया है । बुनकर कपडे बूनने का काम करते है, किन्तु ज्यादा पैसे नहीं मिलते, जीवन व्यवहार जैसे-तैसे चलता हे, दूसरे लोग मजदूरी करते हे, ज्यादा मजदूरी करवाके पैसे कम देते है, स्त्रीयों की इज्जत लूँटने का प्रयास करते है । उनके घरो में गरीबी स्पष्ट दिखाई देती है, स्त्रीयाँ की

साडी फटी हुई होती है । मंदीर में प्रवेश करना नहीं चाहते, क्योंकि सेहने की आदत हो गई है । सवर्णो के घर जाते है, तो आँगन में बैठते है, सवर्णो से दूर रहना पडता है । छूए तो गालियाँ देते है, कभी कभी पिटाई भी होती है । इस प्रकार नेलियु उपन्यास में दलितो की स्थिति दर्शायी है, ये दयनीय और यथार्थ स्वरुप में है ।

(२) दलित और दरबार (ठाकुर) जाति के बीच संघर्ष

पटेल और दरबार के बीच संघर्ष (एक नया यथार्थ)

उपन्यास में यथार्थ चित्रण किया है, गुजरात के गाँव दलितों के लिए नर्क से भी बदतर है, क्योंकि स्त्रीयाँ मजदूरी करने जाती है तो इज्जत लूँटने का प्रयास करते है, पुरुष सामना करते है, तो दरबार एकत्रित होकर दलित मुहल्ले पर हमला करते है, अब तो दलित भी शहर में जाकर कायदे का ज्ञान लेकर आये है, और वह भी संघर्ष करते है, दलित नारी भी अब तो हँसिया लेकर सामना करने के लिए मजबूत हो रही है । थोडी सी गलती करे तो भी सवर्ण दलित पर अत्याचार करते है । पशु से बदतर गुलाम से बदतर हालत में दलितो को देखना चाहते है । मणीलाल जैसे दलित अब दरबारों को कूए में भी लटका सकते है, किन्तु आज के नेता गाँधी नहीं है, वह तो रावण है, और उनको साथ देते है जो राक्षस है ।

पटेल और दरबार के बीच भी संघर्ष चलता रहता है, जो एक नया यथार्थ है, गाँवो में दिखाई देता है किन्तु साहित्य में यह पहला कदम है । गोपाल और रायसंग के बीच संघर्ष चलता है, पटेल का जूथ दलितों को सहारा देता है, मदद करता है, किन्तु छूआछूत के बारे में वह भी दरबारों से पीछे नहीं है ।

(३) उच्चशिक्षा प्राप्त दलित की दयनीय स्थिति

उच्चशिक्षा प्राप्त करके विदेश में देश का नाम आगे बढानेवाले दलित व्यक्ति को अपने देश का सवर्ण व्यक्ति छूता नहीं है, उसका अपमान करता है ।

उपन्यास में पी.डबल्यु.डी. में एन्जिनीयर साहब का मान सारा गाँव करता है, लेकिन दलित जानने के बाद उसकी गुणवत्ता का कोई मूल्य नहीं रखते, बल्कि ढेड कहकर भर्त्सना करते है । जातिगत मान्यताएँ भारत के सवर्णो में बूरी तरह से फँस गई है, जिसको निकालने के लिए सदीयाँ भी कम पडती है ।

(४) सामाजिक स्थिति, शादी, पुत्र का महत्त्व

उपन्यास में वर्णित सामाजिक स्थिति दर्शनीय है । पटेल मुहल्ला, दरबार मुहल्ला, कूम्हार, मोची, हजाम का मुहल्ला ये सब गाँव में पहले आता है । गाँव के अंत में दलित मुहल्ला होता है, उसका अस्तित्व ही न हो ऐसा होता है । उनको कोई छूते नहीं है, मंदिर में प्रवेश उनको नहीं मिलता । पशु से बदतर उनकी स्थिति होती है । पटेलो में शादी बदला पद्धति के अनुसार होती है । पुत्र का महत्त्व ज्यादा होता है ।

(५) नेता का स्वरुप प्रक्ट करना

उपन्यास में नेता का स्वरुप कैसा होता है, यह यथार्थ चित्रण दिखाया है । अभेसिंह सरपंच गाँव में प्रगति के सिवा अधोगति का काम करता है, ठाकुर चोरी करते है, उसको सँवारता है, अतः गाँव में चोरी चालु रहती है, संघर्ष चालु रहता है । दरबार, दलित पर हमला करते है, तो गाँव छोड़कर स्वयं चला जाता है, मणीलाल की जमीन दूसरों के नाम पे करवा देता है, दूसरों के द्वारा मणीलाल का खून करवाता है, और उस व्यक्ति को जेल से भी छूडवा देता है । गाँव में स्कूल नहीं बनवाता, स्वयं ही गूनाह करता रहता है, फिर दूसरों को तो वह क्या कहेगा ? सचमुच देश के नेता ऐसे ही आज बन गये है ।

(६) दलितों की एक जाति (तूरी) के बारे में जानकारी देना

उपन्यास में नायक-नायिका राजा, उच्चवर्ग के व्यक्ति ही होते थे, किन्तु समय ने करवट बदली है । यह उपन्यास में नायक तूरी जाति का व्यक्ति है, उसके साथ साथ तूरी मुहल्ले, घर के बारे में भी जानकारी दी है । ये लोग नाटक का खेल करते है, राजाओं का खेल, धार्मिक

खेल, करते है, नायिका भी पुरुष ही बनता है, संगीत, लोगों को तीन चार घंटे तक आनंद में रखते है । फिल्म, टी.वी. के कारण अब रस कम हो गया है, फिर भी उनकी एक दुनिया होती है । नाटक का खेल करके संस्कृति के मूल्यों का जतन भी उन्होंने किया है । फिल्मी गीत, हास्य के टूचके भी बोलकर श्रोताओं को खुश करते है । ये लोग मजदूरी भी करते है । इस प्रकार तूरी जाति का एक उपन्यास नेलियु कहें तो भी कम नहीं है ।

नेलियुं शीर्षक भी यथार्थ है । साहब गाँव में रहते है, गाँव को अच्छा बनाने का प्रयत्न करते है । उनकी मर्यादा सारा गाँव रखता है, किन्तु कब तक ? जहाँ तक जाति के बारे में कोई जानता नहीं था तब तक ! और जान के बाद, जो सारे भारत में होता है, वही गुजरात में भी उपन्यास में भी होता है ।

साहब नेलिये के द्वारा दूसरे गाँव चले जाने का तय करते है, क्योंकि वहाँ शायद छूआछूत न हो ! ये नेलिये में जाने का दुष्कर है, क्योंकि धूल ज्यादा है, नेलिये के दोनों और थूहर की बाड है, थूहर के काँटे ऊँगलियाँ पर टच टच करके साहब को दर्द की अनुभूति कराते है।

ये रुपक भी है, साहब दलितों का प्रतिक है, थूँहर के काँटे सवर्णो का प्रतिक है । सवर्ण सदैव दलितों को दर्द देते है । उनके हृदय पर मानसिक रुप से चोट करते है, उनको मानव के रुप में जीने नहीं देते । साहब ऐसा रास्ता ढूँढना चाहते है- वहाँ से जाने के बाद छूआछूत न हो ! ऐसे गाँव में जाना चाहते है, जहाँ इन्सान इन्सान के रुप में जीते हो, और दूसरों को भी इन्सान की तरह देखते हो ।

ये नेलियु आज तक तो मिला नहीं है ! शायद कभी भी मिल जायेगा । साहब जरुर उसमें प्रवेश करते है, किन्तु अभी तक नेलियु (रास्ता) पार नहीं किया ।

उपन्यास में समय और स्थल की एकसूत्रता ज्यादातर है ।

श्री डॉ.के.एम. मकवाणा अपने संशोधनग्रंथ में नेलियु के बारे

में लिखते है-

नेलियुं उपन्यास भी मर्यादाओं से मुक्त नहीं है । कृति का मूल प्रश्न कई जगह पे साईड में रह जाता है । और नायक का प्रणय त्रिकोण विशेष जगह रखता है । शायद समकालीन में सिरियल के रुप में प्रगट होते, सिरियल उपन्यास के कुलक्षण के रुप में यह प्रकरण ज्यादा विकसित है । दूसरी और रुपबा का चरित्र निराला होने पर भी गाँव में हुए संघष प्रसंग पर ही इस प्रकार स्कूटर लेकर आती है और रिवोल्वर से गोलीबार करती है । यह प्रसंग ग्रामजीवन के संदर्भ में सही नहीं लगता और यह प्रसंगलेखन भी फिल्मी ढब से हुआ है । इस तरह वहाँ से जाते वक्त साहब और रुपबा का (स्कूटर में साथ बैठकर) दृश्य हमारे आज के गाँव भी स्वीकार नहीं कर सकते । रुपबा की यह फिल्मी स्टाइल रोक सकते थे- शायद यह भी सिरियल का परिणाम मान लिजिए- दूसरा क्या ?

फिर भी नेलियु उपन्यास ग्रामजीवन का एक सुंदर और विचारप्रेरक उपन्यास बनकर आता है । विशेषतः आईडियल सिच्युअेशन के पीछे दलित समाज के मूल प्रश्नों को उजागर करनेवाले यह उपन्यास में कई कलासंतर्पक भावस्थितियों का सुंदर निर्वहरण हुआ है । व्यवहारीक जीवन में सामान्य होती यह समस्या के मूल कितने गहरे है उतना ही नही उनका व्याप कैसे कैसे क्षेत्र में किस रुप में विस्तृत है, उनकी सूक्ष्मता से पूर्ण बुनाई यहाँ दिखाई देती है । इसीलिए दलित उपन्यास में विस्तार करती हुई कृति के रुप में नेलियु को खुश होकर गिन सकते हे ।[१]

संदर्भ

१. गुजराती साहित्य में दलित कलम -(रमणीका गुप्ता) पृ.२५६

२. वही, पृ.२५८

३. प्रियतमा- प्रस्तावना पृ.११ (मोहन परमार)

४. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास- पृ.३१६ (डॉ.गीरीश रोहित)

५. प्रियतमा- प्रस्तावना पृ.१२

६. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास- पृ.३२५

७. हयाती.सं.मोहन परमार, सितम्बर-२००१, पृ.४०

८. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी गुजराती उपन्यास, पृ.३२९

९. वही, पृ.३३१

१०. वही, पृ.३३४

११. गुजराती साहित्य में दलित कलम-पृ.२६१

१२. प्रियतमा- प्रस्तावना -पृ.११

१३. गुजराती साहित्य में दलित कलम-पृ.२५७

१४. रचनाकर्म- पृ.६९

१५. शब्दसृष्टि- अंक-११, नवे.०३,पृ.१५७ (भी.न.वणकर)

१६. वही, पृ.१९५, (श्री भरत महेता)

१७. वही, पृ.२०८, (श्री हरीश मंगलम्)

१८. पर्याय- पृ.१४ श्री भी.न.वणकर

१९. हयाती- मार्च, जून- २०००, पृ.१२३

२०. वही, पृ.१२३

२१. साठोत्तरी गुजराती नवलकथा (डॉ.के.एम.मकवाना) पृ.१६६

अध्याय-१
दक्षाबहन व्यक्तित्व एवं कृतित्व
(शोष उपन्यास का विवेचन)

नाम : दक्षा मुलजीभाई दामोदरा

जन्म दिनांक : १/६/१९६७

गाँव : कोडीनार, जी. जूनागढ

पति का नाम : डॉ. मनसुख बी.गायजन

संतान : एक पुत्री

शिक्षा : एम.ए. (गुजराती) बी.ए. (गोल्ड मेडालीस्ट)

व्यवसाय : सरकारी हाइस्कूल माजी राजबा ग.हा.में क्लर्क

कृतियाँ : शोष (उपन्यास)

सावित्री-अप्रकाशित (उपन्यास)

ईनाम : शोष कृति को वर्ष-२००३ का गुजराती साहित्य परिषद का भगिनी निवेदीता प्रथम पुरस्कर मिला है ।

शोष उपन्यास विवेचन :

१ाा`ष’उपन्यास गुजराती दलित साहित्य का आधुनिक उपन्यास है । कथावस्तु नवीन है, आधुनिकता और ईतिहास को मिलाने का प्रयत्न सफल हुआ है । नायिका प्रधान उपन्यास है । कॉलेज, सी.ए. नौकरी करते हुए पात्र है । शिक्षा के महत्त्व को प्रधानता देते है । संवाद चोटदार है, आज की पिढी के आधुनिक जमाने के अनुरुप भाषाशैली है । संस्कृत शब्द, अंग्रेजी शब्द, वाक्य, गीत, दलित उपन्यास में भी कलात्मकता और २१वीं सदी के अनुरुप भाषा है । यह सूचित करता है कि दलित उपन्यास पीछे नहीं है, किन्तु अब आगे कदम बढा रहा है ।

पात्रों की मानसिकता पर ज्यादा बल दिया है, कथा कम, घटनाक्रम, किन्तु मानसिकता पर ज्यादा बल दिया है । जो आज कई जगह पर देखने को मिलता है । उसका इलाज भी माता, म्हादेव, मंत्र, तंत्र के द्वारा नहीं किन्तु मनोचिकित्सक के द्वारा करवाया है । यह उपन्यास पढने में शब्दो को समझने में ग्रेज्युएट व्यक्ति की भी कसौटी हो जाती है ।

‘स्त्री के प्रश्नों को एक स्त्री ही समझ सकती है, और यह प्रश्न को स्त्री व्यक्त करे यह वाजबी है, प्रस्तुत करने में लेखिका सफल है ।

१ाा`ष’उपन्यास की कथावस्तु नवीन हे, रसप्रद है । उपन्यास की नायिका माधवी पढती है, बारहवीं कक्षा में पढता लडका राजेन्द्र मकवाणा के प्रति आकर्षित होती है । माधवी के पिता चार्टड एकाउन्टन्ट है । माधवी के जन्म के समय उसकी माँ की प्रसूति जान लेवा साबित हुई थी । इसीलिए फरजियात रुप से कुटुंब नियोजन अपनाना पडा था । माधवी के सिवा एक बहन थी, पुत्र नहीं था इसीलिए दोनों लडकियों को प्रेम करते थे, फिर भी मन के एक कोने में माधवी के प्रति तिरस्कार रहता था यह छूपाने के लिए कहते थे, लडका-लडकी में क्या फर्क होता है ? अच्छा लालन-पालन और शिक्षा दे तो लडकी भी लडका बनकर रहे ।

माधवी यह सूनकर विह्वल हो जाती थी, पप्पा क्यूँ ऐसा बोलते है ? पर कुछ कह सकती नहीं थी । पुरुष प्रधान समाज का समाजदर्शन स्पष्ट दिखाया है ।

बडी बहन दूसरी जाति के लडके के साथ शादी कर लेती है । माधवी को सी.ए. बनाना चाहते है, किन्तु वह तो बारहवीं कक्षा में सिर्फ पास होती है, इसीलिए उसके पिताजी क्रोधित होते है । मानसिक रुप से बेचैन हो जाती है । मनोचिकित्सक के पास ले जाते है, स्कीजोफ्रेनिक का निदान करते हे, चित्रकला, पोझिटीव एटमोसफीयर और उसकी सर्जनात्मक शक्ति ही दवाई है, और अच्छा पति जो उसे बेहद प्यार करे वैसा ढूँढना चाहिए ।

पुरंदर के साथ शादी भी कर देते है, लेकिन पुरंदर शारीरिक तृप्ति को ही प्यार कहता है, अतः माधवी मानसिक शांति का अनुभव नहीं कर पाती, उसका मन कहीं ओर ही घूमता है ।

माधवी पति-पत्नी के संबंध को नेता-मतदाता के संबंध जैसा ही कहती है । चुनाव के बाद कुछ नहीं । पुरंदर प्रेम और सेक्स को एक सिक्के की दो बाजु कहता है, जबकि माधवी उसे एक ही मानती है ।

राजेन्द्र मकवाणा प्रसिद्ध चित्रकार बन जाता है, शहर में चित्रकृति का प्रदर्शन और कृतियों को बेचकर उसकी आय जलसंचय अभियान में देना चाहता है । माधवी भी अपनी कृतियों को देने जाती है, राजेन्द्र खुश होता है और कहता है... माधवी.. सांसारिक जीवन की प्रक्रिया में भी तेरे अंदर कलाकार जिन्दा रहा है ।

राजेन्द्र अपने परिचित व्यक्ति को चित्रकार माधवी के पति मि.पुरंदर कहकर परिचय देता है, तो पुरंदर को दुःख होता है । उसी रात वह शराब पीकर मानसिक रुप से शांत बनना चाहता है । माधवी को कहता है कि अनमेरीड राजेन्द्र मकवाणा के साथ संबंध रखने में मर्यादा रखना । दोनों के बीच काफी गरमागरम चर्चा हो जाती है ।

एकांत में अकेली कच्छी स्त्री का चित्र राजेन्द्र को माधवी दिखाती है, कथा कच्छ की ओर घूमती है ।

माधवी को अकाल याद आता है, मन के अंदर भी अकाल है । पुरंदर स्त्री को चार दिवारों में देखना चाहता है, तो माधवी स्त्री की वास्तविकता की बात भृणहत्या, दुध पीती, व्यभिचार, बलात्कार के लिए ही स्त्री है ऐसा कहती है ।

पुरंदर माधवी को चित्रकला अतृप्त मनोझंखना का सर्जन कहता है मात्र मुझे शरीर दिया है, मन कहीं ओर है, माधवी हतप्रभ हो जाती है । बाद में समझाता हुआ कहता है प्रदर्शन तक राजेन्द्र के साथ रहना बाद में छोड देंगे, माधवी प्रदर्शन में जाना नहीं चाहती, वह तो शांति हो ऐसा काम करना चाहती है । स्त्री के लिए मर्यादा, पुरुष के लिए कोई विशेष लायकात नहीं चाहिए । शादी करने से खेल खेलने की परमिशन मिल जाती है । इस प्रकार दोनों के बीच संघर्ष चलता ही है ।

पुरंदर चित्रकला या पुरंदर दोनों में से एक को पसंद करने को कहता है । माधवी का मन कहीं और घूमता है, फिर भी इच्छाओं को कछुए की तरह वश में कर लेती है । एक पुस्तक विमोचन प्रसंग पर राजेन्द्र, पुरंदर मिलते है, तो फिर से माधवी-पुरंदर के बीच संघर्ष होता है । माधवी भी पुरंदर को कहती है तुम स्त्रियों के साथ रश्मिता, सुहानी के साथ बात करते है तब मेरे मन में भी कुछ होता है । उसकी कल्पना की ? दाम्पत्यजीवन डाँवाडोल होता है । पुरंदर, माधवी और राजेन्द्र को एकसाथ देखना नहीं चाहता था, क्योंकि राजेन्द्र जैसा चित्रकार चारित्र्य के बारे में बदनाम हो चुका था, पुरंदर डाईवोर्स के लिए तैयार हो जाता है । माधवी आत्महत्या करना चाहती है, किन्तु राहुल का हसता फोटु देखकर कदम वापस लौटा देती है ।

पुरंदर माधवी को कच्छ प्रवास ले जाता है, माधवी को आश्चर्य होता है ! पुरंदर का हृदय परिवर्तन हुआ ! उसे लगता है कि पप्पा की मिल्कत के कारण ही ठंडा हो गया है । भूज से भद्रेसर जाते है, देरासर देखते है, भद्रेसर में दो सौदागर थे, जगडुशा और दुदाशा । जगडुशाने देरासर बनाये, दुदाशाने वाव बनवाई थी । सं.१३१३ से १३१५ तक अकाल

में यह काम करवाया था । अन्न के भंडार जगडुशाने खुले रख दिये थे । वाव देखकर माधवी के मनमें भी रोष प्रज्वलित होता है ।

वाव का काम बंद हो गया था, पैसो की कमी थी, तब देशल राजकुँवर की ओर से इनाम में मिली हुई सोने की मुहर देता है और उस पैसो से वाव का काम दुदाशाने पूर्ण किया था । राजगढ की कुँवरी राजल के साथ प्रेमसंबंध है, देशल और राजल की कथा का सहारा लेकर राजेन्द्र मकवाणा और माधवी के प्रेमसंबंध को यहाँ उजागर किया है । दलित मुहल्ले, दलित लोग उनकी समस्याएँ, शरीर वर्णन भी लेखिका ने बखूबी से किया है । मटके को कोई भर देती है, तो दूसरी कोई उसे फोड देती है, ये दलित की विडम्बना !

देशल और राजल की ऐतिहासिक कथा वाव देखकर माधवी आक्रंद, विलाप करती है । पुरंदर बथ में ले लेता है, पर माधवी कहती है मेरे अंतरकी बेदना के साथ तुम्हारी वासना का कोई संबंध नहीं है ! पुरंदर तो शर्मिन्दा हो जाता है, पर सारा समाज ऐसा ही है ! स्त्री के यह शब्द समाज के लिए लाल आँख है ।

माधवी के व्यवहार से चिंतित होकर पुरंदर मनोचिकित्सक से सलाह लेता है, कि धैर्य रखना और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार रखना, पुरंदर इस प्रकार व्यवहार करता है । पुरंदर कहता है कि दुदाशा मेघवाल (दलित) थे, इसलिए उन्होंने बनवाई वाव खंडेर (अवशेष) रुप में है, जबकि जगडुशा सवर्ण थे, इसलिए उन्होंने बनवाये देरासर का जिर्णोद्धार हो रहा है । अंत्यज और उच्च (सवर्ण) समाज की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया, उसका ख्याल ये दो स्मारक पर से होता है । हमारा समाज जातिवाद को दूर नहीं कर सका, क्योंकि ये दूर करने का उपचार केवल उपर उपर से ही होता है ।

देशल और लाधाजी बापू के बीच कविता के बारे में चर्चा होती है, क्षत्रिय होकर कटार की जगह कलम ? तो देशल भी कहता है जात पाँत का भेद तो पंगु मन के लोग की भ्रमणा मात्र है । कला की नगरी तो सबकी है, उसमें प्रवेश के लिए मर्मी हृदय चाहिए -

जाति-पाँति और स्त्री-पुरुष के भेद से उसे क्या ? और बाद में देशल-राजल की काव्यकला प्रश्नोत्तरी और उत्तरो में खीली उठी थी । माधवी पत्थर पर कान रखकर राजल की आधी काव्य-कंडिकाएँ सुनती है, पुरंदर रोकता है, माधवी हँसती है..... देशल.... बसाया हुआ है देशल... राजल को उसने कहा था... हमारे प्रेम के लिए सिर देने में भी हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करुँगा । माधवी को याद आता है । देशल और राजल की मानसिक स्थिति का लेखिका ने कलात्मक चित्रण किया है, किस प्रकार देशल का वध किया था, और गढ में राजल भागदौड मचाती है, मटके में जिसे कोई पानी भी न दे ! रस्सी को छूने का भी हक नहीं है, ये मर जाये तो भले ही मर जाये मेघवाल (दलित) बढेगी छूताछूत या कम होगी ! राजल को देशल की नजर मिलने से पूरे जीवन का आनंद न मिले, उतना आनंद मिलता था ।

माधवी देशल...देशल पुकारती है, पुरंदर हाथ खिंचकर ले जाने का प्रयत्न करता है, माधवी तु मृगजल के पीछे दौडती है । संभाल तेरे शरीर को.. ! तब माधवी कहती है.. मृगजल हो या स्वप्नजल .. किन्तु मुझे इस जीवन से भी ज्यादा शांति देता है, मुझे जाना है उस मृगजल में... मुझे देशल के पास जाना है । और अंत में कोमा में चली जाती है । यहाँ कथा पूर्ण होती है ।

श्री हरीश मंगलम् ने १ा ो षंके बारे में लिखा है-

१ा ो षंउपन्यास से गुजराती साहित्य जगत में कदम रखनेवाली श्री दक्षा दामोदरा के निवेदन से मालुम होता है कि यहाँ स्त्री के अधिकारों की बात की है । समाज में स्त्री पुरुष की परिकल्पना और केवल इच्छापूर्ति का साधन बन गई है । स्त्री के पास सीता, सावित्री और द्रौपदी बनने का आदर्श रखते है, किन्तु पुरुषों के लिए ऐसा कोई आदर्श नहीं रखा । पुरुष का स्त्री के प्रति यह मालिकभाव है । पुरुष स्त्री पर आधिपत्य रखता है । इस तरह हिन्दु समाज में प्रर्वतित अस्पृश्यता के दूषण के कारण रुढ हुई छूताछूत की रीत सूक्ष्मरुप से वर्णित की है । शिक्षा के कारण आधुनिक स्त्री अपने हक्कों के प्रति सतर्क बन रही है । वह जाग्रत

होकर स्त्री जाति, समस्त के प्रश्नो के लिए आवाज उठाती है, संघर्ष करती है । वह अर्धागिनी जरुर है, किन्तु गुलाम नहीं है । आधुनिक समाज में भौतिक प्रगति हुई है, उतनी वैचारिक प्रगति नहीं हुई । मानव जाति का स्वभाव रहा है कि हक्क भरपेट भुगतते है, किन्तु अधिकार देना नहीं है । स्त्री जाति को अधिकार देने में समाज ने पीछे हट की है ।[१]

'मुझे यह उपन्यास में रस इसलिए लगा कि सामाजिक बंधन तोडनेवाली नायिका माधवी का चरित्र उच्चवर्ग (सवर्ण) का है । स्त्री जाति और पछात जातियों के प्रश्नो का हल ले आने के लिए जब सवर्ण जाति आगे बढेगी, और प्रयत्न करेगी यह प्रसंशनीय तो है, साथ ही ये सब से असरकारक शस्त्र हो सकता है । राजेन्द्र मकवाणा पर्यावरण- सुरक्षा और कच्छ-सौराष्ट्र की प्यासी धरती के लिए जलसंकट अभियान के लिए अपने चित्र और प्रदर्शन में से जो आय होगी, यह अलग रखने का दृढ निर्धार करता है, उसी प्रकार देशल वाव का अधूरा काम पूर्ण करने के लिए सोनामुहर दुदाशा के चरणो में देता है । इस तरह यह दोनों पात्र पछात जाति के है और दोनों पात्र समाज के विशाल हित के लिए अपने जीवन की कुरबानी देते है । माधवी और राजल के पात्र उच्चवर्ग के है । दोनों का प्रेम और संघर्ष अमर बनता है । यह उपन्यास विषयवस्तु की दृष्टि से स्त्री जाति और पछातजाति के अस्तित्व का उपन्यास बनकर रहता है ऐसे उन्नत पात्रो का सन्मान की दृष्टि से मुल्यांकन करना चाहिए । स्त्रीयाँ और दलितों के प्रति उपेक्षाभाव रखना नहीं चाहिए । भारत देश के निर्माण में अमूल्य योगदान है ऐसे वाल्मिकी, शंबुक, शबरी, वीर हनुमान, महर्षि वेदव्यास, महिदास, अैतरेय, विदुर, एकलव्य, सत्यकाम, जाबाल, पिप्लाद, कवल एलुष, उदालक, गार्गी और वाचकनवी आदि पछात जाति के थे ।

१ ा ा ॆ षॏउपन्यास में लेखिका का कोई काकतालीय आयास नहीं है । प्रणय-चिंतन का निरुपण कलाकक्षा में विहरता है । ऐतिहासिक कथा के अंशो का वहन माधवी की प्रवर्तमान परिस्थिति के साथ ताल मिलाता है । माधवी की चैतसिक स्थिति दयनीय है । चेतन-अवचेतन गतिविधियों

से पैदा होती विडंबना विषयवस्तु को जकड के रखती है । अतीत और सांप्रत को जोडने में लेखिका को सफलता मिली है, ये तो है हमारी उपलब्धि । स्त्री जाति और पछात जाति समस्त की सिसृक्षा खिले ऐसी अंत:करण की शुभेच्छासह लेखिका को हूँफरस अभिनंदन ।

उपन्यास की श्रेष्ठता के मुख्य कारणों में पात्रालेखन मुख्य है । पात्र आकर्षक और ताद्रश है । लेखिका ने यह पात्रसृष्टि में शिक्षित पात्रो के जीवन की सृष्टि को स्थान दिया है । स्त्री पात्रचित्रण में पूर्ण शक्ति के दर्शन होते है । स्त्री जीवन और उनमें रही सुषुप्त अपूर्व शक्ति का गान किया है । उत्तमपात्र है तो दुष्ट पात्र भी है, इस तरह पात्रसृष्टि में वैविध्य है ।

पात्रो की मानसिक स्थिति का वर्णन उत्कृष्ट है । उपन्यास की नायिका माधवी है, उनके माता-पिता, बुआ, शादी के बाद पुरंदर, मनोचिकित्सक, राजेन्द्र मकवाणा के पात्र है । राजल देशल के पात्र भी उपन्यास को श्रेष्ठता के शिखर पर बिठाते है । माधवी के पिता सी.अे. है, उच्चवर्ग के शिक्षित पात्र है, पुरंदर भी कम्पनी में अच्छेपद पर है । राजेन्द्र मकवाणा और देशल का पात्र दलित है वह भी शिक्षित है एक चित्रकार तो दूसरा कवि है, वीर है । राजल का पात्र राजकुमारी का है । राजेन्द्र मकवाणा और देशल का पात्र एकदूसरे से साम्यता रखता है । माधवी और राजल का पात्र भी एकदूसरे से साम्यता रखता है । आर्थिक रुप से ये सभी पात्र सुखी है । आर्थिक समस्या कम है, पर मानसिक रुप से त्रस्त है । यौन (Sex) समस्याओं से त्रस्त पात्र भी है ।

१ ा ा े षी नायिका प्रधान उपन्यास है । नायिका माधवी है । माधवी के बापु की पुत्र प्राप्ति की इच्छा पूरी नहीं हई थी, माधवी के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करते थे, फिर भी कहते थे, लडकी लडके में क्या कर्फ है ? किन्तु माधवी समझ जाती थी, बापु लडकीयों पर प्रेम क्यों नही रखते ? किन्तु बोल नहीं पाती थी ।

माधवी शिक्षाकाल में राजेन्द्र मकवाणा के प्रति आकर्षित होती है, चित्रसर्जन, काव्यसर्जन की प्रवृत्ति करके कला के द्वारा राजेन्द्र के प्रति

की आसक्ति व्यक्त करती है । ऐसे समय में ही उसकी बडी बहन प्रेम लग्न करके चली जाती है, तब उसके पिता क्रोध में कहते है -बन सकेगी चार्टड एकाउन्टन्ट तू ? माधवी हतप्रभ हो जाती है, चित्रकला छूडवा देते है, बारहवी कक्षा में सिर्फ पास होती है, तब मानसिक रुप से बेचैन हो जाती है । रोती है, रोते रोते हँसती है, ऐसी स्थिति में मनोचिकित्सक स्कीजोफ्रेनिक होने का निदान करता है । वह दवाएँ देता है और सर्जनात्मक कार्य जैसे कि चित्र, काव्य प्रवृत्ति की ओर रस में प्रवृत्त करने के लिए कहता है ।

पुरंदर के साथ शादी कर देते है, किन्तु मानसिक रुप से राजेन्द्र मकवाणा के प्रति झुकती है । पुरंदर के साथ उसके मिलन से आनंद के बदले ग्लानि, भींस का अनुभव होता है । बापु का प्रश्न "बन सकेगी चार्टड एकाउन्टन्ट तु ?" प्रतिध्वनित होता है ! पुरंदर माधवी के शरीर को ही झंखता है, माधवी चुरचुर हो जाती हे, मन कुछ और आशा रखता है, इसीलिए माधवी की प्यास बढती ही जाती है, शारीरिक मिलन के प्रसंग में भी माधवी वासना, प्रेम के तत्त्व चिंतन में खो जाती है ।

पुरंदर... तुम्हारी शारीरिक तृप्ति के लिए ही मेरा अस्तित्व है ? उसके बाद या उसके पहले मैं कुछ नहीं हूँ ?.. किनारे को सदैव अश्लिष्ट रखे वैसा समुद्र नहीं होता ? माधवी को सफल दाम्पत्यजीवन का पूरा आनन्द नहीं मिल पाता । यहाँ आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती है । शरीर और मन दोनों संतुष्ट करे ऐसा पुरुष उसे चाहिए । वह आगे कहती है, उसमें कितन व्यंग्य है ।

पति-पत्नी का संबंध अर्थात् नेता-मतदाता का संबंध... । चुनाव तक ही मतलब.. मतदाता के अस्तित्व के साथ कौन सा संबंध, कभी अंदर भी देखो ! ज्वालामुखी भभकता है, वहाँ शारीरिक संनिकर्ष के लिए या दैहिक संपात के लिए ही हम दोनों को एक करनेवाले तुम्हारे उन्माद उसके बाद तुम्हारे पृथग्वास से उठती मेरी इच्छा के बारे में कभी सोचा है ? अक्षतानंद के लिए तृप्त मेरे अंतर को उत्ताप से भर देती संवनन बाद की शुन्यता के बारे में सोचा है ?

राजेन्द्र मकवाणा से प्रेम करती है, किन्तु वह दलित था इसीलिए घर आकर आँखे धो डालती है । स्त्री अन्य पुरुष के साथ मित्रता रखे तो समाज स्त्री को गलत तरीके से देखता है । जबकि पुरुष अन्य स्त्री के साथ मित्रता रखे तो कुछ नहीं ! समाज के मापदंड अलग है, यह माधवी स्पष्ट करती है ।

जलसंचय अभियान के लिए चित्रो का प्रदर्शन देखकर माधवी को मनमें होता है कि राजेन्द्र जो मेरा समकक्ष कलाकर नहीं था, आज कितना आगे निकल चुका है । स्त्रीयाँ की स्थिति समाज में कैसी है, उनके बारे में माधवी का कथन योग्य ही है.. चार दिवारों में स्त्री सलामत नहीं है, स्त्री की सलामती ! भ्रूण हत्या, दुध पीति, व्यभिचार, बलात्कार होता ही है, ससुर, जेठ, देवर की वासना का शिकार स्त्री होती है । स्त्री जब महत्त्वाकांक्षा बनती है, तब भूकंप हो जाता है ।

माधवी प्रदर्शन में भी भाग लेना नहीं चाहती, क्योंकि पुरंदर को अच्छा लगे वही काम करना चाहती है,... पतिव्रता है, प्रदर्शन से बढिया शांति को महत्त्व देती है, स्त्री के लिए लग्न से पहेले कौमार्य, और लग्न के बाद प्रामाणिकता अनिवार्य है ! जबकि पति बनकर पुरुष के लिए कोई शर्त नहीं !

पत्नी बन जाती है, तो स्त्री मानव भी मिट जाती है ! माधवी आधुनिक नारी है, और स्त्रीयों के अधिकार के प्रति जागृत है, सिर्फ शारीरिक शांति से तृप्ति पशु को भी नहीं मिलती तो स्त्री के साथ मानसीक शांति मिले ऐसा व्यवहार करना चाहिए, माधवी कहती है प्रेम और विश्वास तो है अनिवार्य.. जिसके बिना श्वास भी रुक जाता है । तुम्हारा घोसला बिखरने नहीं दूँगी, चाहे मैं बिखर जाऊँ । और सही में स्त्री अपना घर तूटने नहीं देती, चाहे उसका अस्तित्व मिट जाय । अपनी इच्छाओं को कछूए की तरह वश में कर लेती है ।

राजेन्द्र के साथ थोडी सी बातचीत करती है, तो भी डाइवोर्स के लिए पुरंदर तैयार हो जाता हे, ऐसी मानसिक स्थिति में वह आत्महत्या के लिए भी तैयार हो जाती है, पर राहुल का हस्ता हुआ फोटु देखकर

कदम पीछे हटा लेती है । स्त्री कारुण्यमूर्ति होती है, दु:ख समा लेती है, सुख औरों को देती है ।

एकाएक डाइवोर्स की बात करनेवाले पुरंदर को पहचानती है कि बापु की मिल्कत के कारण ही कच्छ प्रवास में ले जाता है । माधवी वाव को देखकर पसीने से तरबतर होती है, देशल-राजल की ऐतिहासिक कथा से शोक, आक्रंद और विलाप से क्रंदन करती है ।

देशल-राजल की काव्यकला, सूर्यमंदिर हरेक पत्थर पे कान रखकर राजल की आधी काव्य-पंक्तियाँ सूनती है.. पुरंदर के टोकने पर हँसती है.. देशल बसाया हुआ है ! देशल.. इस प्रकार मृगजल या स्वप्नजल से शांति मिलती है और अंत में बेहोश हो जाती है ।

राजल और माधवी दोनों दलित युवक से प्रेम करती है, सामाजिक बंधन तोडना चाहती है, सचमुच माधवी का चरित्र आज की स्त्रियाँ के लिए दीवादांडी है ।

पुरंदर का पात्र उपन्यास में महत्त्व रखता है । माधवी के साथ शादी करता है, स्पोर्टस क्लब, टुर्नामेन्ट में सशक्त और मर्दाना लड़कियों को देखकर त्रस्त पुरंदर माधवी के सौंदर्य से खुश होकर उसको पसंद करता है । पुरंदर आधुनिक पुरुष का प्रतिनिधित्व करता है, स्त्री को घर की चार दिवालो में देखना चाहता है । स्त्री भी मानव है, उनका भी मन होता है, यह शायद पुरंदर भूल गया है ।

पुरंदर का स्वभाव जिद्दि है, जो उसकी बुआ से प्राप्त हुआ था । कंपनी में अच्छे पद पर नौकरी करता है, फ्लेट में रहता है । माधवीके प्रति प्रेम जरुर है, पर प्रेम करने में, प्रेम प्रकट करने में विफल रहता है । शरीर को ज्यादा महत्त्व देता है, शरीर को दूसरे शब्दो में सेक्स कहता है । प्रेम सेक्स के कारण ही होता है, और यह स्वीकार नहीं करनेवाला दम्भी होता है । प्रेम और सेक्स को एक सिक्के की दो बाजु कहता है ।

माधवी चित्रकला में रस रखे, यह उसे बिलकुल पसंद नहीं है । दूसरे पुरुष के साथ बात करे तो उसे अच्छा नहीं लगता, किन्तु

स्वयं दूसरी स्त्री के साथ बात करता है । मैं पति हूँ और मेरी इच्छा के अनुसार ही रहना पडेगा, कला कोई अनिवार्य बात नहीं है, जिसके बिना श्वास रुक जाए ।

माधवी-राजेन्द्र को बातें करते देखकर क्रोधित होकर डाईवोर्स के लिए तैयार हो जाता है । किन्तु एकाएक ससूर की मिल्कत देखकर माधवी को कच्छ प्रवास ले जाता है । स्वभाव परिवर्तन हो जाता है ।

पुरंदर स्त्री के पास सीता, सावित्री के गुण माँगता है, पर स्वयं राम है ? उसका विचार नहीं करता । इसीलिए दाम्पत्यजीवन में दरार होती है । आज के समा का यह विकट प्रश्न है ।

राजेन्द्र मकवाणा का पात्र उपन्यास में महत्व की भूमिका निभाता है, जो दलित है । चित्रकला में प्रवीण है कॉलेज भी करता है, साथ में ट्युशन और प्राथमिक शाला में पार्टटाईम चित्रशिक्षक के रुप में कार्य करता है । पढते पढते काम करना उसका ध्येय है । वह माधवी को प्रेम जरुर करता है, पर मन ही मन क्योंकि माधवी सवर्ण है । किन्तु कॉलेज डे निमित्त बनाये हुए चित्रप्रदर्शन में रखे थे, उनमें से दो चार चित्रो में नारी के चेहरे माधवी के चेहरे से मिलते थे ।

चित्र के द्वारा राजेन्द्र स्वयं को प्रकट करता है । (प्रतीक और संक्षिप्तता के सहारे) राजेन्द्र एक कलाकार जरुर है, पर अभी तक शादी नहीं करने पर लोग, समाज उसे गलत तरीके से देखता है । राजेन्द्र के कारण ही माधवी- पुरंदरका दाम्पत्यजीवन दरारो में से गुजरता है ।

राजेन्द्र मकवाणा पर्यावरण-सुरक्षा और कच्छ सौराष्ट्र की प्यासी धरती के लिए जलसंकट अभियान के लिए अपने चित्र और प्रदर्शन में से जो आय होगी यह अलग रखने का दृढ निर्धार करता है । जिस तरह देशल वाव का अधूरा कार्य पूर्ण करने के लिए सोनामूहर दुदाशा को देता है । दोनों पात्र पछातजाति के है और दोनों पात्र समाज के विशाल हित के लिए अपने जीवन की कुरबाती देते है ।

देशल और राजल के पात्र ने उपन्यास की शोभा को बढानेका प्रयास किया है । दोनों का प्रेमसबंध अमर है । एक राजकुमारी दलित

को प्यार करती है, जिस समय छूआछूत की बोलबोला अधिक थी, सचमुच राजल एक समाजसुधारक है, जिसकी तुलना कोई नहीं कर सकता । काव्यकला में प्रवीण है, पूरे गुजरात में जिसका नाम काव्यकला में मशहूर है, कलम, तलवार दोनों में रस रखनेवाला पति चाहिए, इसीलिए किसी को पसंद नहीं करती, शूरता तो जानवर में भी होती है, शूरवीर और कलाप्रेमी उसे चाहिए । देशल में सबगुण देखती है । काव्यकला से आकृष्ट होती है, देशल का वध होता है, उसके पीछे दौडती है । उपन्यास में राजल और माधवी दोनों लडकीयाँ सवर्ण होकर दलित युवक से प्रेम करती है, उच्चवर्ग के लोग छूताछूत दूर करने के लिए आगे कदम रखेंगे तो ही परिणाम अच्छा आयेगा ।

देशल का चरित्र भी राजेन्द्र से साम्यता रखता है । देशल दलित होकर राजकुमारी से प्यार करता है । रुप, गुण, काव्यकला में निपुण है, शूरवीर है । राजकुमार से शर्त लगाता है, एक हजार सोने की मुहर जीत लेता है । वह दुदाशा को देता है और वाव का काम पूर्ण करवाता है । उसके जहाज को कोई लूँट नहीं सकता था । प्रेम की वेदी पर अमर हो जाता है । अपने सिर की परवाह किये बिना राजल से प्यार करता है, और अंत में राजा के लोग उसका वध करते है ।

माधवी के पिता का पात्र भी उपन्यास में है जो सी.अे. है । अंग्रेजी फटाफट बोलते है, गीता के श्लोक का गान भी करते है । पुत्र न होने पर पुत्रीयों को प्यार नही करते, ऊार ऊार से कहते है- पुत्री या पुत्र में क्या फर्क होता है, पर मन के विचार कुछ ओर ही है । अपनी पुत्री को सी.ए. बनाना चाहता है, जब कि पुत्री चित्रकला में होंशियार है, पुत्री न तो सी.ए. बन पाती है, न तो चित्रकार ! बन जाती है एक मानसिक मरीज । आज के आधुनिक पिता के लक्षण विद्यमान है ।

इस प्रकार शोष उपन्यास के पात्र दलित साहित्य में महत्त्व की भूमिका निभाते है, आधुनिक वातावरण निर्मित यह पात्र शिक्षित है, फैशन में रस रखते है, काव्यकला, चित्रकला में प्रविण है, अंग्रेजी में बातचीत करते है, और मानसिक बिमारी से त्रस्त है । होटल में खाना

खाते है, री-मिक्स गीत सूनते है, टी.वी. देखते है, फ्लेट में रहते है । प्रवास में जाते है, ये सभी पात्र हल्के-फुल्के है, चलते है, मिट्टी के पूतले नहीं है । स्वयं ही अपना विकास करते है, बढते है, पूर्णता को प्राप्त करते है ।

लेखिका की संवादकला योग्य है । माधवी-पुरंदर, माधवी-राजेन्द्र के बीच संवाद छोटे., सचोट, तार्किक, तेज छायावाले बने है । इसीलिए उसमें रोचकता भी आई है । पात्रो के संवाद से पात्र का मानसदर्शन जरुर होता है । माधवी-पुरंदर के संवाद चोटदार है । जैसा व्यक्ति है वैसी भाषा, संवाद प्रस्तुत किया है । लेखिका का पांडित्यदर्शन उसमें दिखाई नहीं देता, किन्तु जो शिक्षित है, माधवी, पुरंदर उसके पिताजी, राजेन्द्र के संवाद अंग्रेजी में भी है, उच्च गुजराती भाषा है, जो जरुर पांडित्यदर्शन कराती है । और यह सिद्धि भी है । प्रथम उपन्यास में ही लेखिका ने असरकारक और पात्रोचित संवाद प्रस्तुत करके यह क्षेत्र की अपनी शक्ति के दर्शन करवाये है । संवादो की दूसरी विशेषता कहावतें है, दाम्पत्यजीवन के मधुर संवाद यहाँ नहीं है, यहाँ तो व्यंग्य से भरपूर संवाद है । माधवी को चारों तरफ अंधकार ही दिखाई देता है, वह शांति चाहती है । पुरंदर क्रोधित ही है, जो वहम से पीडित है, इसीलिए प्यारभरे संवाद उपन्यास में नहीं है । उपन्यास की विषयवस्तु यथार्थ ज्यादा है और यथार्थ होने के कारण वास्तविक दर्शन ज्यादा है । हवाईमहल कम है और हवाईमहल में ही श्रृंगार से भरपूर संवाद होते है । लेखिका को जो भी केहना है स्पष्ट शब्दो में कहा है । अपेक्षा ज्यादा नहीं रखी, जो देखा है उसका असली स्वरुप प्रकट किया है, इसीलिए संवाद चोटदार है ।

देशल-राजल के संवाद काव्य के द्धारा प्रकट किये है, उसमें जरुर श्रृंगार के दर्शन होते है ।

श्री हरीश मंगलम् ने संवाद के बारे में लिखा है- नारीवाद के झंडे या प्रचार की बू आये बगैर लेखिका ने पुरुष जाति के मालिकीभाव के अहम् एकाधिकारवाद को खुलाकर दिया है । पति पत्नी के गृहस्थजीवन

में गेहरी होती जाती और चित्तस्तर में प्रसारित होती खाई को छोटे-छोटे वाक्य और भाषाबल से प्रकट किया है । महत्त्व की बात यह है कि लेखिका यहाँ से अटके नहीं, आगे जाकर सर्जक-स्पर्श अर्पते है । गद्य में से जाते वक्त कभी कभी वास्तववादी पुरंदर सत्य की नजदीक लगता है, तो कभी कभी आदर्शवादी माधवी ! जरुरी और चोटदार संवादो से साचा निशान तककर लेखिका ने प्रेमतत्त्व की झाँखी करवाई है ।

महत्त्वपूर्ण संवाद

संबंध शरीर के साथ ही बंधा हुआ है, मधु तुने मुझ को और मैंने तुम्हें पसंद की, ये क्या देखकर ? (पुरंदर)

हाँ, किन्तु, यह शरीर में फिर भी शरीर से पर ऐसा भी कुछ होता है, जिसको प्रेम कहते है । शरीर नाव जैसा है, और उसे तो नासमज ही गिनते है, सामने किनारे जाने का आलंबन लिया है, ये नाव को ही अंतिम ध्येय मान ले ।(माधवी) पृ.२३)

प्रेम और सेकस.... एक सिक्के की दो बाजुएँ है, यह अटल सत्य को तुम्हारा लंबा लेक्चर भी असत्य साहित्य नहीं कर सकेगा (पुरंदर, पृ.२३,२४) हाँ पुरंदर प्रेम और सेक्स एक सिक्के की दो बाजुए है, ये कभी एक नहीं हो सकेगी (माधवी)

उसी तरह प्रकरण चार में स्त्री-पुरुष, सेक्स-कला, अवहेलना, प्रेम और एकलता के बारे में संवाद भावक के हृदय को स्पर्श करता है । (पृ.२८,२९,३०)

कला के नाम से अपना और दूसरे का संतोष पूरा करने का तरीका मात्र है ये सभी ... !

मंदिर..धर्म के पीछे सत्ता की भूख और कला के आलंब से प्रसिद्धि की भूख संतोष तो करती है, किन्तु अब पानी के बहाने से पद, प्रतिष्ठा और पैसे प्राप्त करनेवाले खडे हो रहे है ये सब...!

और मेरे ख्याल से महत्त्वकांक्षी स्त्री और कुत्ती के बीच कोई फर्क नहीं होता (पृ.५६)

वेश्याओं से बदतर है..बदतर... । ये सब संवादो में पुरुष पात्र का यथातथ हीन कोटि का स्वभाव व्यक्त हुआ है ।

पुरंदर के विचार राजेन्द्र के बारे में, कलाकार के बारे में, माधवी के विचार दोनो के बीच जो संवाद राजेन्द्र के बारे में हुआ है, यह देखिए (पृ.४७,४८) स्त्री,पुरुष के चारित्र्य के बारेमें यह संवाद का महत्त्व और बढ जाता है ।

स्त्री स्वातंत्र्य, स्त्री की स्थिति, के बारे में पुरंदर और माधवी के बीच संवाद कितने मर्मस्पर्शी और यथार्थ है । सचमुच माधवी के संवाद सूनकर पढकर कान के कीडे भी नीचे गीर जाते है । (पृ.५६)

पति-पत्नी की लायकात, प्रामाणिकता, पति बनकर किसी शर्त का पालन नहीं, किन्तु पत्नी बनकर कठीन शर्तो का पालन करने का संवाद रोचक कटाक्ष से भरपूर है । (पृ.६०,६१)

छोटे-छोटे वाक्य शब्द के संवाद कितने प्रभावक है और अर्थ में कहीं भी बाधा नहीं, यह संवाद में देशल और कुंवर के बीच शर्त होती है, शर्त पूरी होने पर राजबा देने के लिए कुंवर तैयार है, देशल एक हजार सोनामूहर कहता है लेकिन काम पूरा नहीं होगा तो सिर देने के लिए भी देशल तैयार है, यह संवाद देखिए -(पृ.९८)

- देशल और लाधाजी बापू के बीच जो संवाद है, उसमें जाति और काम के बारे में चर्चा है । देशल कहता है "जाति- पाँति का भेद तो पंगू मन के लोगों का भ्रम मात्र है " कला का नगर तो अदुन्वयी, प्रवेश के लिए मर्मी हृदय चाहिए, जात-पाँत और स्त्री-पुरुष के भेदभाव के साथ उसको क्या?

शूरवीरता भी कहाँ कटार की दासी है । ये तो उसको जाती है, जिसकी छाती ही बख्तर और हिंमत बडा हथियार । (पृ.१२१)

राजल और देशल के बीच काव्य पंक्तियाँ के द्वारा जो प्रश्न और उत्तर है वह भी उपन्यास की संवादकला में चार चाँद लगा देते है । (पृ.१२२,१२४)

राजल और देशल के बीच जाति की स्पष्टता, राजल की स्थिति के संवाद चोटदार है । (पृ..१३५,१३६)

'शोष' उपन्यासमें आज की पिढी के आधुनिक जमाने के अनुरुप भाषाशैली है, संस्कृत शब्द, तत्सम, तद्भव शब्द, अंग्रेजी शब्द, वाक्य-गीत, काव्यपंक्तियाँ, शहर की उच्च गुजराती भाषा, कच्छी भाषा दलित उपन्यास में कलात्मकता और २१वीं सदी के अनुरुप भाषा है, यह सूचित करता है कि दलित उपन्यास पीछे नहीं है, किन्तु अब आगे कदम बढा रहा है ।

श्री दक्षा दामोदरा की गद्यशैली में प्रसंगोपात, काव्यमयता होती है । प्राणवान कथनकला, चित्रात्मक वर्णन प्रतिकात्मक बानी, छोटे-छोटे संवाद एो सभी से ओतप्रोत उनकी गद्यशैली अपनी एक अलग 'पहचान बनाती है ।

शहरीजीवन का चित्रण कृति में दिखाई देता है, अंग्रेजी भाषा का उपयोग कृति में अच्छा लगता है, किन्तु सामान्य पाठक को दुविधा में रख देता है । शुद्ध गुजराती, संस्कृत मिश्रित है, आधुनिक समाज में प्रचलित हाईटेक भाषा का प्रयोग लेखिका ने किया है । बीच में सौराष्ट्र की काठीयावाडी, कच्छी बोली के शब्द भी आये है ।

श्री दक्षा दामोदरा का यह प्रथम उपन्यास है, किन्तु सर्जक के रुप में सफल है । शोष द्वारा एक सफल कलाकार के रुप में गुजरात समक्ष प्रकट हुए है । तोलमोलकर शब्दों को रखे है, काफी अनुभवी है, इसीलिए प्रथम कृति में ही गुजराती दलित साहित्य में छा गये है ।

श्री हरीश मंगलम् ने 'शोष' की भाषा के बारे में लिखा है -'शोष उपन्यास की भाषा संस्कृत पदावलि से भरपूर है । उसमें प्रयोजित शब्द जैसे कि शीर्ण-विशीर्ण, अक्षतव्य, पर्युत्सुकता, क्षपित, अवनिश्वर, अभिरक्त, तमोलिप्त, विवक्षीणता, परिश्रान्त, पृथग्वांश, उद्यद्यौना, उरुचक्षा, श्रोत्र, अभिहत, अभुक्त, अर्णव, उद्रभ्रांतता ये भाषा पर की लेखिका की पकड दर्शाते है । निरुपणरीति और संवादो के पद्य-गद्य खंड भावक के हृदय को स्पर्शते है । काव्यपंक्तियाँ प्रयोजित करके लेखिका ने गद्य को प्रवाहिता बक्षी है । मोंघी, लाधाजीबापू, बानी, राजल और देशल की भाषा प्रदेश के अनुरुप कच्छी भाषा का प्रयोग करके लेखिका ने उचित (सही) किया है ।'

पुरंदर, राजेन्द्र के भिन्न प्रकार के रुप का वर्णन लेखिका करती है, उसमें बुद्धि की प्रतिभा और शैली की छटा है, किन्तु माधवी का राजल का बाह्य और आन्तरीक सौंदर्य उसके छोटे वार्तालाप से प्रत्यक्ष होता है । प्रसंगो की कार्यकारण की श्रृंखला भावो के उदर और संक्रमण भाव और व्यवहार नीति के मंथन पाठक को तल्लीन करते है । वर्णन की प्रत्येक रेखा में सुवर्णरज भराती है, और यह अलंकृत और दीप्तिमय बनती है ।

लेखिका का गद्यवर्णन, विवरण और उद्‌बोधन में विविध कक्षा की रमणीयता गुजराती गद्य के शृंगे बिराजती है । ऐसी व्यापक और बहुविध सिद्धि, भाषा का प्रयोग और शब्दावलि उपर अपनी अलग पेहचान रख देती है । लेखिका की जो छटा है, भाषा को जो रुप दिया है, यह अविस्मरणीय है । ऐसी प्रतिभावंत लेखिका ही भाषा का स्वरुप घडती है।

लेखिका का स्वभाववैशिष्ट उनकी शैलीमें सप्रमाण उतरा है । लेखिका मतवाली नहीं है, सत्यशोधक न्यायदृष्टि है । लोगहित चिंतक है । लोगों की खुशामत नहीं करती किन्तु लोगों को अभिमुख करने के लिए अनुकंपा की पूरती संभाल रखती है । इसीलिए उनके लेखन में कहीं व्यर्थ गम्मत मजाक नहीं है । जीवनध्येय गंभीर होने के कारण शैली प्रोढ है । व्यंग्यार्थ है । समाज को सही दिशा में ले आने के लिए व्यंग्य होना जरुरी है, टेढी ँऊगली से भी कभी कभी घी निकालना पडता है ।

पात्रो के आंतरिक संघर्ष या घटना के आलेखन या प्रकृतिदृश्य, चित्रवर्णन करते है, तब विविध स्थल और विविध प्रसंग में लेखिका की गद्यशैली में नये नये उन्मेष दिखाई देते है गद्यशैली की चर्चा करते समय उनकी वर्णनशक्ति, चित्र उपजाने की शक्ति, संवाद बनाने की शक्ति की चर्चा सहज ही प्रस्तुत है । चित्र के द्वारा पात्रो के आंतरिक जीवन का मनोसंघर्ष का परिचय मिलता है । यह घटना कम नहीं है । वर्णन उत्तम तरीके से वर्णित किये है, फिर भी पात्रो के आंतरिक मन:मंथन निरुपित करने में रस है, अलंकारयुक्त बानी का प्रयोग किया है ।

संस्कृत शब्द, अंग्रेजी शब्द, वाक्य, कच्छी, शब्द, संगीतात्मक शब्द, अलंकार, मुहावरें, कहावतें, रस, प्रतीक, नाट्यात्मक वक्रोक्ति, समास आदि शोष में भरपूर मात्रा में है । काव्य पंक्तियाँ, चित्र के द्वारा कथा का विकास करवाया है । ऐतिहासिक वाव, मंदिर का परिचय, कच्छ की कच्छी भाषा का प्रयोग उपन्यास को आगे बढाने में मददरुप होता है ।

अंग्रेजी शब्द और वाक्य

- वी आर गोइंग धोलावीरा एन्ड अधर प्लेसीस ऑफ कच्छ, हसबन्ड, फॉसील्स, पेइन्टिग्झ, स्टेपिग स्टोन, स्पोर्टस क्लब, टुर्नामेन्ट, क्लायन्ट, रीमेम्बर इट ऑल्वेझ । (पृ.९)

चार्टड एकाउन्टन्ट, लाइब्रेरी, कम्पाउन्ड,लव अफेर (पृ.१३)

स्कीझोफ्रेनिक, इन्ट्रेस्ट, सायकोथेरेपी, ड्रग्झ, पोझीटीव एटमोसफीयर वोकिंग, सेक्स, सइलिंग, पझेसीव, टाइमिंग, परफ्युम, मेग्नेटीक, रीलेक्स, गुड नाइट, लाईफ लोंग परमीशन

यु हेव टु चुझ वन फ्रोम बोथ ऑफ पेइन्टिग्झ एन्ड पुरंदर, डाइंग डेक्लेरेशन, न्युरेटीक, कमऑन, फ्रेश, टेक केर बट आइ एम टायर्ड ।-

कच्छी शब्द- वाक्य

- इनजे कूवे वई... मुंजी मा...इनीजी कोक भली बाई अे हकडो धडो सींची दीधो । पण माटले में रेडे ते मोर त बीजी कोके मा जो माटलो ज पायणो मारी तोडी नाख्यो (पृ.९८)
- देशल और दुदाशा के संवाद (पृ.१००,१०१) -शोकगीत (पृ.१०५)
- मोंघी-राजल के संवाद, मामी के संवाद, राजल-देशल के संवाद कच्छी भाषा के उदाहरण है ।

संगीतात्मक शब्द

- खडखडाट, हणहणाट, खलभलतुं, झलहलतुं, घुमरातुं, घुघवातुं- पृ.१३ गटगटावती, धम...धम...धम..., टमटमवा, कलकलतुं, सडसडाट, गणगणाट, बणबणतुं, फडक फडक, छाती फाट फाट (७८)

बुड बुड, चमचमाट, धबक धबक १०४

समास- सहस्त्रबाहु, बहुव्रीहि समास

चमकते रत्न

माणसनो चहेरो, एनी आँख, एना दिलनो पडघो पाडता होय छे-७५

जात-पातनो भेदतो पांगला मनना लोकनी भ्रमणा मातर छे.-१२१

- सरखी केलवणी अने शिक्षण आपो तो दीकरी य दीकरो थईने उभी रहे-७

अलंकार

ई ा ा े षो में अलंकार की फौज है । हर पन्ने में अलंकार बिखरे हुए है देखिए

उपमा अलंकार

- प्रदर्शनना मुद्दा जीवनमां परपोटानी जेम उगमीने विरमी गया बाद
- वासंतिक लहेरोथी पुष्ट चैत्री आम्रफल जेवा तंग कुचयुग्म
- रेशमी दुकूल जेवी हवाना मुलायम स्पर्शे
- विलायेला फूल जेवा एना चहेरा पर (पृ.१६)
- माधवीनी बीडायेली कली जेवी अर्धनिमीलित आँख
- गुलाबनी पांदडी हवानी हलवी लहेरखीथी हलुहलु कंपे, एम ऐना नाजुक ओष्ट उरज विनाय उरपान करवामां लीन हता ।
- अषाढी आभ जेम गोरंभायेला पुरंदर
- पृथ्वीनी जेम भीतर ज्वालामुखी अलबत्त कलानो... ।
- टमटमता दीवडां जेवी प्रतिक्षा
- कच्छी कटारी जेवी तारी धारदार जुवानी
- धमणनी जेम हाँफती छाती
- माधवीनुं शरीर लाकडां जेवुं थई गयुं
- हाथीओना झुंड जेवा बेकाबू विचारो

विरोधाभास अलंकार

- घटक घटक पानी गटगटावती तोय गले बाझेलो शोष केमेय शमतो नहीं ।
- कलाने धोलीने पी गया होय एवा भावो साथे फरता महानुभावो

- धोमचख्र डुकारमां अषाढी मेघ !
- झाझो समय जो एनी नजरो सामे रहेवासे तो तनमनथी सुवांग ओगली जवाशे.

अतिशयोक्ति अलंकार

- मनख्रो आख्रो ख्ररचता य जे आनंद, संतोष न मळे अेटलो आनंद जेनी नजर साथे नजर मलेथी अंतर घट में छलक छलक थतो

मुंहावरें

- ईदनो चांद थई गयो, पाणी वगरनी सरकारो
- ख्रांडानी धार ते हालवानुं आय, चहेरो तमतमी गयो हतो
- आँख्र में आँख्र पिरोकर पूछना
- मारकणो मलकाट पथराई गयो, दल फफडी गयुं

कहावतें

- चाववाना अने देख्राडवाना जुदा होय छे.
- एटले बकरु काढयुं त्यां उटडुं पेहाडवानी ज वात छे ने !
- रेशम की दोर में सच्चा मोती पिरोया जाता है (पृ.११२)
- जात-पात नो भेद तो पागला मनना लोगनी भ्रमणा मातर छे.(१२१)

प्रतिक

- अंतर की प्यास बूझा न सके ऐसे कल्पित जल को दाम्पत्य कहते है । ऐसे प्रश्न की सूइ ख्रोसकर, पुरंदर के प्रेम और श्रृंगारिक वर्तन के गुब्बारे को फोड देने की इच्छा होती थी और फस्स... (पृ.२२)
- चित्र में दूधमढी प्रतिक्षारत नारी...माधवी का प्रतिक है ।
- कछूए के अंग- माधवी की इन्द्रियाँ
- काष्ठ की पूतली.... माधवी प्रतिक.. (पृ.७७)
- मीठा मेरामण...राजेन्द्र का प्रतिक... (पृ.८३)
- विचित्रता का प्रदेश - माधवी का मन पृ. (१२६)

१ ा ा े ष ी भी प्रतीक है, स्त्री जाति और पछातजाति के लोगो के सताते हुए सामाजिक अन्याय, अत्याचार, उच्चवचता, शोषण, अस्पृश्यता का शोष, माधवी के जीवन में प्रवर्तित शोष, माधवी, राजल के हृदय में

प्रवर्तित अपने प्रियतम का शोष ।

रस :

१ा ा े ष ॅउपन्यास में करुण, शांत, श्रृंगार, रस बिखरे हुए है । व्यंग्यप्रधान उपन्यास होने के कारण रसकम कटाक्ष ज्यादा है ।

वियोगश्रृंगार - इसीलिए लाइब्रेरी या कम्पाउन्ड में माधवी की नजर कुछ ढूँढती रहती थी । (पृ.१०)

- देशल की काव्यपंक्तियाँ विरह के बारे में (पृ.१२३)

संयोग श्रृंगार-

- (पृ.२३) पुरंदर- माधवी का संयोग
- (पृ.३५,३६) पुरंदर- माधवी- बरसात, मंद मंद पवन (हवा)

हास्यरस - पुरंदर कुमार को पहली रात म्हेंदी देखने में ही निकाल देनी है क्या ? (पृ.१७)

- माधवी राजेन्द्र दोनों के बीच हास्य (पृ.६३)

करुण रस - प्रदर्शन में हिस्सा (भाग) नहीं लेना, यह केहने गई तब माधवी की हालत, राजेन्द्र के शब्द, आँसू (पृ.६९)

- डाइवोर्स की बात, माधवी आत्महत्या का विचार, मन में अनेक तर्क-वितर्क, करुण रस से भरपुर है । (पृ.७८)
- काले कपडे... घूँघट से ढके हुए चेहरे शोक मग्न स्त्रीयाँ, शोकगीत (पृ.१०५)

वीररस - पृ.९३ देशल का वर्णन, जहाज को लूंटेरा लूँट नहीं सकता था ।

बिभत्स रस - (पृ.८५) मांस को खानेवाले गीध- माँस, रक्त का मैदान (पृ.९६) मृत पशु की खाल उतारकर भागनेवाले मानव हाडपिंजर

उपन्यास में नाट्यात्मक वक्रोक्ति (Dramatic Irony)

देखने को मिलती है, उनसे कृति का सौंदर्य ओर बढ जाता है । वह देखिए -

- सरखी केलवणी अने शिक्षण आपो तो दीकरी य दीकरो थईने उभी रहे । (पृ.७ माधवी के बापू)

- जे किनाराने सदैव आश्लिष्ट राखे एवो दरियो न होय ! (पृ.२० माधवी)

माधवी- अंतरनी तृषा छीपावे नही, एवा झांझवानुं ज नाम शुं दाम्पत्य छे ? पृ.२२

माधवी - पण तमे तो धरती अने आकाश पण छीनवी लीधा पुरंदर - पृ.२६

- आ कलाकारोना छे ने चाववाना अने देखाडवाना जुदा होय छे. समजी । (पृ.४७- पुरंदर)

माधवी- वगर लग्ने छोकरीओने घरमां साथे राखवाथी अेमनुं जातीय शोषण करवाथी य कांई थोडा कोई चारित्र्यहीन गणाता हशे ? (पृ.४८)

- हमारे प्रदेश की जल समस्या का अंत बिना पानीवाली सरकार कभी नहीं लायेगी (पृ.५४- राजेन्द्र)
- स्त्री,पुरुष के बारे में पुरंदर-माधवी के संवाद- पृ.५६,६०
- मेरे अंतर की वेदना के साथ तुम्हारी वासना का कोई संबंध नहीं है? पृ.१०६- माधवी
- जातिवाद के बारे में पुरंदर का कथन- पृ.१०८
- जातिवाद के बारे में देशल का कथन- पृ.१२१, कला के बारे में कथन ।

देशकाल और वातावरण की दृष्टि से ई ा ा े षौ उपन्यास कच्छ को रुबरु कर देता है । दुदाशा की वाव, देरासर (मंदिर) भद्रेसर, सागर, कंथरोट, जललुप्ता नदी, सूर्यमंदिर, शिवमंदिर, दरबार गढ का परिचय दिया है ।

वहाँ की स्थिति, शोषण, राजल-देशल का प्रेम आदि का श्री दक्षा दामोदराने बडा ही स्वाभाविक एवं वातावरण के अनुकूल चित्रण किया है । गहनें, वस्त्र, जहाज, लूँटेरे, काव्यकला का चित्रण भी लेखिका ने किया है ।

माधवी का घर, सी.ए. बनाने का स्वप्न, चित्रकला, राजेन्द्र प्रेम, काव्यकला, माधवी की मानसिक स्थिति, पुरंदर के साथ शादी, संघर्ष

आदि का चित्रण लेखिका ने कलात्मक रुप से किया है ।

आज से ६८६ वर्ष पहले एक कच्छी वीर दुदाशा कच्छ की प्यास बूझाने के लिए हिंमतपूर्ण प्यास की कथा कहना कालजीर्ण जलमंदिर भग्न खंडेर रुप में वाव भद्रेसर में आज भी है, ये कथा ही उद्भवबिंदु है । - दक्षा दामोदरा

लेखिका ने दाम्पत्यजीवन के प्रश्नो को प्रकट किया है । मानसिक प्रश्न, चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना को प्रकट करके सफल दाम्पत्य की ओर दृष्टि अंकित की है ।

कच्छ वर्णन- रेगिस्तान, जंगल, पहाड, नदीयाँ, गर्म हवा का वर्णन किया है । (पृ.३,४)

शेष आधुनिक उपन्यास है, इसीलिए पात्र, देशकाल वातावरण भी आधुनिक है । हाँ.... भाग-२ में राजल-देशल के कारण कृति में इतिहास का वर्णन दिखाई देता है ।

पुरुष स्त्री को पैर की जूती के समान मानते है, उसका यथार्थ वर्णन लेखिका ने किया है । लडके को ज्यादा महत्त्व देते है, कुटुंब नियोजन करवाते है ।ऊपर ऊपर से कहते भी है- अच्छी केलवणी और शीक्षा दे तो लडकी भी लडका होकर खडी रहे । अंग्रेजी भाषा को शिक्षित व्यक्ति ज्यादा महत्त्व देते है । योग, व्यायाम करते है, पुरुष, कोट, पेन्ट, टाई, कुर्ता, धोती भी पहनते है ।

स्त्रीयाँ पूजा-पाठ, योग-व्रत, उपवास भी करती है । लडकियाँ प्रेम भी करती है, और समय मिलने पर अन्य जाति के लडकों के साथ भाग जाती है, प्रेमलग्न कर लेती है, नया संसार शरु करते है, ऐसे समय पर परिवारवालों को दु:ख होता है ।

बच्चे परीक्षा में मार्क्स कम होने के कारण मानसिक रुप से बेचैन हो जाते है । मन पर ज्यादा चोट आने के कारण स्कीजोफ्रेनिक भी हो जाता है । यह बिमारी होने पर डॉक्टर की सलाह दवाई लेते है। जन्मकुंडली पर महत्त्व रखते है ।

स्त्रीयाँ हाथ, पैर में म्हेंदी लगाती है, ससूराल में पूरे दिन पति से दूर रहना पडता है। संयुक्त परिवार और सास, ससुर के कारण मर्याद में रहना पडता हे । रात में पति मिलता है, पति का संतोष पूरा होता है, स्त्री को मानसिक शांति नहीं मिलती, यह आधुनिक समाज के लिए लालबत्ती है ।

आधुनिक पति स्पोर्टस क्लब, ऑफिस, होटल का गुलाम हो गया है । अपनी पत्नी के साथ बच्चों के साथ शांति से बैठ नहीं सकता ।शारीरिक तृप्ति का अनुभव जरुर लेता है, पर पत्नी को प्यार नहीं कर सकता, इसीलिए स्त्री अधिकाधिक कहीं और आकर्षित होती है । न्युझ पेपर्स, टी.वी. देखना, शेर बजार, शराब आधुनिक पुरुष के लिए महत्त्वपूर्ण बन गया है ।

मेले का वातावरण, लोकगीत, बरसात, जन्माष्टमी का त्योहार का वर्णन (पृ.३२)

कान में गोटी, गले में झुमणुं, पैर में कांबियु और हाथ में चूडी पहनकर गरबा स्त्रीयाँ गाती थी । बाजरे की रोटी, दूध पीकर शरीर मजबूत बनानेवाले कच्छी लोग उपन्यास में दिखाई देते है ।

रश्मिता महेता का वर्णन आधुनिक मेनेजर के समान ही है । खंभे तक छूटे रेशमी बाल, चमकीली आँख और लिपस्टीक से रंगे हुए ओठवाली रश्मिता का मांसल सौंदर्य पारदर्शक साडी और स्लीवलेस ब्लाउज में से छलक रहा था (पृ.३८)

मानसिक पीडा से मुक्त होने के लिए पुरुष शराब, सिगारेट का सहारा लेता हे ।

चित्र को शब्दो में वर्णित करने की लेखिका की शक्ति अजीब सी है । (पृ.५०)

अपना स्टेटस समाज में प्रस्थापित करने के लिए हर पुरुष-स्त्री नई साडियाँ, तिजोरी, हर फेशन के झवेरात, फर्निचर, गाडी, लकज्युरीयस फ्लेट, बालक समाज में प्रतिष्ठा जमाते है, यह फैशन एक रोग की तरह फैल चुकी है । (पृ.६५)

पुस्तक विमोचन प्रसंग को लेखिका ने शब्दबद्ध किया है यह वर्णन- बनारसी साडी में लथबथ देह (शरीर) पर मेक-अप से मढा हुआ चेहरा, चेहरे पर लगाया हो ऐसा कृत्रिम स्मित... सुहानी, रोशनी, शोरगुल अभिनंदन के धोध, संगीत की सुरावलियाँ, काव्यतत्त्व और कला को घोलकर पी गये हो ऐसे भावो के साथ फिरते महानुभावो, जिनके पास अपने श्वास की गंध या दुर्गंध भी नहीं ऐसे ग्लेमररस शौकीनों की खोखलाश..."

लेखिका की निरीक्षण शक्ति का एक वर्णन ओर भी है.. मुसाफरी में बच न पाये रजोदर्शन के कष्टदायी दिनो में गुह्यांग पे चिपकाया कपडा जांघ के साथ घिसने से होते थे.. घाव ..विदारक... । (पृ.८६)

वाव देखने के समय छोटे...छोटे रास्ते, पैरदंडियाँ, काँटेवाले पौधे, धूल का वर्णन अकल्पनीय है ।

दलित मुहल्ला, इन्सान का वर्णन

मृत पशु की खाल उतारकर भागते हुए हाडपिंजर जैसे मानवशरीर

प्यासे इन्सान पानी.. पानी... करते है !

देखो तो सहीं... धूल के चक्रावे का अट्टहास्य.. ! देखो... देखो... । फटे हुए कपडो के टुकडे शरीर पे लगाये हो ऐसे, मानव की तरह पेहचान में भी न आये ऐसे चले जाते है वो इन्सान.. गाँव के अंत में रहनेवाले मुहल्ले में से (पृ.९७)

इस प्रकार देशकाल और वातावरण की द्रष्टि से १ा ाे षं उपन्यास सफल है । पारीवारिक प्रश्नों को उजागर किया है, परिवार का वातावरण है, शहर का वातावरण है । माधवी पुरंदर तो कच्छ की सफर करते है, हमें भी सफर करवाते है, वास्तविक वर्णन से रुबरु कर देता है । पात्रवर्णन, प्रकृति वर्णन, घटनाओं का वर्णन सही रुप में देखने को मिलता है ।

शोष का उद्देश्य आधुनिक स्त्री-स्वातंत्र्य के प्रति कितनी जागृत है, समाज में आज कैसा स्थान है, स्त्री की आवाज है, स्त्री पुरुष के पैर की जूती नहीं है, एक जीवनसाथी है यह सिद्ध करवाना है । उसके साथ साथ दलित जाति -सवर्ण जाति का संघर्ष, जाति संघर्ष दुर कराने का ऊपा र ऊपर का प्रयत्न, पर्यावरण स्वच्छता अभियान, पानी का प्रश्न

आदि अनेक प्रश्नो को प्रकट करके नये समाज की संकल्पना और ये सभी प्रश्नों का हल हो यह सभी उद्देश्य है । श्री दक्षा दामोदरा उच्चशिक्षा प्राप्त है, उनकी शैली, भाषा भी उच्च है, कम शब्दों में ज्यादा कहने की शक्ति है । शोष के उद्देश्य निम्नलिखित है-

(१) **दलित जाति के प्रति अन्याय हो रहा है, यह प्रक्ट करना (देरासर और वाव के द्वारा) दलितों की स्थिति**

देरासर का जिर्णोद्धार होता है, जबकि वाव दलित जाति के दुदाशाने बनवाई थी, इसीलिए उसके सामने कोई देखता नहीं, भग्नावशेष हो जाती है, ये दो स्मारक पर से अंदाज लग जाता है कि जाति संघर्ष की मात्रा कितनी है ।

हजारों वर्ष हुए.. फिर भी कोई धर्म, सत्ता या समाज अपने सामाजिक व्यवस्था में घूस गये युग पुराने जातिवाद के अनिष्ट को दूर नहीं कर सका, क्योंकि दलितों और स्त्रीयों के विकास के कार्य मात्र ऊ ा र ऊार ही होते रहे है । (पृ.१०८)

दलित मनुष्य का हाल भी दयनीय है, उनके मुहल्ले की ओर दुर्गंध होती है, हाडपिंजर जैसे मानवदेह होते है, टूटे-फूटे कपडे पहनते है, मानव के रुप में पेहचाना नहीं जाता, ऐसी स्थिति होती है, गाँव के अंत में रहना पडता है ।

दलित स्त्री कूए पर से पानी नहीं भर सकती, कोई सवर्ण स्त्री मटका पानी से भर देती है, तो दूसरी स्त्री मटका ही तोड देती है... (पृ.९७) आज उसमें थोडा बहुत सुधार अवश्य हुआ है, किन्तु जडमूल से सफाया नहीं हुआ ।

(२) **दाम्पत्यजीवन के प्रश्नो को व्यक्त करना, स्त्री की स्थिति**

दाम्पत्यजीवन में प्रेम, विश्वास, वफादारी, लगाव, समझ जरुरी है । लेकिन पुरुष स्त्री के पास यह गुण माँगता हे, स्वयं दुर्गुणो से पीडित रहते है, परिणाम स्वरुप नौका डगमगाती रहती है । पुरुष पति बन जाता है ओर कोई लायकात की जरुरत नहीं रहती, किन्तु स्त्री के

लिए कौमार्य और शादी के बाद की प्रामाणिकता अनिवार्य है । (पृ.६०) आज की स्त्री मानसिक रुप से बेचैन है, और सबके पास शांति चाहती है । स्वयं को सब समझे, इन्सान के रुप में देखें, परिवार के सभ्य की तरह देखें यही इच्छा होती है ।

(३) आधुनिकता के पक्षधर होते जा रहे है, किन्तु मानसिक रुप से अशांति का शिकार

आधुनिक वस्त्र(परिधान), फ्लेट, गाडी, फर्निचर, शिक्षा प्राप्त करते है, भुगतते है । लेकिन विचारो में आधुनिक नहीं है । भौतिक सुविधाओं के बाद भी मानसिक रुप से बेचैन रहते हे । अंग्रेजी बोलना, हॉटल, सिनेमा, मंदिर, बाग में फिरते है, फिर भी शांति नहीं है, क्युंकि हमारे विचार गलत है । समाज का एक वर्ग हाईफाई जीवन बिताते है, तो तीसरे वर्गके पास खाने की भी चिंता है ।

(४) राजल और देशल का प्रेम

दलित प्रेमी होने के कारण देशल की हत्या, माधवी और राजेन्द्र का प्रेम, किन्तु माधवी को हृदय के एक कोने में राजेन्द्र दलित का तिरस्कार :

राजल-देशल को प्रेम तो करती है, किन्तु प्रेमी दलित है, ऐसा जानती है तब बेहोश हो जाती है (पृ.१३५)

कुँवर भी देशल को खत्म कर देता है, कठिन कार्य सोंपकर उसकी परीक्षा करता है, इस प्रकार एक श्रेष्ठ दलित की कथा का अंत होता है ।

माधवी राजेन्द्र को प्रेम तो करती है, किन्तु राजेन्द्र दलित है, इसीलिए घर आने के बाद पानी से आँख धो डालती है ।

(५) बच्चों पर परीक्षा का बोझ, परीणाम में कम मार्क्स, माँ-बाप के द्वारा तिरस्कार, मानसिक रोग का शिकार

माँ-बाप अपने बच्चो को अच्छे पद पर देखना चाहते है, इसीलिए अच्छी स्कूल, ट्युशन, मेहनत करवाते है । पूरापुरा ख्याल रखते

है । किन्तु परीक्षा में मार्क्स कम आते है तो बच्चों पर फिटकार बरसाते है ।(उपन्यास में माधवी की हालत ऐसी है) परीणाम स्वरुप बच्चा मानसिक रोग का शिकार बन जाता है । बच्चो की कक्षा के मुताबिक पढाना चाहिए, अपेक्षाएँ हवाई किल्ले की तरह रखना बेवकूफी है ।

(६) मानसिक रोग (बिमारी) होने पर डॉक्टर द्वारा ईलाज

उपन्यास में माधवी मानसिक बिमारी का शिकार होती है, तो डॉक्टर के पास (मनोचिकित्सक) ले जाते है ।

माताजी के पास, भुवे के पास नहीं ले जाकर यहाँ मनोचिकित्सक के पास ले जाकर आधुनिक विचार प्रकट किया है ।

(७) कलाकारों का समाज में स्थान

कलाकारों का स्थान समाज में बहुत ँऊचा होता है, लोग सराहना करते है, किन्तु चारित्र्य के बारे में कई कलाकार निम्न कोटि के होते है इसीलिए समाज में किंमत कम होती है, होती जा रही है ।

(८) राजेन्द्र का जलसंचय अभियान, पर्यावरण सुरक्षा
देशल का वाव पूर्ण कराने में आर्थिक सहयोग

देशल ईनाम में मिली सोनामूहर को वाव पूर्ण कराने के लिए देता है । उसी तरह राजेन्द्र भी चित्रो में से जो आय होगी वह जलसंचय अभियान में देना चाहता है । दोनों ही दलित है, दोनों का कार्य जनहित के लिए श्रेष्ठ है ।

(९) समाज में पुत्री-पुत्र का महत्व और स्त्री का उत्तर कठीन शब्दो में

२१वीं सदी में प्रवेश कर लिया, लेकिन आज भी पुत्र का महत्त्व ज्यादा है । उपन्यास में माधवी के बापु माधवी को प्यार नहीं करता, ऊपर ऊपर से कहता है, लेकिन हृदय में पुत्र प्राप्ति नहीं हुई उसका दर्द है । ये हमारे आज के समाज का कुलक्षण है । स्त्री का उत्तर कठीन शब्दो में-

शोष में स्त्री की आवाज है, सोने के पिंजरे में बंद चिडिया का चहचहाट है, वे भी मुक्त होना चाहती है, तो स्त्री क्यों नहीं ? पुरुष प्रधान समाज को स्त्री कहती है कि स्त्री बीज की भृणहत्या, दूध

पीने का रिवाज, या ससुर, जेठ, देवर की यौनवृत्ति के शिकार के लिए स्त्री है । व्यभिचार या बलात्कार का भोग भी स्त्री बनती है । (पृ.५६)

(१०) पढने के साथ साथ काम करना

आज का निरक्षर व्यक्ति बेरोजगार नहीं है, किन्तु शिक्षित व्यक्ति बेरोजगार है ! शिक्षित युवान नौकरी न मिलने पर बेरोजगार हो जाता है, व्हाईट कॉलर जॉब के लिए भागता फिरता है । शिक्षा-प्रणाली भी दोष-पूर्ण है । शिक्षित व्यक्ति काम करना नहीं चाहता, व्यवसाय नहीं करना चाहता, व्हाईट कॉलर जोब ही ढूँढता है । शोष में राजेन्द्र पढाई के साथ साथ ट्युशन, चित्रशिक्षक के रुप में पार्टटाईम नौकरी करता हे, आज के युवानों के लीए प्रेरणारुप है ।

इस प्रकार ‘शोष’ के उद्देश्य महान है । एकबार पढने से बारबार पढने की इच्छा होती है, हर बार नये विचार, मर्म समझ में आता है, और एक महान लेखक की यही तो सिध्धि है ।

‘शोष’ उपन्यास का शीर्षक यथार्थ है ।

‘माधवी का जीवन, उसका समग्र अस्तित्व, जलसंकट में फँसा हुआ है । माधवी का जीवन और कच्छप्रदेश दोनों के अणु अणु में शोष प्रज्वलित होता जा रहा है । समग्र उपन्यास की विषयवस्तु में ‘शोष’ प्रतिक बनकर उभर आता है ।’

दुदाशा की वाव देखकर माधवी के अंतर में (हृदय में) छूपी हुई प्यास अणु अणु में प्रज्वलित होती है । वाव में उतरते ही उसके गले में फँसा कालातीत डचूरा जैसा शोष कंपित करता है । वाव के जल उसके जीवन में भी आये ऐसी झंखना सताती है ।

शोष के कई अर्थ स्फूट होते हे, स्त्री जाति और पछात जाति के लोगो को हैरान करते हुए सामाजिक अन्याय, अत्याचार, उच्चावचता, शोषण और अस्पृश्यता का शो कच्छ की प्यासी धरती जैसी नायिका माधवी के जीवन में प्रवर्तित शोष, माधवी और राजल के कंठ में पडा हुआ अपने प्रियतम का शोष जैसे ध्वनि प्रकट होते है ।

स्त्री जाति के हृदय में प्रर्वतित ‘शोष’ है । स्त्री चाहती है कि हमारे अनेक प्रश्न है, हमें समाज में स्थान मिले, मानव की तरह देखें, भृणहत्या से लेकर दाम्पत्यजीवन में भी कठीनाईयों का सामना करना पडता है । भृणहत्या, दूध-पिने का रिवाज, व्यभिचार, बलात्कार, कदम-कदम पर डरना, संकटो से ही रास्ता गुजरता है । शादी होने के बाद ससुराल में भी संकट उन सभी प्रश्नो का हल स्त्री ढूँढती है । उसकी प्यास है, उसका ही शोष है, ये शोष कब शांत होगा ?

उसी प्रकार दलित जाति भी संकट से ही गुजरती है । दलित जाति के हृदय में भी शोष है । समाज में अपना स्थान ही नहीं है, पशु-पक्षी को लोग सँवारते है, दलित मनुष्य को कोई छूना भी नहीं चाहता । दलितजाति भी प्रश्न करती हे कि समाज हमें इन्सान की तरह कब देखेगा? यह शोष कब शांत होगा ?

‘शोष’ शिर्षक योग्य ही है ।

संदर्भ

१. शोष-प्रस्तावना.. पृ.६ (हरीश मंगलम्)

२. वही, पृ.१६, १७

३. वही, पृ.१०

४. वही

५. वही, पृ.१२

६. वही, पृ.१६

अध्याय-१०
हिन्दी दलित उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास की तुलना

भारत के हर प्रांत के दलितों की स्थिति व समस्याओं में कोई खास अन्तर नहीं हे । शोषणमूलक अमानवीय व्यवस्था हर जगह अपने अलग-अलग रुपो में मुँह फैलाए हुए इन्सानियत के लील जाने खडी है । इस बिन्दु को उजागर करना शोधप्रबंध का एक लक्ष्य है । दलित लेखकों ने दलित जीवन व चेतना पर उपन्यास लिखे हे । दलित जीवन और समस्याओं को समझने, परखने में दलितों की आंतरिक कमजोरियों को उभारने में तथा दलितोत्थान को लेकर उनकी विचारधारा में कहाँ साम्य-वैषम्य छिपा है, उसे भी उद्घाटित करना ही शोध-प्रबंध का मुख्य उद्देश्य है । विषय के विस्तार से बचने के लिए हिन्दी, गुजराती दलित लेखको के कुछ चूने हुए उपन्यास ही यहाँ लिये गये है ।

(१) सारे उपन्यासों का उद्देश्य दलित चेतना को जगाना है, आजतक जो जीवन बिताया है, उसको भूलकर अब एक इन्सान की तरह जीना सीखाते है, और यदि कोई हस्तक्षेप करे तो संघर्ष करे तो उसका मुकाबला करना चाहा है । सारे उपन्यास की विशेषता यथार्थ में है, हवाई किल्ले कम है, इन्सान को इन्सान की तरह देखा है । कला कला के लिए नहीं बल्कि कला जीवन के लिए है उसका पर्दाफाश किया है ।

(२) **गाँव की कथा**

हिन्दी दलित उपन्यासों की कथा गाँव की है । छप्पर उत्तरप्रदेश के गाँव की कथा, झलकारीबाई झाँसी की कहानी है । हिडिम्ब हिमाचल प्रदेश के गाँव की कथा है । मलक, गिद्ध, आंगलियात, दरिया, तिराड और चौकी, प्रियतमा, नेलियु में गाँव की कथा है । छप्पर में शहर और गाँव की कथा है । आंगलियात, प्रियतमा, शहर का अंश लिया है । शोष शहर की कथा ही है । छप्पर मे शहर की खामियों पर प्रकाश डाला है । वीरांगना झलकारीबाई में शहर का अंश है । प्रियतमा में शहरी खामियों पर प्रकाश डाला है । गाँव और शहेर के पात्रो में जरुर

मानसिकता में फर्क है । शहर के पत्र संघर्ष करते है । उनमें चेतना दिखाई देती है । गाँव के पात्र गिडगिडाते हुए है । दबे हुए है फिर भी हिडिम्ब (सूरमा) मलक (रमण) आंगलियात (टीहा, कंकु) दरिया (कसना) नेलियु (चंपा) में जरुर विद्रोही पात्र है ।

(३) दलित स्त्रियों की स्थिति

सारे उपन्यासों में दलित स्त्रियों की दशा हीन है, कुचली हुई है । समाज और परिवार दोनों और से शोषित है । सारे उपन्यास की स्त्रीयाँ घरकाम करती है, अपने पति के कार्य में साथ है और मजदूरी करने भी बाहर जाती है । सवर्ण समाज से भी सताई हुई है । कमला पर बलात्कार हुआ और उनसे होता बच्चा समाज का कलंक है किन्तु वह अपने पर हुए अन्याय का बदला लेने संघर्षरत है, बच्चे को पढाकर समाज से बदला ले यही कामना के लिए जीती है । झलकारी समाज से त्रस्त है, बछिया मारने के आरोप में फँसाकर प्रायश्चित करवाते है । किन्तु वह युद्ध में अपना कौशल दिखाकर दंग कर देती है । हिडिम्ब की (सूरमा), आंगलियात (कंकु), दरिया (कसना), नेलियु (चंपा) अपने पर हुए अत्याचार की समाना करती है, जो आदमी से भी बढकर है । उन पात्रो में जरुर अस्मिता दिखाई देती है ।

मलक (शिवी, सूरज) पर बलात्कार होता है । आंगलियात (मेठी) की छेडती होती है, तंबाखू के कारखाने में स्त्रियाँ शोषित है । दरिया में (दरिया) को भोगने के लिए मुखिया दिन-रात एक करता है । तिराड में (जोईती) पटेलों द्वारा छेडती का भोग बनती है । चौकी में (अंबा) शांति, डाई, कमु शारीरिक रुप से शोषित है । नेलियु (चंपा) आदि स्त्रियाँ शारीरिक रुप से शोषित है, किसी पर बलात्कार तो किसी की छेडती हुई है रात-दिन डर से त्रस्त है ।

(४) जातिपंच का महत्त्व

सारे उपन्यासों में जातिपंच का महत्त्व ज्यादा है । वीरांगना, झलकारीबाई, छप्पर, हिडिम्ब उपन्यास में सवर्ण समाज का पंच है । जो दलितो को हैरान परेशान करते है ।

गुजराती दलित उपन्यासों में दलित समाज का पंच है जो दलितों को हैरान परेशान करते हैं । आंगलियात, तिराड, प्रियतमा उपन्यास में पंच का न्याय दलितो के लिए खतरनाक होता है । मेठी, जोईती, जसुमती को पंच के कारण दुःख भोगना पडता है । आंगलियात, प्रियतमा, मलक, दरिया, चौकी, नेलियु उपन्यास में मूहल्ले में संप दिखाई देता है जो संघर्ष में साथ में रहते है, फिर भी आंतरविग्रह की घटना जरुर है ।

(५) समाजपरिवर्तन

सारे उपन्यासों में समाजपरिवर्तन के लिए छटपटाहट है । अपने पर होते अत्याचारों से त्रस्त है, वे सवर्ण समाज से और अपने दलित समाज के जड नियमों से त्रस्त है । सवर्ण समाज से छूआछूत, मानसिक आर्थिक, शारीरिक शोषण से परिवर्तन चाहते है । तो अपने दलित समाज के जड नियमों से छुटकारा पाना चाहते है । शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, जन्म, मृत्यु जैसे सामाजिक प्रसंगो में होनेवाले आर्थिक खर्च से त्रस्त है, कर्जा चुकाने में सारी जिन्दगी बिताते है । वे वहीं के वहीं रहते है । जैसे कि जिंदगी बस ये प्रसंगो में ही पूरी होती है ।

(६) स्वानुभवों की कलात्मक अभिव्यक्ति

सारे उपन्यासों की कथा लेखक के स्वानुभवों की कलात्मक अभिव्यक्ति है । अपते प्रति हुए अन्याय का डटकर मुकाबला करना चाह है, शांति से बैठकर प्रभु की प्रार्थना नहीं बल्कि स्वयं को ही अपना भाग्यविधाता बनने की प्रेरणा है । छप्पर, हिडिम्ब, मलक, गिद्ध, आंगलियात, दरिया, तिराड, चौकी, प्रियतमा, नेलियु उपन्यासो में स्वानुभव स्पष्ट दिखाई देते है । सारे लेखकों ने छूआछूत, संघर्ष, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, प्रश्नो को सहा है । उन कडवें अनुभवों को अपनी रचनाओ में बानी दी है ।

(७) दलित बच्चों की स्थिति

जब दलित बूढों, युवाओं की हालत दयनीय है, तो बच्चों की स्थिति सोचनीय है । बच्चे भी आर्थिक रुप से अपने परिवार को मदद करते है, छोटे, बडे काम करके परिवार को उपर उठाने का प्रयत्न

करते है । पढने का सौभाग्य उन्हें नही है । मलक (भगा), गिद्ध (ईसा) को पढने का मौका ही नहीं मिला । छप्पर में चन्दन के कारण बच्चे स्कूल देखते है । हिडिम्ब (कांसी) स्कूल जाता है, छूआछूत का सामना करना पडता है और स्कूल की उसकी मौत का कारण बनती है ।

(८) **व्यसन**

सारे उपन्यासों में पात्र व्यसन के शिकार है । छप्पर (हरिया, सुक्खा) हिडिम्ब (शावणु, शोभा) मलक, गिद्ध के पात्र बीडीयाँ, शराब पीते है, पटेल के यहाँ मजदूरी करते है, बीडीयाँ देते है खाना कम देते है । आंगलियात (मना) शराब पीता है । तिराड (सोमा), चौकी (अखुसिंह) शोष (पुरंदर) प्रियतमा (जसुमती के जिजाजी) व्यसन के शिकार है । लेखक यहाँ सुधारवादी दृष्टिकोण से पात्रों में, समाज में व्यसन पर प्रतिबंध लाना चाहता है । व्यसन आज युवाओं के लिए नर्क की सीडी बन चुका है ।

(९) **अंधश्रद्धा**

सारे उपन्यासों में अंधश्रद्धा के प्रति करारा व्यंग्य है । वीरांगना झलकारीबाई में राजा, रानी लक्ष्मीबाई भी ब्राह्मणों से डरते थे, गुनाह करते थे फिर भी दंड भी नहीं कर सकते थे । बछिया मारने पर दंड करते थे, प्रायश्चित करवाते है । हिडिम्ब में काहिका उत्सव अंधश्रद्धा से भरपूर है, जो दलित इन्सान की बलि देते हैं । मन्नते, कई देवताओं की पूजा भी है ।

गिद्ध में ईसा की पिटाई होती है तो उसके माता-पिता मन्नत रखते है । जिसका पर्दाफाश होता है । दरिया में भगत की पालखी के नीचे से लोग निकलते है । दुआ मांगते है । तिराड में जोईती रामदेवपीर की फोटू की पूजा करती है हररोज दुआ मांगती है । वह तस्वीर तोडकर पर्दाफाश किया है ।

अंधश्रद्धा के प्रति करारा व्यंग्य है, डॉक्टर के प्रति विश्वास है । कोई देव-देवता हमारा उद्धार करेगा, यह बात अब पुरानी हो गयी- अब तो अपना उद्धार अपने को ही करना पडेगा । युवान मंदिर में जाना नही चाहते (गिद्ध)

(१०) **दलितों की आर्थिक स्थिति**

वीरांगना झलकारीबाई में दलित बूनने का काम करते है, झलकारी मदद करती है । छप्पर में सुक्खा खेतमजदूरी करता है, रमिया भी साथ में मजदूरी करती है, खाने के लाले है । ५० की उम्र में तो बूढे लगते है । लगान की चिंता, कर्ज की चिंता है । हिडिम्ब में खेतीकाम करते है, पशु पालते है । पति-पत्नी दोनों काम करते है । आर्थिक रुप से त्रस्त है, हर साल फसल में नई नई दिक्कते, पैदा होती है ।

नेलियु, मलक में सारे पात्र स्त्री,पुरुष मजदूरी करते है, बंधुआ मजदूर तो कोई मजदूर है । गिद्ध में भी इसा बंधुआ मजदूर है, स्त्रीयाँ भी मजदूरी करती है । मृतपशु की चिरफाड, माँस खाना, चमडे की रस्सी बनाना जैसे कार्य करते है ।

प्रियतमा, आंगलियात में पुरुष बुनने का कार्य करते है, स्त्रीयाँ उन्हें मदद करती है । मजदूरी भी करते है । आर्थिक कमी कम है । दरिया में गाँव की सफाई, पशु की गोबर, मूत साफ करने का काम दूसरों के घर करते है । तिराड, चौकी, में भी पटेल के यहाँ मजदूरी करते है । शोध के पात्र सी.ए. है, चित्रकार है, उपन्यास के दलितों की आर्थिक स्थिति का मूलाधार है उनका शारीरिक श्रम । भूमिहीनता और अभावग्रस्तता उनकी बिगडी आर्थिक स्थिति के जिम्मेदार तत्त्व है ।

(११) **छूआछूत परम्परा**

सारे उपन्यास में छूआछूत है । चाहे उत्तरप्रदेश हो, मध्यप्रदेश हो, हिमाचल प्रदेश, या गुजरात हो सारे भारत में ये गलत सामाजिक परम्परा मौजूद है । अस्पृश्यता हिन्दु धर्म का कलंक है । गांधीजी सिर्फ छप्पर में अंत में समानता आंदोलन से छूआछूत परम्परा का अंत करवाया है । सवर्ण अपने पशु को सेहलता है मगर दलित की परछाई से भी दूर रहता है ये हमारे भारत का कलंक है । विश्व में ऐसी परंपरा किसी देश में नहीं है । हम भारतवासी भारतीय संस्कृति को महान मानते है । क्या इन्सान को इन्सान मानने के लिए भी तैयार नहीं है और किस मूँह से ये संस्कृति को महान मानेंगे ?

(१२) आंतरिक संघर्ष

चौकी में चमार, बुनकर के बीच संघर्ष है । वीरांगना झलकारी में आंतरिक संघर्ष है । झलकारी, मछरिया को कोई साथ नहीं देते, उनको सताने में मदद करते है । आंगलियात में रामला, भीखला, आंतरिक संघर्ष में माहिर है अपने को पटेल मानते है, दलितों की बातें पटेलों से कहते है और झघडा करवाते है । प्रियतमा में दो मुहल्लेवाले झघडते रहते है जो दलित विकास को रोकते है । इस प्रकार आंतरिक संघर्ष दलित विकास में बाधा डालते है ।

(१३) सामाजिक रीतिरिवाज, बालविवाह, शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, जन्म, मृत्यु

सारे उपन्यास में सामाजिक रुढियाँ परम्पराओं की बोलबाली है, लेखकों ने ये रुढियाँ तोडने का प्रयत्न किया है ।

वीरांगना झलकारी बाई में बालविवाह परम्परा दिखाई है । छप्पर में बालविवाह है, जल्दी शादी करना यानी जल्दी बच्चे पैदा करना ।

गिद्ध में ईसा की शादी हो चूकी है, गौना बाकी है । आंगलियात में मेठी, दरिया में दरिया की शादी बचपन में होती है दोनों की स्थिति बिगड जाती है जीवन नर्क हो जाता है । टीहा प्रेतभोजन नहीं देता जो परंपरा को तोडने का काम करता है । प्रियतमा में बालविवाह, शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, मृत्यु सभी परम्परा का विरोध किया है।

(१४) नेताओं का स्वरुप

सारे उपन्यासों में नेताओं का स्वरुप दर्शनीय है । छप्पर में राजकीय प्रोत्साहन नहीं है । ठाकुर हरनामसिंह जो सुक्खा को परेशान करता है सभी तरह से । प्रदेश में उन्ही का राज चलता है ।

हिडिम्ब में तो नेता और दलित (सुक्खा) से संघर्ष है जो सुक्खा की जमीन के लिए उनकी बीवी, बच्चे की हत्या करवाता है । सुक्खा की जिन्दगी नर्क बना देता है । आंगलियात, दरिया में भी उनके जैसे नेता है जो लोगों को परेशान करते है । अपना घर भरते है । जो यथार्थ भी है ।

सारे उपन्यास की कथा गाँव की है, शोष को छोडकर । पात्र कम पढे लिखे है, या तो अनपढ है । आर्थिक स्थिति दयनीय है । सवर्णो के यहाँ मजदूरी करते है, सवर्णो पर निर्भर है, इसीलिए सवर्ण उनका दुरुपयोग करते है । सवर्ण यहाँ शोषक है, दलित शोषित है । दलित स्त्रीयाँ का जातीय शोषण होता है- दरार, आंगलियात, दरिया, चौकी ।

आंतरिक संघर्ष भी यथार्थ रुप में वर्णित किया है, प्रियतमा, दरार, आंगलिया ।

जातिपंच का उल्लेख दरार, आंगलियात, प्रियतमा में विद्यमान है, पात्रा के द्वारा पंच की हाँसी उडाई है, क्योंकि ये पंच को दूसरों की झोंपडी जलाकर हाथ सेकने में आनंद आता है ।

सारे उपन्यासो में परिवर्तन पर बल दिया है । आंगलियात, प्रियतमा के स्त्री पात्र भी समाज में महत्त्व की भूमिका अदा करते है, पुरुष का खिलौना नहीं किन्तु जीवनसाथी बनकर जीना चाहती है । आर्थिक रुप से भी सहायता करती है, सामाजिक प्रसंगो में भी उसकी उपस्थिति अनिवार्य है । अत्याचार के खिलाफ बगावत पर भी अपने कदम पीछे नहीं हटाती ।

सारे उपन्यास की कथा लेखक के स्वानुभावों की कलात्मक अभिव्यक्ति है । अपने प्रति हुए अन्याय का डटकर मुकाबला करना चाहा है, शांति से बैठकर प्रभु की प्रार्थना नहीं बल्कि स्वयं को ही अपना भाग्यविधाता बनने की प्रेरणा है । चौकी जैसे उपन्यास में क्षत्रिय द्वारा अपने पर हो रहे अत्याचार, शारीरिक शोषण के प्रति एकसाथ जुट होकर लडने की कथा है । अपने हक और अधिकार, इन्सान की तरह जीने के लिए कितनी यातनाएँ भुगतनी पडती है, उसका वर्णन है । दलित समाज के समग्र परिवेश, रुढियाँ, परम्पराओं को हमारे सामने रखा है ।

बच्चे भी परिवार के आधारस्तंभ है, खेलना, पढना छोडकर अपने परिवार को आर्थिक रुप से मदद करने के लिए कटीबद्ध है ।

सारे उपन्यास के पात्र व्यसन के शिकार है, बीडीयाँ, शराब पीना मामूली सी बात है, पटेल के यहाँ मजदूरी करते है, तो खाना कम देते है, बीडीयाँ के शौकीन हो जाते है, परिणाम स्वरुप रोग के शिकार हो जाते है । कम उम्र में बूढापा नजर आता है । सोमा कहता है- ‘भाँ तो छोटी सी उम्र में पिला-पात हो गयी’ (तिराड)

अंधश्रद्धा के प्रति करारा व्यंग्य है, डॉक्टर के प्रति विश्वास है । कोई देवी-देवता हमारा उद्धार करेगा, यह बात अब पुरानी हो गयी- अब तो अपना उद्धार अपने को ही करना पडेगा । सवर्ण लोग दलितों को मंदिर प्रवेश का मना करते है, फिर भी अंधश्रद्धालु लोग मार खाकर मंदिर जाते है, युवान मंदिर में जाना ही नहीं चाहते ? हमारे प्रभु कहाँ है ? वे तो सवर्णो के भगवान है । हम तो इन्सान नहीं, पशु से बदतर है, इसा कूड में से पानी नहीं पी सकता, किन्तु बैल पानी पीते है । (गिद्ध) गरीबी से लडते लडते कभी वे जीवन की लडाई भी हार जाते । बचपन कब खतम हुआ और कब जवानी आयी कुछ पता ही न चलता था, ईसा भैंस चराते चराते चरवाहा, खेतिहर बंधुआ मजदूर कब बन गया उसका पता ही नहीं चला । (गिद्ध)

‘आंगलियात’ के बूनकर अपने पैसों से बीनते है, आर्थिक रुप से मजबूत है । प्रियतमा में भी आर्थिक स्थिति ठीक है, मनहर कपडे बूनकर जीवन बिताता है, आर्थिक रुप से स्वतंत्र है, सामाजिक प्रसंग, बिमारी में कर्जा करता है । किन्तु चौकी, दरार, मलक, गिद्ध, नेलियु, दरिया उपन्यास में दलितो की स्थिति आर्थिक रुप से दयनीय है । सवर्ण के यहाँ मजदूरी करते है, फिर भी दो-जून खाने का भी प्रश्न है ।

‘मलक’ की स्त्रीयाँ भी दोनों ओर काम करती है, पुरुष के साथ काम करना, सहयोग देना तथा घर की हर किया करना । सवर्णो ने दलितों को दबा दिया है । ठाकुर लोग दलितों को गुलाम से भी बदतर हालत में देखते है । यदि दलित दुल्हा ऊँट पर बैठे तो ऊँट को ही मार डालते है ।

कर्ज में डूबे रहनेवाले दलित कभी बाहर निकल नहीं पाते थे। जैसे जैसे उसे रुपये की जरुरत होती, वैसे वैसे वह लेता था, और अंत में यह रकम वार्षिक मजदूरी से भी आगे निकल जाती और जिन्दगी को कुछ और दिन गिरवी रख दिये जाते । (मुल्क-पृ.१०)

पुरानी पीढी सवर्णो की बिछाई जाल में फँस जाती है, या तो कर्म का फल मानते है । मंदिर में मार खाकर भी प्रवेश करते है । नई पीढी मंदिर में विश्वास ही नहीं करती, धर्म के प्रति श्रद्धा ही नहीं है, क्योंकि ये तो पाखंड है, मंदिर दलित बनाते है, और मंदिर बनाने के बाद दलित प्रवेश नहीं कर पाते ।

दरार और चौकी में भी बच्चे काम करते दिखाई देते है । खेलने का समय तो मजदूरी करने में बितता है । जोईती की स्थिति उपन्यास में दयनीय है, मजदूरी करके पति की सेवा, दवाई करने जैसा दुष्कर कार्य वह करती है पटेल जातीय शोषण करना चाहता है, तो अपने ही लोग सहयोग देने के बजाय, उसकी बातें बढा-चढाकर करते है ।

'चौकी' उपन्यास में वर्णाश्रम व्यवस्था का भेदभाव है, चमार-बुनकर में भी स्तरभेद है । आश्रम पर आधिपत्य जमाने के बारे में दोनों दल आमने सामने है । 'चौकी' की करुणता यह है कि दलित आर्थिक रुप से मजबूत नहीं है, पर ठाकुर के पास पहरेदारी करवाकर शांति से रहना चाहते हे, पर वही अखुसिंह चोरी करता है, तब करुणता बढ जाती है ।

उपन्यास के दलितों की आर्थिक स्थिति का मूलाधार है, उनका शारीरिक श्रम/भूमिहीनता और अभावग्रस्तता उनकी बिगडी आर्थिक स्थिति के जिम्मेदार तत्व है । परंपरागत पैसे भी अब उनके आर्थिक आधार को मजबूत रख पाये ऐसे सक्षम नहीं रहे, क्योंकि मिलों के कपडों की मांग बढने से हथकरधे के ग्राहक कम होते गये । मोतीचाचा ने हथकरधे पर बुनना कम कर दिया है, बूनने के बाद माल बिके बिना, पडा रहे तो दूसरा प्रश्न खडा हो, सूत लाने के लिए मूडी का । इसलिए छोटे-मोटे रुमाल बिनकर ही संतुष्ट होना पडे ।

'प्रियतमा' उपन्यास में यथार्थ आंतरिक संघर्ष है । उसके सिवा स्त्री की स्थिति, परम्पराएँ, आर्थिक स्थिति, सामाजिक व्यवहार का यथार्थ निरुपण किया है । आंबेडकर के कथन 'संगठीत बनो' का यहाँ ध्वंश हुआ है, दो मुहल्लेवाले एकदूसरे के दूश्मन बनकर शक्ति का व्यय करते है, अतः सामाजिक विकास के बदले अधःपतन होता है । बूढे लोग चिंतित है, पर चंदु जैसे व्यक्ति को नारदमुनि बनने का झघडा करने का शौक पूरा होता हे ।

सामाजिक रीति-रिवाज, परम्पराएँ, सभी उपन्यासो में चर्चित है । आंगलियात में बालविवाह तथा अनमेलविवाह है, जो मेठी के जीवन को नर्क बना देता है । दरिया भी ज्वलंत उपन्यास है, जिसकी कोई सीमा नहीं दरिया तो सचमुच आधुनिक समाज के लिए कलंक है, बालविवाह पर कटाक्ष है । रामला, खुशालखांट, पशा पंडया जैसे पात्र आधुनिक नारदमुनि है, सवर्णो के हाथ के खिलौने है, अपने ही हाथों अपने भाईयों के सामने उलझने पैदा करवाते है ।

उपन्यास में अधिकांशतः दलित अन्याय के प्रति विरोध करते है, मुकाबला करते है । पुरानी पीढी नियति का खेल मानते है । धर्म, भाग्यवाद, कर्मफल, पुनर्जन्म, पाप-पुण्य को मानते है । दलितों में भी हरिजन, चमार, सेनमा, बुनकर, तुरी में भेदभाव दिखाई देता है । बेटी का संबंध नहीं है- एकता के लिए यह घातक परीबल है । प्रियतमा में एक ही जाति के दो मुहल्लेवाले आपस-आपस में लडते है- जो दलित एकता के लिए घातक है ।

'गिद्ध' उपन्यास में ईसा की शादी बचपन में होती हे, कर्जा बढता ही जाता है, इसीलिए बँधुआ मजदुर के रुप में रहना पडता हे । 'गिद्ध' उपन्यास में शनाजी ठाकोर और सवर्ण दिवाली के यौन सम्बन्ध में ईसा चमार बीच में पीसा जाता है । फिर भी डरपोकवृत्ति के कारण सत्य बोल नहीं पाता है और न तो झुठ के खिलाफ बगावत कर पाता है । उसके माता-पिता भी उसके ठीक होने के लिए ईश्वर की मन्नतें रखते है, सत्य को खोजने की कोशिश नहीं करते । लेखक का उद्देश्य है कि जब

तक दलित भाग्यवाद, कर्मफल, इश्वरवाद, ईर्ष्या से मुक्त नहीं होगा, तब तक न उसमें स्वाभिमान पैदा होगा, और नही उनमें अन्याय, अत्याचार के खिलाफ बगावत करने की ताकात पेदा होगी ।

(१५) **शिक्षा**

सारे उपन्यासों में शिक्षा पर बल दिया है । आंगलियात, छप्पर, हिडिम्ब, दरिया, मलक, गिद्ध, दरार, चौकी, प्रियतमा, नेलियु, शोष उपन्यास में शिक्षा पर ज्यादा महत्त्व दिया है ।

'आंगलियात' में तो चिट्ठी, वालजी डेलेवाले के पास लिखवाकर गोला के पास जाता हे, किन्तु अनपढ वालजी ये समझ नहीं पाता कि उसमें क्या लिखा है, और परिणाम क्या हुआ यह हम सब जानते है । शिक्षा के महत्त्व पर दानजी कहता है- मास्तर की गांधीजी वाली और बाबू साहब हेंडयाकर (बाबासाहब अम्बेडकर) वाली बातें कम समझ में आती है, जब कि वे कहते है वह बिलकुल सही । सौ गुना सच । गोकल भी स्कूल बनने पर सात हजार रुपये दान देकर शिक्षा का महत्त्व सबको समजाता है । मास्तर का पात्र आंगलियात में कितना सहयोगी होता है ये भी शिक्षा के कारण ।

'दरिया' में शिक्षा का महत्त्व ज्यादा है, दरिया जसु के पास पत्र लिखवाती है, दवा का महत्त्व समजाती है ।

'मलक' में सभी पात्र अनपढ है, इसीलिए अन्याय, अत्याचार को सहते है, आर्थिक स्थिति ही इतनी दयनीय है कि शिक्षा के लिए कहाँ जाय ? सिर्फ काम करना और अपने पर हुए अत्याचार को मूक बनकर सेहना ।

दरार, चौकी, उपन्यास में भी शिक्षा की स्थिति कमजोर है । पढना-लिखना शायद उनके भाग्य में ही नहीं है, ऐसा उनका भगवान कहता है । या तो सवर्णो उन्हें पढने ही नहीं देते, क्योंकि फिर उनके खेतों का काम कौन करेगा ? दलित पढेंगे तो सवर्णो के सामने होंगे, अपने अधिकार के प्रति जाग्रत होगे, इसीलिए पढने का मौका ही नहीं दिया ।

‘प्रियतमा’ में तो शिक्षा पर बहुत बल दिया है, किन्तु आर्थिक चिन्ता के कारण गणपत, मनहर जैसे लडके पढ नहीं पाते, मंगल नापास होता हे, किन्तु जसमुती के कारण मनहर कॉलेज करता है, और अच्छा पद प्राप्त करता है, लेखक ने मनहर द्वारा दलितों में पढने की प्रेरणा दी है ।

‘गिद्ध’ उपन्यास में भी गाँव में कोई पढा-लिखा व्यक्ति नहीं है । तो फिर दलितों की बात ही क्या ?

सवर्णो के लिए दलित पशु से बदतर है, पशु पानी कुंड में से पी सकता हे, लेकिन दलित नहीं ! सवर्ण लोग दलित औरत के वासनापूर्ति का साधन ही मानते है । वास्यतिक रुप में तो दलित स्त्री को छूते भी नहीं है, और एकांत मिलने पर उसके साथ ही वासना पूर्ण करते है । सवर्णो की मानसिकता में वही तो फर्क है ।

(१६) सवर्ण-दलित संघर्ष

‘आंगलियात’ में जो कपडे बुनते है वह स्वतंत्र है, और आर्थिक रुप से भी ठीक है, किन्तु मजदूरी करते है, उनका आधार सवर्ण ही है । वालजी, टीहा, कंकु, मेठी, दानजी जैसे पात्र अन्याय के प्रति मुकाबला करते है, मेठी की बेईज्जती का कडा विरोध करता है टीहा और कहता है ‘‘उधर स्वराज्य आने की बात हो रही है, और इधर हमारी बहन-लडकियों की इज्जत का यह हाल ? हमारी पत्नी का आप के मन कोई मूल्य नहीं ?’’ (पृ.२५)

वालजी की मौत दलितों के लिए संघर्ष की शुरुआत है, मास्तर का पात्र उपन्यास में उभरकर आया है- वालजी की शोकसभा में कई लोग इकट्ठे होते है, पर सब चले जाते हे, डेलेवाला कहता है- ये जाति को मैं पहचानता हूँ, एक नहीं होगे, जिस दिन एक होंगे उस दिन हमारा अन्त होगा ।

रामजी के कारण भी संघर्ष बढता है, कंकु सवर्णो को भगाती है, और कहती है- पूरी जाति ही कमजोर है, दो-तीन शूरवीर हो उससे क्या ? (पृ.२८६)

लेकिन अंत में टीहा और डेलेवाला का भतीजा जो सरपंच है, उसके साथ संघर्ष होता हे, तब टीहा की पिटाई होती है, कोई भी अस्पताल टीहा को स्वीकारती नहीं है, प्राण चला जाता हे, पूरे उपन्यास में संघर्ष है, तो आंतरिक सघर्ष भी है ।

मलक उपन्यास में भी संघर्ष की चरमसीमा है । दलित लोग मजदूर है, और सवर्णो पर आश्रित है । मंदिर प्रवेश, पानी पीना, जैसे प्रसंग में दलित पकडे जाते है, तो पिटाई करते हे, चाहे ये मंदिर दलित ने ही बनाया हो फिर भी ! सवर्ण दलित लडकी- औरतो की इज्जत लूँट सकते है, किन्तु कोई दलित पुरुष सवर्ण-स्त्री की इच्छा के कारण भी उसके साथ यौन सम्बन्ध रखे तो सारे दलितो को मुल्क छोडना पडता है । आधुनिक पीढि संघर्ष करती है, आज भी दलितों को अपने लिए अच्छा मूलक नहीं मिला ? यह कितना व्यंग्य है ।

दरार में संघर्ष है, किन्तु दलितों थोडी देर हो हल्ला करते है, बलदेव भगा को गालियाँ देते है और सब शांत हो जाते है । सोमा की मृत्यु और जोईती का गर्भवती होना ये घटना के कारण अपने और दूसरे लोग भी जोईती के उपर किचड उछालते है, जो संघर्ष ही है । बलदेव पटेल का नपुंसक होना ये घटना के कारण जोईती का कलंक कम होता हे, किन्तु आंतरिक संघर्ष भी दरार में कम नहीं है ।

चौकी में भी दलितों का सवर्णो के साथ संघर्ष है । चोरी होती है तो चौकीदार (अखुसिंह) रखते है, फिर भी चोरी तो होती ही है, अत: सारे दलित एक जूट होकर चौकी बंद करवा देते है, और स्वयं (दलित) ही चौकी करते है । दलित सवर्णो के मजदुर है, ये दोनों उपन्यास में भी आंतरिक संघर्ष और सवर्णो के साथ संघर्ष का यथार्थ वर्णन है ।

प्रियतमा में तो आतंरिक संघर्ष ही ज्यादा है । अपने ही घर में संघर्ष है, विचारो के कारण, सामाजिक रुढियों के कारण, तो सबंधीयो में भी यही बात है दो मुहल्लेवालों के बीच जो संघर्ष है यह देखकर तो सचमुच हमारे सामने दो -मुहल्ला रुबरु हो जाता है ।

‘गिद्ध’ उपन्यास में दिवाली और शनाजी ठाकोर के बीच अनैतिक संबंध है, पर शक ईसा पर करते है, और मारा भी जाता है किन्तु ईसा के माता-पिता भगवान माताजी पर आस्था रख्रते है, संघर्ष करने की शक्ति नहीं है, मुहल्ले के लोग जरुर ईसा के माता-पिता को फरियाद करने को कहते हे, किन्तु पानी में बैठ जाने पर दूसरे लोग क्या करे ?

इस प्रकार ‘नो लिया’ उपन्यास में भी संघर्ष है- दलित, ठाकोर, पटेल ट्रिपल संघर्ष है, दलितों को पटेल साथ देते है, ठाकोर के साथ संघर्ष में, किन्तु पटेल भी कम नहीं है ।

सारे उपन्यासो में संघर्ष है, कहीं विद्रोह भी है, फिर भी दलितो की स्थिति सचमुच दयनीय है । दरार, गिद्ध, मलक जैसे उपेन्यास में जो संघर्ष हे वह कुरण है, २००६-०७ में भी गुजरात, भारत के कई गाँव में दलितो की स्थिति वैसी ही है । अपनी बहु-बेटी की इज्जत लूँटने पर एक शब्द बोलने की हिंमत नहीं है, स्वतंत्रता आने के बाद भी (१००) सौ प्रतिशत स्वतंत्रता नहीं है । हमला होने पर भी पुलिस का नाम नहीं लिया जाता ! मूँह बंद करके आँसू बहानेवाले दलितों की संख्र्या अनगिनत है । टीहा जैसा व्यक्ति है तो भी राजकीय दावपेच में पीछे हट जाता है, क्योंकि राज तो सवर्णो का है । मानव-अधिकार की बात तो सवर्णो के पास है, दलित ऐसा कुछ जानते नहीं है, या तो जानते है तो उनमें बोलने की शक्ति नहीं है, शक्ति है तो सवर्णो ने छीन ली है । आंगलियात उसका सही रुप है, पुलिस फरियाद नहीं लिख्रती, डॉक्टर दवाई नहीं करता ये आज का नग्न सत्य है । हमारे नेता २१वीं सदी में भारत को ले जाने के लिए प्रयत्नशील है, किन्तु अंदरुनी विकास तो किजीए, कम से कम दलितों को प्राथमिक आवश्यकता तो दिजीए, स्वयं ए.सी. गाडी में फिरते है तो छोटे इन्सान को जूते तो चाहिए न ! कर्मवाद कब तक चलेगा ? वीरांगना झलकारी बाई में दलित-सवर्ण मानसिक संघर्ष है, झलकारी मछरिया को हैरान, परेशा करते है । मछरिया के घर पर पत्थर फेंकते है ।

छप्पर में सुक्खा में समाना करने की ताकत नहीं है । उनकी जिंदगी नर्क बना देते है । हिडिम्ब संघर्ष से भरपूर है । रमिया संघर्ष करती है ठेकेदार, प्रधान को भगाती है, ठेकेदार का लिंग काट देती है । हिन्दी दलित उपन्यास के दलित संघर्ष में पीछे है ।

उपन्यास में दलितो के सामने कई चुनौतियाँ है, जितनी बाहर से उतनी ही अपने भीतर से भी । जहाँ तक बाहरी चुनौतियाँ की बात हे, गाँवों में जमींदार विषैले साँप की तरह अपना मुँह फैलाये बैठे है, उधर अभावग्रस्तता और आजीविका की आधारहीनता में दलित अपने उपर हो रहे अत्याचारों को झेलने में विवश है ।

'आंगलियात' में एकता पर बल दिया है, रामला जैसे व्यक्ति को सही रुप में दलित बनना है । खना जैसे बूढे लोगो को शिक्षा करनी है, जो पैसे के स्वार्थ में मेठी जैसी स्त्री की जिंदगी दाव में लगाता है । डेलेवाला नेता को वश्व के समक्ष रजू (पेश) करना है, जो स्वतंत्र भारत का कलंक है ।

'मलक' उपन्यास के दलितो के सामने भी अनेक चुनौतियाँ है । जितनी बाहरी उतनी अंदरुनी । चाहे वतन की बात हो, अन्याय अत्याचार की बात हो, बहु-बेटियों की इज्जत बचाने की बात हो, मनुष्य के नाते मंदीर प्रवेश की बात हो, हर जगह उनके लिए चुनौतियों से भरी है । उधर दलितों में कुछ लोग ऐसे भी है, जो अपनी धर्मभीरुता, डरपोकवृत्ति जड मान्यताओं के चलते शोषण को अपना भाग्य मान बैठे है- यह भी एक बडी चुनौती है ।

यह उपन्यास एकता पर बल देने की सीख देता हे, विद्रोह की भावना कम है । 'दरार' में तो जोईती को अपना अस्तित्व टिकाए रखने के लिए संघर्ष करना पडता है, अपने लोग तो बेईज्जत करते है, साथ साथ पटेल लोग भी बेईज्जत करते है । दोष नहीं है, फिर भी लोग दोषित ठहराते है ।

'चौकी' में चमार-बुनकर का अलग दल है, उपन्यास में आश्रम और कर्मकांड से दलितो को बचाने की कोशिष की ओर ईशारा है ।

‘प्रियतमा’ में भी आंतरिक संघर्ष, पारिवारिक प्रश्न, स्त्री की स्थिति, रुढियाँ, परम्पराएँ, सब प्रत्यक्ष है, यथार्थ है । सवर्णो के साथ संघर्ष नहीं है, किन्तु आंतरीक संघर्ष में यह उपन्यास सबसे श्रेष्ठ है ।

सारे उपन्यास में दलित व्यसन के शिकार है, जो आर्थिक, शारीरिक रुप से तोडने का काम करता है । अकाल में अधिक मास है, खाने के लाले है, किन्तु व्यसन के बिना नहीं चलता । डॉ. आंबेडकर का विचार सूत्र ‘शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो’ का संकल्प अभी दलितो ने पूरा नहीं किया है । गलत परम्परा को तोडना, परिवार में शांति, इन्सान को ईन्सान के रुप में देखना, शिक्षा, संगठन, सामाजिक प्रसंग में भी परिवर्तन करना जरुरी है, वरना हम दुनिया से पीछे रह जायेगें, उसमें खेद नहीं ।

दलितोत्थान तब होगा, जब हर दलित अपने अहं को त्यागकर, एकसूत्र में एक कतार में संगठित होकर, शिक्षा पाकर, पुरानी परंपरा, गलत रुढियों को छोडकर स्त्रीयों को सम्मानपूर्वक साथ में लेकर अपने प्रति हुए अन्याय का डटकर मुकाबला करेंगे, किसी भी कोने में हुए अन्याय को सब समजेंगे कि एक व्यक्ति का नहीं बल्कि पूरे दलितों पर यह अन्याय हुआ है । न्याय के लिए कुछ भी छोडने के लिए तैयार रहेगे तभी हमें इन्सानियत मिलेगी वरना जो है, वो ही रफतार चलेगी ! अपना उद्धारक खुद को ही बनना पडेगा । हम भीख नहीं माँगते हम तो अपना अधिकार माँगते है, आज तक बहुत सेह लिया है, सून लिया है, अब तो जमाना बदलना चाहिए, क्योंकि हम भी इन्सान है ।

‘आंगलियात’ उपन्यास में राजनैतिक प्रोत्साहन नहीं है, पर दलितो को हक न मिले, न्याय न मिले ऐसे दावपेच डेलेवाला करता है ।

‘मलक’ उपन्यास में राजकीय प्रोत्साहन नहीं है, किन्तु दलितों पर कई प्रतिबंध है, जो सवर्ण और दलितों की विभाजक रेखा बनता है। शादी-ब्याह में घोडे पर बैठ नहीं सकता, मंदिर प्रवेश नहीं कर सकता, सार्वजनिक तालाब, कूए में से पानी नहीं पी सकता । ‘मलक’ की महत्त्वपूर्ण घटना हिजरत है, एक इन्सान की गलती पर सारे मुहल्ले को हिजरत करनी

पडे यह घटना सचमुच हृदयस्पर्शी है, और सवर्ण ऐसी गलती करे तो कुछ नहीं, यह पंक्तियाँ उसके लिए सही है,

‘वे कत्ल करें तो भी माफ
हम आहें भरे तो भी गुनाह’

‘गिद्ध’ उपन्यास में भी कोई राजकीय प्रोत्साहन नहीं है, सिर्फ मजदूरी करना, शोषण सेहना, स्त्रीयाँ की इज्जत लूँटे तो भी कुछ बोलना नहीं ।

डॉ.श्री गीरीश रोहितने अपने शोधनिबंध में लिखा है,

‘उपन्यास में लेखक ने शोषित-पीडित बंधुआ चमार लोगों को भूमिहीन व अभावग्रस्त तो दिखाया ही है, साथ ही उनके सामने व्याप्त सामाजिक-आर्थिक प्रतिबन्धो की दहशत को भी भलीभाँति उजागर किया है । अपार दरिद्रता व अभावग्रस्तोने उनकी क्रांतिकारी सोच को कुंद कर रखा है । अशिक्षा व अज्ञानता के भँवर में फसे दलितों को किसी भी प्रकार आंतरिक-बाह्य प्रोत्साहन का अभाव है ।’

‘चौकी’ में तो राजकीय प्रोत्साहन नहीं, किन्तु रक्षक ही भक्षक है, फिर भी चौकी करवाते है । बाद में दलित इतने तो जाग्रत हो जाते है, स्वयं ही फिर अपनी रक्षा करते है ।

‘दरार’ में दलित औरत की कसौटी है । जिसके चारों ओर तीर छूट रहे है, और बीच में अकेली है विधवा, आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक रुप से टूटी हुई । उसको कोई सहारा नहीं देता, अपनी ही जातिवाले, मुहल्लेवाले मानसिक रुप से हैरान करते है । प्रियतमा की जसुमती तो पढी-लिखी है, परिस्थिति का सामना कर सकती है, मजदूरी के लिए सवर्णो के यहाँ जाना भी नहीं है, उसकी तुलना में जोईती सचमुच सर्वोच्च है । ऐसी औरतो को जरुरत है राजकीय, सामाजिक, प्रोत्साहन की ।

प्रियतमा में दलित विकास के लिए कोई सामाजिक-राजनैतिक प्रोत्साहन नहीं है । सवर्ण समाज के साथ कोई संबंध या संघर्ष नहीं है । किन्तु अपनी ही कमजोरियों से परम्पराओं से संघर्ष है, आंतरिक संघर्ष है । जसुमती जो उपन्यास की नायिका है वह पुरानी परम्पराओं को तोडकर

नया पथ प्रस्थापित करती है । प्रेतभोजन, शादी लडका-लडकी की पसंदगी पर आधारित शराब का विरोध, जैसे सुधार समाज के लिए उपयोगी साबित होते है । मनहर को पढाने में स्वयं टूट जाती है, घर का काम, और बूनने का काम करती है । सास के मानसिक त्रास को सेहती है और घर में शांति रखने के लिए मनहर को एक शब्द भी नहीं कहती, इस प्रकार अपना उद्धार स्वयं करती है । हिडिम्ब में राजनेता ही सत्र बना है जमीन लेने के लिए ।

‘ना ि ला या ु’ उपन्यास में दलित लडकी को अपने शील की रक्षा हेतु खुद को ही हथियार उठाना पडता हे । सरपंच अपने पद की रक्षा हेतु विरोधपक्ष के व्यक्ति का खून करवाता है, मणिलाल जैसा दलित व्यक्ति जो विकास करता है अन्याय का मुकाबला करता है, उसको भी वह खत्म कर देता है, यहाँ दलितोत्थान के बारे में कोई प्रोत्साहन तो नहीं है, किन्तु सरपंच ही अच्छे व्यक्ति का खून करवाता है, पुलिस भी पैसे लेकर चुप रहते है, ऐसे समय में दलितों की स्थिति कैसी होगी, ये सोचने जैसी बात है । मणीलाल और युवानपात्र शोषकों के खिलाफ विद्रोह करते है, पढने पर बल दिया है । शिक्षक (शिवाबापा का पुत्र) समाज, गाँव का विकास करता है । शिक्षा का महत्त्व यह उपन्यास में है, किन्तु सभी दलित मजदूरी ही करते है, जहाँ दो जून खाने का प्रश्न हो वहाँ शिक्षा प्राप्त करना एक चुनौती है । सारे उपन्यास के पात्र सम्मानपूर्वक जीना चाहते है, स्वाभिमान है । अपने अस्तित्व के प्रति जागृत है ।

‘आ ं ग ा लि ा या ा ता’ में टीहा, वालजी, दानजी, कंकु, मेठी, मास्तर, भगत जैसे दलित पात्रो के माध्यम से दलितों में आत्मसम्मान व स्वाभिमान जगाना चाहा है ।

‘द ि र या ा’ उपन्यास में ‘कसना तारा कानजी’ के द्वारा दलितो में आत्मसम्मान की पेहचान करवाई है ।

‘ना ि ला या ु’ उपन्यास में दलित-ठाकुर के संघर्ष में दलितों में आत्मसम्मान व स्वाभिमान की भावना जागृत हुई दिखाई देती है । चंपा

भी रायसंग जैसे दरबार को भी पडकारती है । जो नारी अस्मिता है । मंदिर प्रवेश के बारे में दिनेश चौहाण के विचार दलितों के लिए महत्त्वपूर्ण है । तूरी का नाटक भी प्रतिकात्मक है । मणीलाल का पात्र भी संघर्ष करके अपना अस्तित्व टीकाने के लिए सबको जागृत करता है । सारे दलित मणिलाल को साथ देते है यह भी उपन्यास की विशेषता ही है ।

'मलक' उपन्यास में युवानपात्र सम्मान के साथ जीना चाहते है । सेनमा जैसी जाति के लोग दलित होकर भी दलितों के यहाँ ढोल बजा नहीं सकते थे । ऊँटवाला भी यदि ऊँट शादी में दे तो ऊँट ही मार डालते है, ऐसे समय में दलितों की स्थिति श्वास लेने से पहले भी सोचना पडे ऐसी थी ।

श्री गीरीश रोहितने लिखा है- उपन्यास में बचपन से बंधुआ बने शोषित- पीडित दलित लोगो में जागृत हुए अस्मिताबोध की कहानी है ।"

बचपन में ही जिन्दगी के अमूल्य वर्षो को पानी की तरह बह जाते देख छगन कहता है- इस बाड के किले में पसीना बहाते जिन्दगी के कई अमूल्य युवा वर्ष को मिट्टी को ढेले की तरह पिघलने दिया था.. मिला क्या ? वेतन ? और वेतन में रुपये पचास, (वार्षिक) एक जून घेंस (छाछ और पीसे चावल मिलाकर बनाई गई चीज) दो जून रोटी और छाछ ! बस इतने में तो वह जी रहा था, बंधुआ था न ! (मलक-पृ.२)

'चौकी' के दलित भी सम्मानपूर्वक जीना चाहते है, अखुसिंह की चौकी बंद कर देते है, और स्वयं चौकी करते है । "हम अपनी रक्षा करने को जागते रहेंगे ।"

'दरार' में जोईती के पिता मगन सम्मान के साथ जीना चाहते है, तो मथुर भगत का पात्र भी उतना ही उत्कृष्ट है ।

'प्रियतमा' में स्वाभिमान, सम्मान से दलित जीते है, पढते है, नौकरी करते है, तो कोई दलित बुनने का काम करके सुख-दुःख में पलट रहे है । चोरी होने पर स्वयं चौकी करते है, किन्तु अपने रीति-रिवाज, रुढियाँ को तोडने में विवश है । जसुमती- मनहर जैसे आधुनिक

दम्पति ही परम्परा को तोडते है, जो समाज के लिए काफी आवश्यक है । जसुमती के द्वारा दलित समाज में स्त्री का स्थान निश्चित किया है, जो पुरुष की जीवनसाथी है । गृहसंसार और सामाजिक प्रसंग में भी स्त्री का स्थान महत्त्वपूर्ण है । श्री गीरीश रोहित ने अपने संशोधन ग्रंथ में लिखा है-

'पारिवारिक रुप से देखा जाय तो कथानायिका जसुमती अपने अस्तीत्व और अस्मिता की निरंतर तलाश के लिए संघर्षरत है । यहाँ उसकी पूरी जिन्दगी दोहरें अभिशापों से ग्रस्त है.. पारिवारिक जिम्मेदारियाँ और आर्थिक मूलाधार बनना । इसलिए अनेक असह्य और विपरीत अवस्था में भी समस्याओं का सामना कर अपनी पहचान बनानेवाली जसुमती में लेखक ने नारी अस्मिता की पहचान करायी है ।'

'गिद्ध' उपन्यास में दलितो की स्थिति आर्थिक रुप से कमजोर है, इसीलिए बंधुआ मजदुर के रुप में जीवन व्यतित करते है, पढे-लिखे नहीं है, दो-जून खाने का प्राप्त नहीं होता, इसीलिए मृत पशु का माँस भी खाने में उपयोग करते है, वही तो उनके लिए फिस्ट (मिजबानी) है ।सवर्ण के घर ही सुबह में उठकर जाना होता है, पशु चराने का काम दलित बच्चे करते है, खेतो में कोई बंधुआ मजदूर तो कोई मजदुरी करते है । घेंश और मृत पशु का माँस ही खाने की चीज है, वह लोग सम्मान क्या जाने ? स्वाभिमान भी कहाँ से हो ? फिर भी युवानो में स्वाभिमान दिखाई देता है ।

प्रस्तुत अध्याय में मैंने सभी उपन्यासों का अध्ययन किया है । गुजराती में दलित लेखक रचित दर्जनों उपन्यास विषय वैविध्य के साथ उपलब्ध है, किन्तु मैंने सिर्फ नौ उपन्यास का चयन किया है ।

उपन्यासों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश दलित लेखकों ने अपने-अपने उपन्यासों में अपने भूतकाल को वर्णित किया है । छूत-अछूत, मुश्केलियाँ, अपनी स्थिति, मुहल्ले की स्थिति, पुरुषों का काम, स्त्रीयाँ का काम, स्त्रीयाँ-बच्चे का काम, बंधुआ खेत मजदुर, मजदूर,

स्त्रीकी स्थिति, सवर्ण-दलित संघर्ष, शोषण, शिक्षा, राजकीय प्रभाव, रुढियाँ, परम्पराएँ, मुक्ति की कामना, व्यसन, आंतरिक संघर्ष पर ध्यान दिया है । यथार्थ की ओर दृष्टि ज्यादा है । कहीं कहीं आदर्श का रंग अल्प मात्रा में दिखाई देता है ।

‘प्रियतमा’ में शिक्षा पर ज्यादा बल दिया है, डॉ.आबेडकर की विचारधारा ‘शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो’ को चरितार्थ होते हुए दर्शाया है, हाँ उपन्यास में संघर्ष (दलित-सवर्णो के बीच) नहीं है । परम्परागत रुढियों को तोडा है, कपडा बूनने के साथ साथ पढकर एक अच्छे पद को प्राप्त कर सकते है उसका उदाहरण मनहर है । समाज में सास-बहू का झघडा यथार्थ में है, किन्तु यहाँ बहू का पात्र आदर्श दिखाकर स्त्री का (बहू का) पलडा भारी रखा है, जो योग्य है प्रेरणादायक है । आंतरिक संघर्ष का यथार्थरुप दिखाकर एक रेड सिग्नल का काम किया है ।

‘मोलियु’ भी महत्त्वपूर्ण उपन्यास है, एक दलित एन्जिनियर की मूर्छित अवस्था, जाति नहीं जानते थे, तब तक एन्जिनियर साहब के प्रति पटेल दंपति का प्रेम और जाति जानने के बाद का पटेल दंपति, दलित स्त्री- पुरुष मूहल्ला, तूरी जाति का नाटक खेलना, दलित-सवर्ण संघर्ष, दलित नारी का रणचंडी स्वरुप आदी दर्शनीय है ।

श्री गीरीश रोहितने अपने संशोधनग्रंथ में लिखा है- गुजराती दलित लेखकों की बात करे तो अधिकांश लेखको ने बडे प्रतिकात्मक व कलात्मक ढंग से दलित चेतना को उजागर किया है । जोसेफ मेकवान का ‘आंगलियात’ गुजराती दलित उपन्यास परम्परा की नींव माना जाता है, जो काफी चर्चित भी रह चूका है, जिसमें उन्होंने उपेक्षित व अवहेलना के भोग बने समाज की दारुण कथा को आंगलियात (रबीब) के प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । जोसेफ मेकवान बार बार कहते है कि ‘मानवता मेरा धर्म है और प्रेम मेरा सम्प्रदाय’

‘दरिया’ उपन्यास में बालविवाह का परिणाम, सरपंच (सवर्ण) द्वारा सुंदर दलित लडकी का अपहरण, दलित स्त्री का रणचंडी स्वरुप, देखने को मिलता है ।

दलित उत्पीडन व यंत्रणाओ के इतिहास के भुक्त भोगी रचनाकार है दलपत चौहान । उन्होने 'मलक' तथा 'गिद्ध' में दलितजीवन की उन सच्चाईयों पर से पर्दा हटानेका काम किया है, जो अभी तक तथाकथित गुजराती उपन्यास साहित्य जिससे मुँह मोडे हुए था । मलक में दलित मजदूर भगा तथा सवर्ण संतोक के यौन सम्बन्ध से समग्र दलित समुदाय को किस तरह विस्थापन का भोग बनना पडता है ! इस व्यथा को बडे कलात्मक ढंग से उजागर किया गया है ।

'गिद्ध' में सवर्ण लडकी दिवाली के साथ शनाजी ठाकोर का यौन सम्बध चलता है, जिसका शिकार बन जाता है, कथानायक इसो । इसको भी लेखक ने सहज व वास्तविक रुप से निरुपित किया है । कुल मिलाकर दलपत चौहान की रचनाओं में समग्र दलित समाज की व्यथाओं के न केवल वाणी मिली है, बल्कि अतीत की एक ऐसी विरासत मिलती है, जो उसे हर समय अपनी मुक्ति के लिए प्रेरित करती है ।

श्री हरीश मंगलम् ने 'तिराड' में एक निःसहाय विधवा दलित औरत के चरित्र पर लगे यौन सम्बनध के कलंक को बडी सहजता से मिटाया है । तो 'चौकी' में अखुसिंह जैसे शोषणखोर व्यक्ति की जाल में से पूरे दलित समाज को एकजूट होकर स्वाभिमान के साथ मुक्त होने दिखाया है । यहाँ हंमेशा ध्यान रहे कि चोकी कोई [illegible] नाहीं बल्कि [illegible] है जो हंमेशा दलितो पर अपना आधिपत्य जमाये रखने बनायी गई साजिशपूर्ण व्यवस्था है । इस उपन्यास में लेखक ने दलितों को उस चोकी से मुक्त कराकर उनमें एक नया अस्मिताबोध कराया है ।

[illegible] एक आधुनिक दलित उपन्यास है । पुत्री का महत्त्व आज भी समाज मे कम है, उच्चकक्षा प्राप्त व्यक्ति अपनी संतान को अपनी ईच्छा के मुताबीक उच्चकक्षा दिलाते है, किन्तु संतान की अपनी ईच्छा की कोई किंमत नहीं ! परिणाम- स्वरुप धोबी के कुत्ते जैसी हालत होती है संतान की ! शिक्षा का महत्त्व, सवर्ण- दलित मानसिकता में बदलाव, (देशल-राजल) प्रेम (पुरंदर-माधवी) द्वारा दलित ऐक्य, जलसंकट अभियान,

जगडुशा-दुदाशा के द्वारा समाजहित चिंतको की किंमत, तो दोनों के द्वारा हुआ कार्य, जगडूशा सवर्ण है तो उसके देरासर का जिर्णोद्धार होता है, दुदाशा मेघवाल (दलित) है तो उनकी वाव आज खंडेर हालत में है यह स्पष्ट दिखाकर समाज में सवर्ण-दलित की खाई को स्पष्ट रुप में अभिव्यक्त की है ।

यहाँ अधिकांश दलित लेखको ने दलित समाज व जाति की तमाम पर्तो को खोलने का सार्थक प्रयास किया है, चाहे वह सुन्दर हो या असुन्दर क्योंकि दलित लेखकों की नजर में असुन्दर भी वास्तविक जीवन का एक अकाट्य अंग है, जिसका अपना सौंदर्य होता है ।

('गाद्ध' उपन्यास में वर्णित मृत पशु की चिरफाड और खुश होनेवाला दलित समाज) जिसको नजर अंदाजकर लिखना ढाक-पिछाडे करने बराबर है । इसलिए तो सशक्त गुजराती दलित साहित्यकार जोसेफ मेकवान कहते है- "हमें अपनी जाँघ खोलने का जधन्य कार्य भी करना पडा है ।"

अधिकाँश लेखकों ने जितना दलित -सवर्ण के अन्त सम्बन्ध व संघर्ष को उजागर किया है, उतना ही अपने अन्दरुनी अन्तर्विरोध, जातिभेद, रुढियाँ व जडताओं को भी बडी शिदत से खोला है । जहाँ गैरदलित लेखक दलितों पर सुधारवाद व मानववाद के प्रभाव में लेखन के एक विषय के तौर पर अपनी संवेदना प्रकट करता है, वही दलित लेखक अपनी यातनाओं को वाणी देते हुए सामाजिक परिवर्तन के लिए अपना अभियान चला रहा है । लेखन कार्य नहीं । दलित लेखक अपने मनुष्य होने की पहचान को स्थापित कराने तथा सामाजिक बदलाव को मदे नजर रखते ही अपनी एक अनिवार्यता के रुप में दलित लेखन अभियान से जुडता है । दलित लेखकों में भी कुछ व्यथाकथा के दारुण इतिहास से आगे नहीं जा पाये है । तथा बूनकर, चमार, भंगी जैसी जातियों से आगे नहीं लिख पाये है । दलितो में इनके अलावा मेहतर, तुरी, आदिवासी, सेनमा, करनट आदि है, जिनकी दारुण जिन्दगी को वाणी मिलनी अभी बाकी है । दलित शब्द के व्यापक अर्थ को ध्यान में रखकर ही दलित

साहित्य परिधि को बढाना दलित लेखक का मूल हेतु होना चाहिए । गुजराती दलित उपन्यास की तुलना में हिन्दी दलित उपन्यास में दलितों के स्वानुभव को कम वाणी मिली है । सामंती-व- पुरोहित वर्ग की ज्यादा जकडने व अन्याय हिन्दी प्रान्त के दलितों ने ज्यादा सहा है, और अभी भी उससे मुक्त नहीं है, उतना शायद अन्य दलितोने नहीं । फिर भी यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि हिन्दी में यथार्थवादी नजरिये से ठोस वास्तविकता को कलात्मक रुप देनेवाला हिन्दी दलित उपन्यास नहीं मिल पाया है । दलित लेखन महज एक दलित लेखन मात्र नहीं है, वह एक ऐसा अभियान है जिसके केन्द्र में है- मनुष्य । जिसका केन्द्रिय उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन है । दलित लेखक समानता पर बल देता है, सभी एक है । दलित लेखक रचित दलित लेखन व गैरदलित लेखक रचि दलित लेखन पर शिवकुमार मिश्र के विचार ध्यान रखने योग्य है । गैरदलित लेखकों के दलित जीवन संदर्भो पर किये गये लेखन की संवेदनात्मक उष्मा को हम स्वीकार करते है, परन्तु यह एक सच्चाई है कि आत्मानुभव और आपबीती का कोई भी विकल्प नहीं हो सकता ।[1]

आदर्श व कल्पना के रंगो से रंगे यथार्थवाद से प्रभावित उपन्यास

विवेच्य उपन्यासों मे से ऐसे उपन्यास सामने आते है, जो यथार्थवादी विचारधारा से प्रभावित तो है, पर यथार्थ अधिकाँश आदर्श व कल्पना के रंगो से रंगा हुआ है । (जयप्रकाश कर्दम) छप्पर

(दलपत चौहान) का गिद्ध (जोसेफ मेकवान) आंगलियात, दरिया, (हरीश मंगलम्) तिराड, (मोहन परमार) प्रियतमा आदि उपन्यासों में स्वानुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति हुई है ।

यथार्थवाद एवं डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा से प्रभावित यानी परिर्वतनकामी उपन्यास

विवेच्य उपन्यासो में पूरी तरह से आदर्शवादी विचारधारा से लिखे गये है । जिनमें रचनाकार का उद्देश्य दलितो में उनकी सोयी हुई अस्मिता को जगाने का रहा है । दलितो को उनके अस्तित्व की पहचान

कराकर उन्हें अपने अधिकारों के लीए सचेत करना रहा है । ऐसे उपन्यासों में जोसेफ मेकवान का आंगलियात, दलपत चौहान का मलक हरीश मंगलम् का तिराड एवं चौकी मोहन परमार का प्रियतमा, नेलियु एस.आर.हरनोट का हिडिम्ब आदि है ।

लेखकों ने दलितों को अपनी रुढियों, कमजोरियों से बाहर निकालकर विद्रोह व संघर्ष की अवस्था तक पहुँचाया है । यहाँ तक की स्थापित उत्पीडक व्यवस्था को उखाड फैंकने कृत संकल्प बनाया है ।

इन उपन्यासों के युवान दलित शोषण अन्याय- अत्याचार को भाग्यवाद के नाम पर सह लेने की बजाय उसे मानव सर्जित मानकर उससे जुझते नजर आते है । दलित लखेकों द्वारा लिखे गये उपन्यासों में निरुपित कथा-घटनाएँ-, पात्र व परिवेश सत्य के अधिक निकट है । इन लेखकों ने अपनी समस्याओं, तथा जीवन को अपनी ही दृष्टि से उकेरना चाहा है । क्योंकि वे स्वयं दलित है और फिर दलितो में एक ऐसी चेतना जागृत कराना चाहते है, जो उन्हें अपने हक के प्रति जागृत बनाये साथ ही अपने होने का अहसास भी कराये । दलित उत्पीडकों तथा दलितपन का खंडन तथा दलितो में अस्मिता की तलाश इन रचनाकारों का मूल उद्देश्य है । मानव जीवन व समस्याओं को गहराई से निरुपित करने का एक सशक्त माध्यम उपन्यास है । गुजराती के दलित लेखको द्वारा लिखे गये दलित उपन्यास कथा व विषय-वैविध्य की दृष्टि से भी काफी समृद्ध है । दलित लेखक स्वानुभव के प्रामण्य के आधार पर सामाजिक प्रतिबद्धता की ओर ज्यादा झुके हुए है ।

उपन्यासों के वस्तुविधान में मुख्य रुप से तीन मुद्दो पर प्रकाश डालना है।
एक कथाचयन, दो पात्र विभावना और तीन कथोपकथन

कथाचयन एवं प्रस्तुतिकरण की दृष्टि से विवेच्य उपन्यासों को हम दो विभागो में विभाजित कर सकते है ।

(१) दलित जीवन व परिवेश केन्द्रित उपन्यास

(२) दलित-सवर्ण के अन्तः सम्बन्ध व संघर्ष केन्द्रित उपन्यास

(१) दलित जीवन व परिवेश केन्द्रित उपन्यास

आंगलियात, दरिया (जोसेफ मेकवान) मलक एवं गिद्ध (दलपत चौहान) प्रियतमा (मोहन परमार) जैसे उपन्यास है । जिनकी कथावस्तु मुख्य रुप से दलित जाति व समाज तथा परिवेश केन्द्रित है । इन सब रचनाकारों ने दलितो और सवर्णो के अन्तः सम्बन्ध तथा संघर्ष दोनों को दर्शाया है, पर उनका मुख्य आशय दलित जीवन की प्रस्तुति है । उल्लेखनीय बात यह है कि तथाकथित ईश्वरवाद का खंडन ही दलित-चेतना का एक उद्गम बिन्दु है ।

ये उपन्यासों में उन्होने अपने जीवन की भोगी हुई यातनाओं को यथार्थरुप में उपन्यास में रुपायित किया है । इन रचनाकारों को उपन्यास की कथावस्तु के लिए न ही भटकना पडा है, और न ही कल्पना की जरुरत पडी है, क्योंकि कथा में निरुपित सारे स्वाभुनव उनकी जिन्दगी का एक ठोस सत्य है । लेखकों ने कहीं कहीं कल्पना का सहारा भी लिया है, तो रचना को और कलात्मक व यथार्थ को सहज बनाने के लिए । इन लेखकों को कथाप्रस्तुति उनके जीवन की तरह सहज और सरल प्रवाह में ही नजर आती है । उन्हें किसी प्रकार के कोई बनावटीपन या तिलस्म की जरुरत नहीं पडी है । जीवन की छोटी से छोटी पर्तो को भी इन्होंने बडी बेबाकी से उघेडा है । उपन्यास की समग्र कथा दलित समाज, जाति व परिवेश को केन्द्र में रखकर ही लिखी गई है । कथ्य में सामाजिक यथार्थ का सम्बन्ध जोडनेवाली इस धारा के उपन्यासों ने दलित जीवन के अनेक रुपरंग प्रगट करने के साथ -साथ निजी जीवनदृष्टि तथा कला-उपन्यास के भी कई नवीन रुप प्रस्तुत किये है । आंगलियात में वर्ण संघर्ष के आलेखन में सर्जक की प्रतिबद्धता ने जो कलासंयम बरता है, यह निराला है, तो मलक जैसा उपन्यास समूह चेतना को ग्रहण करने की उसकी अरुढ रचनारीति से गुजराती उपन्यास में भी यादगार बना रहे ऐसा है । नेलियु दलित जीवन के नींव के प्रश्नो की विचारप्रेरक कथा है । तो प्रियतमा दलित समाज के आंतरिक जीवन की गहराई को छुती है जब

कि तिराड, चौकी ने व्यक्तिलक्षी चरित्र-चित्रण में डूबकर समाज में प्रवर्तमान दुषणों को खुला किया ।

(२) दलित सवर्ण के अन्त: सम्बन्ध और संघर्ष केन्द्रित उपन्यास

आलोच्य उपन्यासों में कुछ ऐसे उपन्यास भी सामने आये है, जिनमें दलित सवर्ण के अन्त: सम्बन्ध से लेकर संघर्ष तक की कथा का ताना-बाना बुना हुआ नजर आता है । दलितों के जीवन तथा समस्याओं को तो उपन्यास में वाणी मिली ही है, साथ ही उपन्यासो में सवर्ण समाज उसकी जीवनशैली व रीत-रिवाज को निरुपित करने से भी लेखक नहीं चूके है । यानी ऐसे उपन्यास पूरी तरह से दलित जीवन केन्द्रित नहीं है । ऐसे उपन्यासों में तिराड और चौकी (हरीश मंगलम्) शोष (दक्षा दामोदरा) इत्यादि है । उपन्यास की कथा जिनती दलितो के पक्ष में है, उतनी सवर्णो के पक्ष में भी । दलित जीवन की अनेक समस्याएँ, घटनाएँ व प्रसंग अधिकांश सवर्ण पात्रो के माध्यम से ही हमारे सामने आते है। लेखक ने रचना में जिस समस्या को पकडा है, उसी के इर्द-गिर्द घूमता नजर आता है । जैसे आगलियात में स्वतंत्रता के बाद चुनाव, डेलेवाला का उपवास, निर्दोष राजनेता बनने का कपट, शोष में माधवी को सी.ए. बनाने का स्वप्न इत्यादि को भी निरुपित किया गया है । दरिया में सरपंच का चुनाव और जूलुस ।

पात्र विभावना : पात्र गठन की दृष्टि से तीन प्रकार के उपन्यास हमारे सामने आते है ।

(१) दलित नायक- नायिका केन्द्रित उपन्यास और (२) दलित जीवन व परिवेश केन्द्रित उपन्यास (३) दलित गैरदलित नायक- नायिकावाले उपन्यास

(१) दलित नायक-नायिका केन्द्रित उपन्यास

वीरांगना, झलकारीबाई, छप्पर, हिडिम्ब, आंगलियात, प्रियतमा उपन्यास है, जिनके नायक-नायिका वगैरह बुनकर है । दरिया में नायिका हरिजन है । पात्र जीवंत संसार के ही पात्र है । कई बार ऐसा भी होता है कि लेखक खुद रचना में एक पात्र के रुप में होता है । पात्र गठन में कल्पना को बहुत कम जगह मिली है । अपने पर हो रहे अत्याचारों

के खिलाफ इन्साफ की माँग में अन्ततः डटे रहते है टूट अवश्य जाते है पर झूकते नहीं है ।

आंगलियात, दरिया, प्रियतमा, नेलियु आदि के नायक-नायिका भी दलित समाज के ही है । कुछ उपन्यास में वो लेखक खुद एक पात्र के रुप में है । जैसे प्रियतमा, दरिया । या फिर अपने ही साथ जीवन जी रहे अन्याय अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करनेवाले वास्तविक मनुष्य को उन्होंने पात्र में उतारा है । यहाँ अधिकांश पात्र स्वयं स्फूर्त नजर अते है, गढे हुए नहीं । इन सब उपन्यासों के नायक-नायिका स्वयं भारतीय समाज में व्याप्त जातिवाद व अस्पृश्यता से उत्पीडित है । साथ ही इन अत्याचारों से मुक्ति के लिए उनमें छटपटाहट भी है । इसके लिए जितने बाहरीतत्त्वो से संघर्षरत दिखाई देते है, उतने ही अपने अंदरुनी जड-संस्कारो, रुढियाँ और अन्तविरोधो से भी । जैसे आगलियात का टीहो, प्रियतमा की जसुमती, दरिया ।

प्रियतमा में खना का पात्र सजातीय संबंध रखनेवाला है, जो आजतक के गुजराती साहित्य में देखा नहीं है वैसा पात्र देखने को मिलता है ।

(२) दलित जीवन व परिवेश केन्द्रित उपन्यास

आलोच्य उपन्यासों में कुछ ऐसे उपन्यास भी है जिनमें नायक-नायिका केन्द्र में न होकर समग्र समाज व परिवेश कृति के केन्द्र में है। दलितों का जीवन, रीती-रश्म, सवर्णो के साथ उनका अन्तः सम्बन्ध व संघर्षप आंतरिक अन्तविरोंध वगैरह कृति के मूलाधार है । दलपत चौहान रचित मलक तथा गिद्ध हरीश मंगलम् का तिराड एवं चोकी दलित परिवेश केन्द्रित उपन्यास है । मलक के बारे में भी.न.वणकर का कहना है कि इस लघु उपन्यास में कोई एक व्यक्ति की कथा नहीं है, किन्तु एक समाज विशेष की कथा है । दलित समाज के प्रत्येक व्यक्तिने झेली हुई वेदना की स्मृतिरुप में कथा विस्तृत होती है । जिसमें समग्र समाज का व्यक्तित्व उभरता है [1]

चौकी में अख्खुसिंह शांता, मलक में भगो-संतोक, गिद्ध में इसो-दिवाली, नायक-नायिका होने का भ्रम पैदा कर सकते है । पर समग्र उपन्यास के आधार पर देखा जाय तो इन सब में आनेवाले पात्र एक समग्र जाति व परिवेश को हमारे सामने खडा करते है । कोई पात्र मुख्य हिस्सा बनने की सम्भावना नहीं रखता ।

(३) दलित गैरदलित नायक-नायिकावाले उपन्यास

गिद्ध उपन्यास में इसो-दिवाली, शोष उपन्यास में राजेन्द्र-माधवी, चौकी में अख्खुसिंह ये पात्रो में दिवाली, माधवी, अख्खुसिंह सवर्ण पात्र है जो नायक-नायिका है । उपन्यास की सफलता में उनका मूल्य महत्त्वपूर्ण है ।

कुल मिलाकर नायक-नायिका के अलावा भी रचनाकारों ने उपन्यासों में कई ऐसे पात्रो का गठन किया है, जो अपने वर्गीय चरित्र को उभारते है । चाहे वह सवर्ण समाज का हो या दलित समाज के उसमें छिपे अन्तविरोधो का पर्दाफाश करनेवाले पात्र भी है । पात्र स्वयं स्फूर्त, जीते-जागते, अभिशप्त, प्रताडित, मनुष्य, सहज रुप में हमारे सामने आते है । ज्यादातर गैरदलित लेखकों के उपन्यासो में दलित पात्र याचक की भूमिका में दिखाई पडते है, तो दलित लेखको के उपन्यासो में एक जुझारु, संघर्षशील, विद्रोही के रुप में । सवर्ण पात्र भी कहीं कहीं मानवीयता से ओतप्रोत है, उनका चिन्तन हर समय दलितों से प्रतिबद्ध है । दलितों में भी परंपरा के समर्थक पात्र भी है तो उसके खिलाफ संघर्ष करनेवाले पात्र भी । इस प्रकार के पात्र आलोच्य उपन्यासों में कई जगह देखने को मिलते है । जैसे आंगलियात का रामजी परंपरा का समर्थक है तो टीहो, खंडन करनेवाला । अधिकांश युवानपात्र खंडन करनेवाले है, और बूढे पात्र परंपरा के समर्थक है ।

कथोपकथन

हिन्दी दलित उपन्यासों में वीरांगना झलकारीबाई, छप्पर, हिडिम्ब में कथोपकथन काफी प्रभावपूर्ण है ।

दलित उपन्यासो में ज्यादातर संवादो में सामाजिक विषमता के

प्रति विद्रोह की भावना सुनाई पडती है । इन लेखको ने जहाँ एक ओर सवर्ण वर्ग के अच्छे-बूरे दोनों प्रकार के पात्रो की रचना की है, तो दलितो में भी पुरानी नयी पीढी में समझौतावादी-भाग्यवादी व दब्बू तथा विद्रोही, क्रान्तिकारी, विचारशील पात्रो का गठन भी किया है, जो उनकी वाणी (संवाद) में सहज ही उजागर होते है । शोषक उत्पीडक पात्रों की वाणी में जहाँ गाली-गलौज, दलितो के प्रति उपेक्षा, धृणा नजर आतेहै, वही शोषित, उत्पीडित पात्रो के संवादो में अपनी पीडाओं के प्रति करुण और आक्रोश नजर आता है । साथ ही इस आक्रोश में एक नये समाज की स्थापना की अनुगूंज भी सुनाई पडती है, जो समतावादी दृष्टि लिये हुए है ।

आंगलियात में शुरुआत से ही टीहा में परिवर्तन की भी सोच दिखाई पडती है । अपने पिता की मृत्यु पर उसने बिरादरी को भोज खिलाने से मना कर सामाजिक रुढियों को तोडा है-

तुम लोग खाकर खडे हो जाओगे इसमें मरे हुए बाप को क्या मिलेगा ? जो पुण्य वे कमाये वे उनके साथ गये, अब पीछे का कर्मकांड सब लोक-दिखावा, मुझे नहीं करना । जाईये आप जो चाहे करिये (पृ.४) नायिका मेठी में भी अपने अनमेल विवाह के प्रति उतना ही रोष है- क्यूं नहीं सोचते मेरे भविष्य के बारेमें ? जिन्दा ही मुझे नरक में डाल देने का पाप आप कौन से भाव में भोगेगे ? (पृ.११५) भवानचाचा जैसे बूढे दलित के संवाद में एक नई चेतना दिखाई पडती है । वालजी जैसी हिम्मत रखना, जिन्दगी में शीखना । बूरा होता बहुत देखा- सहा अब सामना करना सीखना । (पृ.१५१)

जोसेफ मेकवान की एक बडी विशेषता है कि उन्होंने संवादो में बोली जानेवाली आँचलिक बोली का सटीक प्रयोग किया है, जो परिवेश व वातावरण को सजीव बनाने में सहयोगी है ।

इनके अलाव, दलपत चौहाण का मलक तथा गिद्ध हरीश मंगलम् का तिराड एवं चौकी मोहन परमार का प्रियतमा नेलियु, दक्षा

दामोदारा का शोष इन सभी उपन्यासों के संवाद कहीं पात्रो के चरित्र-विकास में सहयोगी दिखाई देते है तो कहीं उनकी मनःस्थितियों को भी भली भाँति उजागर करते है । जैसे मलक का बंधुआ मजदूर छगन अपनी विवशता पर सोचता है । इसबाड के किले में पसीना बहाते जिन्दगी के कितने किमती वर्ष ढेले की तरह पिघलने दिये थे.... मिला क्या ? वेतन ? और वेतन में रुपये पचास, एक जून घेंस, दो जून रोटियाँ और छाछ ? (पृ.२)

शोष उपन्यास में माधवी के पिता कहते है- बन सकेगी चार्टड एकाउन्टन्ट तू ? सारे युवक युवतीओं को यह प्रश्न है । माता-पिता अपने बच्चों को अच्छे पद पर देखना चाहते है ।

नेलियु में साहब फँस गये है- जो आज तक नहीं निकल पाये । पशाचाचा के शब्द- उसमें कौन सी शर्म ! ढेड है तो निकालो घर से बाहर, ये मानसिकता सारे सवर्णो की है, बदलाव कब आयेगा ?

प्रियतमा में सास के द्वारा जो संवाद रजू किये है, वह यथार्थ है और स्त्री ही स्त्री का दुश्मन होती है ।

शिल्पविधान

(१) भाषा - शब्दचयन, कहावतें, मुहावरें, स्थानीय बोली, चित्रात्मकता, संगीतात्मकता, लाक्षणिक- व्यंजनात्मक प्रयोग ।

(२) बिम्ब - स्पर्श, ध्वनि, घ्राण, दृश्य, श्राव्य, इत्यादि ।

(३) प्रतिक - पुराने अर्थबोधवाले, नये अर्थबोधवाले ।

(१) भाषा - आलोच्य उपन्यासों का भाषा के आधार पर अध्ययन

साहित्यिक व काव्यात्मक भाषा में लिखे गये उपन्यास- एक भी नहीं है । बोलचाल की भाषा तथा अँचल विशेष की बोली में लिखे गये उपन्यास ।

आलोच्य उपन्यासों में दो प्रकार के उपन्यास हमारे सामने आते है । (१) एक तो बोलचाल की भाषा में लिखे गये उपन्यास जिसमें पात्रानुकुल संवाद योजना में अँचल विशेष की बोली के छींटे दिखाई पडते है । ऐसे उपन्यास में तिराड एवं चौकी है । लेखक ने पात्र व परिवेश

को सहज व जीवंत बनाने हेतु इनमें स्थानीय लोकबोली, लोकगीत, वगैरह का सटीक प्रयोग किया है । कहीं कहीं भाषा सांकेतिक भी दिखाई पडती है ।

तिराड में जहाँ एक ओर भगा पटेल की वाणी में कठोरता, सामंती गंध आती है, वहीं जोईती की वाणीमें याचकता, अपनी विवशता पर पैदा हुई करुणा का स्वर- मेरा कौन-सा गुनाह था भगवान कि मुझे और सोमा को इसका बदला इस तरह दिया ?

(२) कुछ उपन्यास ऐसे भी है, जो प्रदेश विशेष की आंचलिक बोली में लिखे गये है । ऐसे उपन्यासो में लोकगीत, देशज शब्द, कहावतें- मुहावरों की भरमार दिखाई देती है, जो लोकजीवन को कथा में बडी सहजता से जीवंत बनाये रखते है । पात्रानुकुल भाषा व बोली पात्रों के चरित्र के साथ साथ उनके सहज विकास व सच्चाई को भी खोलती है । इसके चलते पात्र बनावटी या गढे हुए न लगकर स्वयं-स्फूर्त दिखाई पडते है । ऐसे उपन्यासों में आंगलियात, मलक, प्रियतमा, गिद्ध, नेलियु और छप्पर, हिडिम्ब, शोष है । शोष की भाषा साहित्यिक है, किन्तु कच्छप्रदेश में जब कथा घूमती है तो कच्छी भााषा उपन्यास को चार चांद लगा देती है । भाषा काफी चित्रात्मक व काव्यात्मकता से ओतप्रोत है । आंगलियात, दरिया में आणंद जिले की चरोतरी बोली का सहज प्रयोग किया गया है । दलितों की भी अपनी एक बोली है जो आसपास के प्रदेश से मिलती-जुलती होती है । अपने समाज के शब्द, ल्हेंका स्थानीय बोली के साथ समझौता करके एक नई बोली का स्वरुप देता है जो दलित बोली है । और दलित लेखक ही उसके माहिर हो सकते है ।

(२) **बिम्ब**

स्पर्श, ध्वनि, द्रश्य, श्राव्य

गिद्ध उपन्यास में एक बंधुआ दलित मजदूर की किस प्रकार से पिटाई करते है उसे मौत के मुख में धकेल देते है, इसका वर्णन भला द्वारा किया है । उसमें अनेक प्रकार के बिम्ब है । शनाजी को

दलित मुहल्ले में माँस उबलने की गंध आती है ध्राण-बिम्ब । दृश्य बिम्ब - कोला अभी भी जी रहा है । कैसे मरे, सब यहाँ भुगतना पडेगा । अभी तो कीडे पडेंगे ।

मलक में दृश्य-बिम्ब गोबर मूत भरने की टोकरी सिर पर रखने से टोकरी में से भैंसे का मृत टपकता है । टपक ...टपक.... । यहाँ यथार्थ वर्णन एवम् नर्क जैसी जिन्दगी का शब्दरुप है । (पृ.२)

तिराड में दृश्य ध्वनि बिम्ब- जल शांत हो गया था । झींगुर की टररर टररर आवाज, क्षणिक टूटी टूटी आ रही फट्ट फट्टनी की पैनी आवाज और मरे मवेशी के मांस से ठुस-ठुस कर भरा घर के पिछवाडे आधे सूखे- आधे हरे आम के पेड पर आँखें मूँद कर बैठी हुई चीलो की पंखो का फफडाट रात की कलूटी छाती को चीर रही थी । (पृ.१३)

प्रियतमा उपन्यास में भी दृश्य बिम्ब (मनहर की मन:स्थिति) मनहर नीम के पेड के नीचे खटिया पर सो गया । ऐसा करते करते नीम की एक लडकी लेकर वह जमीन पर उलटी सुलटी लकीरें खींचने लगी । जमीन पर बनायी रेखाओं में वह कुछ खोजने लगा । एक रेखाने उसकी नजर को बदी बना लिया । उसने नीम की लकडी को रेखा की ओर लम्बाकर फिर जमीं पर जसुमती लिख दिया । (पृ.१)

शोष उपन्यास में चित्रो में अजीब सी शक्ति है । कई चित्र (राजेन्द्र के) माधवी के चेहरे से मिलते जुलते थे । माधवी पत्थर पे कान रखकर राजल-देशल की काव्यपंक्तियाँ सूनती है । ये दृश्य-श्राव्य बिम्ब है ।

चौकी में ईडर डुंगर के नीचे कूडे में अन्न के दाने ढूंढता हुआ बच्चा, मृत डुक्कर के द्वारा दृश्य-बिम्ब मिलता है ।

(३) **प्रतिक**

आंगलियात, मलक, तिराड, चोकी, प्रियतमा, गिद्ध, शोष जैसे उपन्यास के शीर्षक ही प्रतिकात्मक है ।

जिस प्रकार आंगलियात लडका उपेक्षित रहता है, वैसे समाज में दलित लोग उपेक्षित ही रहते है । यहाँ ये प्रतीक सही रुप में है ।

मलक में नीग्रो साहित्यकार की अनुभूति कि 'Where is my motherland' की तीव्र अनुभूति का प्रतीक । 'प्रियतमा' में परस्पर से हटकर लेखक ने एक पूरे परिवेश तथा 'नौकरी' को 'प्रियतमा' के रुप में उजागर किया है। करधे को भी प्रियतमा शब्द कहा है, एक सामान्य अर्थ से हटकर विशेष अर्थ के रुप में यहाँ प्रयोग हुआ है ।

'गिद्ध' में दलपत चौहान ने शोषक व शोषित दोनों वर्गो के लिए गिद्धों को प्रतीकात्मक रुप में लिया है । जैसे सवर्ण जमींदार दलितों का आर्थिक-सामाजिक नैतिक शोषण करने वाले (नोंचनेवाले) गिद्ध है । तो दूसरी ओर दलित लोग मृत भैंस, पशु के माँस पर आश्रित है उन्हें भी 'गिद्ध' के रुप में देखा है । एक शोषक है, जबरदस्ती करता है तो दलित लाचार है, ये दोनों का फर्क है ।

उपन्यासो में पात्र भी प्रतिकात्मक है । सवर्ण पात्र भी अच्छे-बूरे है । तोदलितो में बूढे पात्र जो सेहने में मानते है । बल्कि युवा पात्र संघर्षशील है । जैसे टीहा-मेठी (आंगलियात), रमण (मलक), जसुमती (प्रियतमा), कसना (दरिया), चंपा (नेलियु), मोतीचाचा (चौकी)।

'आंगलियात' में रामला, मलक का भगत, चंदु प्रियतमा जैसे पात्र पुराने विचार के गुलाम है ।

रणछोड डेलेवाला (आगलियात), मुखिया (दरिया), अभेसिंह, सरपंच, (नेलियु), मावजीभा (गिद्ध) जमींदार सवर्ण पात्र शोषक वर्ग के प्रतीक है ।

उपन्यासों की भाषा भी प्रतीकात्मक है, कई प्रवृत्तियाँ भी प्रतीकात्मक है, जो युवावर्ग के द्वारा दिखाई है गीध, मलक, शोष, आंगलियात की भाषा विशेषत: प्रतीकात्मक है ।

दलित लेखक अपनी रचना के पात्रो को दया, सहानुभूति, के लिए गिडगिडाता छोड देना नहीं चाहता, वह तो उन्हें अपने स्वाभिमान केसाथ स्वाधिकार के लिए संघर्षरत दिखाता है । चाहे आंगलियात का टीहो । दलित लेखक की रचनाएँ वर्णसंघर्ष की ओर क्योंकि वर्णसंघर्षना सम्बन्ध जाति-विषमता से है, जो सामाजिक वैषम्य की जड है । भारत के

संदर्भ में दलितों की बात करें तो वर्ण को परहेज करके सोचना बिलकुल गलत होगा, आर्थिक पहलू तो बाद में आता है । मुख्य है वर्ण-विषमता जो आज जातिभेद का रुप लिये हुए है ।

कई बार कला, सौंदर्यशास्त्र तथा शिल्प की दृष्टि से दलित उपन्यासों पर कई आरोप लगाये जाते है । पर यहाँ गुजराती में आंगलियात, मलक, तिराड, चोकी, प्रियतमा, गिद्ध आदि उपन्यास जहाँ एक और सामाजिक प्रतिबद्धता को बरकरार रखते हुए रचनात्मकता एवं शिल्प की दृष्टि से भी अच्छे उपन्यास सिद्ध हुए है । दलित लेखकों का झुकाव सामाजिक प्रतिबद्धता की ओर ज्यादा, क्योंकि उनके लिए कला Atbrlesk को ज्यादा पसंद करती है । क्योंकि सामाजिक बदलाव में यह एक अनिवार्य आवश्यकता भी है । इस बात को समझने के लिए डॉ. हरीशचन्द्र श्रीवास्तव के विचार देखने पडेगे- दलित के लिए मुक्ति से बढकर उदात्त क्या हो सकता है । सौंदर्यशास्त्र में सामाजिक न्याय और मुक्ति की अवधारणाये जोड लेनी चाहिए[१३]। जैसे गुजराती दलित लेखक जोसेफ मेकवान का कहना है कि “हमने कला को सिद्ध किया है पर जीवन को धोखा देकर नहीं।”

संदर्भ

१. गिद्ध- पृ.५६

२. युद्धरत आम आदमी- सं.रमणीका गुप्ता- विशेषांक- ५३, पृ.१४९

३. दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी- गुजराती उपन्यास-पृ.२२२

४. वही, पृ.२५०

५. वही, पृ.२६६

६. वही, पृ.२६९

७. वही, पृ.२७७

८. वही, पृ.२८१

९. वही, पृ.२८२

१०. कथाक्रम -सं.शैलेन्द्र सागर (नवम्बर- २०००- पृ.४१)

११. हयाती (सं.मोहन परमार) सितम्बर-१९९९- पृ.४३

१२. प्रत्यायन- भी.न.वणकर पृ.११८

१३. कथाक्रम- सं.शैलेन्द्र सागर नवम्बर-२००० पृ.८९

अध्याय-११
साहित्यकारों से साक्षात्कार

दलपत चौहान :

१. दलित साहित्य के द्वारा (सवर्ण-दलित) सामाजिक एक्ता संभव है ? आज तक के दलित साहित्य द्वारा प्रकाश डालिए ? परिवर्तन हुआ है ? तो प्रमाण दिजीए ।

दलपत चौहान दलित साहित्य की अपनी एक वैचारिक भूमिका है । कोई भी साहित्य समाज को बदल देगा वह कहना मूर्खता है । साहित्य का काम समाज को बदलने का होता ही नहीं । यह बात साहित्य पर थोपी गई है । हाँ, साहित्यकार समाज को बदने का अभियान चला सक्ता है । ऐसा अभियान कहीं चलता है तो उसमें हिस्सा भी ले सकता है । उस विषय में लेख आदि लिखता है । तो समाज बदल जाता नहीं है । यदी बदल जाता है तो बहुत सारी बातें उसमें जुडी होती है

दलित साहित्य का समाज को बदलना नहीं, किन्तु समाज जैसा है, वैसा उसे प्रस्तुत करना है । आडंबर रहित, नयी दिशाए चिन्हीत कीये बिना ही समाज को अपना असली चहेरा दिखाता है । समाज को झकझोरता है । कहता है देखो हम सब कैसे है । लोग समजने के लिए बाध्य होते है । और जो समजते है, सच्चाई को वही लोग समाज को बदलते है, अकेला साहित्य यह काम नहीं करता ।

साहित्य का काम उपाय सूझाना नहीं है । निदान करना है, समाज स्वयं अपना वैद्य बन सकता है । कोई प्रभावी व्यक्तित्व समाज को बदल सकता है । साहित्य उसकी मदद करता है । जैसे आंबेडकर, गांधी ने समाज को बदलना चाहा, समाज बदला भी । साहित्य ने साथ दिया, किन्तु पुराश्रेय महानुभावो को ही मिलता है, साहित्य तो मददगार रहा है ।

(२) दलितो में आंतरिक संघर्ष और दलित साहित्य द्वारा हुआ परिवर्तन

दलपत चौहान मैं पहले ही कह चूका हूँ, साहित्य परिवर्तन के लिए होता ही नहीं । और रही बात दलितों के बीच के आंतरिक

संघर्ष की । यह बात भी ढकसला है । हमको आपस में लडाने के लिए चलाई गई अदलित समाज की मुहिम है इससे बचना । आंतरिक संघर्ष का मतलब हम सब आपस की छूत छात को मानते है । वह नहीं होना चाहिए । किन्तु उस बिमारी का उपचार अदलित समाजवाले सुजाते है, वह नहीं है वे कहते है आपके आपस में छूतछात है । रोटी-बेटी का व्यवहार नहीं है । तो मैं पूछता हूँ अदलित समाज भी तो आपस में हम जैसी ही हरकतें करता है । जो हमने उन्हों से सीखी है ।

(३) दलितो की सामाजिकता में दलित साहित्य के द्वारा परिवर्तन हुआ है ? हाँ तो प्रमाण दिजिए । नहीं, तो आप क्या कर सक्ते है ? (जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई, झियाना, मृत्यु)

दलपत चौहान समाज परिवर्तनशील है । जो काल था आज नहीं है । लोग उत्सव प्रिय है, अपने घर आये उत्सवो को वे बडे आनंद से निपटाना चाहते है । किन्तु हरबात समय के अनुकूल होनी चाहिए । पहले हमारे पास धन नहीं था, फिर भी बूरे रिवाजो में कसकर करजदार बन जाते थे । आज ऐसा ज्यादा नहीं होता । आज तो नौबत समूहलग्न तक आई है । कल उससे भी आगे जाऐगे । समय के साथ बदलता, साहित्य का हिस्सा क्या ? आप ही ढूंढिए ।

(४) व्यसन के बारे में हुआ परिवर्तन ?

पहले देशी पीते थे । आज अंग्रेजी पीते है । खर्च कम करते थे, आज ज्यादा करते है ।

(५) गाँवो में दलितो के जीवन में दलित साहित्य परिवर्तन ला सक्ता है ? गाँवो में दलित साहित्य, दलितों तक पहूँचा है ? सवर्णो तक दलित साहित्य पहूँचा है ? परिवर्तन दिखाई दे रहा है ?

दलपत चौहान दलितो में कितने लोग पढे लिखे है ? यह सवाल सवर्णो तक भी जाता है । बात रही पढनेवालो की कितने लोग पढते है । और कहूँ गुजराती में किताबे कितनी छपती है, हजार, पंद्रहसो, और वह किताबे दस साल में भी पूरी नहीं बिकती तो अंदाजा लगाये क्या हाल है ।

(६) **क्या ये बात सच है कि दलित साहित्य शिक्षित ज्यादातर नौकरी करनेवालों तक ही पहूँचा है ? क्यों ? सामान्य दलित तक आप का साहित्य कब पहूँचेगा ?**

दलित साहित्य जो खरीदता है वही पढेगा, चाहे वह नौकरी करता हो या ना करता हो । किन्तु जहाँ शिक्षा ही कम है वहाँ पढने की, साहित्य की बात ही कहाँ से आयी । पढाई बढेगी, तो साहित्य भी पढा जायेगा ।

७. **रुढियाँ, अंधश्रद्धा और भाग्यवादी दलितों के बारे में आपके विचार-**

दलपत चौहान रुढियाँ है, तो चलने दो, कुरिवाज हैं तो बदलो । अंधश्रद्धा और भाग्यवाद का स्वीकार न करो ।

दक्षा दामोदारा :

(१) **दलित साहित्य के द्वारा (सवर्ण-दलित) सामाजिक एक्ता संभव है ? आज तक के दलित साहित्य द्वारा प्रकाश डालिए ? परिवर्तन हुआ है, तो प्रमाण दिजीए ।**

दाक्ष दामोदरा बंधारणीय विशेषाधिकार के कारण समाज में दलित-सवर्ण के बीच भौतिक अंतर में अभूतपूर्व परिवर्तन आया है । किन्तु मानसिक अंतर को देखें तो अभी बहुत अंतर काटना बाकी है । पथदर्शन-साहित्य की अलग शक्ति है, दलित सवर्ण के बीच का भेद दूर करने के प्रति दलित साहित्य कार्यशील है । किन्तु संतोषप्रद परिणाम के लिए अभी राह देखनी होगी ।

(२) **दलितो में आंतरिक संघर्ष और दलित साहित्य के द्वारा उनमें हुआ परिवर्तन**

दक्षा दामोदरा दलित समाज में अभी कई जाति-प्रजाति अस्तित्व में है । रोजगार का माध्यम और रिवाजो में कई विविधता भी रखती है। उनकी अपनी परंपरा स्थाई रहे और आंतरिक एकता का उद्भव हो ऐसा वातावरण धीरे-धीरे चालु रखने से भविष्य में आंतरिक भेद दूर होने की संभावनाएँ रही है ।

(३) गाँवो में दलितो के जीवन में दलित साहित्य परिवर्तन ला सक्ता है । गाँवो में दलित साहित्य दलितों तक पहूँचा है ? सवर्णो तक दलित साहित्य पहूँचा है ? परिवर्तन दिखाई दे रहा है ।

दक्षा दामोदरा इतिहास साक्षी है कि साहित्य जीवन में परिवर्तन लानेवाला विधायक परिबल है । लेकिन परिवर्तन सही तब बनता है जब व्यक्ति या समाज साहित्य के सदा संपर्क में रहे । सच्चा भारत जैसे गाँव में है, वैसे ही दलितों की सच्ची समस्याएँ तो हल की राह देखती गाँवो में पडी है । वास्तविकता एक ये भी ध्यान में रखनी होगी कि सरेराश शिक्षित गुजराती का भी साहित्य पठन सौगंद खाने जितना हो तब ग्राम्यजीवन में कुचलाते अशिक्षित दलित की साहित्य संपर्क की अपेक्षा रखना भी शेखचील्ली जैसा है । वर्तमान समय में लोगों के (शिक्षित/ अशिक्षित/ ग्राम्य/शहेरी/दलित/सवर्ण) दिलों-दिमाग को घेर लेनेवाला कोई कॉमन परिबल हो तो वो है मनोरंजन के माध्यम । दलितों का साहित्य दलितों तक पहुँचाने के लिए टेलिविझन का सहारा लिये बिना चलेगा नहीं । एक सर्जक के रुप में अंगत रीत से ये सुझाव मुझे जरा भी प्रिय न होने के बावजूद ग्राम्य दलितों तक दलित साहित्य पहूँचाने और परिवर्तन लाने के लिए एक हाथ लगा उपचार है ।

अवास्तविक, अरुचिकर कथाओं के बदले टेलिविझन के पर्दे पर दलित-सवर्ण दलित कथाओं को देखें, समजे, सोचे तो लंबे समय में परिवर्तन होगा ।

(४) नौकरी करनेवाले और श्रीमंत दलित सामाजिक प्रसंगो में आर्थिक खर्च ज्यादा करते है, और गरीब दलित उनकी नकल करते है । बाद में उनका जीवन कर्ज में डगमगता है, गृहस्थजीवन डाँवाडोल बन जाता है, नये दंपति के लिए कर्जारूपी कार्पेट बिछाते है, तो इस बारे में आपके विचार, आपका साहित्य कोई परिवर्तन कर सक्ता है ।

दक्षादामोदरा यह बहुत ही व्यवहारु और वर्तमान प्रश्न है । शादी और अन्य सामाजिक प्रसंगो में ज्यादा खर्च और लेती-देती का प्रमाण

हद बाहर बढता जा रहा है । समय पर समजदार लोगों को यह कुरिवाज को रोकने का समय कब आ गया है । मेरी अप्रकाशित कृति सावित्री इस संदर्भ से १९वीं सदी के सामाजिक कुरिवाजों के अंधकार को भेदने में जीवन खर्च देनेवाले महात्मा फूले तथा सावित्रीबाई की अभूतपूर्व जोडी के आलंबन पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है ।

(५) **रुढियाँ, अंधश्रद्धा और भाग्यवादी दलितों के बारे में आपके विचार**

दक्षा दामोदरा गाँवो में बसते और शिक्षा से दुर एवम् अन्य सामाजिक-आर्थिक असमानताओं से पीडित दलित अभी कुरुढियों और अंधश्रद्धा में से मुक्त ही नहीं हो सके । शहेरो में बसते, धनिक, सवर्णो, शिक्षितों के बारे में भी यह विधान उतना ही सच्चा है, क्युंकि सवर्ण दलित की रुढियाँ और अंधश्रद्धा के स्वरुप में भेद होगा । मूल में तो सभी समान ही है ।

(६) **आधुनिक दलित नारीओं को आपका संदेश (शिक्षा, फैशन, गृहस्थजीवन)**

दक्षा दामोदरा शिक्षित होना लेकिन सिर्फ सर्टीफिकेट से नहीं अंतर से अंदर से । शिक्षा ईन्सान के जीवन में क्रांति ला देती है । दलित नारी को सचचे अर्थ में शिक्षित होकर समाज के उत्थान में सहयोग देने के लिए सज्ज होता है । दलित माताओं का तो विशिष्ट दायित्व है -संतानो को बचपन से ही जाग्रत करना और निम्न स्तरो में व्यथित लोगों की समस्याओं के हल के लिए तत्पर होने की प्रतिबद्धता को माता से उत्तम रुप में कौन सीखा सके ?

जोसेफ मेकवान :

प्रश्न-१ दलित साहित्य के द्वारा सामाजिक एकता संभव है ? इस बारे में आप के विचार ।

जोसेफ मेकवान दलित साहित्य को उत्तर भारत में समीक्षक (हिन्दी) प्रोग्रेसीव लिटरेचर अर्थात् प्रगतिशील लिटरेचर के रुप में गिनते है। मार्कस की वैचारिक क्रान्ति के बाद साहित्य में सर्वहारा का प्रवेश हुआ है । गोर्की का मधर (माँ) उपन्यास इसी का सर्वोत्तम दृष्टांत है । सन् १९३६ में स्वर्गीय प्रेमचंदजी ने हिन्दी प्रगतिशील साहित्य संघ की रचना की ।

हिन्दी साहित्य में उन समस्याओं का उद्घाटन हुआ, जो सामाजिक तो थी ही तथाकथित सवर्ण समाज जिसे कहते है उनकी भी थी, और जिन्हें पिछडा या दलितवर्ग मानते है इनकी भी थी । ठाकुर का कुआँ, कफन, दो बैलों की कथा, आँसुओं के गोले, दाई, आदि कई उनकी प्रख्यात कहानियाँ है, जिनमें दलितवर्ग के चरित्रों को उजागर किया गया है । उनके उपन्यास गोदान में पिछडे वर्ग के चरित्र है । जो ब्राह्मण छूताछूत से परे नहीं, उनका एक चमारिन के साथ देहसंबंध है और टोले के चमार एक दिन पं.मातादिन के मुँह में हड्डी रखकर उसे सजा देते है । निर्मला में नारी की समस्या है और समग्र भारतीय नारी को पददलित माना गया है । प्रेमचंद की दृष्टि और सहानुभूति उपेक्षित समाज की रही ।

गांधीजीने हरीजन समस्या को लेकर ऐतिहासिक काम किया, उन्होंने कहा अस्पृश्यता हिंदु धर्म का कलंक है । अपने आश्रम में उन्होंने हरीजन परिवार को समाविष्ट किया, वे खूद दूसरे जन्म में हरिजन के वहाँ जन्म लेकर उनकी पीडा को स्वयं भोगना चाहते थे । अलबत्त वे वर्णाश्रम धर्म के समर्थक रहें, इसी कारण बाबासाहब और उनके बीच संघर्ष भी रहा । बाबासाहबने स्वयं जो भोगा है, वो महात्माजी ने कभी नहीं भोगा, फिर भी इन दोनों का अस्पृश्यता निवारण के उद्देश्य को चरितार्थ करने में बहुत बडा योगदान रहा । दलितों की पीडा का इतिहास सदियों पुराना है, और उच्चावच समाज रचना में तत्काल हल खोजना वो पौलाद के चने चबाने योग्य है । फिर भी गांधीजी के कारण भारतीय साहित्य में एक नया मोड आया, जिसके द्वारा अनेक कवि और लेखकों ने अस्पृश्यता को लेकर दलितों केदु:ख, दर्द को लेकर बहुत कुछ सहानुकंपा से लिखा जैसे कि अंग्रेजी में कुली उपन्यास, दूसरा अनटचेबल इस प्रकार के उपन्यास लिखे गये, फिर भी कहना होगा कि इस सहानुकंपा या करुणा प्रतिबद्धता के समकक्षा नहीं होते इसलिए से कोल हाईकास्ट लेखक और दलित लेखकों की अभिव्यक्ति में बहुत बडा अंतर पाया जाता है । जहाँ सवर्ण लेखक उपर से जो देखा है उसमें कल्पना मिलाकर लिखते है, जिसमें स्वानुभूति का सर्वथा अभाव होता है । परिणामत: वह यथार्थ को उजागर नहीं करता।

मराठी में सबसे पहले दलित कविता, आत्मकथा का आलेखन हुआ, जिसमें आक्रोश भी था, चैनी टीस भी थी ज्ञ मराठी के इस प्रकार के साहित्य सर्जन को दलित साहित्य की पेहचान दी गई और समूचे भारत में खलबली मच गई । मराठी दलित साहित्य के प्रणयन का सीधा प्रभाव गुजरात पर पडा । गुजरात में महात्माजी के इतने सारे प्रयत्न के बाद भी भारत केअन्य प्रदेशों की अपेक्षा पिछडी हुई जातियों का गुजरात में अत्यधिम शोषण होता है । सामाजिक अन्याय, हत्याओं की परंपरा, पितृपुराण गाँव की हिजरत करने की घटना और बलात्कारों का सुमार नहीं रहा और कहीं पर भी नहीं गुजरात में ही दो-दो बार ८१, ८५ में अनामत विरोधी तूफान करवाये गगये । २००२ में जो जधन्य मानवसंहार हुआ उसमें भी तथाकथित सवर्ण जातियों में भी दलितो को मुसलमानों के विरोध में खडा कर दिया गया । इस परिस्थिति गुजरात की है ।

इसमें परिवर्तन लाने की जरुरत थी ही, दुगाताई भागवत ने समूचे भारतीय साहित्य को साढे तीन प्रतिशत का प्रतिबिंब कहा है । मतलब ९६.५ प्रतिशत समाज भारतीय साहित्य में अपना कोई स्थान नहीं रखता । शील, संस्कार, साहस, पराक्रम, बलिदान, त्याग, समर्पण ये सारे ऊँचे गुण सिर्फ सवर्णो की बचौती नहीं है । सवर्णो के कई गुना अधिक उमदा संस्कार दलितो में है लेकिन उसकी और किसी का ध्यान ही नहीं गया । तभी दलित साहित्यकारों ने अपना युगधर्म बजाया और दलित साहित्य की रचना की । इसलिए दलित साहित्य एक आंदोलन है जो समाज परिवर्तन चाहता है, आखिरकार समरस समाज अर्थात् समतामूलक समाज जहाँ कोई ऊँचनीच न हो, कम से कम इतनी समानता तो आनी ही चाहिए । आर्थिक विषमता इस ग्लोबल युग में शायद संभव नहीं लगती । कोई भी सरकार या कोई भी पक्ष चाहे साम्यवादी न हो आज के संदर्भ में आर्थिक विषमता टालने में सक्षम नहीं है । तब साहित्य परिवर्तन के रुप में सिर्फ इतना कहा जा सकता है दलित साहित्य ने जिस साहित्य का दर्शन दुर्लभ करवाया है इससे इस देश के तथाकथित ब्राह्मण संस्कृति के दंभ का पर्दाफाश तो हो गया है ।

प्रश्न-२ दलितों के आंतरिक संघर्ष को दूर करने में दलित साहित्य की भूमिका

जोसेफ मेकवान आंतरिक संघर्ष का निराकरण करने के लिए आंबेडकरने त्रिसूत्र का आदेश किया "शिक्षित बनो, संघर्ष करो, और संगठित हो" देखा जाय तो भगवना बुद्धने त्रिमंत्र दिया था "बुद्धम शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संगम शरणं गच्छामि" इसीका अनुसरण बाबा के त्रिसूत्र में है । शिक्षित बनना अर्थात् वह बुद्धि प्राप्त करना जो समग्र समाज को सम दृष्टि से देखे समदृष्टि प्रदान करे । सिर्फ अपना न सोचे परन्तु बुद्ध की भाँति समग्र समाज का, पीडित समाज का सोचे उस पीडा को दूर करने का यथासंभव, हर संभव प्रयास करें । दूसरे मंत्र में धर्म का शरण अर्थात् धर्म अपनाना और धर्म के बनाये हुए रास्ते पर चलना बहुत कठिन है । क्योंकि धर्म सत्य के मार्ग पर चलने को मजबूर करता है । उसीसे मनुष्य के जीवन में संघर्ष पैदा होता है । यह अध्यात्म संघर्ष नहीं है । अगर व्यक्ति धर्म का शरण करता है और किसीको दुःख भोगता, अन्याय होता देखकर मौन नहीं रहेगा, वह मुकाबला करेगा और उसी वह संघर्ष है जब वह मुकाबला करता है तो उसे जरुरत पडती है और साथियों की, वह अकेला कुछ नहीं कर पायेगा । भगवान बुद्ध के संघ में सभी भिक्षुक भगवान के बताये राह पर चलते हैं, एकता साधे हुए, अनुशासन में रहेते है । पंचशील के आदर्श शील करते है । परिणामतः संघ का शरणागत होना अपने आपको समर्पित कर देता है । समाज में संगठन के जरिये इसी विचार को आंबेडकर सार्थक करना चाहते थे ।

परन्तु इस देश की जातिव्यवस्था की बलिहारी यह है कि, दलितों में भी उच्चावच जातिक्रम है जैसे कि गुजरात में बूनकर, चमार, वाल्मीकि, सेनमा, तूरी आदि । उत्तर, मध्य भारत में बूनकर नहीं है, सिर्फ वाल्मीकि और चमार है इनमें परस्पर जातिभेद है, रोटी बेटी का व्यवहार नहीं है । वही बात दूषण सवर्ण समाज में भी है । गुजरात में लेउआ पटेल कडवा पटेल को कन्या नहीं देता । चरोतर में पाटीदारों के पाँच

और छः गाँव ऐसे जूथ है, जिसे गोल कहते है या गोत्र सबसे अपने आपको सब पटेलों में उंचे मानते है । नीची कक्षा के माने जाते कणबी जिन्होंने पटेल सरनेम ले लिया है । ये पाँच, छः वाले को कन्या न लेते है, न देते है ।

इस देश में क्रिश्चियन मिशनरी, इस्लाम आये इन दोनों में भारत के सिवा कहीं जातिभेद नहीं है । जबकि भारत में ही ये दो जाति में भेद है । जातिभेद की ये बात सबसे बडी बात भारत में है । दलितों में आंतरिक संघर्ष होता है तो इसी कारण होता है । वणकर, विरुद्ध चमार हो सकता है । दलित साहित्य आज नहीं तो कल इस संघर्ष का निराकरण करने में कामयाब होगा, परिवर्तन दिखाई देता है । सौराष्ट्र में चमार, वणकर भेद नहीं है । जिसे दलित साहित्य के कारण गति प्राप्त हुई है ।

प्रश्न-३ क्या दलित साहित्य दलितों की सामाजिक परम्पराओं में (जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, मृत्यु) परिवर्तन कर सकता है ? इस बारे में आपके विचार

जोसेफ मेकवान सामाजिकता का परिवर्तन एक सुदीर्घ अभियान चाहता है । जन्म, रिश्ता, शादी, गौना, गोदभराई, जियाना, मृत्यु आदि प्रसंगो के वक्त जो सामाजिकता निभाई जाती है वह परम्परा है । परंपरा टाली नहीं टलती । परंपरा में भी कई ऐसी भी बात है जो अच्छी है । पिछडी कहीं जानेवाली जातियों में (दियरवटु) बडे भाई की मौत पर भाभी के साथ शादी करना, ये इसलिए था कि एक जवान औरत को दूसरा घर ढूँढना न पडे, गौना करके जिस घर में आई थी, वही की बनी रहती है । यदि बच्चे है तो वे बेबाप केन बने, या उनका माँ का सहारा न छूटे । ये कुरिवाज नहीं सुरिवाज था, इसीके द्वारा विधवाविवाह संपन्न होता था । देश के कई सुधारकों ने विधवाविवाह को मान्य करवाने के प्रयास करवाये है । मैं कहूँगा की सवर्णो के कुरिवाज जितने अधम थे, उतने पतनोन्मुख दलितों के रिवाज नहीं थे, मेरे उपन्यास, रेखाचित्र में

ये उजागर हुआ है । आंगलियात, मशहूर उपन्यास का “The Stepchild of” युनि. ने भाषांतर करवाया उसमें वही समस्या है । मेरा आंगलियात शब्द गुजरात में प्रचलित बन गया है । ये एक सिद्धि है ।

प्रश्न-४ दलितो में व्यसन के बारे में आपके विचार

जोसेफ मेकवान शिक्षा का प्रभाव बढने से व्यसन का अनुपात कम होता है । व्यसन आखिरकार दलितों की मजबूरी है । कठीन परिश्रम करनेवाले समाज के कुछ लोग दो घडी शराब में जिन्दगी का छूटकारा चाहे तो वह समाज की बलिहारी है, क्षति है, शोषणखोरों का सितम है । आहिस्ता, आहिस्ता इसकी बूरी आदत कम होगी ।

प्रश्न-५ गाँवो में दलित साहित्य पहुँचा है ? कोई परिवर्तन दिखाई देता है ? इस बारे में आपके विचार

जोसेफ मेकवान यदि दलित साहित्य की पहली शरत है सामाजिक परिवर्तन । जैसे जैसे शिक्षा का प्रभाव बढता है, गाँवो के विद्यार्थी शहर में आकर युनि. की पदवी प्राप्त करते है, वे ही दलित साहित्य को गाँव तक ले जाते है । मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि पिछले छे, सात सालो से पूरे गुजरात के दौरे का अनुभव रहा । कच्छ, सौराष्ट्र, दक्षिण गुजरात के अंतराल में पडे हुए यानि दूर तक, छोर पर, सिमान्त पर पडे हुए गाँवो तक गया हूँ मेरे पुस्तक वहाँ है, पाठक है, दलित भी, अदलित भी । जितने भी दलित लेखक कवि है याने ७० प्रतिशत से अधिक सवर्ण समाज मुझे जानता है । आगे कहा कि परिवर्तन वो मंदगति की चाल है, एक दिन जरुर आयेगा इसी श्रद्धा के बलबूते पर रचना दलित साहित्य की हुई है ।

प्रश्न-६ सामाजिक प्रसंगो में श्रीमंत दलितों की गरीब दलित नकल करते है, बाद में उनका जीवन कर्ज में डगमगाता है, इस बारे में आपके विचार

जोसेफ मेकवान वैसे यह सवाल नहीं समस्या है । देखा देखी बहुत कुछ होती है । मैं अपनी ख्रिस्ती समाज की बात करता हूँ । केनेडा के मेरे दोस्त अपने बेटी की शादी करने आये है, मैं दो दिन से इनका

मेहमान था, मैंने देखा वर वधू दोनों पक्षों ने एक औसतन ख्रिस्ती न कर पाये इतना अधिक खर्चा कर चूके है । मैंने अपने उस दोस्त को कहा- तुम जानते हो, तुमने ये तडक भडक की, पार्टी प्लोट मैं रीसेप्शन रखा, दो लकजरी में बारात लेकर गये, तुम्हारे समधिने जो खर्च किया, हैरत मैं हूँ । मैं शादी का भोजन नहीं कर पाया हूँ । मेरी आँखों के सामने वे गरीब थे, जो स्वप्न में भी ऐसा नहीं कर सकते । मेरे हिसाब से ५० शादी हो इतना खर्च करके धार्मिक अपराध करते है । उसका चेहरा उतर गया वह बोला- मेरा बस चलता तो ये नहीं करता । लेकिन बीवी, बच्चों के साथ कुछ नहीं कर सकता । मिनिस्टर के लडके की शादी की आलोचना कडे शब्दों में लिखित स्वरुप में की थी- उनको बूरा लगा था । इस देश में सादगी के बारे में कोई नहीं सोचता । दलित ईच्छता है वह दुनिया को कर दिखाये लगता है आखिरकार इन नकलखोरों की भी आँखें खूलेगी । दलित साहित्य का फर्ज है कि इस प्रकार के खर्च को वे अपने साहिय में तिखी आलोचना के साथ पेश करें ।

प्रश्न-७ रुढियाँ, अंधश्रद्धा और भाग्यवादी दलितों के बारे में आपके विचार

जोसेफ मेकवान पूरा गुजरात घूमा हूँ । परख ख्रिस्ती है, क्या में दलित हूँ ? गौरव करता हूँ, जोसेफ पेहचान है, दिल, दिमाग नहीं पलटा, लेकिन धि ग्रेट दिल दिमाग संकुचित दायरे से बाहर निकल गया। मैं विस्तृत पथ पर दशों दिशाओं से सोचता हूँ और इसलिए कहता हूँ कि गुजरात के दलित बाबासाहब के बहुत बडे अपराधी है । गाँवो तक हर घर में कई देवी-देवताओं की तस्वीरे मैंने देखी है । बाबा भी बीच में है । बाबाने कहा था- मैं हिन्दु जन्मा, किन्तु हिन्दु बनकर नहीं मरुँगा ? गुजरात के दलितों को ये नहीं सोचना कि मैं हिन्दु धर्म की निंदा करता हूँ, किन्तु शताब्दियों से धर्मने इतने सारे अत्याचारों की बौछार की, जिस धर्म ने मनुष्य की कक्षा में ही नहीं रखा, बाबाने कहा था- फिर भी इस धर्म को अपनाना । जहाँ तक दलितों के तथाकथित लिडरों की बात है सत्ता के टूके के लिए पूछ हिलानेवाले श्वान से ज्यादा नहीं है । वे

दलितों को गुलामी से हटाते नहीं, क्योंकि वे गुलाम रहे, बेडियों से जकडे रहें, तभी तक उनकी सत्ता स्वार्थ बरकरार रहेगा । तथास्तु ।

श्री हरीश मंगलम् :

प्रश्न-१ दलित साहित्य के द्वारा सामाजिक एक्ता संभव है ? इस बारे में आपके विचार

हरीश मंगलम् : नटुभाई आपका सवाल बहुत कठिन है साथ साथ असंभव भी । दलित साहित्य (सवर्ण दलित) सामाजिक एकता साधने में मददरुप होकर परिवर्तन ला सकता है, लेकिन संपूर्ण संभव नहीं हे क्योंकि यह सवाल जितना सामाजिक है उससे ज्यादा धार्मिक है। सामाजिक सुधारणा के साथ साथ हिंदु धर्म सुधारणा अति आवश्यक है । हिन्दु धर्म सुधारणा के बजाय सवर्ण-दलित एकता असंभव है । जब तक हिन्दूधर्म की रीति-नीतिशास्त्र नहीं बदलेगा तब तक समस्या का हल होना असंभव है । दुःख की बात यह है कि, सवर्ण-दलित एकता का मुख्य अवलंबन सवर्ण जाति पर है । दलितों की परिस्थिति में शिक्षण की वजह से बदलाव आया है, कई दलित बौधिक लोगों ने, लेखकों ने दलित साहित्य सर्जन के साथ साथ आंदोलन चला के वैचारिक चिंतन का प्रसार बढाया है लेकिन एकदेशीय पुरवार हुआ है ।

दलित साहित्य की शुरुआत अछूतानंदने की थी तब से लेकर आज तक सारे भारतवर्ष में दलित साहित्य आंदोलन चल रहा है । मराठी दलित साहित्य के बाद गुजराती दलित साहीत्य में बहुत अच्छा सर्जन हुआ है और हो रहा है । जोसेफ मेकवान, दलपत चौहाण, प्रवीण गढवी, हरीश मंगलम्, डॉ.पथिक परमार, दक्षा दामोदरा, अरविन्द वेगडा, मधुकांत कल्पित, साहिल परमार, राजु सोलंकी और कई लेखक दलित साहित्य के साथ जुडे हुए हैं । दलित चेतना का प्रसार-प्रचार के साथ साथ दलितों के प्रश्नों प्रति जागृति फैलाई है यह कोई कम नहीं है । गुजरात दलित साहित्य अकादमी, का मुखपत्र हयाती द्वारा अवर्णनीय अकल्पनीय कार्य किया है । ललित साहित्य की स्पर्धा से टक्कर ले रहा है । उसका वर्तमान उदाहरण है हयाती का दशाब्दी विशेषांक ।

गुजराती दलित साहित्य अकादमी ने आज तक ३० किताबें प्रकट की है । उसमें दो संशोधन ग्रन्थ है । गुजराती साहित्य परिषद और गुजरात साहित्य अकादमी, गुजरात राज्य के ईनाम मिले है । शिरच्छेद (तलेदण्ड), नाटक गुजरात युनिवर्सिटी के पोष्टग्रेज्युएशन में टेकस्ट है । मेरा कहानी संग्रह ‘तलब’ मुंबई युनिवर्सिटी के ग्रेज्युएशन मे टेकस्ट है । ‘दलितवाणी’ भी मुंबई युनिवर्सिटस के पोस्ट ग्रेज्युएशन में टेकस्ट है । ‘मलक’ गुजरात युनिवर्सिटी में पढाई जाती है दलित साहित्य की शुरुआत हुई तक सब लोग उसका विरोध करते थे । जैसे जैसे दलित साहित्य प्रकटता गया वैसे वैसे समज आती गई और उसका स्वीकार हुआ । स्वीकार हुआ यानि की विचारधारा को बल मिला । दलित साहित्य के प्रसार-प्रचार से दलितों की सोच में बहुत फर्क आया हुआ है उसकी अनुभूति सबको होती है । सूक्ष्म तौर पर देखा जाये तो काफी परिवर्तन हुआ मालूम होता है । सवर्णो की मानसिकता में भी फर्क हुआ है ।

प्रश्न-२ दलितों के आंतरिक संधर्ष को दूर करने में दलित साहित्य की भूमिका

हरीश मंगलम दलितों में आंतरिक संघर्ष प्रवर्तमान है, वह हिन्दू धर्म की ही भेंट है । ऐसे प्रश्न सवर्णवादी मानस पूछते हैं ताकि दलित साहित्य का एक बडा जो आंदोलन चल रहा हैं उसे गुमराह करके आन्दोलन को कमजोर कर देना जब तक हिन्दू धर्म की रीति-नीतिशास्त्र में सुधार नहीं आयेगा तब तक हिन्दू समाज में प्रवर्तमान सभी भेदभाव-संघर्ष चलते रहेंगे । अविरत चलते रहेंगे । हिन्दू धर्मवादीयों के अस्पृश्यता, भेदभाव मिटाने में ना तो दिलचस्पी है ना तो दलितों के उत्थान में रस है । परिवर्तन लाना है तो क्यों ये हिन्दूधर्मवाले अस्पृश्यता के खिलाफ एक शब्द भी उच्चारते नहीं है । वाणी और वर्तन में फेर है ।

प्रश्न-३ क्या दलित साहित्य दलितों की सामाजिक परम्पराओं में (जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, मृत्यु) परिवर्तन कर सकता है ? इस बारे में आपके विचार

हरीश मंगलम् मैंने सूक्ष्म परिवर्तन की बात सवाल दो के

जवाब में कही है । जब तक सामाजिक रुढियों की बात है तब तक मैं यह बताना चाहता हूँ कि हिन्दूधर्म आधारित सब चल रहा है । जब तक तुम्हारा पुराना-खोखला धर्म नहीं बदल पाता तब यह सब चलता रहेगा । जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई, मृत्यु आदि प्रसंग वक्त हिन्दू कर्मकांड होता हे । जन्म से लेकर मृत्यु तक धार्मिक विधि, अंधश्रद्धा, वहम, अवैज्ञानिक आचरण, ज्योतिष का सहारा लेते हैं । सहरा लेते पामर, नपुंसक, निर्बल हो जाते हैं । दिमाग की सोच बंद हो जाती है । मूढ हो जाते हैं । बिलकुल पशुवत् । जब तक जीवन में यानि की जन्म से लेकर मृत्यु तक वैज्ञानिक अभिगम नहीं आयेगा तब तक वोही रफ्तार चलती रहेगी । हाँ एक बात स्वीकृत करनी पडेगी कि रेशनल मुवमेन्ट से बौद्ध धर्म से, उच्चतर पढाई से फर्क हुआ है लेकिन थोडा सा ।

प्रश्न-४ दलितों में व्यसन के बारे में आपके विचार

हरीश मंगलम् व्यसन के बारे में कहना पडेगा कि सवर्ण लोगों में अधिकतम मात्रा में व्यसन है । सवर्ण लोगों को व्यसन है वह नशाखोरी के लिए हैं, और दलित -मजदूर लोग सख्त मेहनत के बाद जब थक जाते है- टूट जाते हैं तब व्यसन करते हैं । दोनों में बहुत कर्फ है । दलित-मजदूर लोग थकान उतारने के लिए, दु:ख भुलने के लिए व्यसन करते हैं जो माफ करने पात्र हैं । सवर्ण लोग नशाखोरी कर के व्यभिचार करने की वजह से व्यसन करते हैं जो माफ करने लायक नहीं होता । व्यसन का मामला बिलकुल अंगत मामला है । आरोग्य और आर्थिक दृष्टि से उसका सर्वे होना चाहिए ।

प्रश्न-५ गाँवों में दलित साहित्य पहूँचा है ? कोई परिवर्तन दिखाई देता है ? इस बारे में आपके विचार

हरीश मंगलम् अभी तक गाँव में दलित साहित्य पहुँचा नहीं है, और गाँवों की बात तो रही दूर । डॉ. बाबासाहब आम्बडेकर की विचारधारा आधारित दलित साहित्य दलितों के जीवन में ही नहीं बल्के सारे हिन्दू समाज में परिवर्तन ला सकता है । मानवतावादी, रेशनालिस्ट,

मार्क्सवादी, फेमिनिष्ट, सवर्ण लोगों में दलित साहित्य पहुँचा है । परिवर्तन हो रहा है वह अच्छी तरह से दिखाई रहा है ।

प्रश्न-६ गाँवो में दलित साहित्य पहूँचा है ?

हरीश मंगलम् यह बात सच है कि दलित साहित्य शिक्षित तक सीमित है और वह भी शहरों में, गाँवो में पहूँचा नहीं है । गुजरात दलित साहित्य अकादमी इस दिशा में सक्रिय है कि दलित साहित्य गाँवो में दलितों तक पहूँचे । उसका आयोजन चल रहा है, ज्यादा समय नहीं लगेगा ।

प्रश्न-७ सामाजिक प्रसंगो में श्रीमंत दलितों की गरीब दलित नकल करते है, बाद में उनका जीवन कर्ज में डगमगाता है इस बारे में आपके विचार

हरीश मंगलम् नटुभाई आपका यह सवाल वर्तमान समय में बहुत प्रस्तुत है । वस् भी अनुकरण बुरा होता है । समाज में प्रभाव पैदा करने के लिए नासमज लोग ऐसा करते हैं । यह सामाजिक सवाल ज्यादा है । सामाजिक संस्था (मंडल) यह सवाल को बडे पैमाने पर ले सकता है । यह भी अंगत सवाल है जो व्यक्ति पर निर्भर रहता है । जो लोग आर्थिकशास्त्र जानते है वह लोग ऐसा हरगिज नहीं करेंगे ।

प्रश्न-८ रुढियाँ, अंधश्रद्धा और भाग्यवादी दलितों के बारे में आप के विचार

हरीश मंगलम् अभी तब दलितों में क्रांतिकारी विचार का प्रसार ज्यादा नहीं हुआ है । दलित लोग भी हिन्दु धर्म का ही आचरण करते हैं । हिन्दू धर्म में रुढियाँ, अंधश्रद्धा, भाग्यवादी बाबतें प्रस्तुत है । स्वाभाविक तौर पर दलितों भी उसका शिकार बन गये हैं । उसमें से बाहर निकालने के लिए, महात्मा ज्योतिबा फूले और डॉ. आंबेडकर की विचारधारा का प्रसार प्रचार करना पडेगा और सारे देश में उसका अमल करना होगा । विचारधारा का चुस्तक अमल नहीं होगा तो परिवर्तन कहाँ से आयेगा ?

चलो हम सब निकल पडे दलित पीडित के लिए ।

श्री मोहन परमार :

प्रश्न-१ दलित साहित्य के द्वारा (सवर्ण-दलित सामाजिक एक्ता संभव है ? आज तक के दलित साहित्य द्वारा प्रकाश डालिए ? परिवर्तन हुआ है, तो चोक्कस प्रमाण दीजिए ।

मोहन परमार हाँ, दलित साहित्य के द्वारा सामाजिक क्रांति हो सकती है । दलित साहित्य का मुख्य उद्देश्य सामाजिक असमानता दूर करने का है । सवर्ण जातियों के द्वरा होते अन्याय केसामने विद्रोह जगाने के फल स्वरुप दलित साहित्य का जन्म हुआ । प्रारंभ में कविता के द्वारा दलित कवियों ने असमानता, अन्याय, एवम् छूआछूत के सामने आक्रोशपूर्ण अभिगम अपनाया । १९८१ के बाद कहानी और उपन्यास में दलित साहित्य में यह कार्य ज्यादा हुआ । मेरी और दूसरे साहित्यकारों की कहानियों में यह कार्य सहजता से पार हुआ है, यह दखा जा सकता है । मेरे उपन्यास "नैलियु, प्रियतमा और डाया पशानी वाडी" में आक्रोश, विद्रो और सामाजिक समानता से, समरसता से अन्याय के सामने विद्रोह जगाया है । दलितों के द्वारा लिखे गये साहित्य की दलितों के द्वारा समीक्षा हुई है, उसके साथ साथ सवर्ण साहित्यकार एवम् समीक्षकों ने भी रस लिया है । आंगलियात जैसे उपन्यास को राष्ट्रीय पुरस्कार मिला तो मेरे उपन्यास प्रियतमा, डाया पशानी वाडी पुरस्कृत होकर गुजरात में भी प्रसिद्ध हुए है ।

प्रश्न-२ दलितों में आंतरिक संघर्ष और दलित साहित्य के द्वारा उनमें हुआ परिवर्तन

मोहन परमार दलितों में आंतरिक संघर्ष ने अब हद कर दी है । दलितों की अलग अलग जाति जैसे कि बूनकर, चमार, गरो ब्राह्मण, सेनमा, तूरी, भंगी, नाडिया, आदि अपना अपना अलग अस्तित्व टिकाने के लिए कटिबद्ध हो रहे है । जिसके कारण दलित समाज तितर-बितर और छिन्न-भिन्न हो रहा है । उसमें एकता रहे इसलिए कहानी और उपन्यास में ध्यान से कार्य हो रहा है । मेरे उपन्यास डाया पशानी वाडी में दलित की आंतरिक एकता और सामाजिक समरसता बात महत्त्वपूर्ण है । यह उपन्यास लोगों तक पहूँच रहा है । यह दलित साहित्य के लिए अच्छी निशानी है।

प्रश्न-३ दलितों की सामाजिक्ता में दलित साहित्य के द्वारा परिवर्तन हुआ है ? हाँ, तो प्रमाण दिजीए । नहीं तो आप क्या कर सक्ते हैं ? (जन्म, सगाई, शादी, गौना, गोदभराई, झियाणा, मृत्यु)

मोहन परमार दलित साहित्य द्वारा दलितों में परिवर्तन हुआ है। दलितो में जागृति पैदा कर सका है । दलितो में स्वाभिमान और आत्मनिष्ठा जगाने में दलित साहित्य का विशेष महत्त्व है । कविता, कहानी और उपन्यास एवम् नाटकों के द्वारा दलितों तक पहुँचकर उनके मानसिक विकास में बढावा हुआ है । जो प्रसंशनीय बात है ।

प्रश्न-४ व्यसन के बारे में हुआ परिवर्तन (द.साहित्य के द्वारा)

मोहन परमार व्यसन के बारे में परिवर्तन आया हो ऐसा मेरे ध्यान में नहीं है । दलित साहित्य ने उस बारे में विशेष मत अपनाया हो ऐसा भी मेरे ध्यान में नहीं है ।

प्रश्न-५ गाँवों में दलितों के जीवन मे दलित साहित्य परिवर्तन ला सक्ता है ? गाँवों में दलित साहित्य दलितों तक पहूँचा है ? सवर्णो तक दलित साहित्य पहुँचा है ? परिवर्तन दिखाई दे रहा है ?

मोहन परमार विशेषतः गुजराती दलित साहित्य ग्राम्यजीवन के प्रश्नों को उजागर करने के लिए प्रतिबद्ध है । शहर में असमानता, छूआछूत जैसे दलितों को पीडा देते लक्षण अब कब दिखाई देते है । छूआछूत का मूल ग्राम्यजीवन में अभी भी जिन्दा है । जिसको दूर करने के लिए ग्राम्यजीवन के दावपेच के आलेखन के लिए दलित साहित्यकार कटिबद्ध होता दिखाई देता है । जिसके कारण गाँव में अब उस बारे में जागृति दिखाई देती है । गाँवो के पुस्तकालयों में दलित साहित्य की कृतियाँ पाठक तक पहुँचे तो ही स्पष्ट परिणाम मिलेगा । शहर में छूआछूत कम हुई है, किन्तु मानसिक छूआछूत अभी नहीं गई है । ऐसी समस्याओं को दूर करने के लिए शहरी जीवन की दलित कृतियाँ भी आ रही है ।

विशेषतः दलित साहित्य दलितों के सिवा सवर्ण पढ़े यह जरुरी है, और ऐसा अब हो रहा है । दलित सामयिक द्वारा यह प्रयत्न हो रहा है । मनोज परमार (तंत्री) के द्वारा प्रसिद्ध होता सामयिक दलित चेतना

यह दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मासिक है । वह कई सवर्ण साहित्यकारों तक पहुँचा है और उसमें रही दलित सामग्री पढकर सवर्ण भी उस बारे में जरा ठंडे हो रहे है ऐसा देखा जा सकता है ।

प्रश्न-६ नौकरी करनेवाले और श्रीमंत दलित सामाजिक प्रसंगो में आर्थिक खर्च ज्यादा करते है और गरीब दलित उनकी नकल करते है ! बाद में उनका जीवन कर्ज में डगमगाता है, गृहस्थजीवन डाँवाडोल बन जाता है, नये दंपति के लिए कर्जारुपी कार्पेट बिछाते है, तो इस बारे में आपके विचार, हमारा साहित्य कोई परिवर्तन कर सकता है ।

मोहन परमार विशेषतः हमारे यहाँ देखादेखी ज्यादा है । सवर्णो की नकल गर्भश्रीमंत करते है । शादी, सीमंत जैसे प्रसंग श्रीमंत दलित बडे उत्साह से मनाते है, यह आर्थिक रुप से योग्य है, किन्तु उसकी नकल गरीब दलितों को करने की जरुरत नहीं है । क्योंकि अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरुप उत्सव, पणासंग मनाये यह जरुरी है । बाद में कर्ज में डूब न जाये उसका ध्यान रखना चाहिए । एक रुप से देखें तो सामाजिक कुरिवाज, रुढियाँ जैसे की मृत्यु के बाद की क्रिया में ज्यादा आर्थिक खर्च करते है, यह गरीब दलितों के लिए हानिकारक है । ऐसे प्रसंग बंद करने चाहिए । फरजियात नहीं होना चाहिए । अपनी शक्ति के मुताबिक ही ऐसे प्रसंग का आयोजन हो वह दलितों के हित में है ।

प्रश्न-७ रुढियाँ, अंधश्रद्धा और भाग्यवादी दलितों के बारे में आपके विचार

मोहन परमार रुढियाँ, अंधश्रद्धा या नसीब जैसे शब्द एक भ्रम है । वास्तव में तो पुरुषार्थ या मेहनत पर ही मानवजीवन टिका है । गलत रुढियों से दलितों के समय और संपत्ति की बरबादी उनके विकास में बाधा डालती है । माता-महोदय, मानताओं में होती अंधश्रद्धा के कारण दलितों की मानसिक स्थिति स्वस्थ नहीं रह सकती । नसीब तो सब साथ दें जब इन्सान मेहनत करे । दलित कई दिन तक धार्मिकता में डूबा रहता है, यह उनके लिए हानिकारक है । हरेक इन्सान एक ही तरीक से जन्म लेता है, उनकी सच्ची कसौटी उनके जीवन में किये कर्मो से होती है, इसलिए दलितों के लिए ब्राह्मणवादी विचारधारा हानिकारक है ।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध प्रबंध को मूलत: ग्यारह अध्याय में विभाजित किया है । वैसे तो हिन्दी-गुजराती में दलित-गैरदलित लेखकों के दलित जीवन पर अनेक उपन्यास मिलते है, पर अध्ययन की सुविधा के लिए दलित लेखकों के बारह उपन्यास चुने है ।

प्रथम अध्याय में दलित शब्द का अर्थ, दलित साहित्य की परिभाषा, मराठी दलित साहित्य, गुजराती साहित्य में दलित, गुजराती उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास का स्वरुप, विकास, गुजराती दलित साहित्य का उद्‌भव और विकास एवम् हिन्दी दलित उपन्यास स्वरुप, विकास दूसरे अध्याय में मोहनदास नैमिशराय के कृतित्व की झाँख्री एवम्'वीरांगना झलकारीबाई'उपन्यास के विवेचन के बारे में लिखा है ।'वीरांगना झलकारी बाई'एक दलित वीरांगना थी, जिसने १८५७ में अंग्रेजों से टक्कर ली थी, महिला सेना की कमान्डर बनकर रानी लक्ष्मीबाई को साथ दिया था । इतिहास में छिपी एक महत्त्वपूर्ण नारी का चरित्र यहाँ प्रकट किया है ।

दलित स्त्री शक्ति का परिचय १८५७ के आसपास की सामाजिक रुढियों को प्रकट करना, दलित चेतना, छूआव्छूत परम्परा, सवर्ण-दलित संघर्ष, दलितों के आतरिक संघर्ष, अंग्रेजो की नीति और राजा, प्रजा की स्थिति, पादरी, बौद्ध भिक्खू द्वारा समाज सुधार प्रकट करने का उद्देश्य उपन्यास में है ।

तीसरे अध्याय में जयप्रकाश कर्दम के कृतित्व की झाँख्री एवम् छप्पर उपन्यास में विवेचन के बारे में लिखा है । छप्पर उपन्यास हिन्दी दलित साहिय का महत्त्वपूर्ण उपन्यास है ।

दलित अभावों में जीते है । सवर्ण साधन सम्पन्न है । दलित मजदूरी करते है, खाने के लाले है, व्यसनों के शिकार है । छूआछूत परम्परा, लगान की चिंता, दलित नारी को अपने अस्तित्व की चिंता, सरकारी अफसरों की नीति, समता आंदोलन का वर्णन सचमुच उपन्यास के लिए महत्त्वपूर्ण है । समाज में समानता, व्यसनबदी, बालविवाह, सररकारी अफसर

रबर स्टेम्प, पुलिस का व्यवहार, स्त्रीशिक्षा, शिक्षा संगठन, आंदोलन, सवर्णपात्र द्धारा समाजसुधार, नारीचेतना जैसे उद्देश्य है ।

चौथे उपन्यास में श्री एस.आर.हरनोट के कृतित्व की झाँख्री एवम् हिडिम्ब उपन्यास के विवेचन के बारे में लिख्रा है । हिडिम्ब आँचलिक उपन्यास है । हिमाचल प्रदेश की घाटियाँ, जमीन, जंगल, नदीयाँ, पर्वत का वर्णन है । दलित की स्थिति, नेताओं का कारनामा स्पष्ट रुप में है। इस उत्तर आधुनिक समय में जब जल, जंगल, पर्वत, जमीन की चिंताएँ हाशिये पर चली जा रही है, हिडिम्ब इन चिंताओं को विमर्श के केन्द्र में लाने की एक विनम्र कोशिश है । हिमाचल प्रदेश के रीतिरिवाज, काहिका उत्सव परम्परा, पर्यावरण सुरक्षा की चिंता, राजनीतिक भ्रष्टाचार की चिंता है । एक दुर्गम पहाडी अंचल की कथा को वैश्विक सरोकारों के साथ प्रस्तुत करनेवाला यह शायद इस तरह का पहला उपन्यास है ।

पाँचवे अध्याय में श्री दलपत चौहान के व्यक्तित्व, कृतित्व के बारे में लिख्रा है । वे. दलित साहित्य की नींव माने जाते है । कवि, कहानीकार, नाट्यकार, उपन्यासकार, विवेचक के रुप में प्रसिद्ध है । २००६ में उनको गुजरात सरकारकी ओर से एवोर्ड भी मिला है ।

मलक और गिद्ध उपन्यास में उन्होंने समाज की वास्तविक दशा को प्रकट किया है । दलित सवर्ण संघर्ष, दलित परिवेश, पात्र, भाषा, शिक्षा, चुनौतियाँ, राजकीय प्रोत्साहन के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है । दोनों उपन्यास में नायिका सवर्ण है, जबकि नायक दलित है। दलितों की स्त्रीयों से छूआछूत रख्रते है, किन्तु अकेली मिलने पर अपनी कामवासना तृप्त करते है । कोई दलित उसका विरोध नहीं कर पाता । किन्तु पददलित युवक सवर्ण स्त्री से शारीरिक संबंध स्त्री की ईच्छा के कारण रख्रे तो भी सवर्ण जल जाते है, और सारे दलितों को मूल्क छोडना पडता है । ये हमारे समाज का हाल है ! न्याय है !

छठ्ठे अध्याय में जोसेफ मेकवान के व्यक्तित्व, कृतित्व के बारे में लिख्रा है ।'आंगलियात' और 'दरिया' उपन्यास का विवेचन किया है।

'आंगलियात' को भारतीय साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है, और भी कई पुरस्कार उनको मिले है । दलित-सवर्ण संघर्ष, दलित परिवेश, पात्र, भाषा, शिक्षा, दलित आंतरिक संघर्ष, चुनातियाँ, राजकीय प्रोत्साहन के बारे में लिखा है । गुजराती साहित्य में भी जोसेफ मेकवान का स्थान महत्त्वपूर्ण है । साहित्यकार के साथ साथ एक समाजसुधारक है । दलितों का समाज में क्या स्थान है यह स्पष्ट कर दिया है, साथ साथ सवर्णो की भेदभरम नीति को भी खुली कर दी है । स्वतंत्रता आने से दलितों की स्थिति में सुधार होगा यह नहीं हुआ, बल्कि स्वतंत्रता सवर्णो के यहाँ दिखाई देती है, फायदा उनको हुआ है । अपना राजा, अपनी पुलिस, कौन दूसरा पूछनेवाला है, जो करना है । वही करते है और बेचारे दलित मारे जाते है ! यह समाज की तत्कालीन संपूर्ण मानसिकता को रेखांकित करता है । समाज का यथार्थचित्र देखने को मिलता है ।

सातवें अध्याय में श्री हरीश मंगलम् के व्यक्तित्व, कृतित्व की झलक मिलती है । डे.कलेक्टर के पद पर होने के बावजूद दलित साहित्य की जो सेवा करते है वह बेनमून है, उनको कबीर एवोर्ड भी मिला है ।

'तिराड' उपन्यास में दो पटेल भाईयों के बीच मेड के कारण झघडा होता है, तो दलित मजदूर दोनों को छूडाता है, तो क्रोध उन पर निकालता है, फावडे की चोट से सोमा (दलित) खटिया वश हो जाता है, बाद में मर जाता है । दलित विधवा की स्थिति, पटेल की जोहुकमी, दलित समाज, दलित पंच की पोल यहाँ स्पष्ट रुप में वर्णित की है ।

'चौकी' में भी दलितों के मुहल्ले में चौकी करनेवाला ही चोरी करता है । वह पकडा जाता है । चौकी बंद करके दलित स्वयं चौकी करते है, तो चौकी करनेवाला खेतो की चौकी करता है, वहाँ पटेल लडकियाँ-स्त्रीयों से शारीरिक संबंध रखता है, पकडा जाता है तो साधु बन जाता है । साधुओ में आंतरिक संघर्ष, चमार-बुनकर के बीच है यह स्पष्ट करना चौकी का उद्देश्य है ।

आठवें अध्याय में श्री मोहन परमार के व्यक्तित्व के बारे में

परिचय मिलता है । गुजराती साहित्य में उपन्यासकार, कहानीकार, नाट्यकार, विवेचक के रुप में प्रसिद्ध है । दलित साहित्य में भी उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है ।

‘प्रियतमा’ उपन्यास में दलितों के आंतरिक संघर्ष को शब्दरुप दिया है । प्रियतमा कौन है यह पाठक के लिए प्रश्न है । जसुमती या करधा या दलित परिवेश । गौना, गोदभराई, झियाना जैसे तीन अध्याय में विभाजित प्रियतमा उपन्यास में दलित-सवर्ण संघर्ष नहीं किन्तु आंतरिक संघर्ष को मुख्य विषय के रुप में चुना है । दलित समाज में स्त्री का स्थान और शिक्षा का महत्त्व, दलित परिवेश उपन्यास की मुख्य विशेषता है ।

‘नोलियाु’ उपन्यास में भी एक मूर्छित डे.एन्जिनीयर की कथा है । सवर्ण लोग की मानसिकता व्यक्ति को जाति से ही पेहचानते है ये कितना ही गुणवान शिक्षा प्राप्त क्यूं न हो ? जाति नहीं जानते थे, तब तक उसे इन्सान के रुप में देखते है, किन्तु जाति जानने के बाद वह इन्सान को पशु के समान गिनते है । यही फर्क को मोहन परमार सही अर्थ में शब्दो के रुप में अभिव्यक्त कर पाये है । प्रणय-त्रिकोण, पटेल-ठाकुर संघर्ष, ठाकुर-दलित संघर्ष, तूरी जाति की स्थिति, सरपंच का प्रपंच, गुंडागीरी उपन्यास में उभरकर आई है ।

नवमें अध्याय में दक्षाबहन के व्यक्तित्व, कृतित्व की जानकारी मिलती है । नारी विषयक प्रश्नों को बडी बखूबी से व्यक्त किया है ।

‘शाोष’ उपन्यास में सवर्ण-लडकी का दलित लडके से प्रेम की कहानी है । उसके माध्यम से शिक्षा, पारिवारिक प्रश्न, स्त्री की समाज में स्थिति, मानसिक अवस्था (पति-पत्नी की), कच्छप्रदेश, दुदाशा-जगडुशा की समाजसेवा, जगडुशा सवर्ण है तो देरासर का जिर्णोद्धार होता है, दुदाशा दलित है तो उन्होंने बनाई वाव आज अवशेष के रुप में है । यह स्पष्ट किया है । देशल ने वाव का काम पूर्ण किया तो राजेन्द्र चित्रकार अपने चित्रो में से प्राप्त आयके द्वारा कच्छ सौराष्ट्र के लिए जलसंचय अभियान चलाता है ।

दसवें अध्याय में हिन्दी दलित उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास की तुलना की है जो जरुरी है । दलित उपन्यासकार की सिद्धियाँ और समाज में परिवर्तन चेतना के बारे में यह उपन्यास जरुरी है ।

ग्यारहवें अध्याय में पाँच उपन्यासकार से साक्षात्कार है जिसमें सामाजिक प्रश्नो को लिया है ।

परिशिष्ट

मूल आधार ग्रंथ हिन्दी

१. मोहनदास नैमिशराय- वीरांगना झलकारीबाई- प्रथम आवृत्ति, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.दिल्ली/२००५

२. जयप्रकाश कर्दम... छप्पर....द्धितीय संस्करण-२००७... राहुल प्रकाशन... दिल्ली ।

३. एस.आर.हरनोट... हिडिम्ब....२००४.... प्रथम संस्करण.... आधार प्रकाशन प्रा.लि.पंचकूला...१३४११३

मूल आधार ग्रंथ गुजराती

१. दलपत चौहान - मलक- प्रथम आवृत्ति, रंगद्धार प्रकाशन- अहमदाबाद- १९९१

२. दलपत चौहान- गिद्ध प्रथम संस्करण-१९९९- कुमकुम प्रकाशन- अहमदाबाद

३. जोसेफ मेकवान- आंगलियात- षष्ठम संस्करण-जुलाई-२००३ आर.आर.शेठनी कम्पनी-मुंबई

४. जोसेफ मेकवान- दरिया, प्रथम संस्करण-२००२, आर.आर.शेठनी कम्पनी, मुंबई

५. हरीश मंगलम्- तिराड, द्धितीय संस्करण-१९९५-कुमकुम प्रकाशन, अहमदाबाद

६. हरीश मंगलम्- चौकी, द्धितीय संस्करण-१९९५- कुमकुम प्रकाशन, अहमदाबाद

७. मोहन परमार- प्रियतमा.(भाग-१,२), प्रथम संस्करण-१९९५, लोकप्रिय प्रकाशन-मुंबई

८. मोहन परमार- नेलियुं.. प्रथम संस्करण-१९९२, लोकप्रिय प्रकाशन-मुंबई

९. दक्षा दामोदरा- शोष.. प्रथम संस्करण-२००३, रन्नादे प्रकाशन, अहमदाबाद हिन्दी मूल ग्रंथ -१. हसमुख बारोट- दरार (अनुवाद) प्रथम संस्करण-२००२ पार्श्व पब्लिकेशन अहमदाबाद

समीक्षात्मक सहायक ग्रंथ गुजराती

१. हरीश मंगलम् - विदित... अक्षिता प्रकाशन, चाँदखेड, अहमदाबाद, प्रथम संस्करण-१९८९

२. जोशी, रावल शुक्ल (सां.) गुजराती साहित्यनो इतिहास, रु, गुजराती साहित्य परिषद, अहमदाबाद, प्रथम आवृत्ति-१९८७
३. भी.न.वणकर- दलित साहित्य, प्रथम संस्करण-२००५,
४. डॉ.रमेश त्रिवेदी-अर्वाचीन गुजराती साहित्यनो इतिहास, आदर्श प्रकाशन, अहमदाबाद, प्रथम आवृत्ति-१९९२
५. डॉ.धीरुभाई ठाकर- अर्वाचीन गुजराती साहित्यनी विकास रेखा, गुर्जर ग्रंथ कार्यालय, अहमदाबाद, नवमी आवृत्ति-१९८२
६. मोहन परमार, हरीश मंगलम्- गुजराती दलित साहित्य- स्वाध्याय और समीक्षा
७. रघुवीर चौधरी- गुजराती नवलकथा, तृतीय संस्करण-१९९१, युनि.ग्रंथ निर्माण बोर्ड, अहमदाबाद
८. भी.न.वणकर- प्रत्यायन, प्रथम संस्करण-१९९४- गांधीनगर, सेक्टर-२७
९. भी.न.वणकर- अनुसंधान- प्रथम संस्करण-२००१,
१०. डॉ.के.एम. मकवाणा- ग्रामजीवन साठोत्तरी गुजराती नवलकथा, प्रथम संस्करण-२००१ भावनगर
११. आग्नेस अेन्ड रमेश वाघेला- चाकडो -प्रथम संस्करण- २००४, जोसेफ मेकवान फाउन्डेशन आणंद
१२. भी.न.वणकर- पर्याय-प्रथम संस्करण-२००४
१३. दीपक महेता- कथाप्रसंग- गुजराती साहित्य अकादमी, गांधीनगर,१९९०

समीक्षात्मक ग्रंथ हिन्दी

१. डॉ. गीरीशकुकार एन. रोहित-दलित चेतना केन्द्रित हिन्दी- गुजराती उपन्यास, प्रथम प्रकाशन-२००४
२. डॉ.कुसुम मेघवाल- हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग, संघी प्रकाशन, जयपुर प्रथम संस्करण-१९८९
३. धनजंर कीर- डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर
४. डॉ.चन्द्रकुमार वरठे- दलित साहित्य-आंदोलन, रचना प्रकाशन, जयपुर प्रथम संस्करण-१९९७
५. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभो- डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर, राधाकृष्ण प्रकाशन- दिल्ली
६. जगजीवनराम- भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या, राजपाल एन्ड सन्स, दिल्ली-१९८१

७. डॉ.आर.जी.सिंह- भारतीय दलितों की समस्याएँ एवं उनका समाधान, मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी, पुनर्मुद्रित- १९९६
८. डॉ. मु.ब.सहा.- भारतीय समाज क्रान्ति के जनक महात्मा ज्योतिबा फूले, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली-१९९२
९. स्वामी विवेकानंद- जाति, संस्कृति और समाजवाद, रामकृष्ण मठ, नागपुर, संस्करण-१९८६
१०. डॉ.नगेन्द्र-(सं) हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिकेशन, नयी दिल्ली, १९८८
११. डॉ.पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी- दलित साहित्य और सामाजिक न्याय, समता प्रकाशन दिल्ली, संस्करण-१९७७
१२. जवाहरसिंह- हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों की शिल्पविधि, नेशनल पब्लिसिंग हाउस नयी दिल्ली-१९८६
१३. हरपालसिंह अरुष- दलित साहित्य की भूमिका, जवाहर पुस्तकालय- मथुरा (उ.प्र.) २००५

कोश- संस्कृत, हिन्दी

१. संस्कृत -हिन्दी शब्दकोश- वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसी पब्लिकेशन, दिल्ली, पुर्नमुद्रण-१९८९

हिन्दी

१. उच्चतर हिन्दी कोश- डॉ. हरदेव बाहरी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-१९९०

गुजराती

१. बृहद गुजराती कोश-अध्या.के.का. शास्त्री, युनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, अहमदाबाद (गुजरात)
२. गुजराती दलित साहित्यकार परिचय कोश - डॉ.आर.चा.णाकर

पत्रिकाएँ-हिन्दी-गुजराती

हिन्दी

१. हंस- सं.राजेन्द्र यादव- जनवरी-१९९७
२. समकालीन भारतीय साहित्य- सं.गिरधर राठी, जनवरी-फरवरी-१९९७
३. संचेतना- सं.महीपसिंह - दलित साहित्य-विशेषांक--अंक-६७
४. युद्धरत आम आदमी- सं.रमणिका गुप्ता. अंक-३४/३५ वर्ष-१९९६ गुजराती साहित्य में दलित कलम विशेषांक-५३

वर्ष-२०००, (प्रथम संस्करण-२००१) रमणीका गुप्ता

५. रचनाकर्म- सं.मायाप्रकाश पान्डेय, अंक-१, जनवरी, मार्च-२००६

६. कथाक्रम- सं.शैलेन्द्र सागर- दलित साहित्य विशेषांक, नवम्बर-२०००

गुजराती

१ हयाती- सं.मोहन परमार

१. मार्च, जून-२०००, (अंक-९,१०) २. सितम्बर-२००१

३. सितम्बर-१९९९ ४. मार्च-१९९८-अंक-१

५. दिसम्बर-२००२,अंक-२० ६. मार्च-जून-२००४- अंक-२४,२५

२. शब्दसृष्टि - अगस्त-९५

नवम्बर - २००३- अंक-११, गुजरात साहित्य अकादमी

(दलित साहित्य विशेषांक)

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध प्रबंध में ग्यारह अध्याय का संक्षिप्त परिचय दिया है, अंत में उपसंहार है । प्रथम अध्याय में दलित साहित्य की पृष्ठभूमि, दूसरे अध्याय में मोहनदास नैमिशराय के कृतित्व की झाँखी एवम् ट ी र ां ग ना ा झलकारीबाई उपन्यास का विवेचन है । तीसरें अध्याय में जयप्रकाश कर्दम के कृतित्व की झाँखी एवम् छ प्प ा र उपन्यास का विवेचन है । चौथे अध्याय में एस.आर. हरनोट के कृतित्व की झाँखी एवम् हि डिम्ब उपन्यास का विवेचन है ।

पाँचवे अध्याय में श्री दलपत चौहान के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी एवं मलक ग ा द्ध उपन्यास का विवेचन किया गया है । दलपत चौहान दलित साहित्य की नींव माने जाते है । कवि, कहानीकार, नाट्यकार, उपन्यासकार और विवेचक के रुप में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है ।

छठे अध्याय में जोसेफ मेकवान के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी मिलती है । गुजराती साहित्य में भी उनका स्थान महत्त्वपूर्ण है । दलित साहित्य में रेखाचित्रकार, कहानीकार, उपन्यासकार और विवेचक, निबंधकार के रुप में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है । साहित्यकार के सिवा एक अच्छे समाजसुधारक के रुप में भी उनका योगदान प्रसंशनीय है । अ ां ग लि या त, द रि या उपन्यास का विवेचन किया गया है ।

सातवें अध्याय में हरीश मंगलम् के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी मिलती है । गुजराती दलित साहित्य अकादमी के स्थापक सभ्य और मुखपत्र ह या ा त ी के मानदतंत्री है । दलित साहित्य के पुस्तकों के विक्रेता भी है । कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, अनुवादक, विवेचक के रुप में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है । ति ा रा ड़ और च ा ो क ी उपन्यास का विवेचन किया गया है ।

आठवें अध्याय में मोहन परमार के व्यक्तित्व और कृतित्व की जानकारी मिलती है । वे ह या ा त ी के मानद संपादक थे । कहानीकार के रुप में प्रसिद्ध है । कहानीकार नाट्यकार, उपन्यासकार, विवेचक के रुप में

उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है ।‘प्रियतमा;ो लिायाु’ उपन्यासकार विवेचन किया गया है ।

नवमें अध्याय में श्री दक्षाबहन दामोदरा के व्यक्तित्व, कृतित्व की जानकारी मिलती है । दक्षाबहन एक स्त्री है और स्त्री के प्रश्नों को बडी सहजता से अपने उपन्यास में प्रस्तुत किया है ।‘शाोष’ उपन्यास का विवेचन किया गया है ।

दशवें अध्याय में हिन्दी दलित उपन्यास और गुजराती दलित उपन्यास की तुलना की है ।

ग्यारहवें अध्याय में साहित्यकारों का साक्षात्कार है । जिसमें सामाजिक प्रश्न है ।

अंत में है, उपसंहार । प्रस्तुत शोध प्रबंध का उद्देश्य हिन्दी भाषा जाननेवालों को गुजरात में बसे दलितो की स्थिति से अवगत कराना है । दलितों की रहन-सहन, उनके सामाजिक व्यवहार, अच्छी बातें, बूरी आदतें, रुढियाँ, अंधश्रद्धा, दलित स्त्रीओं का समाज में स्थान पारिवारिक स्थिति, बूजुर्गो की स्थिति, आंतरिक संघर्ष, दलित सवर्ण संघर्ष, राजकीय प्रोत्साहन, पुलिस, डॉक्टर, नेता का दलितों के साथ व्यवहार, चुनौतियाँ के बारे में ब्योरा दिया है । तो हिन्दी-गुजराती दलित उपन्यास की तुलना भी की है ।

जो पाठकों के लिए साहित्यकारों के लिए, समाजसुधारकों के लिए बहुत उपयोगी साबित होगा ।